T-1

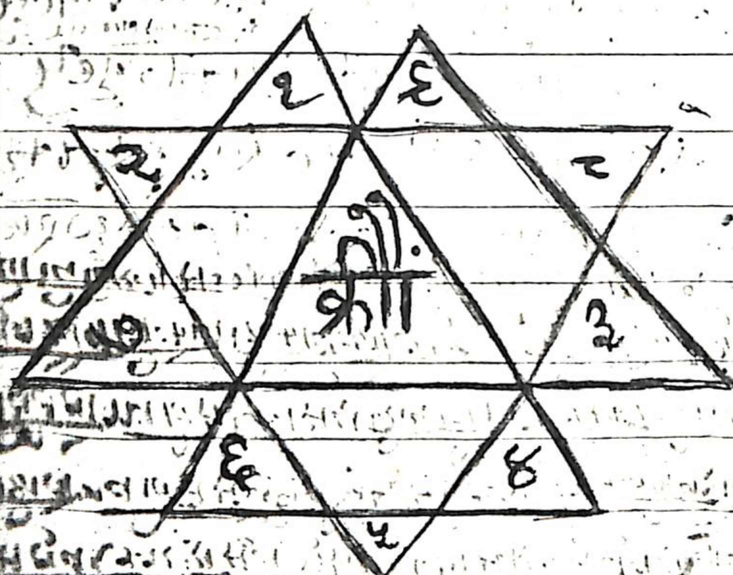
[illegible]

ॐ [illegible] य० वृषभाय नमः [illegible] य० कीर्तिकायै०
अभीष्ट० ॐ आं ब्राह्मीणै ये० ई नारायणीये०
[illegible] चामुंडाये० [illegible] कामारी [illegible]०
[illegible] ऐं आं [illegible] ये० औं वाराहीये० अः नारसिंहये०
अभीष्ट० ॐ ऐं ह्रीं [illegible] असितांग भैरवाय [illegible]
रुरु० ॐ ऐं ह्रीं [illegible] चंड० ॐ ऐं ह्रीं [illegible] क्रोध० ॐ ऐं ह्रीं [illegible]
उन्मत्त [illegible] कपाली० [illegible] भीषण [illegible]
ॐ संहार० अभीष्ट० श्री भैरवये० नमः [illegible] सिद्धि०
[illegible] भीम० उन्मत्त० वशीकरण० मोहन०
अभीष्ट० ॐ ऐं [illegible] कायै [illegible]
[illegible] वेताल० ऐं [illegible] ऐं [illegible]
[illegible] ल० ऐं [illegible] ऐं भीम० अभीष्ट०
[illegible] सिद्ध [illegible] मातर० ऐं [illegible]
[illegible] ऐं [illegible] चौ चौ [illegible]
[illegible] गुरवी ऐं [illegible]
[illegible] ऐं ह्रीं ह्रीं [illegible]
[illegible] अभीष्ट० [illegible] रवाहे०
[illegible] व [illegible] उपव० [illegible]
[illegible] ह्रौं [illegible] य० अभीष्ट०
[illegible] य० [illegible] य० [illegible]
[illegible]
[illegible]

[illegible] य० [illegible]
वं [illegible] य० अभीष्ट० क्रों० क्रौं [illegible]
कं० क्रं० क्रं० अभीष्ट [illegible]
[illegible] पाले [illegible]
[illegible] यं मां [illegible]
[illegible]
[illegible]

[illegible]

प्रथम कौमारी द्वितीय शाकरी
तथा तृतीय दुर्गा प्रोक्ता चतुर्थे



...तथा पंचमे ... देवी
... षष्ठे ... सप्तमे ... पूजा
देवी कल्याणी ...
... कुमारी ...

श्री गुरु कृपा ... महामुनि जी
विजयते तराम
श्री गणेश जी महाराज प्रसन्न
श्री सरस्वती जी कल्याण करतु
श्री ... गुरुभ्यो नमः ... श्री गुरु
... तृतीय ... लक्ष्मण ...
... तथा गुणानि ...
... वर्ण ...
... स्थाने ...
... स्थाने ...
... तत स्थाने ...
गुरु ... प्रयोग ...
... श्री गुरु ...
... स्मरण ...
...
...
...
... ॥

लग्न कुण्डली

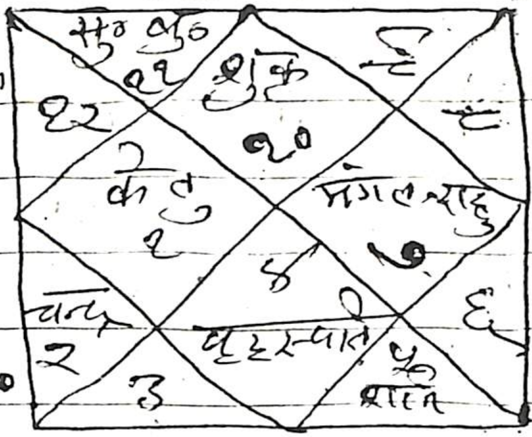
इष्टचन्द्र

५६/५२

तारीख

२६ २

९६२०



अवृती बृहस्पति ... विष्कुंभ ...

२२/२७ ... ३२/५४ ...

[illegible]

२८/२२

[illegible]

महस्तूर पथा ध्यान त कुयान छे

लान्दकृडी गुरु समान मोन मोग्राम देव

दत सभातजमा द्वव उनकस्मात साधु

दातार योगेश्वर कल प्रदम, अ

कल्य शब्द नय प्रमा विषय गानता

पम य गुरु, चमकू तो सत नु प्रभ शत

विधु तासस्य पद रह मा सदा प्राण

गत गात संय भच ल रा जा था न ल

पन, रछो नास्य गुणा नय नय मध

स्वामी पल बधं अजा णा योध जड

ते ला जशा न ईवर समर देर गुरु मो

श्वर मान नाइपर मु सुन्दर चन्द्र

समा कुलम नि ... कु ला

... पदे ... गामता समता

कुरत याद भवान वि फल पार

हो नतमो ॥ २० ॥ नक पद मकुत मे

त लीलिया पार भेज भवसागर

पार गाम ॥ २१ ॥ गुरु पद ...

पंकज राजित, कनक नूपुर सुन्दर

शिंजार म॥२२॥ राजित चिन्ह [illegible]

[illegible] वज्र भुवन जावन माश्रये॥२३

सकल सत्फल पालन कोमल विमल

शोणित पंकज मांडित [illegible] पद

तल रवलु [illegible] पालन [illegible]

[illegible] धारा चलन जड॥२४॥ सुकन[illegible]

[illegible] सन पंकज पार जवसागर

[illegible] यादि कृपा जल [illegible]

पामर वदलु मा त्व पाद तल [illegible]

पर प्रदेश मनु [illegible] सकल

[illegible] वर गुरु [illegible] सकल

दीपित चन्द्र [illegible] कर वर गुरु

[illegible] पंकज माश्रयाम्यहं गुरु

[illegible] भुवन कारण केवलमय

सकार नादेन्दु [illegible]

[illegible] विमल [illegible]

[illegible] मादि [illegible]

वादसंतोविधुविरहित तत्पद

तमागुणसमाक्रान्त अद्योमईलू

माडलोद्दुविन्दु जिलपार्दुदल

गुरुपदमारश्च महालाद्दु शिरस

व ... तन्मध्ये चितारेखा सुधा

... प्रसाद जबोज मागमत

कूटक ॥२२॥ किरजोवि ... लक्ष्मी

आगोन्त्व मानुयात श्रीगुरुश्वरण ॥

मोजा गिसूत यत परा मूतमार ३॥

तत परा मूत धारा ... सन्त पायकुल

नायकाम पुनः पुनः समाकुर्या

प्रकुईनतो रमरतसदा ॥२४॥ पाय

... पररस धारये ... रत

... तत परा मूत धारा ...

सत ... कुल ... काम ॥२५॥

तत पुनः पुनः ... सर्वे

पुण्य फलवर धानरतं ...

लदगा प्राप्नोति ... क...

॥ २६ ॥

[illegible]

सवंत्तु जयमाझ्याते पुढ क्रोधो
महाभय, महा. योधा रिथरो
यातेसुर्यां ते मोक्ष मानुयात, २९
होतित कोपेत नाम्ना क्राह्नुरा
भेत मन्नु, आसा वक्र, विरवडेसपं
देलरुण कामु रत पतः ॥ २८ ॥
सत्पाल समुभ्राते विचारयो
भावपाद, याद, आसा वक्रो निरव-
डे च कामरूप महेश्वर, ॥ २८ ॥
चौनाचार समाक्रान्त श्मशाना
धिप वोक्षित म, पला पुपल वि-
डेड तोरपाद पद पक्ष व. ॥ ३० ॥
मासहास्त्रसोद पुढ महाकाल
समानुते कल्याकाटसम
नो. नताहणा हुंदे स्ररक्र. ३१
कोहे काहेन ते जाल शाणता
नकु प हं डोलिव दु पसादस मुक्त
शापु भकुंदप न ॥ ३२ ॥ गोरवो
प्व

[illegible]

॥ महत्पं आज्ञा चक्र महाप्रभु
विनाच्य परमेस्थम तत्क्षण॥
नमरामभत ॥३३॥ पडा॥ कृती
आलापन मन्त्रा रखादि विना
शनी न. कार सादोंकनीआसी
सर्व नानन लक्ष्मीम ॥३४॥ पद्य
नन्द पुणं श्रीमां हेमवासिंस
[illegible] तार, नानाइलकार श्रीआड़ी
नव पावन शील गीमा॥३५॥
पानस्तनी क्लो लाते नव धाा
स्वरूपा मा मनमुद्राकाल मेहा
नील पीत वर्ण॥ श्रीशिप्रज्ञा॥
उप [illegible] पुत्र सुदर्शन आत्मा वाम
तम हरं शिवा नन्द पादुका
सन नाम परनाथ रूप पादुकाम
॥३६॥ सर्वाधारान्मका शक्ति
निवास्योदि रत्नपद्मासने श्वास
॥३७॥ विलस पल कृत मातार
पाद तल ॥३८॥

ऽर्क कोटिविद्युत्प्रकाशं, अंगैर्वरमोपु

हैदेकांतं वह्नौ गायत्र्यं, सकलातलकिमो

पालयप्राणात्पञ्चरणातलविलग्नामंगाथ

पञ्चशी, कोटिकालानलं गासंचतुर्बाहुत्रिलो

चनानि, इंगशलालाभूकमध्यस्थं गुडाहि

विभूषिता, पंचमेनानिस्थितदेवात्मूलंडार

स्थानं वङ्चरवप्परंचैवचांमदासिवयाम्रतः

विग्रहं, सुन्दरं देवरमेशाभ्यां सर्वभोगेषु,

जानाम्यनकौड्यंते कालिका हृदयांसि

नीलिलात्यसरता सत्तत्पुरुषचुम्बनतत्पर

हृदयं गणपापुसयुक्तं भैरवी जनसेवितम

जाटि पिटलशीघ्रामारत्नसंवशूल्यालयास्थ

नाम, सर्वशून्यमनुंड भूषप्रसन्नवदनाशिवे

एकाकनी सकलधारणकालयोगआत्मय

देहस्ामकरवलुकांवेनीत्वां, वायबासेग

मनसि आशु विकारनाशकां कन्दर्पचंच

हितामदं नवखंडे, चन्द्रा कामेश्वरसिद्धि कु

लिशवरन्तरंकालचपुगांडाद्वा मवती

दुर्गां च पक्षाहृदयं जहां भा भैरवा वाड्याग

डेर, स्थासंस्याथी मूलपुशरभवर खंगंवड वा ताो

वेगं, संहस्र सवशत्रुं स्फजापातिशर मेमालुव

पाधिराजा, नविद्यां कामकलां यां चेतसमं

सुखहृदयकोटि सुख्यपदं प्रपायात, कामानन्दा
मदनानिरतामाविनी भावलिन्यो, कामानन्दो
स्वबसम नरता योगी योगस्य धात्रो देहकेदे
कुसरसनरता ध्यान पुत्र प्रपायात, कुल्लाकाल
कमलकलिका वासिनी काली काल, कंकाली
लिलपोडता कुल कला कालजला श्यामला
योगे दे सुराद्य नाथ पाज्ञता न्याय योगी तेन
पुष्पं माला केकुड सुखास्तन धान हीन वंदी
खलु न्यधेवपोर मालन प्रकर तत्व त्रा हृत
त्रय, स्वाधिष्ठान लिकतन परजन विद्या
धान मोपिन श्री आद्य कुल योगी त्रैभुवनानां
सैक बीज प्रणतु॥ सांसारे सब भाव नान्त
रत सवाद देवसुरवन, बन्दह वर सव शत्रु सकल
हृष्ट सिंहासनन्दनम॥ सव मे कुल मालिनी मन
मोर लिंग तिलबाम्बार ब॥ भारत्याधन
दायिनी सकर तन्या पाद द्वय पातु सा, मातृको
योजिका रश्मी महाशिव जटपनाशी मोकर खड
श्री हद हारसनी कुल तर गौरी पराबन्द्या
योगेश्वर योग कला निधि विद्या विद्यान च
मार्गस्थ मंडुगा॥ देवा चलालकु तधु द्वयेन
नराभय दान निदान मते भोजन पकुल

पुत्रात्र विद्युकतीसा मूलाद्ध्य
तां श्री आज्ञा गोविंद मूलाश्य संचान्या
मम मनास्य सिद्धयात्मय पुलत
कीली तुहीना पारद पुत्र विन्दुस्त
जप सपनु अन निवि ध्या
सिद्ध रस्तु मे॥ गंगे च यमुना
चैव गोदावरी सरस्वती नर्मदा
सिन्धु कावेरी जलेस्मिन संनिधिं
कुरु॥ तीर्थ तीर्थ निकर
स्वाध्याय तर बल्ले न सान्ध
देव तीर्थ दोहि दिवाकर॥
गुरुचरण कमल
परम गुरु परापर
गुरु शिव गुरु
गुरु
नरे वा गुरु सा
तस्मै श्री गुरवे
ध्यान मूलं गुरु मूर्ति पूजा मूलं

[illegible]

सायम तं जोरक वालेक चार

नया जेसम है र सतीत मान

तासि [illegible] ससार सभा समुद

नर [illegible] देव आग

पूजत सिद्ध मज धारे [illegible]

आक किना मत [illegible]

[illegible] राज मन [illegible]

माता पिता [illegible]

सखा [illegible]

[illegible]

[illegible] श्री गुरुदेव मन्त्र [illegible]

[illegible] सिर सो [illegible]

[illegible]

[illegible]

[illegible]

[illegible]

[illegible]

[illegible]

[illegible]

[illegible] ह्रीं स्वमुच्चय [illegible] दिनतारागण
[illegible] रादित्य प्रमुख सुरासुरगण
[illegible] कोटि किरं शत अलशत
कोशशत सिन्दूर मंडल शत स्तन [illegible]
[illegible] प्रपुरत [illegible] चामर
[illegible] परमानन्द [illegible] दीपक [illegible]
[illegible] मन हरशुनकर सापुरूप [illegible]
[illegible] नाना व्याधि [illegible] कारक
[illegible] ध्वंसन श्रीमत्सुन्दरी तर्पण
[illegible] पात्र [illegible] कलामृत
[illegible] स्वरूप [illegible] वस्तु [illegible]
[illegible] विद्युत् [illegible] कर [illegible]
सुमोध [illegible] कला [illegible] तन
[illegible] लिमध्यगा [illegible] तिनल [illegible]
कुंडली [illegible] पाषात [illegible]
[illegible] वकरूप [illegible] पादुका
[illegible] शान [illegible] ज्ञान [illegible]
[illegible] स्वरूप [illegible]
समस्त [illegible] पूर्णसुधा
[illegible]

[illegible]

[illegible] विशुद्धि शुद्ध करणम पाणी निधि [illegible] [illegible]

[illegible] संबंधनं विद्यातत्वं [illegible]

[illegible] सर्वपि [illegible]

[illegible] नाम पश्चात देवगणे [illegible] मुनिगणे [illegible]

[illegible] पात्र [illegible] [illegible] तत्वं [illegible]

ॐ [illegible] [illegible] मधुर [illegible]

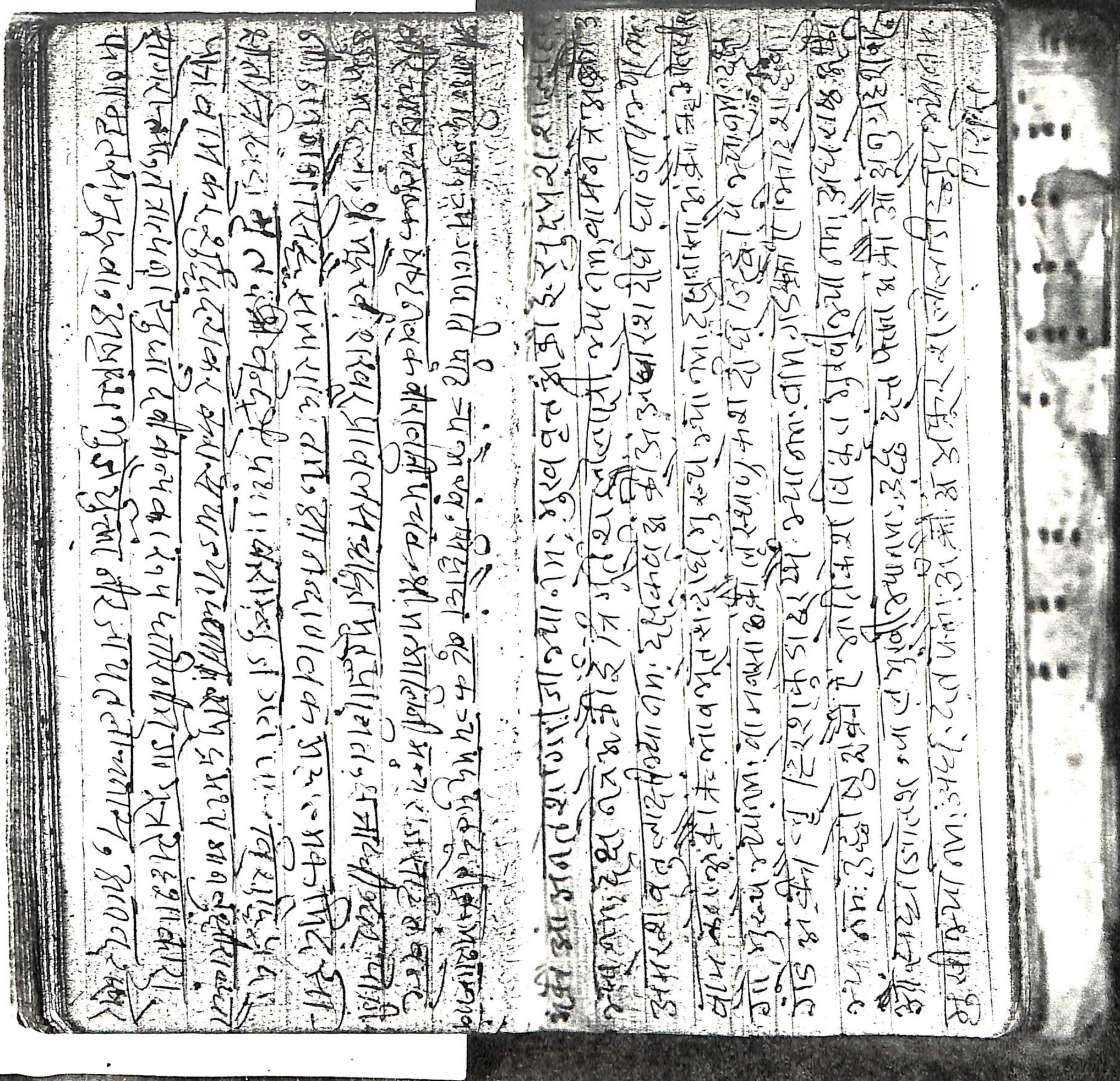
[illegible] आचार्य [illegible]

[illegible] पात्र चतुर्थ [illegible] सर्वतत्व [illegible] आचार [illegible]

[illegible] पात्र [illegible] मंडल मध्य सप्त समुद्र [illegible] [illegible]

[illegible]

आत्मानन्द [illegible] मोपाँग मेव ब्रह्मा विष्णु शिव [illegible] मा
[illegible] देवी पूर्ण ॥ [illegible] पावन मृतं [illegible] प्रमु
[illegible] कारणं [illegible] चित्त स्वातंत्र्य [illegible] तस्मा [illegible]
[illegible] तत्त्व [illegible] [illegible] कल्पान्त हुता [illegible] सुख [illegible]
[illegible] सुर स्तन [illegible] सुधा देवी पूर्ण [illegible] पिबाम्य [illegible]
[illegible] मन्त्र [illegible] मूर्त [illegible] मध्य [illegible]
[illegible] ॥ ॐ ब्रह्मार्पणं ब्रह्म हवि ब्रह्माग्नौ ब्रह्मणा हुतम् ब्रह्मैव तेन
गन्तव्यं ब्रह्मकर्म समाधिना ॥ ॐ [illegible] दीप [illegible]
[illegible] पंकज [illegible] तस्य [illegible]



[illegible] कारे संसत्वानुपम मानन्द निर्भरे ओंकार जव ससारे [illegible]

[illegible] श्री गुरु नामस विद्यावदन [illegible] सकल [illegible]

[illegible] सुरती मधुर मधु पिवत [illegible] दुरित [illegible]

[illegible] जपतु जपतु दवी सुन्दरी क्रीडयंती ॥३॥ ता नन्द विदद तं [illegible]

[illegible] डायमनन्दा सिक [illegible] नलासित वलां नवजू विलं ॥ [illegible] शरणं शरणं भव

[illegible] तापत्रय भवन, ध्यायेत श्रीगुरु चरण पूर्णानन्द [illegible] पूर्ण [illegible]

पीडक [illegible] बिम्ब [illegible] गुञ्जाहारलता [illegible]

ग्रीवां [illegible] ॥४॥ [illegible]

दिव्य भाषी प्रसन्न वदनां ध्याये [illegible]

नमो श्रु[illegible] विन्यं न्यासाय दक्ष पाद गुल मूले ऊं क्रौं [illegible] कालिक [illegible]

[illegible] वाम पाद गुल्फे ऊं क्रौं तं [illegible] आदेश पूतन न्यासाय [illegible]

[illegible] शुभ द्रकालै न्यासाय [illegible] ऊं क्रीं दं [illegible]

न्यास [illegible] ऊं क्रौं धं गौमर शाक्तिन्यो न्यासाय [illegible]

ऊं [illegible] जिन्यो न्यासाय वाम पाद गुल्फे ऊं क्रौं [illegible]

[illegible] न्यासाय दक्ष पार्श्वे ऊं क्रौं पं शिरवोरा [illegible]

वाम पार्श्वे ऊं क्रीं बं [illegible] न्यासाय [illegible] ऊं क्रीं [illegible]

वक्त्राय न्यासाय नाभौ ऊं क्रीं मं महाकाल [illegible] न्यासाय उदरे ऊं [illegible]

पं [illegible] सुमुख [illegible] न्यासाय हृदये ऊं क्रीं [illegible] न्यासाय

[illegible]

रुद्रयामलम्।

उत्तर-तन्त्रम्।

प्रथितकुलपतिना बि, ए उपाधिधारिणा
श्रीजीवानन्दविद्यासागरभट्टाचार्य्येण
सम्पादितम्
तदात्मजाभ्यां श्रीआशुबोध-विद्याभूषण
तथा
श्रीनित्यबोध-विद्यारत्नाभ्यां
प्रतिसंस्कृत्य प्रकाशितम्।

तृतीयसंस्करणम्।

कलिकातामहानगर्य्याम्,
वाचस्पत्ययन्त्रे मुद्रितम्।

ई १९३७।

मूल्यं रूप्यकत्रयम्।

प्रकाशक—{ पण्डित-श्रीआशुबोध-विद्याभूषण
तथा
पण्डित-श्रीनित्यबोध-विद्यारत्न।

प्राप्तिस्थान—{ २न०, रमानाथ मजुमदार ष्ट्रीट्
आम्हार्ष्ट ष्ट्रीट् पोष्ट-अफिस, कलिकाता।

प्रिण्टर—वि, वि, मुखर्जी।

२ न०, रमानाथ मजुमदार ष्ट्रीट्, कलिकाता।

सूचीपत्रम्।

विषयानुक्रमणी।

सूचीपत्रं समाप्तम् ।

रुद्रयामलम् ।

उत्तरतन्त्रम् ।

प्रथमः पटलः ।

उपक्रमणिका ।

भैरव उवाच ।—

परा श्रीपरमेशानी-वदनाम्भोजनिःसृतम् ।
श्रीयामलं महातन्त्रं स्वतन्त्रं विष्णुयामलम् ॥ १ ॥
शक्तियामलमाख्यातं ब्रह्मणः स्तुतिहेतुना ।
ब्रह्मयामलवेदाङ्गं सर्वञ्च कथितं प्रिये ! ॥ २ ॥
इदानीमुत्तराकाण्डं वद श्रीरुद्रयामलम् ।
यदि भाग्यवशाद्देवि ! तव श्रीमुखपङ्कजे ॥ ३ ॥
यानि यानि स्वतन्त्राणि संदत्तानि महीतले ।
प्रकाशय महातन्त्रं नान्यतन्त्रेषु दृप्तिमान् ॥ ४ ॥
सर्ववेदान्तवेदेषु कथितव्यं ततःपरम् ।
तदा ते भक्तवर्गाणां सिद्धिः सञ्चरते ध्रुवम् ।
यदि भक्ते दया भद्रे ! वद त्रिपुरसुन्दरि ! ॥ ५ ॥
महाभैरववाक्यञ्च पङ्कजायतलोचना ।
श्रुत्वोवाच महाकाली कथयामास भैरवम् ॥ ६ ॥

विविधसाधनसंग्रहः ।

भैरव्युवाच ।—

शम्भो ! महात्मदर्पघ्न ! कामहीनकुलाकुल ! ।
चन्द्रमण्डलशीर्षाच ! हलाहलनिषेवक ! ॥ ७ ॥

अद्वितीयाघोरमूर्त्ते ! रक्तवर्णशिखोज्ज्वल ! ।
महाकर्षिपते ! शिव ! सर्वेशाय नमो नमः ॥ ८ ॥
सर्वेषां प्राणमदन ! शृणु आनन्दभैरव ! ।
आदौ बालाभैरवीणां साधनं षट्कलात्मकम् ॥ ९ ॥
पश्चात् कुमारीललिता-साधनं परमाद्भुतम् ।
कुरुकुल्लाविप्रचित्ता-साधनं शक्तिसाधनम् ॥ १० ॥
योगिनीखेचरीयक्ष-कन्यकासाधनं ततः ।
उन्मत्तभैरवीविद्या-कालीविद्यादिसाधनम् ॥ ११ ॥
पञ्चमुद्रासाधनञ्च पञ्चबाणादिसाधनम् ।
प्रत्यङ्गिरासाधनञ्च कलौ साक्षात्कारं परम् ॥ १२ ॥
हरितालिकास्वर्णविद्या-धूम्रविद्यादिसाधनम् ।
आकाशगङ्गाविविध-कन्यकासाधनं ततः ॥ १३ ॥
भ्रूलतासाधनं सिद्ध-साधनं तदनन्तरम् ।
उल्काविद्यासाधनञ्च पञ्चतारादिसाधनम् ॥ १४ ॥
अपराजितापुरुहूता-चामुण्डासाधनं ततः ।
कालिकासाधनं कौल-साधनं धनसाधनम् ॥ १५ ॥
चर्चिकासाधनं पश्चात् घर्घरासाधनं ततः ।
सम्पत्प्रदा सप्तकूटा-साधनं चेटीसाधनम् ॥ १६ ॥
शक्तिकूटादिषट्कूटा-नवकूटादिसाधनम् ।
कनकाभाकाञ्चनाभा-वज्राभासाधनं ततः ॥ १७ ॥
वज्रकूटापञ्चकूटा-सकलासाधनं ततः ।
तारिणीसाधनं पश्चात् षोड़शीसाधनं स्मृतम् ॥ १८ ॥
छिन्नाद्युग्रप्रचण्डाद्या-साधनं सुमनोहरम् ।
उल्कामुखीरक्तमुखी-साधनं वीरसाधनम् ॥ १९ ॥
नानाविधाननिर्माण-शवसाधनमेव च ।
कात्यायनीसाधनञ्च कल्पाद साधनं ततः ॥ २० ॥

नक्षत्रविद्यापटलं कालीपटलमेव च ।
श्मशानकालिकादेवी-साधनं भूतसाधनम् ॥ २१ ॥
रतिक्रीड़ासाधनञ्च सुन्दरीसाधनं तथा ।
महामालासाधनञ्च महामायादिसाधनम् ॥ २२ ॥
भद्रकालीसाधनञ्च नीलासाधनमेव च ।
भुवनेशीसाधनञ्च दुर्गासाधनमेव च ॥ २३ ॥
वाराहीगारुड़ीचान्द्री-साधनं परमाद्भुतम् ।
ब्रह्माणीसाधनं पश्चात् हंसीसाधनमुत्तमम् ॥ २४ ॥
माहेश्वरीसाधनञ्च कौमारीसाधनं तथा ।
वैष्णवीसाधनं धात्री-धनदारतिसाधनम् ॥ २५ ॥
पञ्चाम्रावलिपूर्णाख्या नारसिंही-सुसाधनम् ।
कालिन्दीरुक्मिणीविद्या-राधाविद्यादिसाधनम् ॥ २६ ॥
गोपीश्वरीपद्मनेत्रा-पद्ममालादिसाधनम् ।
मुण्डमालासाधनञ्च भृङ्गारीसाधनं ततः ॥ २७ ॥
सकलाकर्षिणीविद्या-कपालिन्यादिसाधनम् ।
गुह्यकालीसाधनञ्च वगलामुखीसाधनम् ॥ २८ ॥
महाबालासाधनञ्च कलावत्यादिसाधनम् ।
कुलजाकलिकाकक्षा-कुक्कुटीसाधनं महत् ॥ २९ ॥
चिन्नादेवीसाधनञ्च शाङ्करीगूढ़साधनम् ।
प्रफुल्लाजमुखीविद्या-काकिनीसाधनं ततः ॥ ३० ॥
कुब्जिकासाधनं नित्या सरस्वत्यादिसाधनम् ।
भूर्लेखा-शशिमुकुटा-उग्रकाल्यादिसाधनम् ॥ ३१ ॥
मणिद्वीपेश्वरीमातृ-साधनं यक्षसाधनम् ।
केतकीकमलाकान्तिप्रदाभैव्यादिसाधनम् ॥ ३२ ॥
वागीश्वरी-महाविद्या-अन्नपूर्णादिसाधनम् ।
पञ्चदण्डारक्तमयी-मन्दारीसाधनं तथा ॥ ३३ ॥

हस्तिनीहस्तिकर्णाद्या-मातङ्गीसाधनं ततः ।
परानन्दानन्दमयी-साधनं गतिसाधनम् ॥ ३४ ॥
कामेश्वरीमहालज्जा-ज्वालिनीसाधनं वमेः ।
गौरीवैतालकङ्काली-वासवीसाधनं तथा ॥ ३५ ॥
चन्द्राख्यासूर्य्यकिरणा-रटन्तीसाधनं ततः ।
किङ्किणीपावनीविद्या अवधूतेश्वरीति च ॥ ३६ ॥
एतासां सिद्धविद्यानां साधनाद्रुद्र एव सः ।
अलकाकालियुगस्था-शक्तिटङ्करसाधनम् ॥ ३७ ॥
हरिणीमाहिनीक्षिप्रा-तृष्णादिसाधनं तथा ।
अट्टहासा-घोरनादा-महामेघादिसाधनम् ॥ ३८ ॥
वज्रीकौरविण्यादि-साधनं परमाद्भुतम् ।
रङ्गिणीमार्दनं पश्चात् नन्दकन्यादिसाधनम् ॥ ३९ ॥
मन्दिरासाधनं कात्यायनीसाधनमेव च ।
रजनीराजतीघोना-साधनं तालसाधनम् ॥ ४० ॥
पादुकासाधनं चिन्ता-साधनं रविसाधनम् ।
मुनिनाथेश्वरीशान्तिवल्लभासाधनं तथा ॥ ४१ ॥
मदिरासाधनं वीरभद्रासाधनमेव हि ।
मुण्डालीकलिनीदैत्यदर्शिनीसाधनं ततः ॥ ४२ ॥
प्रविष्टवर्णलक्ष्मीमा-मीनादिसाधनं महत् ।
फेत्कारीसाधनं भल्लातकीसाधनमद्भुतम् ॥ ४३ ॥
उड्डीयानेश्वरीपूर्णा-गिरिजासाधनं तथा ।
सौकरीराजवशिनी-दीर्घजङ्घादिसाधनम् ॥ ४४ ॥
अयोध्यापूजिता-देवी-द्राविणीसाधनाद्भुतम् ।
ज्वालामुखीसाधनञ्च कृष्णजिह्वादिसाधनम् ॥ ४५ ॥
पञ्चवक्त्रप्रियाविद्याऽनन्तविद्यादिसाधनम् ।
श्रीविद्याभुवनेशानी-साधनं कायसाधनम् ॥ ४६ ॥

रत्नमालामहाचण्डी-महाज्वालादिसाधनम् ।
प्रक्षिप्तामन्त्रिकाकामभूजिताभक्तिसाधनम् ॥ ४७ ॥
ब्रासख्यावायवीप्राप्ता-लेलिहानादिसाधनम् ।
भैरवीलम्बितापृथ्वी-वाटुकीसाधनं तथा ॥ ४८ ॥
अगम्या-आकुलीमीलीन्द्राञ्जनमन्त्रसाधनम् ।
कुलावतीकुलक्षिप्ता-रतिचीनादिसाधनम् ॥ ४९ ॥
शिवाक्रीडादितरुणी-नायिकामन्त्रसाधनम् ।
साधनं शैलवासिन्या अकस्मात् सिद्धिवर्द्धनम् ॥ ५० ॥
मन्त्रयन्त्रस्वतन्त्रादि-पूज्यमानाः परात्पराः ।
एताः सर्वाः कलियुगे कालिका हरकोमलाः ॥
मन्त्राद्या येन सिध्यन्ति सत्यं सत्यं न संशयः ॥ ५१ ॥
महाकाल ! शिवानन्द ! परमानन्दपारग ! ।
भक्तानामनुरागेण विद्यारत्नं पुनः शृणु ॥ ५२ ॥
आदौ वैष्णवदेवस्य मन्त्राणां नित्यसाधनम् ।
ततस्ते मङ्गलं मन्त्र-साधनं परमाद्भुतम् ॥ ५३ ॥
अकस्मादिहिता सिद्धिर्येन सिध्यति भूतले ॥ ५४ ॥
बालाभैरवयोगेन्द्र-साधनं शिवसाधनम् ।
महाकालसाधनञ्च तथा रामेश्वरस्य च ॥ ५५ ॥
अघोरमूर्त्ते ! रमणा-साधनं शृणु यत्नतः ।
क्रोधराज ! भूतराज ! एकचक्रादिसाधनम् ॥ ५६ ॥
गिरीन्द्रसाधनं पश्चात् कुलनाथस्य साधनम् ।
वटुकेशादिश्रीकण्ठेशादिसाधनमेव च ॥ ५७ ॥
मृत्युञ्जयस्य रौद्रस्य कालान्तकहरस्य च ।
उन्मत्तभैरवस्यापि तथा पञ्चास्यकस्य च ॥ ५८ ॥
कैलासेशस्य शम्भोश्च तथा शूलिन एव च ।
भार्गवेशस्य सर्वस्य महाकालस्य साधनम् ॥ ५९ ॥

सुरान्तकस्य पूर्णस्य तथा देवस्य शङ्कर !।
हरिद्रागणनाथस्य वरदेश्वरमालिनः ॥ ६० ॥
ऊर्द्धकेशस्य धूम्रस्य जटिलस्यापि साधनम्।
आनन्दभैरवस्यापि वाणनाथस्य साधनम् ॥ ६१ ॥
करीन्द्रस्य शुभाङ्गस्य हिङ्गोलमर्दकस्य च।
पुष्पनाथेश्वरस्यापि वृषनाथस्य साधनम् ॥ ६२ ॥
कपिलेशस्य रुद्रस्य तथा पिङ्गाचकस्य च।
दिगम्बरस्य सूक्ष्मस्य उपेन्द्रपूजितस्य च ॥ ६३ ॥
अवधूतेश्वरस्यापि अष्टवसोश्च साधनम्।
अष्टमूर्त्तेः कालमूर्त्तेश्चन्द्रशेखरसाधनम् ॥ ६४ ॥
क्रमुकस्यापि घोरस्य कुवेराराधितस्य च।
त्रिपुरान्तकमन्त्रस्य कमलाचस्य साधनम् ॥ ६५ ॥
इत्यादि सिद्धमन्त्राणां मन्त्रार्थं विविधं मुदा।
उदितं तद्विशेषेण सुविस्तार्थ्यं शृणुष्व तत् ॥ ६६ ॥
इन्द्रादिदेवताः सर्वा येन सिध्यन्ति भूतले।
तत्प्रकारं महादेव ! सानन्दमवधारय ॥ ६७ ॥
उपविद्यासाधनञ्च मन्त्राणि विविधानि च।
नानाकर्माणि धर्माणि षट्कर्मसाधनानि च ॥ ६८ ॥
श्रीरामसाधनं यक्ष-साधनं योगसाधनम्।
सर्वविद्यासाधनञ्च राजज्वालादिसाधनम् ॥ ६९ ॥
मन्त्रसिद्धिप्रकारञ्च हनूमत्साधनादिकम्।
विषज्वालासाधनञ्च पाताललोकसाधनम् ॥ ७० ॥
भूतलिपिप्रकारञ्च तत्तत्साधनमेव च।
नवकन्यासाधनञ्च अष्टसिद्धिप्रकारकम् ॥ ७१ ॥
आसनानि च अङ्गानि साधनानि बहूनि च।
कात्यायनीसाधनानि चेटीसाधनमेव च ॥ ७२ ॥

कृष्णमार्जारसिद्धिश्च खड्गसिद्धिस्ततःपरम्।
पादुकाजङ्घसिद्धिश्च निर्जजिह्वादिसाधनम् ॥ ७३ ॥
संस्कारगुटिकासिद्धिः खेचरीसिद्धिरेव च।
भूप्रवेशप्रकारत्वं नित्यतुङ्गादिसाधनम् ॥ ७४ ॥
स्तम्भनं दारु(र)णं पश्चादाकर्षणं मुनेरपि।
नानाविधानि देवेश ! औषधादीनि यानि च ॥ ७५ ॥
हरितालादिसिद्धिश्च रसपारदसाधनम्।
नानारससमुद्भूतं रसभस्मादिसाधनम् ॥ ७६ ॥
वृद्धस्य तरुणाकार-साधनं परमाद्भुतम्।
वैजयन्तिसाधनञ्च चरित्रं वासकस्य च ॥ ७७ ॥
शिवाचरित्रमश्वस्य चरित्रं वायसस्य च।
कुमारीणां प्रकारन्तु वज्राणां वारणं तथा ॥ ७८ ॥
सम्पत्तिसाधनं देश-साधनं कालसाधनम्।
गुरुपूजाविधानञ्च गुरुसन्तोषसाधनम् ॥ ७९ ॥
निजदेवाराधनञ्च निजसाधनमेव च।
वारुणीपेष्टिकीगौड़ी-कैतकीमाध्वीसाधनम् ॥ ८० ॥
स्व(स)देहगमनं स्वर्गे मर्त्यामर्त्येषु दुर्लभम्।
शरीरवर्द्धनञ्चैव कृष्णभावस्य साधनम् ॥ ८१ ॥
नयनाकर्षणञ्चैव कालसर्पस्य दर्शनम्।
रणक्षोभप्रकारञ्च पञ्चेन्द्रियनिवारणम् ॥ ८२ ॥
योगविद्यासाधनञ्च भक्षप्रश्ननिरूपणम्।
चान्द्रायणव्रतञ्चैव शृणु तत् योगसिद्धये ॥ ८३ ॥
यामलाग्रे न शंसन्ति यानि सर्वाणि कानि च।
ब्रह्माण्डे यानि वस्तूनि सर्वत्र दुर्लभं शिव ! ॥ ८४ ॥
येऽभ्यसन्ति महातन्त्रं बालादा यन्त्रतोऽपि वा।
यामलं मम वक्त्राम्भोरुहसुन्दरसम्भवम् ॥ ८५ ॥

अतिगुह्यं महागुह्यं शब्दगुह्यं निराकुलम् ।
नानासिद्धिसमुद्राणां गृहं योगमयं शुभम् ॥ ८६ ॥
शास्त्रजालस्य सारं हि नानामन्त्रमयं प्रियम् ।
वाराणसीपुरपतेः सदामोदसुखास्पदम् ॥ ८७ ॥
सरस्वतीदैवतं यत् कालीषु शिखरे व्रतम् ।
महामोक्षं द्वारमोक्षं सर्वसङ्केतशोभितम् ॥ ८८ ॥
वाञ्छाकल्पद्रुमं तन्त्रं शिवसंस्कारसंस्कृतम् ।
अप्रकाश्यं क्रियासारं सहस्रस्तुतिराजितम् ॥ ८९ ॥
अष्टोत्तरशतं नाम सहस्रनाममङ्गलम् ।
नानाद्रव्यसाधनादि-विष्टुताञ्जनरञ्जितम् ॥ ९० ॥
कालीप्रत्यञ्जकथनं कालीषोढ़ादिसंपुटम् ।
महाचमत्कारकरं स्थितिसंहारपालकम् ॥ ९१ ॥
अष्टादशप्रकारस्य षोढ़ायाः सौख्यमुक्तये ।
ये जानन्ति महाकाल ! यामलं कलिपावनम् ॥ ९२ ॥
आब्रह्मस्तम्बपर्य्यन्तं करे तस्य न संशयः ।
तत्प्रकारमहं वक्ष्ये निगमागममङ्गलम् ॥ ९३ ॥
यस्माद्रुद्रो भवेज्ज्ञानी नानातन्त्रार्थपारगः ।
यामिनीविहितं कर्म कुलतन्त्राभिसाधनम् ॥ ९४ ॥
महावीरहितं यस्मात् पञ्चतत्त्वस्वरूपकम् ।
लङ्घनं नास्ति मे नाथ ! अस्मिन् तन्त्रे सुगोपनम् ॥ ९५ ॥
ततो यामलमाख्यातं चन्द्रशेखर ! शङ्कर ! ।
रुद्राच्च साधनोत्कृष्टं शतयागफलप्रदम् ॥ ९६ ॥
मनःसन्तोषविपुलं यामलं परिकीर्त्तितम् ।
वटुकादिभैरवाणां ब्राह्मीदेव्याश्च साधनम् ॥ ९७ ॥
जाम्बूनदलताकोटि-हेमदासाधनं यतः ।
मनसासाधनं यत्र लङ्कालक्ष्मीप्रसाधनम् ॥ ९८ ॥

देवतानाञ्च कवच नानाध्यानव्रतं महत् ।
मन्त्रयोगविधानानि कालिकालफलानि च ॥ ९९ ॥
भ्रान्तिर्यैव प्रभाकारं प्रायश्चित्तविमर्षणम् ।
पटलं त्रिंशता व्याप्तं ये पठन्ति निरन्तरम् ॥ १०० ॥
अवश्यं सिद्धिमाप्नोति यत् यदिच्छन्ति भूतले ।
कर्मणा मनसा वाचा महातन्त्रस्य साधनम् ॥ १०१ ॥
करोति कमलानाथ ! करपद्मनिषेवितम् ।
ज्ञात्वा सर्वधरं तन्त्रं सम्पूर्णं लोकमण्डले ॥ १०२ ॥
प्राप्नोति साधकः सिद्धिं मासादेव न संशयः ।
नानाचक्रस्य माहात्म्यं नानाङ्गमण्डलावृतम् ॥ १०३ ॥
सर्वज्ञसिद्धिशतकं खण्डकालीकुलालयम् ।
तरुणादित्यसङ्काशं वनमालाविभूषितम् ॥ १०४ ॥
दैवतं परमं हंसं कालकूटाग्निं प्रभुम् ।
आदौ ध्यात्वा पूजयित्वा नमस्कुर्य्यात् कुलेश्वरम् ॥ १०५ ॥
प्रथमारुणसङ्काशं रत्नालङ्कारभूषितम् ।
वरदं वारुणीमत्तं परहंसं नमाम्यहम् ॥ १०६ ॥

भैरव उवाच ।—

यदि न पठ्यते तन्त्रं यामलं सर्वशङ्करम् ।
तदा केन प्रकारेण साधकः सिद्धिभाग् भवेत् ॥ १०७ ॥
केचिच्च बुद्धिहीनाश्च मेधाहीनाश्च ये जनाः ।
मन्दभाग्याश्च धूर्त्ताश्च मूढ़ाः सर्वापदावृताः ॥ १०८ ॥
प्राप्नुवन्ति कथं सिद्धिं दया जाता कथं वद ।
तेषु मूर्खेषु हीनेषु शास्त्रार्थवर्जितेषु च ॥ १०९ ॥
ज्ञानं भवति केनैव निर्मलं द्वैतवर्जितम् ।
तत्प्रकारं वद स्नेहात् लोकानां पुण्यवृद्धये ॥ ११० ॥

दिव्यादिभाव-प्रशंसा।

भैरव्युवाच।—

कर्मसूत्रं यश्छिनत्ति प्रत्यहं तनुसंस्थितः।
स पश्यति जगन्नाथ! मम श्रीचरणाम्बुजम् ॥ १११ ॥
विश्रमावेशसंस्कारभिन्नबुद्धिक्रियान्विताः।
अतो मां न हि जानन्ति नानाकार्य्योत्कटावृताः॥११२॥
तेषां शरीरं गृह्णाति कालदूतो भयानकः।
यः करोति महायोगं त्यागसन्न्यासधर्मवान् ॥ ११३ ॥
मन्दभाग्यः पशोर्योनिं प्राप्नोति मां विहाय हि।
मयि भावं यः करोति दुर्लभो जनवल्लभः ॥ ११४ ॥
भावेन लभ्यते सर्वं भावेन देवदर्शनम्।
भावेन परमं ज्ञानं तस्माद्भावावलम्बनम् ॥ ११५ ॥
भावश्च सर्वशास्त्राणां गूढं सर्वेन्द्रियस्थितम्।
सर्वेषां मूलभूतश्च देवीभावं यदा लभेत् ॥ ११६ ॥
तदैव सर्वसिद्धिश्च तदा ध्यानदृढो भवेत् ॥ ११७ ॥
अकलङ्को निराहारी निवासवृतमानसः।
नित्यस्नानादिपूजाङ्गो भावी भावं यदा लभेत् ॥ ११८ ॥
क्रियादक्षो महाशिक्षानिपुणोऽपि जितेन्द्रियः।
सर्वशास्त्रनिगूढार्थवेत्ता न्यासविवर्जितः ॥ ११९ ॥
तेषां हस्तगतं भावं वद भावं यथा तनौ।
भावात् परतरं नास्ति येनानुग्रहवान् भवेत् ॥ १२० ॥
भावादनुग्रहप्राप्तिरनुग्रहान्महासुखी।
सुखात् पुण्यप्रभावः स्यात् पुण्यादच्युतदर्शनम्।
यदा कृतस्य दर्शनाम्भोजदर्शनमङ्गलम् ॥ १२१ ॥
योगी भूत्वा सूक्ष्मपदं योगिनामप्यदर्शनम्।
पश्यत्येव महाविद्या-पादाम्भोरुहपावनम् ॥ १२२ ॥

गुरूणां परहंसानां वाक्यं त्रैलोक्यपावनम्।
श्रुत्वा साध(न)कःसिद्ध्यर्थं योगी योगमवाप्नुयात् ॥१२३॥
पञ्जरे शुकसारी च पतगाः पक्षियोनयः।
गृह्णाति साधकः स्वर्गात् मन्नाम, विमलं महत् ॥ १२४॥
यावद् ज्ञानस्य सञ्चारं तावत् कालं कुलेश्वर!।
साधकानाञ्च साधूनां निकटस्थो भवेन्नरः ॥ १२५ ॥
विद्याभ्यासी न पतति यदि बुद्धिपरो भवेत्।
न हि चेज्जन्मव्याख्यार्थं नानाशास्त्रार्थभाषणम् ॥ १२६ ॥
सुरज्ञानं विना किञ्चित् न हि सिध्यति भूतले।
मन्त्रं श्रीकार्यसिद्धिश्च कथं भवति भैरव! ॥ १२७ ॥
सांख्यज्ञानं वेदभाषा-विधिज्ञानं तथा समम्।
शक्तिं विना यथाशक्तं सुरज्ञानं विना हि सः ॥ १२८ ॥
अहिताचारसम्पत्तिर्दरिद्रस्य गृहे यथा।
साधकस्य गृहे शक्तिज्ञानाचारविवेचना ॥ १२९ ॥
जायते यदि सायुज्य-पदनाशाय केवलम् ॥ १३० ॥
यद्यज्ञानविशिष्टा सा स्वशक्तिः शिवकामिनी।
तदा न कुर्य्यात् ग्रहणं शक्तिसाधनमेव च ॥ १३१ ॥
यदि कुर्य्यादसंस्कारात् संसर्गं साधकोत्तमः।
असंस्कृत्यादिदोषेण सिद्धिहानिः प्रजायते ॥ १३२ ॥
शक्तिप्रधानं भावानां त्रयाणां साधकस्य च।
दिव्यवीरपशूनाञ्च भावत्रयमुदाहृतम ॥ १३३ ॥
पशुभावे ज्ञानसिद्धिः पश्चाचारनिरूपणम्।
वीरभावे क्रियासिद्धिः साक्षाद्रुद्रो न संशयः ॥ १३४ ॥
दिव्यभावे वीरभावे विभिन्नमेकभावतः।
शृणु: पूर्वः सर्वगतं दिव्यभावस्य लक्षणम् ॥ १३५ ॥
दिव्यभावे देवतायाः दर्शनं परिकीर्त्तितम्।

वीरभावे मन्त्रसिद्धिरद्वैताचारलक्षणम् ॥ १३६ ॥
आदौ भावं पशोः प्राप्य रात्रिकर्म विवर्जयेत् ।
दिवसे दिवसे स्नानं पूजानित्यक्रियान्वितः ॥ १३७ ॥
पुरश्चरणवत् कार्य्यं शुचिभावेन सिध्यते ।
पशुभावं विना वीरो को वशी भवति ध्रुवम् ॥ १३८ ॥
इन्द्रियाणाञ्च दमनं दमनं शमनस्य च ॥ १३९ ॥
योगशिक्षानिविष्टाङ्गो मयि योगपरायणः ।
सर्वक्षणादभ्यासतः प्रभावविधिरात्रिषु ॥ १४० ॥
सर्वकालञ्च कर्त्तव्यं योगं सर्वसुखप्रदम् ।
वाञ्छाकल्पतरुं नित्यं तरुणं पातकापहम् ॥ १४१ ॥
साधयेत् स्वहितं मन्त्री पशुभावस्थितो यदि ।
योगभावविधिज्ञानं सर्वभावेषु दुर्लभम् ।
तथा च पशुभावेन शीघ्रं सिध्यति निश्चितम् ॥ १४२ ॥
गुरूणां श्रीपदाम्भोजे यस्य भक्तिर्दृढ़ा भवेत् ।
स भवेत कामनात्यागी भावमात्रोपलक्षणात् ॥ १४३ ॥
वीरभावो महाभावो न भावं दुष्टचेतसाम् ।
भावं मन्दगतं सूक्ष्मं रुद्रमूर्त्त्या प्रसिध्यति ॥ १४४ ॥
भ्रष्टाचारं महागूढ़ त्रैलोक्यमङ्गलं शुभम् ॥ १४५ ॥
पञ्चतत्त्वादिसिद्ध्यर्थं महामोहमदोद्भवम् ।
सर्वपीठकुलाचारं हठादानन्दसागरम् ॥ १४६ ॥
कारुण्यवारिधिं वीर-साधने भक्तिकेवलम् ।
ज्ञानी भूत्वा पशोर्भावे वीराचारं ततःपरम् ॥ १४७ ॥
वीराचाराद्भवेद्रुद्रोऽन्यथा नैव च नैव च ।
भावद्वयस्थितो मन्त्री दिव्यभावं विचारयेत् ॥ २४८ ॥
सदा शुचिर्दिव्यभावमाचरेत् सुसमाहितः ।
देवतायाः प्रियार्थञ्च सर्वकर्म कुलेश्वर ! ॥ १४९ ॥

यद् यत्तत्सकलं सिद्धिर्यस्माद्धर्मोदयं शुभम् ।
देवतातुल्यभावश्च देवतायाः क्रियापरः ॥ १५० ॥
तद्विद्धि देवताभावं सुदिव्यभाक् प्रकीर्त्तितम् ।
सर्वेषां भाववर्गाणां शक्तिर्मूलं न संशयः ॥ १५१ ॥
भक्तिं केन प्रकारेण प्राप्नोति साधकोत्तमः ।
ज्ञात्वा देवशरीरस्य निजकार्य्यानुशासनात् ॥ १५२ ॥
ज्ञानञ्च त्रिविधं प्रोक्तमागमसारसम्भवम् ।
शब्दब्रह्ममयं तद्धि ज्ञानमार्गेण पश्यति ॥ १५३ ॥
पठित्वा सर्वशास्त्राणि स्वकर्मगायनानि च ।
क्रमे विवेकमालम्ब्य नित्यं ज्ञानी च साधकः ॥ १५४ ॥
विवेकसम्भवं ज्ञानं शिवज्ञानप्रकाशकम् ।
लोचनद्वयहीनञ्च बाह्यभावविवर्जितम् ॥ १५५ ॥
लोकानां परिनिर्मुक्तं कालाकालं विलोड़नम् ।
नित्यज्ञानं परं ज्ञानं तं विद्धि प्राणगोचरम् ॥ १५६ ॥
मानुषं सफलं जन्म सर्वशास्त्रेषु गोचरम् ।
चतुरशीतिलक्षेषु शरीरेषु शरीरिणाम् ॥ १५७ ॥
न मानुष्यं विनाऽन्यत्र तत्त्वज्ञानन्तु विद्यते ।
कदाचिल्लभ्यते जन्म मानुष्यं पुण्यसञ्चयात् ॥ १५८ ॥
सोपानीभूतमोक्षस्य मानुष्यं जन्मदुर्लभम ।
मानुषेषु च शंसन्ति सिद्धयः स्युः प्रधानिकाः ॥ १५९ ॥
अणिमादिगुणोपेतात् तस्माद्देवो नरोत्तमः ।
विना देहेन कस्यापि पुरुषार्थो न लभ्यते ॥ १६० ॥
तस्माच्छरीरं संरक्ष्य नित्यं ज्ञानं प्रसादय ।
मानुषं ज्ञाननिकरं ज्ञानात्मानं परं विदुः ॥ १६१ ॥
मुनयो मौनशीलाश्च मुनितन्त्रादिगोचरम् ।
मानुषः सर्वगामी च नित्यस्थाननिराकुलः ॥ १६२ ॥

शिवजापं योगजापं कृत्वा पापनिवारणम् ।
परं मोक्षमवाप्नोति मानुषो नात्र संशयः ॥ १६३ ॥
मयोक्तानि च तन्त्राणि मद्भक्ताय पठन्ति च ।
पठित्वा कुरुते कर्म कृत्वा मत्सन्निधिं व्रजेत् ॥ १६४ ॥
मद्भक्त्या तन्त्रशास्त्राणि न ज्ञात्वा साधको यदि ।
अन्यशास्त्राणि सम्बोध्य कोटिवर्षेण सिध्यति ॥ १६५ ॥
शुक्तौ रजतविभ्रान्तिर्यथा हि जायते वरे ।
तथाऽन्यदर्शनेभ्यश्च भुक्तिमुक्तिञ्च काङ्क्षति ॥ १६६ ॥
यत्र भोगस्तत्र मोक्षो द्वयं कुत्र न सिध्यति ।
मम श्रीपादुकाम्भोज-सेवको मोक्षभागी सः ॥ १६७ ॥
बाह्यद्रष्टा प्रपश्यन्ति आकाशस्थिततेजसम् ।
ब्रह्माण्डज्ञानद्रष्टा च देहाण्डस्थं प्रपश्यति ॥ १६८ ॥
घटप्रत्यक्षसमये आलोको व्यञ्जको यथा ।
विना घटत्वयोगेन न प्रत्यक्षो यथा घटः ॥ १६९ ॥
इतराद्भिद्यमानेऽपि न भेदमुपगच्छति ।
पुरुषेणैव भेदोऽस्ति विना शक्तिं कथञ्चन ॥ १७० ॥
शक्तिहीनो यथा देहो निर्बलो वाग्विवर्जितः ।
ज्ञानहीनं तथाऽऽत्मानं न पश्यति पदद्वयम् ॥ १७१ ॥
स्वभावं नाभिगच्छन्ति संसारज्ञानमोहिताः ।
नाभिपश्यन्ति मच्छोकमज्ञानं परिभाव्य ते ॥ १७२ ॥
ईश्वरस्यापि दूतस्य यमराजस्य बन्धनम् ।
निधनं चानुगच्छन्ति दृष्ट्वा च तनुजं धनम् ॥ १७३ ॥
लोका मोहसुरां पीत्वा न वेत्ति हितमात्मनः ।
सम्पदः स्वप्नमिव स्यात् यौवनं कुसुमोपमम् ॥ १७४ ॥
तडिच्चपलमायुश्च कस्याप्यज्ञानतो धृतिः ।
मृतं जीवति मर्त्येषु निद्रा स्यादर्द्धहारिणी ॥ १७५ ॥

सर्वं हरति कामिन्याऽऽसक्तबुद्धिः प्रतापिनी ।
सद्वृत्तिश्च मूढानां हन्त्यायुषमहर्निशम् ॥ १७६ ॥
व्याधिरोगजरादुःखैः सर्वं तदपि निष्फलम् ।
स्त्रीपुत्रपितृ-मात्रादि-सम्बन्धः केन हेतुना ॥ १७७ ॥
दुःखमूलो हि संसारः स यस्यास्ति स दुःखितः ।
तस्य त्यागः कृतो येन स सुखी नात्र संशयः ॥ १७८ ॥
सुखदुःखपरित्यागो कर्मणा किं न लभ्यते ? ।
लोकाचारभयार्थं हि यः करोति क्रियाविधिम् ॥ १७९ ॥
ब्रह्मजातोऽहमखिले जपति यो निरादरः ।
सांसारिकसुखासक्तो ब्रह्मज्ञोऽस्मीति वक्ति च ॥ १८० ॥
त्यजेत्तं सततं धीरश्चाण्डालमिव दूरतः ।
गृहारण्यसमालोके गतव्रीडा दिगम्बराः ।
चरन्ति गर्दभाद्याश्च व्रतिनस्ते भवन्ति किम् ? ॥ १८१ ॥
तृणपर्णादिकाहाराः सततं वनवासिनः ।
हरिणादिमृगाश्चैव तापसास्ते भवन्ति किम् ? ॥ १८२ ॥
शीतवातातपसहा भक्ष्याभक्ष्यसमा अपि ।
चरन्ति शूकराद्याश्च व्रतिनस्ते भवन्ति किम् ? ॥ १८३ ॥
आकाशे पक्षिणः सर्वे भूतप्रेतादयोऽपि च ।
चरन्ति रात्रिगाः सर्वे खेचराः किं महेश्वराः ? ॥ १८४ ॥
आजन्ममरणान्तञ्च गङ्गादितटिनीस्थिताः ।
मण्डूकमत्स्यप्रमुखा व्रतिनस्ते भवन्ति किम् ? ॥ १८५ ॥
एतज्ज्ञानं विविच्याज्ञा यदि गच्छन्ति पण्डिताः ।
तथापि कर्मदोषेण न करस्था भवन्ति हि ॥ १८६ ॥
कौटिल्यालससंसर्ग-वर्जिता ये भवन्ति हि ॥ १८७ ॥
प्राप्नुवन्ति मम स्थानं मम भक्तिपरायणाः ।
ऊर्द्ध्वं व्रजन्ति भूतानि शरीरमतिवाहिकम् ॥ १८८ ॥

निजदेहाभिशापेन नानारूपो भवेन्नरः ।
शरीरजैः कर्मदोषैर्याति दुष्टां गतिं नरः ॥ १८८ ॥
इह दुश्चरितैः केचित् केचित् पूर्वकृतैस्तथा ।
प्राप्नुवन्ति दुरात्मानो नरा रूपविपर्ययम् ॥ १९० ॥
गुरुपादविहीना ये ते नश्यन्ति ममाज्ञया ।
गुरुस्थलो हतत्राणे गुरुमूलं परन्तप ।
गुरोः प्रसादमात्रेण सिद्धिरेव न संशयः ॥ १९१ ॥
अहं गुरुरहं देवो मन्त्रार्थोऽहं न संशयः ।
भेदका नरकं यान्ति नानाशास्त्रार्थवर्जिताः ॥ १९२ ॥
सर्वासामेव विद्यानां दीक्षामूलं खलु प्रभो ! ।
गुरुमूलं स्वतन्त्रस्य गुरुरात्मा न संशयः ॥ १९३ ॥
आत्मैव ह्यात्मनो बन्धुरात्मैव रिपुरात्मनः ।
आत्मना क्रियते कर्म भावसिद्धिस्तदा भवेत् ॥ १९४ ॥
हीनाङ्गः कपटी रोगी बह्वाशी शीलवर्जितः ।
मय्युपासनमाश्रित्य उपविद्यां सदाभ्यसेत् ॥ १९५ ॥
धनं धान्यं सुतं वित्तं राज्यं ब्राह्मणभोजनम् ।
शुभार्थं संप्रयोक्तव्यं नान्यचिन्ता वृथा फलम् ॥ १९६ ॥
नित्यश्चाद्वरतो मर्त्यो धर्मशीला नरोत्तमः ।
महीपालः प्रियाचारः पीठभ्रमणतत्परः ॥ १९७ ॥
पीठे पीठे महाविद्यादर्शनं यदि लभ्यते ।
तदा तस्य करे सर्वाः सिद्धयोऽव्यक्तमण्डलाः ॥ १९८ ॥
अकस्माज्जायते सिद्धिर्महामायाप्रसादतः ।
महावीरो महाधीरो दिव्यभावस्थितोऽपि वा ॥ १९९ ॥
अथवा पशुभावस्थो मन्त्री पीठे विवासयेत् ।
क्रियायाः फलदं प्रोक्तं भावत्रयमनोरमम् ॥ २०० ॥
तथा च पशुभावेन दिव्यवीरेण भैरव ! ।

प्रपश्यन्ति महावीराः पशवो हीनजातयः ॥ २०१ ॥
न पश्यन्ति कलियुगे शास्त्राभिभूतचेतसः ।
अपि वर्षसहस्रेण शास्त्रान्तं नैव गच्छति ॥ २०२ ॥
तर्काद्यनेकशास्त्राणि अल्पायुर्विघ्नकोटयः ।
तस्मात् सारं विजानीयात् क्षीरं हंसमिवाम्भसि ॥ २०३ ॥
कलौ च दिव्यवीराभ्यां नित्यं तद्गतचेतसः ।
महाभक्ताः प्रपश्यन्ति महाविद्यापरं पदम् ॥ २०४ ॥
साधवो मौनशीलाश्च सदा साधनतत्पराः ।
दिव्यवीरस्वभावेन पश्यन्ति मत्पदाम्बुजम् ॥ २०५ ॥
भावद्वयं ब्राह्मणानां महासत्फलकाङ्क्षिणाम् ।
अथवा चावधूतानां भावद्वयमुदाहृतम् ॥ २०६ ॥
भावद्वयप्रभावेण महायोगी भवेन्नरः ।
मूर्खोऽपि वाक्पतिश्रेष्ठो भावद्वयप्रसादतः ॥ २०७ ॥
ये जानन्ति महादेव ! मम तन्त्रार्थसाधितम् ।
भावद्वयं हि वर्णानां ते रुद्रा नात्र संशयः ॥ २०८ ॥
भावको भक्तियोगेन्द्रः सर्वभावज्ञसाधनम् ।
उन्मत्तजडवन्नित्यं निजतन्त्रार्थपारगः ॥ २०९ ॥
हस्तो वहति पुष्पाणि गन्धं जानाति नासिका ।
पठन्ति तत्त्वशास्त्राणि दुर्लभा भावबोधकाः ॥ २१० ॥
प्रज्ञाहीनस्य पठनमन्धस्यादर्शदर्शनम् ।
प्रज्ञावतो धर्मशास्त्रं बन्धनायोपकल्पते ॥ २११ ॥
तत्त्वमीदृगिति भवेदिति शास्त्रार्थनिश्चयः ।
अहं कर्त्ताऽहमात्मा च सर्वव्यापी निराकुलः ॥ २१२ ॥
मनसेति स्वभावश्च चिन्तयन्नपि वाक्पतिः ।
सौदामि[म]नीतेजसो वा सहस्रवर्षकं यदा ॥ २१३ ॥
प्रपश्यति महाज्ञानी एकचन्द्रं सहस्रकम् ।

कोटिवर्षशतेनापि यत् फलं लभते नरः ।
एकक्षणमाङ्घ्रिरजो ध्यात्वा तत्फलमश्नुते ॥ २१४ ॥
विचरेद् यदि सर्वत्र केवलानन्दवर्द्धनम् ।
कामरूपं महापीठं त्रिकोणाधारतेजसम् ॥ २१५ ॥
जलबुद्बुदशब्दान्तमनन्तमङ्गलात्मकम् ।
स भवेन्मम दासेन्द्रो गणेशगुहवत्प्रियः ॥ २१६ ॥
कङ्कालाख्यमाट्टहास-विकटाद्योपपीठकम् ।
विचरेत् साधकश्रेष्ठो मत्पादाब्ज यदीच्छति ॥ २१७ ॥
ज्वालामुखीमहापीठं मम प्रियमतर्कवत् ।
यो भ्रमेन्मम तुष्ट्यर्थं स योगी भवति ध्रुवम् ॥ २१८ ॥
भावद्वयादिनिकरं ज्वालामुख्यादिपीठकम् ।
भ्रमन्ति ये साधकेन्द्रास्ते सिद्धा नात्र संशयः ॥ २१९ ॥
भावात् परतरं नास्ति त्रैलोक्यसिद्धिमिच्छताम् ।
भावं हि परमं ज्ञानं ब्रह्मज्ञानमनुत्तमम् ॥ २२० ॥
कोटिकन्याप्रदानेन वाराणस्यां शताटनैः ।
किं कुरुक्षेत्रगमने यदि भावो न लभ्यते ? ॥ २२१ ॥
गयायां श्राद्धदानेन नानापीठाटनेन किम् ? ।
नानाहोमक्रियाभिः किं ? यदि भावो न लभ्यते ॥२२२॥
भावेन ज्ञानमुत्पन्नं ज्ञानान्मोक्षमवाप्नुयात् ।
आत्मना मनसा वाचा गुरावीश्वर उच्यते ॥ २२३ ॥
ध्यानं संयोजनं प्रोक्तं मोक्षमत्र मनोलयम् ।
गुरोः प्रसादमात्रेण शक्तितोषो महान् भवेत् ।
शक्तिसन्तोषमात्रेण मोक्षमाप्नोति साधकः ॥ २२४ ॥
गुरुमूलं जगत्सर्वं गुरुमूलं परन्तपः ।
गुरोः प्रसादमात्रेण मोक्षमाप्नोति सद्वशी ॥ २२५ ॥
न लङ्घयेद् गुरोराज्ञामुत्तरं न वदेत्तथा ।

दिवारात्रौ गुरोराज्ञां दासवत् परिपालयेत् ॥ २२६ ॥
उक्तानुक्तेषु कार्य्येषु नापेक्षां कारयेद् बुधः ।
गच्छतः प्रयतो गच्छेद् गुरोराज्ञां न लङ्घयेत् ॥ २२७ ॥
न शृणोति गुरोर्वाक्यं शृणुयाद्वा पराङ्मुखः ।
अहितं वा हितं वाऽपि रौरवं नरकं व्रजेत् ॥ २२८ ॥
आज्ञाभङ्गं गुरोर्देव ! यः करोति विबुद्धिमान् ।
प्रयाति नरकं घोरं शूकरत्वमवाप्नुयात् ॥ २२९ ॥
आज्ञाभङ्गं तथा निन्दां गुरोरप्रियवर्त्तनम् ।
गुरुद्रोहञ्च यः कुर्य्यात् तत्संसर्गं न कारयेत् ॥ २३० ॥
गुरुद्रव्याभिलाषी च गुरुस्त्रीगमनानि च ।
पातकञ्च भवेत्तस्य प्रायश्चित्तं न कारयेत् ॥ २३१ ॥
गुरुं दुष्कृत्य रिपुर्वान्निहरेत् परिवादतः ।
अरण्ये निर्जने देशे स भवेद् ब्रह्मराक्षसः ॥ २३२ ॥
पादुकां वसनं वस्त्रं शयनं भूषणानि च ।
दृष्ट्वा गुरुं नमस्कृत्य आत्मभोगं न कारयेत् ॥ २३३ ॥
सदा च पादुकामन्त्रं जिह्वाग्रे यस्य वर्त्तते ।
अनायासेन धर्म्मार्थकाममोक्षं लभेन्नरः ॥ २३४ ॥
श्रीगुरोश्चरणाम्भोजं ध्यायेच्चैव सदैव तम् ।
भुक्तये मुक्तये वीर ! नान्यभक्तं ततोऽधिकम् ॥ २३५ ॥
एकग्रामे स्थितः शिष्यस्त्रिसन्ध्यं प्रणमेद् गुरुम् ।
एकदेशे स्थितः शिष्यो गत्वा तत्सन्निधिं सदा ॥ २३६ ॥
सप्तयोजनविस्तीर्णं मासैकं प्रणमेद् गुरुम् ॥ २३७ ॥
श्रीगुरोश्चरणाम्भोजं यस्यां दिशि विराजते ।
तस्यां दिशि नमस्कुर्य्यात् कायेन मनसा धिया ॥ २३८ ॥
विद्याङ्गमासनं मन्त्रं मुद्रां तन्त्रादिकं प्रभो ! ।
सर्वं गुरुमुखात् लब्ध्वा सफलो नान्यथा भवेत् ॥ २३९ ॥

कम्बले कोमले वाऽपि प्र(प्रा)सादे संस्थिते तथा।
दीर्घकाष्ठेऽथवा पृष्ठे गुरोश्चैकासनं त्यजेत् ॥ २४० ॥
श्रीगुरोः पादुकामन्त्रं मूलमन्त्रं स्वपादुकाम्।
शिष्याय नैव देवेश! प्रवदेद् यस्य कस्यचित् ॥ २४१ ॥
यद् यदात्महितं वस्तु तद्द्रव्यं नैव वञ्चयेत्।
गुरोर्लब्ध्वा एकवर्णं तस्य तस्यापि सुव्रत! ॥ २४२ ॥
भक्ष्यं वित्तानुसारेण गुरोरुद्दिश्य यत् कृतम्।
स्वल्पैरपि महत्तुल्यं भुवनाद्यं दरिद्रताम्।
सर्वस्वमपि यो दद्याद् गुरुभक्तिविवर्जितः ॥ २४३ ॥
नरकान्तमवाप्नोति भक्तिरेव हि कारणम्।
गुरुभक्त्या च शक्रत्वमभक्त्या शूकरो भवेत् ॥ २४४ ॥
गुरुभक्तेः परं नास्ति भक्तिशास्त्रेषु सर्वतः।
गुरुपूजां विना नाथ! कोटिपुण्यं वृथा भवेत् ॥ २४५ ॥

इति श्रीरुद्रयामले उत्तरतन्त्रे महातन्त्रोद्दीपने सर्वविद्यानुष्ठाने सिद्धि(द्ध)मन्त्रप्रकरणे भैरवी-भैरवसंवादे प्रथमः पटलः ॥ १ ॥

अथ द्वितीयः पटलः ॥

कुलाचारविधिः।

अथातः संप्रवक्ष्यामि सर्वदर्शनविद्यया।
सर्वज्ञ! परमानन्द! दयावीज! भयङ्कर! ॥ १ ॥
शृणुष्व कमलाशम्भो! कुलाचारविधिं शृणु।
पशूनां व्रतभङ्गादौ विधिं प्रथमतः प्रभो! ॥ २ ॥
व्रतभङ्गे नित्यभङ्गे नित्यपूजादिकर्मणि।
सहस्रं प्रजपेन्मन्त्री व्रतदोषोपशान्तये ॥ ३ ॥
नित्यश्राद्धं तथा सन्ध्यावन्दनं पितृतर्पणम्।

देवतादर्शनं पीठदर्शनं तीर्थदर्शनम् ॥ ४ ॥
गुरोराज्ञापालनञ्च देवतानित्यपूजनम्।
पशुभावस्थितो मर्त्यो महासिद्धिं लभेद् ध्रुवम् ॥ ५ ॥
पशूनां प्रथमं भावं वीरस्य वीरभावनम्।
दिव्यानां दिव्यभावस्तु तिस्रो भावास्त्रयः स्मृताः ॥ ६ ॥
स्वकुलाचारहीनो यः साधकः स्थिरमानसः।
निष्फलार्थी भवेत् क्षिप्रं कुलाचारप्रभावतः ॥ ७ ॥

भैरव उवाच।—

केनोपायेन भगवतीचरणाम्भोजदर्शनम्।
प्राप्नोति पद्मवदने! पशुभावस्थितो नरः ॥ ८ ॥
तत्प्रकारं सुविस्तार्य्य कथ्यतां कुलकामिनि!।
यदि भक्तिर्दृढा मेऽस्ति यदि स्नेहोऽस्ति मां प्रति ॥ ९ ॥

महाभैरव्युवाच।—

पशुभावः।

प्रभाते च समुत्थाय अरुणोदयकालतः।
निशाष्टदण्डपर्य्यन्तं पशूनां भाव ईरितः ॥ १० ॥
प्रातःकृत्यादिकं कृत्वा पुनः शय्यास्थितः पशुः।
गुरुं सञ्चिन्तयेच्छीर्षाम्भोजे सहस्रके दले ॥ ११ ॥
तरुणादित्यसङ्काशं तेजोबिम्बं महागुरुम्।
अनन्तानन्तमहि(म)मासागरं शशिशेखरम् ॥ १२ ॥
महाशुभ्रं भासुराङ्गं द्विनेत्रं द्विभुजं विभुम्।
आत्मोपलब्धिविषमं तेजसा शुक्लवाससम् ॥ १३ ॥
आज्ञाचक्रोर्द्ध्वनिकरं कारणं जगतां मुखम्।
धर्मार्थकाममोक्षाङ्गं वराभयकरं विभुम् ॥ १४ ॥
प्रफुल्लकमलारूढं सर्वज्ञं जगदीश्वरम्।
अन्तःप्रकाशचपलं वनमालाविभूषितम् ॥ ॥ १५ ॥

रत्नालङ्कारभूषाढ्यं देवदेवं सदा भजेत् ।
अन्तर्यागक्रमेणैव पद्मपुष्पैः समर्चयेत् ॥ १६ ॥
एकान्तभक्त्या प्रणमेदायुरारोग्यवृद्धये ।
अथ मध्ये जपेन्मन्त्रमाद्यन्तप्रणवेन च ॥ १७ ॥
मध्ये वाग्भवमायोज्य गुरुनाम ततःपरम् ।
आनन्दनाथशब्दान्ते गुरुं ङेऽन्तं समुच्चरेत् ॥ १८ ॥
नमःशब्दं ततो ब्रूयात् प्रणवं सर्वसिद्धिदम् ।
महागुरोर्मनं जप्त्वा सर्वसिद्धीश्वरो भवेत् ॥ १९ ॥
वाक्सिद्धिर्वदनाम्भोजे गुरुमन्त्रप्रभावतः ।
शतमष्टोत्तरं नित्यं सहस्रं वा तथाऽष्टकम् ॥ २० ॥
प्रजप्यार्पणमाकल्य प्राणायामत्रयश्चरेत् ।
वाग्भवेन ततः कुर्यात् प्राणायामविधिं सुदा ॥ २१ ॥
अखण्डमण्डलाकारं व्याप्तं येन चराचरम् ।
तत्पदं दर्शितं येन तस्मै श्रीगुरवे नमः ॥ २२ ॥
अज्ञानतिमिरान्धस्य ज्ञानाञ्जनशलाकया ।
चक्षुरुन्मीलितं येन तस्मै श्रीगुरवे नमः ॥ २३ ॥
देवताया दर्शनस्य कारणं करुणानिधिम् ।
सर्वसिद्धिप्रदातारं श्रीगुरुं प्रणमाम्यहम् ॥ २४ ॥
वराभयकरं नित्यं श्वेतपद्मनिवासिनम् ।
महाभयनिहन्तारं गुरुदेवं नमाम्यहम् ॥ २५ ॥
महाज्ञानाच्छादिताङ्गं नराकारं वरप्रदम् ।
चतुर्वर्गप्रदातारं स्थूलसूक्ष्मद्वयान्वितम् ॥ २६ ॥
सदानन्दमयं देवं नित्यानन्दं निरञ्जनम् ।
शुद्धसत्त्वमयं सर्वं नित्यकान्तं कुलेश्वरम् ॥ २७ ॥
ब्रह्मरन्ध्रे महापद्मे तेजोबिम्बे निराकुले ।
योगिभिर्ध्यानगम्ये च चक्रे शुक्ले विराजिते ॥ २८ ॥

सहस्रदलसङ्काशे कर्णिकामध्यमध्यके ।
महाशुक्लभासुरार्क-कोटिकोटिमहौजसम् ॥ २९ ॥
सर्वपीठस्थममलं परं हंसं परात्परम् ।
वेदोद्धारकरं नित्यं काम्यकर्मफलप्रदम् ॥ ३० ॥
सदा मनःशक्तिमायालयस्थानं पदद्वयम् ।
शरज्ज्योत्स्नाजालमालाभिरिन्दुकोटिवन्मुखम् ॥ ३१ ॥
वाञ्छाऽतिरिक्तदातारं सर्वसिद्धीश्वरं गुरुम् ।
भजामि तन्मयो भूत्वा तं हंसमण्डलोपरि ॥ ३२ ॥
आत्मानं सनिराकारं साकारं ब्रह्मरूपिणम् ।
महाविद्यामहामन्त्र-दातारं परमेश्वरम् ।
सर्वसिद्धिप्रदातारं गुरुदेवं नमाम्यहम् ॥ ३३ ॥
कायेन मनसा वाचा ये नमन्ति निरन्तरम् ।
अवश्यं श्रीगुरोः पादाम्भोरुहे ते वसन्ति हि ॥ ३४ ॥
प्रभाते कोटिपुण्यञ्च प्राप्नोति साधकोत्तमः ।
मध्याह्ने दशलक्षञ्च सायाह्ने कोटिपुण्यदम् ॥ ३५ ॥
प्रातःकाले पठेत् स्तोत्रं ध्यानं वा सुसमाहितः ।
तदा सिद्धिमवाप्नोति नात्र कार्या विचारणा ॥ ३६ ॥

शिरसि सितपङ्कजे तरुणकोटिचन्द्रप्रभं
वराभयकराम्बुजं सकलदेवतारूपिणम् ।
भजामि वरदं गुरुं किरणचारुशोभाकुलं
प्रकाशितपदद्वयाम्बुजमलक्तकोटिप्रभम् ॥ ३७ ॥
जगद्भयनिवारणं भुवनसागमोचप्रदं
गुरोः पादयुगाम्बुजं जयति यत्र योगि जयम् ।
भजामि परमं गुरुं नयनपद्ममध्यस्थितं
भवाब्धिभयनाशनं शमनरोगकायचयम् ॥ ३८ ॥
प्रकाशितसुपङ्कजे मृदुलषोडशाख्ये प्रभुं

परापरगुरुं भजे सकलवाह्यभोगप्रदम् ।
विशालनयनाम्बुजद्वयतडित्प्रभामण्डलं
कडारमणिपाटलेन्दुविन्दुविन्दुक्रमम् ॥ ३९ ॥
महौजसमुमापतेर्विगतदक्षभागे हृदि
प्रभाकरशतोज्ज्वलं सुविमलेन्दुकोट्याननम् ।
भजामि परमेष्ठिनं गुरुगतिवरालम्बनं
चलाचलकलेवरं प्रचपन्नदले द्वादशे ॥ ४० ॥

गुर्वाद्यञ्च शुभं मदननिदहनं हैममञ्जीरमारं
नानाशस्त्राङ्कताङ्गांदितपरिजनाञ्चारुचक्रं त्रिभङ्गम् ।
नित्यं ध्यायेत् प्रभाते अरुणशतघटाशोभनं योगिगम्यं
नाभौ पद्मेऽतिकान्ते दशदलमणिभे भाव्यते योगिभिर्यत् ॥ ४१ ॥
या माता मयदानवादि स्वभुजा निर्वाणसीमापुरे
स्वाधिष्ठाननिकेतने रसदले वैकुण्ठमूले तथा ।
जन्मोद्वारविकारसुप्रहरणी वेदप्रभा भाव्यते
कन्दर्पार्पितशान्तियोनिजननी विष्णुप्रिया शाङ्करी ॥ ४२ ॥
या भाषाननकुण्डली कुलपथोद्दामाभगोभाकरी
मूले पद्मचतुर्दले कुलवती निश्वासदेशाश्रिता ।
साक्षात्काङ्क्षितकल्पवृक्षलतिकासूक्ष्मास(ष)यन्ती प्रिया-
नित्यायोगिभयापहा विषहरा गुर्वम्बिका भाव्यते ॥ ४३ ॥
ऊर्द्ध्वाम्भोरुहनिःसृतामृतघटीमोदोद्दलप्लाविता
गुर्वम्बा: परिपातु सूक्ष्मपथगा तेजोमयी भास्वती ।
सूक्ष्मामाधनगोचरामृतमयी मूलादिशीर्षाम्बुजे
पूर्यां चेतसि भाव्यते भुवि कदा माता सदा वामगा ॥ ४४ ॥
स्थितपालनयोगेन ध्यानेन पूजनेन वा ।
यः पठेत् प्रत्यहं व्याप्य स देवो न तु मानुषः ॥ ४५ ॥
कल्याणं धनधान्यञ्च कीर्त्तिमायुर्यशः श्रियम् ।

[सा]याह्ने च प्रभाते च पठेद् यदि सुबुद्धिमान् ।
[स] भवेत् साधकश्रेष्ठः कल्पद्रुमकलेवरः ॥ ४६ ॥
[त]पस्यास्य प्रसादेन वागीशत्वमवाप्नुयात् ।
पशुभावस्थिता ये तु तेऽपि सिद्धा न संशयः ॥ ४७ ॥
[प्रा]तौ साधकदेवश्च सदाचारमतिः सदा ।
पशुभावस्ततो वीरः सायाह्ने दिव्यभाववान् ॥ ४८ ॥
एतेषां भाववर्गाणां गुरुर्वेदान्तपारगः ॥ ४९ ॥
शान्तो दान्तः कुलीनश्च विनीतः शुद्धवेशवान् ।
शुद्धाचारः सुप्रतिष्ठः शुचिर्दक्षः सुबुद्धिमान् ॥ ५० ॥
आश्रमी ध्याननिष्ठश्च मन्त्रतन्त्रविशारदः ।
निग्रहानुग्रहे शक्तो वशी मन्त्रार्थजापकः ॥ ५१ ॥
नीरोगो निरहङ्कारो विकाररहितो महान् ।
पण्डितो वाक्पतिः श्रीमान् सदा यज्ञविधानकृत् ॥ ५२ ॥
पुरश्चरणकृत् सिद्धो हिताहितविवर्जितः ।
सर्वलक्षणसंयुक्तो महाजनगणावृतः ॥ ५३ ॥
प्राणायामादिसिद्धान्तो ज्ञानी मौनी विरागवान् ।
तपस्वी सत्यवादी च सदा ध्यानपरायणः ॥ ५४ ॥
आगमार्थविशिष्टज्ञो निजधर्मपरायणः ।
अव्यक्तलिङ्गचिह्नस्थो भावको भद्रदानवान् ॥ ५५ ॥
लक्ष्मीमान् धृतिमान्नाथो गुरुरित्यभिधीयते ।
शिष्यस्तु तादृशो भूत्वा सद्गुरुं पर्य्युपाश्रयेत् ॥ ५६ ॥
वर्जयेच्च परानन्दरहितं रूपवर्जितम् ।
कुष्ठिनं क्रूरकर्म्माणं निन्दितं रोगिणं गुरुम् ॥ ५७ ॥
अष्टप्रकारकुष्ठेन गलत्कुष्ठिनमेव च ।
श्वित्रिणं जनहिंसार्थं सदार्थग्राहिणं तथा ॥ ५८ ॥
स्वर्णविक्रयिणं चौरं बुद्धिहीनं सुखर्वकम् ।

श्यावदन्तं कुलाचार-रहितं शान्तिवर्जितम् ॥ ५९ ॥
सकलङ्कं नेत्ररोगैः पीड़ितं परदारगम् ।
असंस्कारवक्तारं स्त्रीजितञ्चाधिकाङ्गकम् ॥ ६० ॥
कपटात्मानकं हिंसा-विशिष्टं बहुजल्पकम् ।
बह्वाशिनं हि कृपणं मिथ्यावादिनमेव च ॥ ६१ ॥
अशान्तं भावहीनञ्च पञ्चाचारविवर्जितम् ।
दोषजालैः पूरिताङ्गं पूजयेन्न गुरुं विना ॥ ६२ ॥
गुरौ मनुष्यबुद्धिन्तु मन्त्रेषु लिपिभावनम् ।
प्रतिमासु शिलारूपं विभाव्य रौरवं व्रजेत् ॥ ६३ ॥
जन्महेतू हि पितरौ पूजनीयौ प्रयत्नतः ।
गुरुर्विशेषतः पूज्यो धर्माधर्मप्रदर्शकः ॥ ६४ ॥
गुरुः पिता गुरुर्माता गुरुर्देवो गुरुर्गतिः ।
शिवे रुष्टे गुरुस्त्राता गुरौ रुष्टे न कश्चन ॥ ६५ ॥
गुरोर्हितं प्रकर्त्तव्यं वाङ्मनःकायकर्मभिः ।
अहिताचरणाद्देव ! विष्ठायां जायते क्रिमिः ॥ ६६ ॥
मन्त्रत्यागाद्भवेन्मृत्युर्गुरुत्यागाद्दरिद्रता ।
गुरुमन्त्रपरित्यागाद्रौरवं नरकं व्रजेत् ॥ ६७ ॥
गुरौ सन्निहिते यस्तु पूजयेदन्यदेवताम् ।
प्रयाति नरकं घोरं सा पूजा विफला भवेत् ॥ ६८ ॥
गुरुवद् गुरुपुत्रेषु गुरुवत्तत्सुतादिषु ।
अविद्यो वा सविद्यो वा गुरुरेव तु दैवतम् ॥ ६९ ॥
अमार्गस्थोऽपि मार्गस्थो गुरुरेव तु दैवतम् ।
उत्पादकब्रह्मदात्रोर्गरीयान् ब्रह्मदः पिता ॥ ७० ॥
तस्मान्मन्येत सततं पितुरप्यधिकं गुरुम् ।
गुरुदेवाधीनश्चास्मि शास्त्रे मन्त्रे कुलाकुले ॥ ७१ ॥
नाधिकारी भवेन्नाथ ! श्रीगुरोः पदभावकः ।

गुरुर्माता पिता स्वामी बान्धवः सुहृदः शिवः ॥ ७२ ॥
इत्याध्याय मनो नित्यं भजेत् सर्वात्मना गुरुम् ।
एकमेव परं ब्रह्म स्थूलशुक्लमणिप्रभम् ॥ ७३ ॥
सर्वकर्मनियन्तारं गुरुमात्मानमाश्रयेत् ।
गुरुश्च सर्वभावानां भावमेकं न संशयः ॥ ७४ ॥
निःसन्दिग्धं गुरोर्वाक्यं संशयात्मा विनश्यति ।
निःसंशयो गुरुपदे सर्वत्यागी परं व्रजेत् ॥ ७५ ॥
खेचरत्वमवाप्नोति मासादेव न संशयः ।
सद्गुरुमाश्रितं शिष्यं वर्षमेकं प्रतीक्षयेत् ॥ ७६ ॥
सगुणं निर्गुणं वाऽपि ज्ञात्वा मन्त्रं प्रदापयेत् ।
शिष्यस्य लक्षणं सर्वं शुभाशुभविवेचनम् ॥ ७७ ॥
अन्यथा विप्रदोषेण सिद्धिपूजाफलं दहेत् ।
कामुकं कुटिलं लोकनिन्दितं सत्यवर्जितम् ॥ ७८ ॥
अविनीतमसामर्थ्यं प्रज्ञाहीनं विभुप्रियम् ।
सदा पाद(प)क्रियायुक्तं विद्याशून्यं जड़ात्मकम् ॥ ७९ ॥
कलिदोषसमूहाङ्गं वेदक्रियाविवर्जितम् ।
आश्रमाचारहीनञ्चाशुद्धान्तःकरणोद्यतम् ॥ ८० ॥
सदा श्रद्धाविरहितमधैर्यं क्रोधिनं जड़म् ।
असच्चरित्रं विगुणं परदारातुरं सदा ॥ ८१ ॥
असद्बुद्धिसमूहोत्थमभक्तं दौत्यचेतसम् ।
नानानिन्दावृताङ्गञ्च तं शिष्यं वर्जयेद् गुरुः ॥ ८२ ॥
यदि न त्यजति वीर ! धनादिदानहेतुना ।
नारकी शिष्यवत् पापी तद्विशिष्टमवाप्नुयात् ॥ ८३ ॥
क्षणादसिद्धः स भवेत् शिष्यासादितपातकैः ।
अकस्मान्नरकं प्राप्य कार्य्यनाशाय केवलम् ॥ ८४ ॥
विचार्य्य यत्नाद्विधिवत् शिष्यसंग्रहमाचरेत् ।

अन्यथा शिष्यदोषेण नरकस्थो भवेद्गुरुः ॥ ८५ ॥
न पत्नीं दीक्षयेद्भर्त्ता न पिता दीक्षयेत् सुताम् ।
न पुत्रञ्च तथा भ्राता भ्रातरं नैव दीक्षयेत् ॥ ८६ ॥
सिद्धमन्त्रो यदि पतिस्तदा पत्नीं स दीक्षयेत् ।
शक्तित्वेन भैरवस्तु न च सा पुत्रिका भवेत् ॥ ८७ ॥
मन्त्रार्णो देवता ज्ञेया देवता गुरुरूपिणी ।
तेषां भेदो न कर्त्तव्यो यदीच्छेच्छुभमात्मनः ॥ ८८ ॥
एकग्रामे स्थितः शिष्यस्त्रिसन्ध्यं प्रणमेद् गुरुम् ।
क्रोशमात्रस्थितो भक्त्या गुरुं प्रतिदिनं नमेत् ॥ ८९ ॥
अर्द्धयोजनतः शिष्यः प्रणमेत् पञ्चपर्वसु ।
एकयोजनमारभ्य योजनद्वादशावधि ॥ ९० ॥
दूरदेशस्थितः शिष्यो भक्त्या तत्रान्निधिं गतः ।
तत्र योजनसंख्योक्त-मासेन प्रणमेद्गुरुम् ॥ ९१ ॥
वर्षैकेण भवेद् योग्यो विप्रो हि गुरुभावतः ।
वर्षद्वयेन राजन्यो वैश्यस्तु वत्सरैस्त्रिभिः ।
चतुर्भिर्वत्सरैः शूद्रः कथिता शिष्ययोग्यता ॥ ९२ ॥
यदि भाग्यवशेनैव सिद्धमन्त्रं लभेत् प्रभो ! ।
महाविद्या त्रिशत्याश्च गृह्णीयात्तत्कुलाद् ध्रुवम् ॥ ९३ ॥
गुरोर्विचारं सर्वत्र तातमातामहं विना ।
प्रमादाच्च तथाज्ञानादेभ्यो मन्त्रं समाचरन् ।
प्रायश्चित्तं ततः कृत्वा पुनर्दीक्षां समाचरेत् ॥ ९४ ॥
सावित्रीमन्त्रं जाप्यञ्च लक्षं जाप्यं जगत्पतेः ।
विष्णोर्वा प्रणवं लक्षं प्रायश्चित्तमिति स्मृतम् ॥ ९५ ॥
अशक्तश्चेन्महादेव ! चायुतं प्रजपेन्मनुम् ।
दशसाहस्रजाप्येन सर्वकल्मषनाशिनी ॥ ९६ ॥
गायत्री छन्दसां माता पापराशितुलानला ।

मम मूर्त्तिप्रकाशा च पशुभावविवर्जिता ॥ ९७ ॥
फलोद्भवप्रकरणे ब्रह्मणा पठ्यते निशि ॥ ९८ ॥
यदि भाग्यवशाद्देव ! सिद्धमन्त्रं गुरुं तथा ।
तदैव तान्तु दीक्षेत अष्टैश्वर्याय केवलम् ॥ ९९ ॥
निर्वीजञ्च पितुर्मन्त्रं शैवे शाक्ते न दूष्यति ।
ज्येष्ठपुत्राय दातव्यं कुलीनैः कुलपण्डितैः ॥ १०० ॥
कुलयुक्ताय दान्ताय महामन्त्रं कुलेश्वरम् ।
तदैव मूलमाप्नोति सत्यं सत्यं न संशयः ॥ १०१ ॥
कनिष्ठञ्च रिपुञ्चापि सोदरं वैरिपक्षगम् ।
मातामहञ्च पितरं यतिञ्च वनवासिनम् ॥ १०२ ॥
अनाश्रमं कुसंसर्गं स्वकुलत्यागिनन्तथा ।
वर्जयित्वा च शिष्यांस्तान् दीक्षाविधिमुपाचरेत् ॥ १०३ ॥
अन्यथा तद्विरोधेन कामनाभोगनाशनम् ।
सिद्धमन्त्रञ्च गृह्णीयाद् दुष्कुलादपि भैरव ! ॥ १०४ ॥
यद्भवे भावने च्छन्ने रूपे रूपधरे शुभे ! ।
तत्र दीक्षां समाकुर्वन् अष्टैश्वर्यजयं लभेत् ॥ १०५ ॥
स्वप्ने तु नियमो नास्ति दीक्षासु गुरुशिष्ययोः ।
स्वप्नलब्धे स्त्रिया दत्ते संस्कारेणैव शुध्यति ॥ १०६ ॥
साध्वी चैव सदाचारा गुरुभक्ता जितेन्द्रिया ।
सर्वमन्त्रार्थतत्त्वज्ञा सुशीला पूजने रता ॥ १०७ ॥
सर्वलक्षणसम्पन्ना जापिका पद्मलोचना ।
रत्नालङ्कारसंयुक्ता वर्णा भुवनभूषिता ॥ १०८ ॥
शान्ता कुलीना कुलजा चन्द्रास्या सर्ववृद्धिगा ।
अनन्तगुणसम्पन्ना रुद्रत्वदायिनी प्रिया ॥ १०९ ॥
गुरुरूपा मुक्तिदात्री शिवज्ञाननिरूपिणी ।
गुरुयोग्या भवेत् सा हि विधवा परिवर्जिता ॥ ११० ॥

स्त्रियो दीक्षा शुभा प्रोक्ता मन्त्रश्चाष्टगुणा स्मृता ।
पुत्रिणी विधवा ग्राह्या केवला ऋणकारिणी ॥ १११ ॥
सिद्धमन्त्रं यदि भवेद् गृह्णीयाद्विधवामुखात् ।
केवलं सुफलं तत्र मातुरष्टगुणं ध्रुवम् ॥ ११२ ॥
सधवा स्वप्रवृत्त्या च ददाति यदि तन्मनुम् ।
ततोऽष्टगुणमाप्नोति यदि सा पुत्रिणी सती ॥ ११३ ॥
यदि माता स्वकं मन्त्रं ददाति स्वसुताय वै ।
तदाऽष्टसिद्धिमाप्नोति भक्तिमार्गे न संशयः ।
तदैव दुर्लभं देव ! यदि माता प्रदीयते ॥ ११४ ॥
आदौ भक्तिं ततो मुक्तिं संप्राप्य कालरूपधृक् ।
सहस्रकोटिविद्यार्थं जानाति नात्र संशयः ॥ ११५ ॥
स्वप्ने तु माता यदि वा ददाति शुद्धमन्त्रकम् ।
पुनर्दीक्षां सोऽपि कृत्वा दानवत्वमवाप्नुयात् ॥ ११६ ॥
यदि भाग्यवशेनैव जननी दानवर्त्तिनी ।
तदा सिद्धिमवाप्नोति तत्र मन्त्रं विचारयेत् ॥ ११७ ॥
स्वीयमन्त्रोपदेशेन न कुर्याद् गुरुचिन्तनम् ॥ ११८ ॥
तथा श्रीललिता काली महाविद्या महामनोः ।
सर्वसिद्धियुतो भूत्वा वत्सरान्तां प्रपश्यति ॥ ११९ ॥
कालीकल्पलतादेवी महाविद्यादिसाधना ।
गुरुचिन्ता न कर्त्तव्या ये जानन्ति गुरोर्वचः ॥ १२० ॥
यदि मन्त्रं विचार्य्याशु गृह्णाति साधकोत्तमः ।
अनन्तकोटिपुण्यस्य द्विगुणं भवति ध्रुवम् ॥ १२१ ॥
विचार्य्य चक्रसारस्य मन्त्रं गृह्णाति यो नरः ।
वैकुण्ठनगरे वासस्तेषां जन्मशतैरपि ॥ १२२ ॥
इति श्रुत्वा महादेवो महादेव्याः सरस्वतीम् ।
उवाच पुनरानन्दपुलकोल्लासिविग्रहः ॥ १२३ ॥

ज्ञातुं चक्रं षोड़शञ्च चक्रहस्तपुरःप्रदम् ।
सत्यद्भुतफलोपेतं धर्मार्थकाममोक्षदम् ॥ १२४ ॥

दीक्षाविधिः ।

भैरव उवाच ।—

कथयस्व महादेवि ! कुलसद्भावपण्डिते ! ।
यदि मे स्वकृपादृष्टिर्वर्त्तते स्नेहसागरे ! ॥ १२५ ॥
त्वमाद्याद्भैरवोऽहं कालोऽहं जगदीश्वरः ।
भुक्तिमुक्तिप्रदाता च यागयोगी दिगम्बरः ॥ १२६ ॥
इदानीं सर्वविद्यानां दीक्षाद्यं चक्रमण्डलम् ।
अकालकुलहीनञ्चाकडमञ्च कुलाकुलम् ॥ १२७ ॥
ताराचक्रं राशिचक्रं कूर्मचक्रं तथाऽपरम् ।
शिवचक्रं विष्णुचक्रं ब्रह्मचक्रं विलक्षणम् ॥ १२८ ॥
देवचक्रं ऋणिधनि-युक्तचक्रं ततः परम् ।
वामाचक्रं चतुश्चक्रं सूक्ष्मचक्रं ततो वद ॥ १२९ ॥
तथा कथय चक्रञ्च कथय त्वं मयि प्रिये ! ।
एतदुत्तीर्णमन्त्रञ्च ये गृह्णन्ति नरोत्तमाः ॥ १३० ॥
तेषामसाध्यं जगति न कुत्र वर्त्तते ध्रुवम् ।
किमन्यत् कथयामीह देवतादर्शनं लभेत् ॥ १३१ ॥
सर्वत्रगामी स भवेत् चक्रराजप्रसादतः ॥ १३२ ॥
सर्वचक्रविचारञ्च न जानाति द्विजोत्तमः ।
यस्मान्नेति तद्विचार्य्यं देवताप्रीतिकारकम् ॥ १३३ ॥
ताराशुद्धिं वैष्णवानां कोष्ठशुद्धिं शिवस्य च ।
राशिशुद्धिं त्रैपुरस्य गोपालेऽकडमः स्मृतः ॥
अकडमो वामने च गणेशे हरचक्रतः ॥ १३४ ॥
कोष्ठचक्रं वराहस्य महालक्ष्म्याः कुलाकुलम् ।
नामादिचक्रे सर्वेषां भूतचक्रे तथैव च ॥ १३५ ॥

त्रैपुरं तारचक्रे च शुद्धं मन्त्रं भजेद्बुधः ।
वैष्णवं राशिसंशुद्धं शैवञ्चाकडमे स्मृतम् ॥ १३६ ॥
कालिकायाश्च ताराया हरचक्रं शुभं भवेत् ।
चण्डिकाया भवेत् कोष्ठे गोपाले ऋणचक्रकम् ॥ १३७ ॥
हरचक्रे सर्वमन्त्रान् ऋणाधिक्येन चाश्रयात् ।
ऋणाधिक्ये शुभं विद्याद्धनाधिक्ये च नो विधिः ॥ १३८ ॥
दोषान् संशोध्य गृह्णीयान्मध्यदेशे तु साधकः ।
पितृमातृकृतं नाम त्यक्त्वा शर्मादिदेवकान् ॥ १३९ ॥
श्रीवर्णञ्च ततो विद्याचक्रेषु योजयेत् क्रमात् ।
क्रमेण शृणु तत्सर्वं शुभाशुभफलप्रदम् ॥ १४० ॥
जापकानां भावुकानां शुद्धिः सिध्यति तत्क्षणात् ।
मन्त्रमात्रं प्रसिध्येत भक्तानामिति निश्चयः ॥ १४१ ॥
कुलीनं कुलजातानां ध्यानमार्गार्थगामिनाम् ।
महाविद्या महामन्त्रं संशुद्धमपि सिध्यति ॥ १४२ ॥
सिद्धमन्त्रप्रकरणे यदुक्तञ्च महेश्वर ! ।
तत्सर्वं यदि गृह्णाति महामन्त्रोत्तमोत्तमम् ॥ १४३ ॥
अष्टसिद्धिप्रभावः स्यात् सायुज्यपदमाप्नुयात् ।
चक्रं षोडशसारञ्च सर्वेषां मन्त्रसिद्धये ॥ १४४ ॥
विचार्य सर्वमन्त्रञ्च मन्त्रयागोदितं हितम् ।
आदौ बालाभैरवीणामकडमान्मतं मया ॥ १४५ ॥
कुमारीललितादेव्याः कुरुकुल्लादिसाधने ।
श्रीचक्रं फलदं प्रोक्तं सर्वचक्रफलप्रदम् ॥ १४६ ॥
योगिन्यादिसाधने च ताराचक्रं महत्फलम् ।
उन्मत्तभैरवीविद्याद्यादिसाधननिर्मले ॥ १४७ ॥
राशिचक्रं कोटिफलं नानारत्नप्रदं शुभम् ।
प्रत्यङ्गिरासाधने च उल्काविद्यादिसाधने ॥ १४८ ॥

शिवचक्रं महापुण्यं सर्वचक्रफलप्रदम् ।
कालिकाचर्विकामन्त्रे विमलाद्यादिसाधने ॥ १४९ ॥
सम्पत्प्रदाभैरवीणां मन्त्रग्रहणकर्मणि ।
विष्णुचक्रे कोटिशतं पुण्यं प्राप्नोति मानवः ॥ १५० ॥
छिन्नादिकश्रीविद्यायाः कृत्यादेव्याश्च साधने ।
नक्षत्रविद्याकामाख्या-ब्रह्माण्यादिसुसाधने ॥ १५१ ॥
ब्रह्मचक्रं महापुण्यं सर्वविद्याफलं लभेत् ।
कोटिजाप्येन यत् पुण्यं ग्रहणात्तत्फलं लभेत् ॥ १५२ ॥
वज्रज्वालामहाविद्या-साधने मन्त्रजापने ।
गुह्यकालीसाधने च कुब्जिकामन्त्रसाधने ॥ १५३ ॥
देवचक्रं शुभं प्रोक्तं वाक्यसिद्धिप्रदायकम् ।
कामेश्वरी अट्टहासा-मन्त्रसाधनकर्मणि ॥ १५४ ॥
शाकिनीमन्दिरादेवी-मदिरामन्त्रसाधने ।
ऋणीधनीमहाचक्रं विचार्य सर्वसिद्धिदम् ॥ १५५ ॥
श्रीविद्याभुवनेशानी भैरवीसाधने तथा ।
पृथ्वीकुलावतीवीणा-साधने वामनीमनोः ॥ १५६ ॥
उल्काचक्रं महापुण्यं राजत्वफलदं शुभम् ।
शिवादिनायिकामन्त्रे बालाचक्रं सुखप्रदम ॥ १५७ ॥
फेत्कारीमन्त्रजाप्ये च उड्डीयानेश्वरीमनोः ।
चतुश्चक्रं शतफलं महामन्त्रफलप्रदम् ॥ १५८ ॥
द्राविणीदीघजङ्घादि-ज्वालामुख्यादिसाधने ।
नारसिंहीसाधने च सूक्ष्मचक्रं फलोद्भवम् ॥ १५९ ॥
हरिणीमाहिनीकन्या-योनीसाधनकर्मणि ।
वैष्णवे च तथा शैवे देवीमन्त्रे च भैरव ! ॥ १६० ॥
अकथहं महाचक्रं विचार्य यत्नपूर्वकम् ।
यो गृह्णाति महामन्त्रं स शिवो नात्र संशयः ॥ १६१ ॥

इति रुद्रयामले उत्तरतन्त्रे महामन्त्रोद्दीपने सर्वचक्रानुष्ठाने महागुरुप्रकरणे भावनिर्णये भैरवी-भैरवसंवादे द्वितीयः पटलः ॥ २ ॥

अथ तृतीयः पटलः।

दीक्षायां चक्रविचारः।

भैरव्युवाच।—

अथ चक्रं प्रवक्ष्यामि कालाकालविचारकम्।
यदाश्रितो महावीरो दिव्यो वा पशुभाववान्॥ १॥
चक्रराजं प्रविचार्य्य सिद्धमन्त्रं न चालयेत्।
प्रबलस्य प्रचण्डस्य प्रासादस्य महामनोः॥ २॥
शक्तिहृदादिमन्त्राणां सिद्धादीन्नैव शोधयेत्।
वाराहार्कनृसिंहस्य सिद्धादीन्नैव शोधयेत्॥ ३॥
मालामन्त्रस्य कालस्य चन्द्रचूडस्य सन्मनोः।
नपुंसकस्य मन्त्रस्य सिद्धादीन्नैव शोधयेत्।
विंशत्यर्णाधिका मन्त्रा मालामन्त्राः प्रकीर्त्तिताः॥ ४॥
सूर्य्यमन्त्रस्य योगस्य कृत्यामन्त्रस्य शङ्कर!।
शम्भुबीजस्य देवस्य सिद्धादीन्नैव शोधयेत्॥ ५॥
चक्रेश्वरस्य चन्द्रस्य वरुणस्य महामनोः।
कालीतारादिमन्त्रस्य सिद्धादीन्नैव शोधयेत्॥ ६॥
तथापि शोधयेन्मन्त्रं प्रशंसापरमेव तत्।
यत्र प्रशंसापरमं तत्कार्य्यं दैवतं स्मृतम्॥ ७॥
प्रशंसा यत्र नास्त्येव तत्कार्य्यं नापि कारयेत्।
अत्यन्तफलदं मन्त्रं गृह्णीयात् कुलरक्षणात्॥ ८॥
ध्वनिमन्त्रं न गृह्णीयादकुलाच्च तथैव च।
गृहीत्वा निधनं याति कोटिजाप्ये न सिध्यति॥ ९॥
मननं विघ्नविज्ञानं त्राणं संसारबन्धनात्।
यतः करोति संसिद्धिर्मन्त्र इत्युच्यते मया॥ १०॥
प्रणवाद्यं न दातव्यं मन्त्रं शूद्राय सर्वथा।
आत्ममन्त्रं गुरोर्मन्त्रं मन्त्रञ्चाजपसंज्ञकम्॥ ११॥

पितुर्मन्त्रं तथा मातुर्मन्त्रं सिद्धिप्रदं शुभम्।
शूद्रो निरयमाप्नोति ब्राह्मणो यात्यधोगतिम्॥ १२॥
अदीक्षिता ये कुर्वन्ति जपपूजादिकाः क्रियाः।
न भवन्ति श्रिये तेषां शिलायामुप्तबीजवत्॥ १३॥
देवीदीक्षाविहीनस्य न सिद्धिर्न च सद्गतिः।
तस्मात् सर्वप्रयत्नेन गुरुणा दीक्षितो भवेत्॥ १४॥
विचारं चक्रसारस्य करणीयमवश्यकम्।
अदीक्षितोऽपि मरणे रौरवं नरकं व्रजेत्॥ १५॥
तस्माद्दीक्षा प्रयत्नेन सदा कार्य्या च तान्त्रिकात्।
दीक्षा पूर्वदिने कुर्य्यात् सुविचारं प्रयत्नतः॥ १६॥
तत्प्रकारं प्रयत्नेन कार्य्यं पर्वतपूजितः [पर्व्वपूजारतः]।
आदावकडमं सिद्धिर्मन्त्रं सञ्चारयेद् बुधः॥ १७॥
रेखाद्वयं पूर्वपरे मध्ये रेखाद्वयं लिखेत्।
चतुष्कोणे चतूरेखा-कडमं चक्रमण्डलम्॥ १८॥
भ्रामयित्वा महावृत्त निर्माय वर्णमालिखेत्।
अकारादिक्षकारान्तान् क्लीवहीनान् लिखेत्ततः॥ १९॥
एकैकक्रमतो लेख्यान् मेषादिषु वृषान्तकान्।
वामावर्त्तेन गणयेत् क्रमशो वीरवल्लभ!॥ २०॥
तन्नाममार्गेण गणयेन्नामादिवर्णकादिमान्।
मेषादितोऽपि मीनान्तं क्रमशः शास्त्रपण्डितः॥ २१॥
सिद्धसाध्यसुसिद्धारीन् पुनः सिद्धादयः पुनः।
नवैकपञ्चमे सिद्धः साध्यः षड्दशयुग्मके॥ २२॥
सुसिद्धस्त्रिसप्तके (स्यात्) रुद्रे वेदाष्टद्वादशे रिपुः।
एतत्ते कथितं देव! अकडमादिमुत्तमम्॥ २३॥
पद्माकारं महाचक्रं दलाष्टकसमन्वितम्।
षस्त्रावर्णद्वयं पूर्वे द्वितीये च द्वितीयकम्॥ २४॥

तृतीये कर्णयुग्मञ्च चतुर्थे नासिकाद्वयम् ।
पञ्चमे नयनं प्रोक्तं षष्ठे ओष्ठाधरं तथा ।
सप्तमे दन्तयुग्मञ्च अष्टमे षोड़शस्वरम् ॥ २५ ॥
कवर्गञ्च पूर्वदले द्वितीये च चवर्गकम् ।
तृतीये च टवर्गञ्च चतुर्थे च तवर्गकम् ॥ २६ ॥
पवर्गं पञ्चमे प्रोक्तं यवान्तं षष्ठपत्रके ।
सप्तमे शषसान् लिख्य ल-क्षमष्टमके पदे ॥ २७ ॥
सुखं राज्यं धनं विद्यां यौवनायुषमेव च ।
विचार्य्य चक्रमाप्नोति पुत्रत्वञ्च स्वजीवनम् ॥ २८ ॥
स्वीयनामाक्षरं तत्र देवनामाक्षरं तथा ।
एकस्थानं युगस्थानं विरोधं द्विविधं स्मृतम् ॥ २९ ॥
जीवनं मरणं तत्र अकारादिसुपत्रके ।
लिखित्वा गणयेन्मन्त्री मरणं वर्जयेत् सदा ॥ ३० ॥
यत्रास्ति मरणं तत्र जीवनं नास्ति निश्चितम् ।
परस्परविरोधेन सिद्धमन्त्रञ्च मृत्युदम् ।
जीवने जीवनं ग्राह्यं सर्वत्र मरणं त्यजेत् ॥ ३१ ॥
कुलाकुलस्य भेदं हि वक्ष्यामि मन्त्रिणामिह ।
वाय्वग्निभूजलाकाशाः पञ्चाशल्लिपयः क्रमात् ॥ ३२ ॥
पञ्च ह्रस्वाः पञ्च दीर्घा विन्दन्ताः सन्धिसम्भवा ।
कादयः पञ्चशः य-क्ष-लसहान्ताः प्रकीर्त्तिताः ॥ ३३ ॥
साधकस्याक्षरं पूर्वं मन्त्रस्यापि तदक्षरम् ।
यद्येकभूतदैवत्यं जानीयात् सकुलं हितम् ॥ ३४ ॥
भौमस्य वारुणं मित्रं आग्नेयस्यापि मारुतम् ।
पार्थिवानाञ्च सर्वेषां शत्रुराग्नेयमम्भसाम् ॥ ३५ ॥
ऐन्द्रवारुणयोः शत्रुर्मारुतः परिकीर्त्तितः ।
पार्थिवे वारुणं मित्रं तैजसं शत्रुरीरितः ॥ ३६ ॥

नाभसं सर्वमित्रं स्याद्विरुद्धं नैव शीलयेत् ।
रेखाष्टकं हि पूर्वाग्रं रेखैकादश मध्यतः ॥ ३७ ॥
दक्षिणोत्तरभागेन दक्षिणावधिमालिखेत् ।
कुलाकुलञ्च कथितं ताराचक्रं पुनः शृणु ॥ ३८ ॥
दक्षिणोत्तरदेशे तु रेखाचतुष्टयं लिखेत् ।
दश रेखाः पश्चिमाग्राः कर्त्तव्या वीरवन्दित ! ॥ ३९ ॥
अश्विन्यादिक्रमेणैव विलिखेत्तारकाः पुनः ।
वक्ष्यमाणक्रमेणैव तन्मध्ये वर्णकान् लिखेत् ॥ ४० ॥
युग्ममेकं तुरीयञ्च वेदमेकैकयुग्मकम् ।
एकं युग्मं तथैकञ्च युगलं युगलं युगम् ॥ ४१ ॥
एकं युग्मं तृतीयञ्च चन्द्रनेत्रं विधिं विधुम् ।
चन्द्रयुग्मं चन्द्रयुग्मं रामवेदं गृहे शुभे ॥ ४२ ॥
वर्णाः क्रमाः स्वराश्चैव रेवत्यश्विगतावुभौ ।
अकारद्वयमश्विन्या देवतागणसम्भवा ॥ ४३ ॥
इकारं भरणी सत्यं कृत्स्नमुस्वरकृत्तिका ।
राक्षसी कृत्तिका भूमौ सर्वविघ्नविनाशिनी ॥ ४४ ॥
नासिकागरुडमन्त्रश्च रोहिणी शवरूपिणी
ओष्ठमध्ये मृगशिरा देवता परिकीर्त्तिता ॥ ४५ ॥
अधरान्तमार्द्रया च मानुषं सर्वलक्षणम् ।
दन्तयुग्मं पुनर्वस्वाच्छादितं मानुषं प्रियम् ॥ ४६ ॥
कः पुष्या देवता ज्ञेया खगाश्लेषा च राक्षसी ।
मक्ष वक्षे षड़न्ता च तथा च पूर्वफल्गुनी ॥ ४७ ॥
दन्तोत्तराफल्गुनी च मनुष्याः परिकीर्त्तिताः ।
पत्रहस्ता देवगणा च ठ-चित्रा च राक्षसी ॥ ४८ ॥
ड स्वाती देवरसनी विशाखा च न राक्षसी ।
ताब्यदानुराधया च साभिता देवनायिका ॥ ४९ ॥

य ज्येष्ठा राक्षसी ज्ञेया स मूलेन प-राक्षसी।
पूर्वाषाढ़ा मानुषाणी वकारः क्षयमालिनी।
भोत्तराषाढ़या मर्त्या मकारः श्रवणा मता ॥ ५० ॥
धनिष्ठा यश्च रेफः स्त्री-लक्ष्मा शतभिषा तथा।
वश्चपूर्वभाद्रपदा मनुजाः परिकीर्त्तिताः ॥ ५१ ॥
सान्युत्तरभाद्रपदा मानुषी मङ्गलोद्भवा।
आनालक्षा रेवती च देवकन्या प्रकीर्त्तिता ॥ ५२ ॥
स्वजातौ परमा प्रीतिर्मध्यमा भिन्नजातिषु।
रक्षोमानुषयोर्नाशो वैरं दानवदेवयोः ॥ ५३ ॥
जन्म सम्पत विपत् क्षेमः प्रत्यरिः साधको वधः।
मित्रं परममित्रञ्च गणयेच्च पुनः पुनः ॥ ५४ ॥
वर्जयेज्जन्मनक्षत्रं द्वितीयं पञ्चसप्तकम्।
षडष्टनवभद्राणि युगञ्च युग्मकं तथा ॥ ५५ ॥
यदीह निजनक्षत्रं न जानाति द्विजोत्तमः।
नामाद्यक्षरसम्भूतं स्वतारमविरोधकम् ॥ ५६ ॥
विनीय गणयेन्मन्त्री शुभाशुभविचारवान्।
प्रादक्षिण्येन गणयेत साधकाद्यक्षरात सुधीः ॥ ५७ ॥
इत्येतत् कथितं नाथ! ममात्मा पुरुषेश्वर!।
कुलाकुलमनन्ताख्यं ताराचक्रं मनोगुणम ॥ ५८ ॥
तारामन्त्रं प्रदीपाभं रत्नभाण्डस्थितास्मृतम्।
एतद्विचारे महतीं सिद्धिमाप्नोति मानवः ॥ ५९ ॥
राशिचक्रं प्रवक्ष्यामि सिद्धिलक्षणमुत्तमम्।
क्रमेण देया युगला रेखा पूर्वापरोन्नमा ॥ ६० ॥
तन्मध्यतो द्वयं दद्याद्रेखाग्निदक्षिणे ततः।
अग्निनैर्ऋतिवायवीयेशक्रमेण रेखयेत् ॥ ६१ ॥
विलिखेन्मेषराश्यादि-मीनान्तं सर्ववर्णकान्।

कन्याग्रहगतान् शादि-वर्णानालिख्य यत्नतः ॥ ६२ ॥
गणयेत् साधकश्रेष्ठो लग्नाद्यानव्ययान्तकान्।
स्वरादिवेदकोष्ठानामनुकूलान् भजेन्मनून् ॥ ६३ ॥
राशीनां शुद्धता ज्ञेया त्यजेत् शत्रुं मृतिं व्ययम्।
स्वराशेर्मन्त्रराश्यन्तं गणनीयं विचक्षणैः ॥ ६४ ॥
साध्याद्यक्षरराश्यन्तं गणयेत् साधकाक्षरात्।
एकं वा पञ्च नवमं बान्धवं परिकीर्त्तितम् ॥ ६५ ॥
द्विषड्दशमसंख्या च सेवकाः परिकीर्त्तिताः।
रामरुद्राश्च मुनयः पोषकाः परिकीर्त्तिताः ॥ ६६ ॥
सूर्य्याष्टवेदयुक्तास्तु घातकाः सर्वदोषदाः ॥ ६७ ॥
शक्त्यादौ तु महादेव! कुलचूडार्णवेऽर्यतिः।
वर्जयेत् षष्ठगेहञ्च अष्टमं द्वादशं तथा ॥ ६८ ॥
लग्नं धनं भ्रातृबन्धु-पुत्रशत्रुकलत्रकाः।
मरणं धर्मकर्म्मायव्यया द्वादशराशयः ॥ ६९ ॥
नामानुरूपमेतेषां शुभाशुभफलं दिशेत्।
वैष्णवे तु महामाता-स्थाने बन्धुः प्रकीर्त्तितः ॥ ७० ॥
कूर्मचक्रं प्रवक्ष्यामि शुभाशुभफलात्मकम्।
यज्ज्ञात्वा सर्वशास्त्राणि जानाति पण्डितोत्तमः ॥ ७१ ॥
अभेद्यभेदकं चक्रं शृणुष्वादरपूर्वकम्।
कूर्म्माकारं महाचक्रं चतुष्पादसमावृतम् ॥ ७२ ॥
मुण्डे स्वरा दक्षपादे कवर्गं वामपादके।
चवर्गं कीर्त्तितं पश्चादधःपादे टवर्गकम् ॥ ७३ ॥
तदधस्तु तवर्गं स्यादुदरे च पवर्गकम्।
यवान्तं हृदये प्रोक्तं सह्रान्तं पृष्ठमध्यके ॥ ७४ ॥
लाङ्गूले शक्रबीजञ्च क्षकारं लिङ्गमध्यके।
लिखित्वा गणयेन्मन्त्री चक्रं कलिमलापहम् ॥ ७५ ॥

स्वरलाभं कवर्गे श्रीश्चवर्गे च विवेकदम् ।
टवर्गे राजपदवीं तवर्गे धनवान् भवेत् ॥ ७६ ॥
उदरे सर्वनाशः स्याद्धृदये बहुदुःखदम् ।
पृष्ठे च सर्वसन्तोषं लाङ्गूले मरणं ध्रुवम् ॥ ७७ ॥
वैभवं पृष्ठदेशे तु दुःखञ्च वामपादके ।
विरुद्धद्वयलाभे तु न कुर्य्याच्चक्रचिन्तनम् ॥ ७८ ॥
विरुद्धैके धर्म्मनाशो गतदोषे च मारणम् ।
यत्र देवाक्षरञ्चास्ति तत्र चेन्निजवर्णकम् ।
विरुद्धञ्चेत्त्यजेत् शत्रु-मध्यमन्त्रं विचारयेत् ॥ ७९ ॥
पृथक्स्थाने यदि भवेद्वर्णमाला महेश्वर ! ।
यदि तत्सौख्यभावः स्यात सौख्यं नापि विवर्जयेत् ॥ ८० ॥
विभिन्नगेहे दोषश्चेत् शुभमन्त्रञ्च संत्यजेत् ।
इति ते कथितं देव ! दृष्टादृष्टफलप्रदम् ॥ ८१ ॥
यः शोधयेच्चरेद्वर्णं मन्त्रमालां महेश्वर ! ।
यदि शुध्यति चक्रे तत् मन्त्रसिद्धिप्रदं शुभम् ॥ ८२ ॥

भैरव्युवाच ।—

शिवचक्रम् ।

शिवचक्रं प्रवक्ष्यामि महाकालकुलेश्वर ! ।
अवश्यं सिद्धिमाप्नोति शिवचक्रप्रभावतः ॥ ८३ ॥
षट्कोणमध्यदेशे तु चतुरस्रं लिखेद् बुधः ।
तन्मध्ये विलिखेच्चारु चतुरस्रं सवर्णकम् ॥ ८४ ॥
मस्तकस्थत्रिकोणे तु शिवसंस्थानमन्त्रकम् ।
दक्षिणावर्त्तमानेन गणयेत् सर्वमन्त्रकम् ॥ ८५ ॥
विष्णुस्थाने स्वमन्त्रञ्च द्वितीये च त्रिकोणके ।
त्रिकोणे च तृतीये च ब्रह्मसंस्थानमन्त्रकम् ॥ ८६ ॥
शक्तिमन्त्रादिसंस्थानं त्रिकोणाधोमुखे तथा ।

नायिकामन्त्रसंस्थानं त्रिकोणाधोमुखे तथा ॥ ८७ ॥
नायिकामन्त्रसंस्थानं तदेव दुर्लभं शुभम् ।
तदूर्द्ध्वे चक्रकोणे च भूतसंस्थानमन्त्रकम् ॥ ८८ ॥
शिवाधो यक्षमन्त्रस्य संस्थानमतिदुर्लभम् ।
विष्णुब्रह्मसन्धिदेशे महाविद्यापदं ध्रुवम् ॥ ८९ ॥
स्वरस्थानं तथा वर्ण-स्थानं शृणु महाप्रभो ! ।
अमा[श्वा]वर्णद्वयं शिवे कवर्गञ्च सविन्दुकम् ॥ ९० ॥
विष्णौ नेत्रं चवर्गञ्च टवर्गं ब्रह्मणि श्रुतम् ।
तवर्गं नासिकाशक्तौ सर्वमन्त्रार्थचेतनम् ॥ ९१ ॥
नायिकायां पवर्गञ्च न युगं परिकीर्त्तितम् ।
भूते यवान्तं विलिखेदोष्ठाधरसमन्वितम् ॥ ९२ ॥
प्रणवं यक्षयन्त्रे च शकारं परिकीर्त्तितम् ।
अधोदन्तं पिशाचे च षयुक्तं विन्दुभूषितम् ॥ ९३ ॥
शिरो वीजं देवमन्त्रे सकारञ्च सविन्दुकम् ।
महाविद्यादिसंस्थाने लक्षवर्णं प्रकीर्त्तितम् ॥ ९४ ॥
इति ते कथितं शम्भो ! शृणु वर्णाङ्कवर्त्तनम् ।
शिवे एकविंशतिश्च द्वात्रिंशद्विष्णुकोणके ॥
ब्रह्मणि षोड़शाद्यञ्च शक्तिकूटे युगाष्टकम् ॥ ९५ ॥
नायिकायां वह्निबाणं भूतेश ! गुद्धिरेव च ॥ ९६ ॥
यक्षे च चन्द्रवेदश्च पिशाचेऽष्टवसुः स्मृतः ॥ ९७ ॥
सर्वदेवे बाणवेदं कृत्यायां षष्ठषष्ठकम् ।
मध्ये षष्ठं हुताशञ्च महाविद्यागृहे शुभे ॥ ९८ ॥
साधकस्य च साध्यस्यैकाक्षरं साध्यमन्दिरे ।
साधकाङ्कमूर्द्धदेशे साध्याङ्कं गणयेद् बुधः ॥ ९९ ॥
भुजयुग्मं शिरःप्रोक्तं विष्णौ बाणाष्टकं तथा ।
ऋषिचन्द्रं विधौ प्रोक्तं शक्तौ रामाष्टकं तथा ॥ १०० ॥

नायिकायां वेदचार्णं भूतेऽर्वनवमं तथा।
यचे युग्मं चतुर्थञ्च पिशाचे वज्रकाष्टकम् ॥ १०१ ॥
शक्तौ वश्यकृतौ ज्ञेयौ कन्यायां मुनिषष्ठकम्।
अनामाचरदेहस्थमचरं द्विगुणं स्मृतम् ॥ १०२ ॥
साध्याङ्केन योजयित्वा पूरयेत् षष्ठपञ्चमैः।
तद् गेहे ग्राहयेद् यत्नात् देवताद्यचरं यथा ॥ १०३ ॥
एकगेषस्थितं वर्णं कुर्य्यान्नापि विवेचनम्।
शुद्धं तद्धि विजानीयाद्विचारमन्यतोऽपि च ॥ १०४ ॥
षष्ठाङ्केन च वेदाङ्कं तथाच देववर्णकम्।
पश्चात् कृत्वा तदङ्कञ्च हरेद्रामेण वल्लभ ! ॥
यदि साध्याङ्कविस्तीर्णं तथा नैव शुभं भवेत् ॥ १०५ ॥
साधकाङ्कञ्च विस्तीर्णं यदि स्याज्जायते गृहे।
तदा सर्वकुलेशः स्याद्रुद्रश्रवणसंशयः ॥ १०६ ॥
द्विगुणं देवतावर्णं साधकाङ्केन योजयेत्।
वर्णसंख्याङ्कमालिख्य गणयेत् साधकोत्तमः ॥ १०७ ॥
रसबाणेन सम्पूर्य्य संहरेत् रससंख्यया।
आत्माङ्कमिश्रितं पश्चाद् यदि किञ्चिन्न तिष्ठति ॥ १०८ ॥
स्वीयाभिधानकाङ्कस्य द्विगुणञ्चापि योजयेत्।
पश्चादनलसंख्याभिर्हरेत् सौख्यार्थिमुक्तये ॥ १०९ ॥
अङ्कं बहुतरं ग्राह्यं साधकस्य सुखावहम्।
न ग्राह्यं साध्यविस्तीर्णमतिशास्त्रार्थनिश्चयम् ॥
विचारादस्य चक्रस्य राजत्वं लभते ध्रुवम् ॥ ११० ॥
समानाङ्केन गृह्णीयाद् गुर्व्वाङ्कं वर्जयेदिह।
अवश्यं चक्रमेवं हि गोपनीयं सुरासुरैः ॥ १११ ॥

विष्णुचक्रम्।

विष्णुचक्रं प्रवक्ष्यामि चक्राकारं सुगोपनम्।

सर्वसिद्धिप्रदं शुद्धं चक्रं कृत्वा फलप्रदम् ॥ ११२ ॥
शृणु नाथ ! महाविष्णोः स्थानमङ्गलदायकम्।
लक्ष्मीप्रियमङ्कमयं नवकोणं महाप्रभु(भ)म् ॥ ११३ ॥
तदूर्द्ध्वे च तमालिख्य तदूर्द्ध्वेऽष्टगृहं शुभम्।
चतुष्कोणाकारगेहं सन्धौ शून्याष्टकं लिखेत् ॥ ११४ ॥
तदूर्द्ध्वे च तमालिख्य चक्रमेतद्धनेश्वर !।
पूर्वे महेन्द्राभरणमूर्द्ध्वदेशोल्लसत्करम् ॥ ११५ ॥
मुनिरामखचन्द्राद्यमङ्कं सर्वसमृद्धिदम्।
दक्षिणे वह्निभरणं रसवेदखयुग्मकम् ॥ ११६ ॥
तदधो रामचक्रञ्च सप्तषट्सु च रामकम्।
तदधो निर्ऋते स्वर्गे युगाङ्कशून्यदेवकम् ॥ ११७ ॥
केवलाधो जलेशस्य मन्दिरं सुमनोहरम्।
रामेषु शून्यबाणाढ्यं तदेव वायुमन्दिरम् ॥ ११८ ॥
भुजहस्तखरसाढ्यं चक्रेदमीश्वरात्मकम्।
नवकोणं मध्यदेशे पञ्चाङ्गभागमालिखेत् ॥ ११९ ॥
तन्मध्ये रचयेद्वर्णं पञ्चगेहे त्रिकोणके।
इन्द्राधो विलिखेद्धीरो वर्णमाद्यञ्च सप्तकम् ॥ १२० ॥
भागे दक्षिणकोणेषु ऋकारादङ्ककं लिखेत्।
ककारादि टकारान्तं तदधो विलिखेद् बुधः ॥ १२१ ॥
तद्वामे ठादिमान्तञ्च वर्णलक्षणकारणम्।
तदूर्द्ध्वे मादिवर्णञ्च चक्रञ्च गणयेत्ततः ॥ १२२ ॥
पूर्वकोणपतिः शक्रो द्वितीयेशो यमानलौ।
निर्ऋतिर्वरुणश्चैव तृतीयमन्दिरेश्वरम् ॥ १२३ ॥
चतुर्थाधिपतिर्वायुः कुबेरो नाथ ! इत्यपि।
पञ्चगेहस्याधिपतिरीशो विश्वविदांवरः ॥
पञ्चकोणे प्रतिष्ठान्तं पञ्चभूताश्रयस्थिताः ॥ १२४ ॥

प्राणे सिद्धिमवाप्नोति चापाने व्याधिपीड़नम्।
समाने सर्वसम्पत्तिरुदाने निर्धनं भवेत् ॥
व्याने च ईश्वरप्राप्तिरेतस्मिन् लक्षणं शुभम् ॥ १२५ ॥
पूर्वगेहे महामन्त्रं मन्त्रत्यागं करोति यः।
स तावत् साधकश्रेष्ठो विष्णुमार्गेण शङ्कर ! ॥ १२६ ॥
विशेषं शृणु यत्नेन सावधानावधारय।
सप्ताक्षरं त्र्यक्षरञ्च दशमाक्षरमेव च ॥ १२७ ॥
पूर्वगेहे यदि भवेदाद्याक्षरसमन्वितम्।
तदा भवति सिद्धिश्च सर्वमैश्वर्यकारकम् ॥ १२८ ॥
षष्ठाक्षरं वेदवर्णं विंशत्यर्णं महामनुम्।
आम्नायाद्यक्षरं व्याप्तं सफलं गणयेद्बुधः ॥ १२९ ॥
तथाऽस्मिन् यमगेहे च मन्त्रं सप्ताक्षरं शुभम्।
षष्ठाक्षरञ्च गणयेत्त्रिंशदक्षरमेव च ॥ १३० ॥
आद्याक्षरसमायुक्तं साध्यसाधकयोरपि।
एकस्यापि च लाभे च मन्त्रसिद्धिरखण्डिता ॥
मन्त्राक्षरादिलाभञ्च अवश्यं गणयेदिह ॥ १३१ ॥
नैर्ऋते च जलेशस्य द्व्यक्षरञ्च नवाक्षरम्।
शून्यदेवाक्षरं नाथ ! गणनीयं विचक्षणैः ॥ १३२ ॥
तथाऽत्र अक्षरं मन्त्रं पञ्चा(र्ण)क्षमनुना तथा।
पञ्चाशदक्षरं मन्त्रं मन्दिरे गणयेत् शुभम् ॥ १३३ ॥
वायुकोणे कुबेरस्य मन्दिरे गणयेत्तथा।
द्वाविंशत्यक्षरं मन्त्रं शून्यषष्ठमनुन्तथा ॥ १३४ ॥
पञ्चाक्षरं तारकायाः शिवे ! पञ्चाक्षरं तथा।
सुशस्तं(सप्त)मन्त्रग्रहणे सफलं परिकीर्त्तितम् ॥ १३५ ॥
ईशानपञ्चकोणे च सफलञ्च नवाक्षरम्।
इष्टाक्षरं हि विद्याया गणनाया हितं सुधीः ॥

एतदुक्तञ्च गणयेद्विरुद्धं नैव शीलयेत् ॥ १३६ ॥
प्राणमित्रं समानञ्च समानो व्यानबान्धवः।
एतत् स्थितञ्च गृह्णीयाद्दोषभाक् स भवेत् क्वचित् ॥ १३७ ॥
एकदैव प्रिये प्रीतिरेकगेहे तथा प्रियम्।
गृहीत्वा विष्णुपदवीं प्राप्नोति मानवः क्षणात् ॥ १३८ ॥
यदि चक्रं न विचार्य्य रिपुमन्त्रं सदाऽभ्यसेत्।
निजायुषा छलत्येव मूको भवति निश्चितम् ॥ १३९ ॥
विचार्य्य यदि यत्नेन सर्वचक्रे प्रियं हितम्।
महामन्त्रं महादेव ! लघु सिध्यति भूतले ॥ १४० ॥

इति श्रीरुद्रयामले उत्तरतन्त्रे महातन्त्रोद्दीपने सर्वचक्रानुष्ठाने सिद्धमन्त्रप्रकरणे भावनिर्णये भैरव-भैरवीसंवादे तृतीयः पटलः ॥ ३ ॥

अथ चतुर्थः पटलः।

भैरव्युवाच।—

अथ वक्ष्यामि चक्रान्यत् शृणु भैरव ! सादरम्।
येन हीना न सिध्यन्ति महाविद्यावरप्रदाः ॥ १ ॥

ब्रह्मचक्रम्।

तव चक्रं ब्रह्मणा च ब्रह्मचक्रमुदाहृतम्।
यस्य ज्ञानात् स्वयं ब्रह्मा स्वबलेन भवं सृजेत् ॥ २ ॥
अकालमृत्युहरणं परं ब्रह्मपदं व्रजेत् ॥ ३ ॥
चतुष्कोणे चतुष्कोणं तन्मध्ये च चतुश्चतुः।
मध्यगेहं वेष्टयित्वा इष्टं मन्दिरमुत्तमम् ॥ ४ ॥
अष्टकोणे महादेव ! षोड़शस्वरमालिखेत्।
अष्टकोणं वेष्टयित्वा वृत्तयुग्मं लिखेत् सुधीः ॥ ५ ॥
मध्यगेहे चतुष्कोणे कादिखान्तञ्च वर्णकम्।
दक्षिणावर्त्तयोगेन विलिखेत् साधकोत्तमः ॥ ६ ॥

तदूर्द्ध्वे स्वगृहे चाङ्कं विलिख्य गणयेत् सुधीः ।
चतुर्गेहस्योर्द्ध्वदेशे युग्मगेहे क्रमाल्लिखेत् ॥ ७ ॥
साध्यस्य साधकस्यापि मेषादिकन्यकान्तकम् ।
अधो लिखेत्तुलाद्यन्तमिति राश्यादिकं शुभम् ॥ ८ ॥
ततो लिखेन्नेहदक्षे युग्मगेहे महेश्वर ! ।
तारकानाश्विनी ताराद्यन्तान् दक्षिणतो लिखेत् ॥ ९ ॥
वर्णक्रमेण विलिखेद्देदमन्दिरमण्डले ।
ऊर्द्ध्वाधः क्रमशो लेख्यमङ्कतारं सुरेश्वर ! ॥
ततो हि गणयेन्मन्त्री योजयित्वा क्रमेण तु ॥ १० ॥
सुखं राज्यं धनं वृद्धिं कलहं कालदर्शनम् ।
सिद्धिं ऋद्धिमष्टकोणे विदित्वा च शुभाशुभम् ॥ ११ ॥
गणयेद्राशिनक्षत्रं मनुं चाहं विवर्जयेत् ।
सुखे सुखमवाप्नोति राजे राज्यमवाप्नुयात् ॥ १२ ॥
वृषे वृषो मिथुनश्च कर्कटः सिंह एव च ।
कन्यका देवता ज्ञेया नक्षत्राणि पुनः शृणु ॥ १३ ॥
ऊर्द्ध्वयुग्मगृहस्यापि दक्षवामे च भागके ।
नक्षत्राणि सन्ति यानि तानि शृणु महाप्रभो ! ॥ १४ ॥
अश्विनी च मृगशिराऽश्लेषा हस्ताऽनुराधिका ।
उत्तराषाढ़िकाऽऽर्द्रा वा पूर्वभाद्रपदा तथा ॥ १५ ॥
दक्षागृहस्थितास्तारा: स्पष्टीभूताश्च देवताः ।
एतासामधिपास्तेषां राशयो ग्रहरूपिणः ॥ १६ ॥
कर्कटकेशरिकन्या-देवताः परिकीर्त्तिताः ।
एतेषाञ्चापि वर्णानामधिपाश्चेति राशयः ॥ १७ ॥
खकारस्य ककारस्य जकारस्य ढकारपः ।
दकारस्य फकारस्य यकारस्य सकारपः ॥
लकारस्यापि पतयो ज्ञेयाश्च क्रमशः प्रभो ! ॥ १८ ॥

संशृणु रोहिणी पुष्या तथा चोत्तरफल्गुनी ।
विशाखा च तथा ज्ञेया पूर्वाषाढ़ा च तारका ॥ १९ ॥
तथा शतभिषा तारा वाममन्दिरपर्वगाः ।
एतासामधिपा एते राशयो ग्रहरूपिणः ॥ २० ॥
मेषो वृषो मिथुनश्च ईश्वराः परिकीर्त्तिताः ।
एतद्गेहस्थितं वर्णमिति रक्षन्ति नित्यशः ॥ २१ ॥
ककारस्य नकारस्य ऋकारस्य उकारपः ।
अकारस्य पकारस्य मकारस्य वकारपः ॥ २२ ॥
हकारस्याधिपतये ऋद्धिमोक्षफलप्रदाः ।
दक्षिणाधो गृहस्यापि देवता इति राशयः ॥ २३ ॥
तुला च वृश्चिकश्चैव धनुश्चैव ग्रहेश्वरः ।
एतेषां तारकाणाञ्च पतयो गदिता मया ॥ २४ ॥
भरण्यार्द्रा मघा चित्रा ज्येष्ठा प्रणववल्लभाः ।
तथोत्तरभाद्रपदा वल्लभा राशयो मताः ॥ २५ ॥
अथ गेहस्थितं वर्णं शृणु नाथ ! भयापह ! ।
यकारस्य दकारस्य टकारस्य नकारपः ॥ २६ ॥
धकारस्य वकारस्य चकारस्य षकारपः ।
चकारपणका एते राशयः परिकीर्त्तिताः ॥ २७ ॥
धनवृद्धिप्रदा नित्या नित्यस्थाननिवासिनः ।
वामाधो मन्दिरस्यापि वल्लभा इति राशयः ॥ २८ ॥
मकराधस्तु कोष्ठेषु मीनो राशिफलस्थिताः ।
एतानि भानि रक्षन्ति शृणु पाशासिधारक ! ॥ २९ ॥
पुनर्वसुः कृत्तिका च तथाभं पूर्वफल्गुनी ।
स्वाती मूला धनिष्ठा च रेवती वामगेहगाः ॥ ३० ॥
एतासामधिपा एते जलस्था ग्रहदेवताः ।
एतान् वर्णान् प्ररक्षन्ति गृहस्था नव राशयः ॥ ३१ ॥

घकारस्य जकारस्य टकारस्य तकारपः ।
नकारस्य भकारस्य लकारस्य सकारपः ॥ ३२ ॥
कलहादिमहादोष-कालदर्शनकारका: ।
राशयो लोकहा नाथ ! तस्मात्तान् परिवर्जयेत् ॥ ३३ ॥
यद्येकदेवता गेहं विभिन्नञ्च सुशोभनम् ।
चतुःस्थानं युगस्थानं सर्वत्रापि निषेधकम् ॥ ३४ ॥
एकगेहस्थितं मन्त्रं बहुसौख्यप्रदायकम् ।
नाम्न आद्यक्षरं नीत्वा राशिनक्षत्रविस्मृतौ ॥ ३५ ॥
अभावे साधकश्रेष्ठः कलहे कलहं भवेत् ।
रिपुश्चेन्मूलनाशः स्यात् कलहोऽपि सुरेश्वर ! ॥ ३६ ॥
नेत्रयुग्मं स्वरं पाति सिंहो हि कन्यकां तथा ।
कर्णयुग्मं तुला पाति संयुगं वृश्चिको धनुः ॥ ३७ ॥
च-युगं मकरं पाति कुम्भो मीनश्च पाति हि ।
ओष्ठञ्च पाति च तथा अधरं मेष एव च ॥ ३८ ॥
दन्तयुग्मं वृषः पाति मिथुनः शेषगोऽक्षरः ।
यस्य ये ये राशयः स्युस्तस्य तत्तच्छुभं स्मृतम् ॥ ३९ ॥
एकराशिः शुभं नित्यं ददाति च मनोरथम् ।
अन्यत्र दुःखदं प्रोक्तं साधकः सिद्धिभाग् भवेत् ॥ ४० ॥
भिन्नराशौ वर्जनीयं कलहं कालदर्शनम् ॥ ४१ ॥
श्रूयतां शैलजानाथ ! चक्रं श्रीविदशात्मकम् ।
पूर्वपश्चिमभेदेन षट् च रेखाः समालिखेत् ॥ ४२ ॥
वामादिदक्षिणान्तञ्च रेखा दश सदा लिखेत् ॥ ४३ ॥
पञ्चगेहे पुरकाङ्कं सर्वाधो हारकाङ्ककम् ।
तन्मध्ये रचयेदक्षं देवताग्रहसंयुतम् ॥
पुरकाङ्कं मध्यगेहे सप्तर्षियुक्तमालिखेत् ॥ ४४ ॥
तद्दक्षिणे द्वादशञ्च तद्दक्षेण रसं तथा ।

तद्दक्षे अष्टदशकं तद्दक्षे षोडशस्य तम् ॥ ४५ ॥
पुरकाङ्कं ततो लेख्यं इन्द्राद्यङ्कञ्च दक्षतः ।
इन्द्रगेहे च शतकं विधिविद्याफलप्रदम् ॥
धर्मगेहे शून्यसप्त-युगलं विलिखेद्बुधः ॥ ४६ ॥
अनन्तमन्दिरे नाथ ! शून्याब्धष्टवसुस्ततः ।
कालीगृहे शून्यवेद-वामायां विलिखेत्ततः ॥ ४७ ॥
धूमावतीमन्दिरे च शून्यखेषुनिशापतिः ।
इन्द्राधो दक्षतो लेख्या अङ्काश्चन्द्राधिदेवताः ॥
शून्याष्टचन्द्रयुक्ताश्च सर्वत्र देवता लिखेत् ॥ ४८ ॥
तथाश्विनीकुमारौ च शून्यानलयुगायुगौ ।
तत्पश्चात् पूर्वगेहञ्च सहस्रार्कसमन्वितम् ॥ ४९ ॥
तारणीमन्दिरस्थाङ्कं शून्यवेदं तथैव च ।
रसनामुखीगेहस्थं शून्याष्टचन्द्रसंयुतम् ॥ ५० ॥
एतच्चन्द्रगृहस्याधो वाह्नी गेहं मनोरमम् ।
रन्ध्रवेदात्मकं गेहं सर्वसिद्धिप्रदायकम् ॥ ५१ ॥
राहुगेहं महापापं शून्यशून्यमुनिप्रियम् ।
पश्चादेकत्र हस्तञ्च खशून्ययुगलात्मकम् ॥ ५२ ॥
षोडशीमन्दिरे शून्यमष्टचन्द्रसमन्वितम् ।
मातङ्गीमन्दिरे शून्य-रुद्रचन्द्रसमन्वितम् ॥ ५३ ॥
वायोरधो वरुणस्य गृहं सप्तशशिप्रियम् ।
तरुणीगेहमध्ये च शून्याष्टकसमन्वितम् ॥ ५४ ॥
बुधगेहस्थिताङ्कञ्च शून्यचन्द्रयुगात्मकम् ।
भुवनेशीमन्दिरस्थं शून्याष्टकशशिप्रियम् ॥ ५५ ॥
वरुणाधः कुबेरस्य गृहस्थं षट् च युग्मकम् ।
आनन्दभैरवीगेहे दशकं परिकीर्त्तितम् ॥ ५६ ॥
धरणीगृहमध्ये च शून्ययुग्मेन्दुसंयुतम् ।

भैरवीगृहमध्यस्थं शून्यं युगलचन्द्रकम् ॥ ५७ ॥
राशिगृहस्थं शून्यर्षि-चन्द्रमण्डलसंयुतम् ।
कुबेराधः स्वकं चक्र-स्थिताङ्कं सर्वसिद्धिदम् ॥ ५८ ॥
ईश्वरस्य गृहस्थञ्च सप्तशून्ययुगात्मकम् ।
तिरस्करिण्या गेहस्थं सहस्राङ्कसमन्वितम् ॥ ५९ ॥
किङ्किणीमन्दिरं पश्चादष्टचन्द्रसमन्वितम् ।
छिन्नमस्तागृहं पश्चाच्छून्याष्टचन्द्रमण्डलम् ॥ ६० ॥
वागीश्वरीगृहं पश्चात् सप्तभूचन्द्रमण्डलम् ।
महाफलप्रदातारं धर्मो रक्षति तं पुनः ॥ ६१ ॥
ईश्वरस्य अधोगेहे वटुकस्य गृहं ततः ।
शून्याष्टमाद्यं स्वगृहं धर्मार्थकाममोक्षदम् ॥ ६२ ॥
तत्पश्चात् डाकिनीगेहं खशून्यमुनिसंयुतम् ।
हन्ति साधकसौख्यं हि क्षणादेव न संशयः ॥ ६३ ॥
स्वगृहे स्वीयमन्त्रस्य फलदं परिकीर्त्तितम् ।
भीमादेवीगृहं पश्चात् खसप्तचन्द्रमण्डलम् ॥ ६४ ॥
भयदं सर्वदेशे तु वर्जयेत गृहान्तरम् ।
लक्षवर्णं लिखेत् शेष-गृहे हे पण्डितोत्तमः ॥ ६५ ॥
इन्द्रगेहावधि धीरो वकारादिकवर्णकम् ।
क्षकारान्तं लिखेत्तत्र गणयेत् साधकस्ततः ॥
पूरकाङ्कमूर्द्धदेशे हारकाङ्कमधो लिखेत् ॥ ६६ ॥
निजनामाक्षरं यत्र तत्कोष्ठाङ्कं महेश्वर ! ।
नीत्वा च पूजयेद्विद्वान् स्वस्वगेहोर्द्धदेशगैः ॥ ६७ ॥
प्राप्तास्ततो हरेन्नाथ ! अथोर्द्धहाष्टशोधकम् ।
विस्तारश्चेद्देवताङ्गस्तदङ्गः शुभदः स्मृतः ॥ ६८ ॥
अल्पाङ्गः शुभदः प्रोक्तः साधकस्य सुखावहः ।
एकाक्षरे महासौख्यं तत्रापि गणयेद्बुधः ॥ ६९ ॥

धीराङ्कः शून्यगामी च देवताङ्कस्तथा विभो ! ।
तदा नैव शुभं विद्यादशुभाय प्रकल्पते ॥ ७० ॥
एके धनमवाप्नोति द्वितीये राजवल्लभः ।
तृतीये जाप्यसिद्धिः स्याच्चतुर्थे मरणं ध्रुवम् ॥ ७१ ॥
पञ्चमे पञ्चमानः स्यात् षष्ठे दुःखोत्कटानि च ।
शैवानां शाक्तवर्णानामित्यङ्कः परिकीर्त्तितः ॥ ७२ ॥
वैष्णवानां निषेधे च पञ्चमाङ्को निषेधकः ॥ ७३ ॥
यासां यासां देवतानां हिंसा तिष्ठति चेतसि ।
तन्मन्त्रग्रहणादेवाष्टैश्वर्य्यं तुच्छतो भवेत् ॥ ७४ ॥
यद्देवस्याश्रिता ये तु तद् गृहाङ्कं हरन्ति च ।
ऊर्द्धाङ्केन पूरयित्वा अधोऽङ्केन हरेत् सदा ॥ ७५ ॥

ऋणिधनिचक्रम् ।—

ऋणिधनिमहाचक्रं वक्ष्यामि शृणु तत्त्वतः ।
दर्शनादेव कोष्ठस्य जानाति पूवजन्मगम् ॥ ७६ ॥
देवं बहुतराङ्केषु ज्ञात्वा सिद्धीश्वरो भवेत् ।
निजसेव्यां महाविद्यां गृहीत्वा मुक्तिमाप्नुयात् ॥ ७७ ॥
कोष्ठशुद्धञ्च मन्त्रञ्च ये गृह्णन्ति द्विजोत्तमाः ।
तेषां दुःखानि नश्यन्ति ममाज्ञा बलवत्तरा ॥ ७८ ॥
कोष्ठशुद्धं महामन्त्रं फलदं रुद्रभैरव ! ।
न हातव्यं महामन्त्रं सद्गुरुप्रियदर्शनात् ॥ ७९ ॥
तत्र कोष्ठं न विचार्य्यं चेज्जानाति विचार्य्यकम् ।
महाविद्यामहामन्त्रे विचार्य्य कोटिपुण्यभाक् ॥ ८० ॥
अविचारे चोक्तफलं ददाति कामसुन्दरी ।
कोष्ठान्येकादशान्येव वेदेन पूरितानि च ॥ ८१ ॥
अकारादिहकारान्तं लिखेत् कोष्ठेषु तत्त्ववित् ।
प्रथमं पञ्चकोष्ठेषु ह्रस्वदीर्घक्रमेण तु ॥

द्वयं द्वयं लिखेत्तत्र विचारे खलु साधकः ॥ ८२ ॥
शेषेष्वेकैकशो वर्णान् क्रमतस्तु लिखेत् सुधीः ।
समा [आ] वर्णद्वयस्याद्यावधिस्तु क्रमशोऽङ्ककम् ॥ ८३ ॥
आद्यमन्दिरमध्ये तु षष्ठाङ्कं विलिखेद्बुधः ।
द्वितीये षष्ठचिह्नञ्च तृतीये च गृहे तथा ॥ ८४ ॥
चतुर्थे गगनाङ्कञ्च क्रमे चक्रं यथा तथा ।
षष्ठचापि चतुर्थञ्च सप्तमे च चतुर्थकम् ॥ ८५ ॥
अष्टमे गगनाङ्कञ्च नवमे दशमे तथा ।
मेषमन्दिरमध्ये तु त्रयाङ्कं विलिखेत्ततः ॥ ८६ ॥
एतेनाथ साध्यवर्णाः कथिताः क्रमशो ध्रुवम् ।
कथयामि साधकार्णं सकलार्थनिरूपणम् ॥ ८७ ॥
आद्यगेहे द्वितीयञ्च द्वितीये च तृतीयकम् ।
तृतीये पञ्चमं प्रोक्तं गगनं वेदपञ्चके ॥ ८८ ॥
षष्ठे युगलमेवं हि सप्तमे चन्द्रमण्डलम् ।
अष्टमे गगनं प्रोक्तं नवमे च चतुर्थकम् ॥ ८९ ॥
वेदञ्च दशमे प्रोक्तं चन्द्रमेकादशे तथा ।
साधकार्णास्तथा ते ते वर्णमण्डलमध्यगाः ॥ ९० ॥
साध्यवर्णान् महादेव ! स्वरव्यञ्जनभेदकान् ।
एवं हि सर्वमन्त्राणामष्टाद्यङ्कैः प्रपूरयेत् ॥ ९१ ॥
एकीकृत्य हरेदष्ट-संख्याभिः प्राणवल्लभ ! ।
यस्यापहस्थितं वर्णं तज्ज्ञेतव्यं मनौ शुभे ॥ ९२ ॥
साधकाभिधानवर्णान् स्वरव्यञ्जनभेदकान् ।
पृथक् पृथक् संस्थितांश्च व्यक्तं शृणु पुनः पुनः ॥ ९३ ॥
द्वितीयाद्यङ्कचन्द्रान्ते संपूर्वांस्त्वभिवाहरेत् ।
मन्त्रो यस्त्वधिकाङ्कः स्यात्तदा मन्त्रं जपेत् सुधीः ॥ ९४ ॥
समेऽपि च जपेन्मन्त्रं न जपेत्तु ऋणाधिके ।

शून्ये मृत्युं विजानीयात्तस्माच्छून्यं विवर्जयेत् ॥ ९५ ॥
द्वितीयाद्यङ्कजालञ्च वैष्णवे सुखदं स्मृतम् ।
द्वितीयाद्यङ्कजालञ्च तथा वै परिकीर्त्तितम् ॥ ९६ ॥
इन्द्राद्यङ्कं तथा नाथ ! सौरे शाक्ते शुभप्रदम् ।
तथा दिक्संख्यकाङ्कञ्च साधकस्य शुभप्रदम् ॥ ९७ ॥
तदङ्कं शृणु यत्नेन पूर्ववत् सकलं स्मृतम् ।
स्थलञ्चैव विभिन्नाङ्कमूर्द्धाधश्च क्रमेण तु ॥
साध्याङ्कान् साधकाङ्कांश्च पूरयेद् ग्रहसंख्यया ॥ ९८ ॥
गुणिते तु हृतेऽष्टाभिर्यच्छेषं जायते स्फुटम् ।
तदङ्कं कथयाम्यत्र एकादशगृहस्थितम् ॥ ९९ ॥
इन्द्रतारास्वर्गरवि-तिथिषड्वेददाहनाः ।
अष्टवसुनवाङ्कस्थाः साध्यार्णगुणिता इति ॥ १०० ॥
दिग्भूगिरिश्रुतिगज-वह्निपर्वतपञ्चमाः ।
वेदषष्टिनलाङ्कञ्च गणयेत् साधकाचरान् ॥ १०१ ॥
नामाद्यक्षरमारभ्य यावन्मन्त्रादिमाक्षरम् ।
तत् संख्याञ्च त्रिधा कृत्वा सप्तभिः संहरेद्बुधः ॥ १०२ ॥
अधिकञ्च ऋणं प्रोक्तं तच्छेषं धनमुच्यते ।
अथवाऽन्यप्रकारञ्च कृत्वा मन्त्रं समाश्रयेत् ॥ १०३ ॥
नामाद्यक्षरमारभ्य यावत् साधकवर्णकम् ।
तावत् संख्यं सप्तगुणं कृत्वा वामे हरेद्बुधः ॥ १०४ ॥
श्रीविद्येतरविद्यानां गणना परिकीर्त्तिता ।
अथवाऽन्यप्रकारञ्च सकलान् साधकाचरान् ॥ १०५ ॥
स्वरव्यञ्जनभेदेन द्विगुणीकृत्य साधकः ।
साध्ययुक्तं ततः कृत्वा स्वरव्यञ्जनभेदकम् ॥ १०६ ॥
अष्टाभिः संहरेदङ्कं शृणु संहारविग्रहम् ।
पूर्वचारक्रमं सम्यक् सर्वत्रापि शुभाशुभम् ॥ १०७ ॥

अस्य विचारमात्रेण सिद्धिः सर्वार्थसाधिका ।

पूर्वजन्माराधिता या तां प्राप्नोति हि देवताम् ॥ १०८ ॥

श्रीभैरव्युवाच ।

मन्त्रदोषादिनिर्णयः ।—

अथान्यत् सम्प्रवक्ष्यामि सावधानावधारय ।

उक्ता चक्रं सर्वसारं मन्त्रदोषादिनिर्णयम् ॥ १०९ ॥

मत्स्याकारमूर्द्ध्वमुखं सर्वमन्त्रादिविग्रहम् ।

स्कन्धदेशावधिर्नाथ ! भू-भू-पर्वतमेव च ॥ ११० ॥

एकाक्षरादिमन्त्रादि-द्वादशान्ताक्षरात्मकम् ।

विलिखेत् पृष्ठदेशे तु शुभाशुभविशुद्धये ॥ १११ ॥

त्रयोदशाक्षरान् वाऽथ एकविंशाक्षरान्तकम् ।

नेतव्यं साधकैर्मन्त्रं पृष्ठस्थमुदरस्थकम ॥ ११२ ॥

तथा श्रीशुभदं प्रोक्तं कण्ठादिपुच्छकात्मकम् ।

द्वाविंशादिचतुस्त्रिंशदक्षरान्तमनुं शुभम् ॥ ११३ ॥

तुण्डस्थं वापि गृह्णीयान्मुखस्थञ्च तथा ध्रुवम् ।

शीर्षस्थञ्चापि गृह्णीयान्तदक्षरं शृणु प्रभो ! ॥ ११४ ॥

पञ्चत्रिंशादिद्विचत्वारिंशदन्तमेव च ।

मस्तकस्थं शुभं प्रोक्तं मुखवर्णान् शृणु प्रभो ! ॥ ११५ ॥

त्रिचत्वारिंशदर्णादि एकपञ्चाशदन्तकम् ।

मुखस्थमन्त्रमशुभं न गृह्णीयात् कदाचन ॥ ११६ ॥

पृष्ठस्थं शृणु यत्नेन निरर्थकमनामयम् ।

त्वयका तस्य पीताभिर्देवता कुप्यतेऽनिशम् ॥ ११७ ॥

द्विपञ्चाशदक्षरादि एकषष्टितमान्तकान् ।

वर्णान् पुच्छस्थितानेतान् नेत्रस्थान् शृणु वल्लभ ! ॥ ११८ ॥

द्विषष्टितमवर्णादि-चतुःषष्ट्यक्षरान्तकान् ।

अङ्कं लोचनसंस्थञ्च ततोऽन्यं रसनास्थितम् ॥

तत्सर्वं शुभदं प्रोक्तमेतदन्यतमं स्मृतम् ॥ ११९ ॥

वैष्णवानाञ्च शैवानां शाक्तानां मन्त्रजापने ।

ततोऽन्यं देवभक्तान्यं भुक्तिमुक्तिप्रदं नृणाम् ॥ १२० ॥

रामचक्रम् ।—

अथ वक्ष्ये महादेव ! चक्रसारं सुदुर्लभम् ।

रामचक्रं महाविद्या-सर्वमन्दिरमेव च ॥ १२१ ॥

सर्वसिद्धिप्रदं मन्त्रं निजनामस्थमाश्रयेत् ।

तदैव सिद्धिमाप्नोति सत्यं सत्यं महेश्वर ! ॥

तत्प्रकारं शृणु क्रोधभैरव ! प्रियवल्लभ ! ॥ १२२ ॥

नवाङ्कान् प्रलिखेद्विद्वान् वामदक्षिणभागतः ।

तन्मध्ये क्रमशो दद्यात्तथा सप्तदशाङ्ककान् ॥ १२३ ॥

दक्षिणादिक्रमेणैव मुक्तविद्याः समालिखेत् ।

अकारादिक्षकारान्तं सर्वस्मिन् मन्दिरे लिखेत् ॥ १२४ ॥

बालादिदेवताः सर्वा श्यामर्य्यन्ताश्च देवताः ।

अस्याकाशविधे गेहे सान्तनित्यं फलप्रदम् ॥ १२५ ॥

पुनर्विलोममार्गेण आदिक्षान्तार्णमन्दिरे ।

रक्तदन्तादिश्रीविद्या-मन्त्रान्तं विलिखेद् बुधः ॥ १२६ ॥

क्षकाराद्यनुलोमेन क्षकारान्तं लिखेत्ततः ।

पुनस्तच्छेषविद्याश्च शेषगेहे लिखेत् सदा ॥ १२७ ॥

कायशोधनमुख्यादि-शैलवासिनिमन्त्रकम् ।

पञ्चविंशतिगेहेस्थं गणयेत् साधकस्ततः ॥ १२८ ॥

गृहस्थमङ्कं वक्ष्यामि शृणु योगीशवल्लभ ! ।

बालागृहादिशेषान्तं मुनिहस्तविधौ गृहे ॥ १२९ ॥

क्रमेण शृणु तत्सर्वं सावधानावधारय ।

दक्षिणावर्त्तयोगेन गणयेत क्रमशो बुधः ॥ १३० ॥

वसुसप्तपञ्चमेषु वह्निवेदानलास्तथा ।

मुनिषष्ठाद्यवेदाश्च सप्तेषुमुनयस्तथा ॥ १३१ ॥
पञ्चवेदेषुवसवो वेदेषुवह्नयस्तथा ।
वह्निवेदाश्च संप्रोक्ता आकाशं तदनन्तरम् ॥ १३२ ॥
आकाशानन्तरे गेहे अनलं परिकीर्त्तितम् ।
तत्पश्चात् सर्वगेहेषु सर्वाङ्कं दक्षतः शृणु ॥ १३३ ॥
वह्निवह्निवेदर्वाह्नि-वेदवह्नय एव च ।
अवणाक्षिवेदबाण-वेदेषुसुपकास्तथा ॥ १३४ ॥
षष्ठाष्टसप्तमाः प्रोक्ता वह्न्यग्नीषुमुनिस्तथा ।
मुनीषुबाणवेदाश्च मुन्यग्निवह्नयस्तथा ॥ १३५ ॥
वह्निवेदबाणसप्त षष्टाङ्कवेदबाणकाः ।
पञ्चसप्तानलाग्निश्च वह्नीषुबाणबाणकाः ॥ १३६ ॥
बाणवेदकान्तवेद-कान्तश्रुतिचतुर्थकाः ।
रामर्षिमुनिषष्ठाश्च सप्तेषुरामवेदकाः ॥ १३७ ॥
वेदसप्ताष्टवसवो नवाष्टमकसप्तमाः ।
वह्न्यग्निवेदबाणाश्च वस्वष्टानलवेदकाः ॥ १३८ ॥
सप्ताष्टमासंप्रोक्ता गृहाङ्काः परिकीर्त्तिताः ।
येषां मनसि या विद्या सदा तिष्ठति शङ्कर ! ॥ १३९ ॥
तामाश्रित्य जपेद्विद्वान् तदा सिध्यति निश्चितम् ।
स्वनाम देवतानाम पूरयेत् षोड़शाङ्ककैः ॥ १४० ॥
हरेन्निजगृहस्थेन चाङ्केन साधकोत्तमः ।
क्षतशेषं बहुतरं शुभं देवस्य निश्चितम् ॥ १४१ ॥
अल्पाङ्कं साधकस्यापि सौख्यमेव न संशयः ।
उक्तक्रमेण गणयेत साधकं स्थिरमानसः ॥ १४२ ॥
महाविद्यानायिकादि-यक्षभूतादिसाधने ।
संप्रोक्तं चक्रसारञ्च सर्वतन्त्रेषु गोपितम् ॥
ततश्चक्रविचारेण सिद्धिमाप्नोति साधकः ॥ १४३ ॥

चतुश्चक्रं प्रवक्ष्यामि शृणुष्व पार्वतीपते ! ।
वामदक्षिणयोगेन रेखापञ्चकमालिखेत् ॥ १४४ ॥
पूर्वपश्चिमभेदेन रेखाः पञ्च समालिखेत् ।
चतुष्कोष्ठे दक्षभागे चतुष्कोष्ठे च मन्त्रवित् ॥ १४५ ॥
तदधश्च चतुष्कोष्ठे तद्वामस्थे चतुर्गृहे ।
प्रलिखेत् क्रमशश्चाद्ये चतुर्मन्दिरमध्यके ॥ १४६ ॥
शोषञ्च शीतलं जप्तं सिद्धञ्चापि ततः परम् ।
अकारञ्च उकारञ्च ऌपोकारं ततः परम् ॥ १४७ ॥
ऊर्द्ध्वस्थमिति वर्णन्तु शीतलस्थं शृणु प्रभो !
षकारञ्च ऊकारञ्च (ऌ ॡ) सौकारञ्च ततः परम् ॥ १४८ ॥
तदधो जपगेहस्थं वर्णं शृणु महाप्रभो ! ।
इकारञ्च ऋकारञ्च एकारञ्च ततः परम् ॥ १४९ ॥
सिद्धिगेहस्थितं वर्णं शृणु सर्वसुखप्रदम् ।
तद्दक्षिणचतुर्गेहे स्थिता न च वदामि तान् ॥ १५० ॥
आह्लादञ्चापत्ययञ्च मुखञ्च सिद्धमित्यपि ।
एतत्कुलस्थ न् सर्वान्तान् शुभाशुभफलप्रदान् ॥ १५१ ॥
ककारञ्च ऋकारञ्च ॠकारञ्च ञकारकम् ।
आह्लादस्थमिति प्रोक्तं प्राप्तिमात्रेण सिद्धिदम् ॥ १५२ ॥
प्रत्ययस्थं गकारञ्च घकारं टठमित्यपि ।
मुखस्थं हि ङकारञ्च चकारं डढमित्यपि ॥
शुद्धस्थञ्च छकारञ्च जकारं णतमित्यपि ॥ १५३ ॥
तदधःस्थं चतुर्गेहं लौकिकं सात्त्विकं तथा ।
मानसिकं राजसिकं चतुर्गेहस्थितं त्विमम् ॥ १५४ ॥
लौकिकस्थं थकारञ्च दावं पञ्चमकारकम् ।
सात्त्विकस्थं धकारञ्च लकारञ्च यकारकम् ॥ १५५ ॥
मानसिकञ्च शृणु भो ! पकारं फबमित्यपि ।

शृणु राजसिकत्वञ्च भकारं वनमित्यपि ॥ १५६ ॥
तन्नामस्थं चतुर्गेहं शृणु पञ्चानन ! प्रभो ! ।
सुप्तं क्षिप्तञ्च लिप्तञ्च दुष्टमन्त्रं प्रकीर्त्तितम् ॥ १५७ ॥
ऊर्द्ध्वगेहेस्थितान् वर्ण-मन्त्रान् गृह्णाति यो नरः ।
वर्जयित्वा सुप्तमन्त्रं क्षिप्तं लिप्तञ्च दुष्टकम् ॥ १५८ ॥
ऐहिके सिद्धिमाप्नोति परे मुक्तिमवाप्नुयात् ।
यदि भाग्यवशात सुप्तादिषु गेहेषु लभ्यते ॥ १५९ ॥
तदा मन्त्रं शोधयेद्वै सुप्तस्तम्भितकीलितैः ।
वर्द्धितैर्दोषजालस्थरशुभं भूतशुद्धगे ॥ १६० ॥
भूतलिप्या पुटीकृत्य जप्त्वा सिद्धिं ततो लभेत् ।
नतुवा वर्जयेद् गेहं चेतुष्कं वर्णवेष्टितम् ॥ १६१ ॥
सुप्तगेहस्थितं वर्णं शृणु पञ्चानन ! प्रभो ! ।
वकारञ्च लकारञ्च ततोऽन्यद् गृहसंस्थितम् ॥ १६२ ॥
शकारञ्च लकारञ्च क्षिप्तगेहस्थितं द्वयम् ।
धकारञ्च चकारञ्च लिप्तगेहस्थितं द्वयम् ॥ १६३ ॥
दुष्टगेहस्थितं नाथ ! शकारं गगने तथा ।
निजं सौभाग्ययुक्तं यत्तन्मन्त्रं तदुपाश्रयेत् ॥ १६४ ॥

सूक्ष्मचक्रम् ।—

सूक्ष्मचक्रं प्रवक्ष्यामि हिताहितफलप्रदम् ।
एतदुक्ताक्षरं शम्भो ! गृहीत्वा जपमाचरेत् ॥ १६५ ॥
वामदक्षिणमारभ्य सप्त रेखाः समालिखेत् ।
भित्त्वा तदङ्कान् मन्त्री च रेखाचतुष्टयं लिखेत् ॥१६६॥
दक्षिणादिक्रमेणैव वद्धं मन्दिरमध्यके ।
मन्त्राक्षराणि विलिखेदङ्काचारेण साधकः ॥ १६७ ॥
तदङ्कं शृणु यत्नेन नराणां भुक्तिमुक्तिदम् ।
प्रथमे मन्दिरे नाथ ! भुजाङ्कं विलिखेत्ततः ॥ १६८ ॥

विष्णुमन्त्रादिगेहे च वेदाङ्कं विलिखेद्बुधः ।
तत्पश्चादष्टमाङ्कञ्च भुजाधः षष्ठमेव च ॥ १६९ ॥
तद् गेहं शङ्करस्यापि तत्पश्चाद् दशमं गृहे ।
तत्पश्चाद्द्वादशाङ्कञ्च नायिकास्थानमेव च ॥ १७० ॥
षष्ठाधो युगलाङ्कञ्च तत्पश्चादष्टमं तथा ।
युगलाधो गृहे चापि चतुर्दशाक्षरं तथा ॥ १७१ ॥
तद्दक्षिणे सूर्य्यगेहं चतुर्दशाक्षरान्वितम् ।
तत्पश्चात् षोड़शाङ्कञ्च पुनरङ्कं लिखेत्ततः ॥ १७२ ॥
तद्दक्षिणे विदवर्णं तत्पश्चादष्टमाक्षरम् ।
ब्रह्ममन्दिरमेवन्तत षोड़शाधः पुनः शृणु ॥ १७३ ॥
अष्टमाङ्कं ततो युग्ममष्टादशाक्षरं ततः ।
प्रथमस्थं द्वितीयस्थं गृह्णीयात् शुभदं स्मृतम् ॥ १७४ ॥
तृतीयस्थं महापापं सर्वमन्त्रेषु कीर्त्तितम् ।
द्वितीये प्रथमं दुःखं द्वितीयं सर्वभाग्यदम् ॥ १७५ ॥
तृतीयञ्च तथा नाथ ! गृह्णीयान्निजसिद्धये ।
तृतीये प्रथमं भद्रं द्वितीये दुःखदायकम् ॥ १७६ ॥
तृतीयञ्च तथा प्रोक्तं षष्टाक्षरगृहं भयम् ।
चतुर्दशाक्षरं भद्रं सूर्य्यमन्त्रं द्वितीयकम् ॥ १७७ ॥
तृतीयस्थं षोड़शाङ्कं महाकल्याणदायकम् ।
अष्टमूर्त्तिः षोड़शाङ्के चतुर्थे शत्रुमारणम् ॥ १७८ ॥
तृतीयगृहमध्यस्थं ब्रह्मकल्याणदायकम् ।
वस्वक्षरं सर्वशेष-गृहे मध्यस्थमेव च ॥ १७९ ॥
अष्टमञ्च महाभद्रं क्षमं चित्तभयप्रदम् ।
अष्टादशाङ्कं शुभदं शेषगे हृतये तथा ॥ १८० ॥
येषां यदक्षराणाञ्च मन्त्रिचेतसि वर्त्तते ।
तत्तत् शुभाशुभं ज्ञात्वा मन्त्रवर्णं तदाभ्यसेत् ॥ १८१ ॥

विष्णुशम्भुस्थितं मन्त्रं नायिकास्थं शिवस्थकम् ।
सूर्य्यस्थं ब्रह्मसंस्थञ्च गृह्णीयात् शाक्त एव न ॥ १८२ ॥
वैष्णवो विष्णुमन्त्राणां शैवः शिवमुपाश्रयेत् ।
नायिकामन्त्रजापी च नायिकार्थं सदाऽभ्यसेत् ॥ १८३ ॥
सूर्य्यमन्त्रविचारार्थी सूर्य्यमन्त्रं समाश्रयेत् ।
एकस्थं युगलं स्थानं तृतीयस्थानमेव च ॥ १८४ ॥
ज्ञात्वा मन्त्रं प्रगृह्णीयादन्यथा चाशुभं भवेत् ।
एतदन्यतमं मन्त्रं दिव्यवीरेषु गीयते ॥ १८५ ॥
ततश्चक्रं प्रवक्ष्यामि सर्वसिद्धिप्रदं ध्रुवम् ।
एतच्चक्रप्रभावेण पशुर्वीरोपमः स्मृतः ॥
सर्वसिद्धियुतो भूत्वा वत्सरात्तां प्रपश्यति ॥ १८६ ॥

इति श्रीरुद्रयामले उत्तरतन्त्रे महातन्त्रोद्दीपने सर्वचक्रानुष्ठाने सिद्धमन्त्रप्रकरणे भावनिर्णये भैरवी-भैरवसंवादे चतुर्थः पटलः ॥ ४ ॥

अथ पञ्चमः पटलः ।

भैरव्युवाच ।—

महाकथहचक्रार्थं सर्वचक्रोत्तमोत्तमम् ।
यस्य विचारमात्रेण कामरूपी भवेन्नरः ॥ १ ॥

मन्त्रसंस्कारः ।—

ततः प्रकारं वीराणां नाथ ! त्वं क्रमशः शृणु ।
चतुरः प्रलिखेद्वर्णांश्चतुःकोष्ठसमन्विते ॥ २ ॥
चतुःकोष्ठे चतुःकोष्ठे चतुश्चतुर्गृहान्वितम् ।
मन्दिरं षोडशप्रोक्तं सर्वकामार्थसिद्धिदम् ॥ ३ ॥
चतुरस्रं लिखेत्कोष्ठं चतुःकोष्ठसमन्वितम् ।
पुनश्चतुष्कं तत्रापि लिखेद्धीमान् क्रमेण तु ॥ ४ ॥
सर्वेषु गृहमध्येषु प्रादक्षिण्यक्रमेण तु ।
अकारादिक्षकारान्तं लिखित्वा गणयेत्ततः ॥ ५ ॥

चन्द्रमग्निं रुद्रवर्णं नवमं युगलं तथा ।
वेदमर्कं दशरसं वसुं षोडशमेव च ॥ ६ ॥
चतुर्दशभौतिकञ्च सप्तपञ्चदशेति च ।
वह्नीन्दुकोष्ठगं वर्णं साङ्गताङ्गैर्वयोदितम् ॥ ७ ॥
एतदङ्कस्थितं वर्णं गणयेत्तदनन्तरम् ।
नामाद्यक्षरमारभ्य यावन्मन्त्रादिमाक्षरम् ॥ ८ ॥
चतुर्भिः कोष्ठैरेकैकमिति कोष्ठचतुष्टयम् ।
पुनः कोष्ठगकोष्ठेषु सव्यतो नाम्न आदितः ॥ ९ ॥
सिद्धः साध्यः सुसिद्धोऽरिः क्रमशो गणयेत् सुधीः ।
सिद्धः सिध्यति कालेन साध्यस्तु जपहोमतः ॥ १० ॥
सुसिद्धो ग्रहणाज्ज्ञानी शत्रुर्हन्ति स्वमायुषम् ।
सिद्धार्णो बान्धवः प्रोक्तः साध्यः सेवक उच्यते ॥ ११ ॥
सिद्धकोष्ठस्थिता वर्णा बान्धवाः सर्वकामदाः ।
जपेन बहुसिद्धिः स्यात् सेवकोऽधिकसेवया ॥ १२ ॥
पुष्णाति पोषकोऽभीष्टो घातको नाशयेद् ध्रुवम् ।
सिद्धः सिद्धो यथोक्तेन द्विगुणः सिद्धसाधकः ॥ १३ ॥
सिद्धः सुसिद्धोऽर्द्धजपात् सिद्धारिर्हन्ति बान्धवान् ।
साध्यसिद्धो द्विगुणकः साध्यसाध्यो निरर्थकः ॥ १४ ॥
सुसिद्धो द्विगुणजपात् साध्यारिर्हन्ति गोत्रजान् ।
सुसिद्धसिद्धोऽर्द्धजपात्तत्साध्यो द्विगुणाधिकात् ॥ १५ ॥
तत्सुसिद्धो ग्रहादेव सुसिद्धारिः स्वगोत्रहा ।
अरिसिद्धः सुतान् हन्यादरिसाध्यस्तु कन्यकाः ॥ १६ ॥
तत् सुसिद्धस्तु पत्नीघ्नस्तदरिर्हन्ति गोत्रजान् ।
यदि वैरिमनोर्हस्त-स्थितः स्यात् साधको भुवि ॥ १७ ॥
तदन्ते रक्षणार्थं हि कुर्य्यादेवं क्रियादिकम् ।
तत्प्रकारं महावीर ! शृणुष्व गिरिजापते ! ॥ १८ ॥

वटपत्रे लिखित्वारि-मन्त्रं स्रोतसि निक्षिपेत् ।
एवं मन्त्रविमुक्तः स्यान्ममाज्ञावशहेतुना ॥ १९ ॥
पुनः प्रकारं विप्रस्तु गवां क्षीरे मुदान्वितः ।
द्रोणमिते जपेन्मन्त्रमष्टोत्तरसमन्वितम् ॥ २० ॥
पीत्वा क्षीरं मनोमध्ये ध्यात्वा मन्त्रं समुच्चरन् ।
अन्त्यजक्षीरमध्ये तु वैरिमन्त्रप्रमुक्तये ॥ २१ ॥
पुनः प्रकारं वक्ष्यामि त्रिरात्रमेकवासरम् ।
उपोष्य विधिनानेन पूजां कृत्वा शनौ कुजे ॥ २२ ॥
सहस्रं वा शतं वाऽपि अष्टोत्तरसमन्वितम् ।
जपित्वा सन्त्यजेन्मन्त्रं क्षीरसागरमण्डले ॥ २३ ॥
अथवा तद्गुरोः स्थाने चान्यस्थाने च वा पुनः ।
विचार्य मन्त्रवर्णञ्च गृहीत्वा मोक्षमाप्नुयात् ॥ २४ ॥
स्वप्ने यदि महामन्त्रं प्राप्नोति साधकोत्तमः ।
तदा सिद्धिमवाप्नोति सत्यं सत्यं कुलेश्वर ! ॥ २५ ॥
तन्मन्त्रं कौलिकं नाथ ! गुरौ यत्नेन संग्रही ।
यदा भवति सिद्धिः स्यात्तत्क्षणान्नात्र संशयः ॥ २६ ॥
अरिं वा देवदेवेश ! यदि विद्याद्दयेन्मनुम् ।
अन्यमन्त्रं विचार्यैव विष्णोरेव शिवस्य च ॥ २७ ॥
शक्तिमन्त्रं यदि रिपुं तदा त्वेवंप्रकारकम् ।
आदावन्ते च मध्ये च श्रीं वौषट् स्वाहयाऽन्वितम् ॥ २८ ॥
कृत्वा जप्त्वा महासिद्धिं कामरूपस्थितामिव ।
प्राप्नोति नात्र सन्देहो ममाज्ञा गिरिजापते ! ॥ २९ ॥
शृणु चक्रफलं नाथ ! विचाराचारमङ्गलम् ।
प्रासादश्च महामन्त्रं सद्गुरोर्मुखपङ्कजात् ॥ ३० ॥
लभ्यते यदि भाग्येन सिद्धिरेव न संशयः ।
तद्भावे सिद्धमन्त्रं दृष्टादृष्टफलोत्सुखम् ॥ ३१ ॥

महाचमत्कारकरं हृदयोल्लासवर्द्धनम् ।
स्वप्ने वा सद्गुरोः स्थाने प्राप्तिमात्रेण मुक्तिदम् ॥ ३२ ॥
तन्मतं वर्जयित्वा च घोरान्धकाररौरवे ।
वसन्ति सर्वकालञ्च ममाज्ञावशभागिनः ॥ ३३ ॥
तत्रैव चक्रसारादि-विचारं व्यर्थभाषणम् ।
अरिमन्त्रं महापुण्यं सर्वमन्त्रोत्तमोत्तमम् ॥ ३४ ॥
कोटिजन्मार्जितैः पुण्यैर्महाविद्याश्रयी भवेत् ।
स्वप्ने कोटिकुलोत्पन्नैः पुण्यकोटिफलैरपि ॥
प्राप्नोति साधको मन्त्रं भुक्तये मुक्तये ध्रुवम् ॥ ३५ ॥
ततो मन्त्रो न विचार्यो विचार्ये मरणं भवेत् ।
किन्तु चक्रविचारञ्च यदि स्वप्ने चमत्कृतम् ॥ ३६ ॥
एतेषां चक्रवर्णानां विचारादष्टसिद्धिदम् ।
आयुर्मुक्तिं धनं योग-सिद्धिं ऋद्धिं सुखं शुभम् ॥ ३७ ॥
धर्म्मदेहप्रवत्वञ्च अकाले मृत्युनाशनम् ।
वाञ्छाफलप्रदं गौरी-चरणाम्भोजदर्शनम् ॥ ३८ ॥
भुक्तिं मुक्तिं हरस्थानं प्राप्नोति नात्र संशयः ।
एषां चक्रादिकालञ्च क्रमशो गणितं फलम् ॥ ३९ ॥
यदि सर्वविचारञ्च करोति साधकोत्तमः ।
तदा सर्वफलं नित्यं प्राप्नोति नात्र संशयः ॥ ४० ॥
महाप्रभावमेकञ्च विचाराल्लभते ध्रुवम् ।
अकस्मात् सिद्धिमाप्नोति चक्रराजविचारतः ॥ ४१ ॥
सर्वे देवाः प्रशंसन्ति चक्रमन्त्राश्रितं जलम् ।
वाक्यसिद्धिर्भवेत् क्षिप्रं प्राणायामादिसिद्धिभाक् ॥ ४२ ॥
सर्वेषां प्रणमेद्भूमौ विचरेत् साधको बली ।
इति ते कथितं नाथ ! चक्रं षोड़शमङ्गलम् ॥ ४३ ॥

चक्राणां लोकनादेव सायुज्यपदमाप्नुयात् ।
अतो विचारं सर्वत्र सर्वचक्रादिमङ्गलम् ॥ ४४ ॥

इति श्रीरुद्रयामले उत्तरतन्त्रे महातन्त्रोद्दीपने सर्वचक्रानुष्ठाने सिद्धमन्त्रप्रकरणे भैरवी-भैरवसंवादे मन्त्रादिदोषनिर्णयो नाम पञ्चमः पटलः ॥ ५ ॥

अथ षष्ठः पटलः ।

भैरव उवाच ।—

अथ भावं वद श्रीदे ! दिव्यवीरपशुक्रमात् ।
पशूनां परमाश्चर्य्य-भावं श्रोतुं समुत्सुकः ॥ १ ॥
इच्छाम्याह्लादजलधौ स्थितोऽहं जगदीश्वरि ! ।
यदि भाग्यवशादाज्ञा-सारं चिन्तय सिद्धये ॥ २ ॥

महाभैरव्युवाच ।—

पशुभावः ।—

पशुनाथ ! वीरनाथ ! दिव्यनाथ ! कृपानिधे !
प्रकाशहृदयोल्लास ! चन्द्रशेखर ! तत् शृणु ॥ ३ ॥
कालीकल्पलताकारां तपस्याद्यसङ्गतिम् ।
पशुभावस्थितां नाथ ! देवानां शृणु विस्तरात् ॥ ४ ॥
दुर्गापूजां शिवपूजां यः करोति पशूत्तमः ।
अवश्यं हि यः करोति स पशुरुत्तमः स्मृतः ॥ ५ ॥
केवलं शिवपूजाञ्च करोति यदि साधकः ।
पशूनां मध्यमः श्रीमान् शिवया सह चोत्तमः ।
केवलं वैष्णवो धीरो पशूनां मध्यमः स्मृतः ॥ ६ ॥
भूतानां देवतानाञ्च सेवां कुर्वन्ति सर्वदा ।
पशूनां मध्यमाः प्रोक्ता नरकस्था न संशयः ॥ ७ ॥
त्वत्सेवां मम सेवाञ्च विष्णुब्रह्मादिसेवनम् ।
कृत्वान्यसर्वभूतानां नायिकानां महाप्रभो ! ॥ ८ ॥
यक्षिणीनां भूतिनीनां ततः सेवा शुभप्रदा ।

यः पशुर्ब्रह्मकृष्णादि-सेवां कुर्वन्ति सर्वदा ॥ ९ ॥
तथा श्रीतारकब्रह्म-सेवाहये नरोत्तमाः ।
तेषामसाध्या भूतादि-देवताः सर्वकामदाः ॥ १० ॥
वर्जयेत् पशुमार्गेण विष्णुसेवापरो जनः ।
प्रवक्तव्यञ्च पटले तेषां तेषां ततस्ततः ॥
विधिना विधिना नाथ ! क्रमशः शृणु वल्लभ ! ॥ ११ ॥

सुषुम्नासाधनम् ।—

अथ प्रातः समुत्थाय पशुरुत्तमपण्डितः ।
गुरूणां चरणाम्भोज-मङ्गलं शीर्षपङ्कजे ॥ १२ ॥
विभाव्य पुनरेवं हि श्रीपादं भावयेद् यदि ।
पूजयित्वा च वीरं वै उपहारैर्न मे स्तवैः ॥ १३ ॥
त्रैलोक्यं तेजसा व्याप्तं मण्डलस्थां महोत्सवाम् ।
तड़ित्कोटिप्रभादीप्तिं चन्द्रकोटिसुशीतलाम् ॥ १४ ॥
सार्द्धत्रिवलयाकारां स्वयम्भूलिङ्गवेष्टिताम् ।
उत्थापयेन्महादेवीं महारक्तां मनोन्मनीम् ॥ १५ ॥
श्वासोच्छासत्वदशावृत्तिं द्वादशाङ्गुलरूपिणीम् ।
योगिनीं खेचरीं वायु-रूपां मूलाम्बुजस्थिताम् ॥ १६ ॥
चतुर्वर्णस्वरूपान्तां वकारादिषसान्तकाम् ।
कोटिकोटिसहस्रार्क-किरणां कुलमोहिनीम् ॥ १७ ॥
महामोक्षपथप्रान्त-वान्तरान्तरगामिनीम् ।
त्रैलोक्यरचितां वाक्य-वेदतां शम्भुरूपिणीम् ॥ १८ ॥
महाबुद्धिप्रदां देवीं सहस्रदलगामिनीम् ।
महासूक्ष्मपथे तेजोमयीं मृत्युस्वरूपिणीम् ॥ १९ ॥
कालरूपां सर्वरूपां सर्वत्र सर्वचिन्मयीम ।
ध्यात्वा पुनः पुनः शीर्षे सुधाब्धौ विनिवेष्टिताम् ॥
सुधापानं कारयित्वा पुनः स्थाने समानयेत् ॥ २० ॥

समानयनकाले तु सुषुम्ना मध्यमध्यके ।
अमृताभिप्लुतं कृत्वा पुनः स्थानेषु पूजयेत् ॥ २१ ॥
ऊर्द्ध्वोद्यमनकाले तु महातेजोमयीं स्मरेत् ।
प्रतिप्रयाणकाले तु सुधाधाराभिराप्लुताम् ॥ २२ ॥
महाकुलकुण्डलिनीममृतानन्दविग्रहाम् ।
ध्यात्वा ध्यात्वा पुनर्ध्यात्वा सर्वसिद्धीश्वरो भवेत् ॥ २३ ॥
तस्मिन् स्थाने महादेवीं विभाव्य किरणोज्ज्वलाम् ।
अमृतानन्दमूर्त्तिं तां पूजयित्वा शुभां मुदा ॥ २४ ॥
मानसोच्चारबीजेन मायां वा कामबीजकम् ।
पञ्चाशद्वर्णमालाभिर्जप्त्वानुलोमगस्तथा ॥ २५ ॥
विलोमेन पुनर्जप्त्वा सर्वत्र कुमुदं स्तवम् ।
पठित्वा सिद्धिमाप्नोति तत्स्तोत्रं शृणु भैरव ! ॥ २६ ॥

कुण्डलिनीस्तवः ।—

जन्मोद्धारनिरीक्षणीह तरुणी वेदादिबीजादिमा
नित्यं चेतसि भाव्यते भुवि कदा सद्वाक्यसञ्चारिणी ।
मां पातु प्रियदासभावकपदं सङ्घातये श्रीधरि !
धात्रि ! त्वं स्वयमादिदेववनितादीनातिदीनं पशुम् ॥२७॥
रक्ताभामृतचन्द्रिका लिपिमयी सर्पाकृतिर्निद्रिता
जाग्रत्कूर्मसमाश्रिता भगवती त्वं मां समालोकय ।
मांमोहान्धकुगन्धदोषजडितं वेदादिकार्थान्वितं
स्वल्पान्यामलचन्द्रकोटिकिरणै नित्यं शरीरं कुरु ॥२८॥
सिद्धार्थी निजदोषवित स्थलगतिर्व्याधीयते विद्यया
कुण्डल्या कुलमार्गमत्तनगरीमायाकुमारं श्रिया ।
यद्येवं भजति प्रभातसमये मध्याह्नकालेऽथवा
नित्यं यः कुलकुण्डलीजपपदाम्भोजं स सिद्धो भवेत् ॥२९॥
वाय्वाकाशचतुर्दलेऽतिविमले वाञ्छाफलान्यालये

नित्यं सम्प्रति नित्यदेहघटिता साङ्केतिता भाविता ।
विद्या कुण्डलमानिनी स्वजननी माया क्रिया भाव्यते
यैस्तैः सिद्धकुलोद्भवैः प्रणतिभिः सत्स्तोत्रकैः शम्भुभिः ॥३०
वातांशङ्कविमोहिनीति बलवच्छायापटोद्गामिनी
संसारादिमहासुखप्रहनने ! तत्र स्थिता योगिनी ।
सर्वग्रन्थिविभेदिनी स्वभुजगा सूक्ष्मातिसूक्ष्मा परा
ब्रह्मज्ञानविनोदिनी कुलकुटीराघातनी भाव्यते ॥ ३१ ॥
वन्दे श्रीकुलकुण्डलीं त्रिवलिभिः साङ्गैः स्वयम्भूप्रियां
प्रावेष्ट्याम्बरचित्तमध्यचपला बालाबलानिष्कला ।
या देवी परिभाति वेदवदना सम्भावनी तापिनी
दृष्टानां शिरसि स्वयम्भूवनिता सम्भावयामि क्रियाम् ॥ ३२ ॥
वाणीकोटिमृदङ्गनादमदनानिश्रेणिकोटिध्वनिः
प्राणेशी प्रियतामभूलकमनोल्लासैकपूर्णानना ।
आषाढोद्भवमेघराजिजनितध्वान्ताननास्थायिनी
माता सा परिपातु सूक्ष्मपथगे ! मां योगिनां शङ्करी ॥३३॥
त्वामाश्रित्य नरा व्रजन्ति सहसा वैकुण्ठकैलासयो-
रानन्दैकविलासिनीं शशिशतानन्दाननां कारणाम् ।
मातः श्रीकुलकुण्डली प्रियकले ! काली कलोद्दीपने !
तत्स्थानं प्रणमामि भद्रवनिते ! मामुद्धर त्वं पथे ॥ ३४ ॥
कुण्डलीशक्तिमार्गस्थं स्तोत्राष्टकमहाफलम् ।
यः पठेत् प्रातरुत्थाय स योगी भवति ध्रुवम् ॥ ३५ ॥
क्षणादेव हि पाठेन कविनाथो भवेदिह ।
पवित्रो कुण्डली योगी ब्राह्मणो नो भवेन्महान् ॥ ३६ ॥
इति ते कथितं नाथ ! कुण्डलीकोमलं स्तवम् ॥ ३७ ॥
एतत् स्तोत्रप्रसादेन देवेषु गुरुगीष्पतिः ।
सर्वे देवाः सिद्धियुता अस्याः स्तोत्रप्रसादतः ॥ ३८ ॥

द्विपरार्द्धं चिरञ्जीवी ब्रह्मा सर्वसुरेश्वरः ।
त्वष्टापि मम निकटे स्थितो भगवतीपतिः ॥ ३९ ॥
मां विद्धि परमां शक्तिं स्थूलसूक्ष्मस्वरूपिणीम् ।
सर्वप्रकाशकरणीं विन्ध्यपर्वतवासिनीम् ॥ ४० ॥
हिमालयसुतां सिद्धां सिद्धमन्त्रस्वरूपिणीम् ।
वेदान्तशक्तितन्त्रस्थां कुलतन्त्रार्थगामिनीम् ॥ ४१ ॥
रुद्रयामलमध्यस्थां स्थितिस्थापकभावनाम् ।
पञ्चमुद्रास्वरूपाञ्च शक्तियामलमालिनीम् ॥ ४२ ॥
रत्नमालावलाकाढ्यां चन्द्रसूर्य्यप्रकाशिनीम् ।
सर्वभूतमहाबुद्धिं दैत्यदर्पापहारिणीम् ॥ ४३ ॥
स्थित्युत्पत्तिलयकरीं करुणासागरस्थिताम् ।
महामोहनिवासाढ्यां दामोदरशरीरगाम् ॥ ४४ ॥
छत्रचामररत्नाढ्यमहाशूलकरां पराम् ।
ज्ञानदां बुद्धिदां विद्या-रत्नमालाकलापदाम् ॥ ४५ ॥
सर्वतेजःस्वरूपां मामनन्तकोटिविग्रहाम् ।
दरिद्रधनदां लक्ष्मीं नारायणमनोरमाम् ॥ ४६ ॥

पशुभावप्रशंसा ।—

सदा भावय शम्भो त्वं योगनायकपण्डितः ।
पुनर्भावं पशोरेव शृणुष्वादरपूर्वकम् ॥ ४७ ॥
अकस्मात् सिद्धिमाप्नोति पशुर्नारायणोपमः ।
वैकुण्ठनगरे याति चतुर्भुजकलेवरः ॥ ४८ ॥
शङ्खचक्रगदापद्म-हस्तो गरुड़वाहनः ।
महाधर्म्मस्वरूपोऽसौ महाविद्याप्रसादतः ॥ ४९ ॥
पशुभावं महाभावं भावानां सिद्धिदं पुनः ।
आदौ भावं पशोः कृत्वा पश्चात् कुर्य्यादवश्यकम् ॥ ५० ॥
वीरभावं महाभावं सर्वभावोत्तमोत्तमम् ।

तत्पश्चादतिसौन्दर्य्यं दिव्यभावं महाफलम् ॥ ५१ ॥
फलाकाङ्क्षी मोक्षगश्च सर्वभूतहिते रतः ।
विद्याकाङ्क्षी धनाकाङ्क्षी रत्नाकाङ्क्षी च यो नरः ॥ ५२ ॥
कुर्य्याद् भावत्रयं दिव्यं भावसाधनमुत्तमम् ।
भावेन लभते वाद्यं धनं रत्नं महाफलम् ॥ ५३ ॥
कोटिगोदानतः कोटि-शालग्रामप्रदानतः ।
वाराणस्यां कोटिलिङ्ग पूजनेन च यत् फलम् ॥
तत्फलं लभते मर्त्त्यो क्षणादेव न संशयः ॥ ५४ ॥
आदौ दशमदण्डे तु पशुभावमथापि वा ।
मध्याह्नदशदण्डे तु वीरभावमुदाहृतम् ॥
सायाह्नदशदण्डे तु दिव्यभावं शुभप्रदम् ॥ ५५ ॥
अथवा पशुभावस्थो यजेदिष्टादिदेवताम् ।
जन्मावधि यजेन्मन्त्री महासिद्धिमवाप्नुयात् ॥ ५६ ॥
सर्वेषां गुरुरूपः स्यादैश्वर्य्यञ्च दिने दिने ।
यदि गुरुस्वभावः स्यात्तदा मधुमतीं लभेत् ॥ ५७ ॥
यदि विवेकी नो याति महावननिवासवान् ।
ब्रह्मचर्य्यव्रतस्थो वा अथवा स्वपुरे वसन् ॥ ५८ ॥
पीठब्राह्मणमात्रेण महाषोढाश्रमेण च ।
पशुभावस्थितो मन्त्री सिद्धविद्यामवाप्नुयात् ॥ ५९ ॥
यदि पूर्वापरस्थाञ्च महाकौलिकदेवताम् ।
कुलमार्गस्थितो मन्त्री सिद्धिमाप्नोति निश्चितम् ॥ ६० ॥
यदि विद्याः प्रसीदन्ति वीरभाव तदा लभेत् ।
वीरभावप्रसादेन दिव्यभावमवाप्नुयात् ॥ ६१ ॥
दिव्यभावं वीरभावं ये गृह्णन्ति नरोत्तमाः ।
वाञ्छाकल्पद्रुमलता-पतयस्ते न संशयः ॥ ६२ ॥
आश्रमी ध्याननिष्ठश्च मन्त्रतन्त्रविशारदः ।

भूत्वा वसेन्महापीठं सदाज्ञानी भवेद् यतिः ॥ ६३ ॥
किमन्येन फलेनापि यदि भावादिकं लभेत् ।
भावग्रहणमात्रेण मम ज्ञानी भवेन्नरः ॥ ६४ ॥
वाक्यसिद्धिर्भवेत् क्षिप्रं वाणी हृदयगामिनी ।
नारायणं परित्यज्य लक्ष्मीस्तिष्ठति मन्दिरे ॥ ६५ ॥
मम पूर्णतमा दृष्टिस्तस्य देहे न संशयः ।
अवश्यं सिद्धिमाप्नोति सत्यं सत्यं सदाशिव ! ॥ ६६ ॥

महाभैरव उवाच ।—

सुचित्तन्तु महादेवि ! कथयस्वानुकम्पया ।
सर्वतन्त्रेषु विद्यासु भावसङ्केतमेव हि ॥ ६७ ॥
तथापि शक्तितन्त्रेषु विशेषात् सर्वसिद्धिदम् ।
भावविद्याविधिं विद्ये ! विस्तार्य्य भावसाधनम ॥ ६८ ॥

आनन्दभैरव्युवाच ।—

भावविद्याविधिः ।—

भावस्तु त्रिविधो देव ! दिव्यवीरपशुक्रमात् ।
गुरुरस्य त्रिधा चात्र तथैव मन्त्रदेवताः ॥ ६९ ॥
दिव्यभावो महादेव ! श्रेयसां सर्वसिद्धिदः ।
द्वितीयो मध्यमः प्रोक्तस्तृतीयः सर्वनिन्दितः ॥ ७० ॥
बहुजपात्तथा होमात् कायक्लेशादिविस्तरैः ।
न भावेन विना देवि ! तन्त्रमन्त्राः फलप्रदाः ॥ ७१ ॥
किं वीरसाधनेनैव मोक्षविद्याकुलेन किम् ? ।
किं पीठपूजनेनैव किं कन्याभोजनादिभिः ॥ ७२ ॥
स्वशोषित्प्रीतिदानेन किं परेषां तथैव च ।
किं जितेन्द्रियभावेन किं कुलाचारकर्म्मणा ॥ ७३ ॥
यदि भावो विशुद्धार्थो न स्यात् कुलपरायणः ।
भावेन लभते मुक्तिर्भावेन कुलवर्द्धनम् ॥ ७४ ॥

भावेन गोत्रवृद्धिः स्याद्भावेन कुलबोधनम् ।
किं तथा पूजनेनैव यदि भावो न जायते ॥ ७५ ॥
केन वा पूज्यते विद्या केन वा पूज्यते मनुः ।
फललाभश्च देवेश ! भवद्भावात् प्रजायते ॥ ७६ ॥
एतन्मन्त्रस्य कथने शङ्कते मम मानसम् ।
त्रिलोकं सञ्चयेत् प्रायः सर्वरत्नसमागमः ।
नावोच्य निर्जनं कुर्य्यात् कथं तत् कथयामि ते ॥ ७७ ॥

आनन्दभैरव उवाच ।—

त्वत्प्रसादान्महादेवि ! विद्यास्वप्नप्रबोधिनि ! ।
सर्वपञ्चप्रपञ्चानां दीक्षा देया महेश्वरि ! ॥ ७८ ॥
यद्यतो देवि ! सर्वेषां भूतानां स्थापकारणम् ।
करोमि कथय त्वं मां भावमार्गोत्तमोत्तमम् ॥ ७९ ॥

महाभैरव्युवाच ।—

कुमारीलक्षणम ।—

प्रथमं दिव्यभावन्तु कौलिकं शृणु यत्नतः ।
सर्वदेवार्चिता विद्या तेज पुञ्जप्रपूरिताम् ॥ ८० ॥
तेजोमयीं जगत्सर्वां विभाव्य मूर्त्तिकल्पनाम् ।
तत्तन्मूर्त्तिमये रूपैः स्नेहशून्येन वा पुनः ॥ ८१ ॥
आत्मानं तन्मयं कृत्वा सर्वभावं तथैव च ।
तत्सर्वां योषितं ध्यात्वा पूजयेद् यतमानसः ॥ ८२ ॥
अशेषकुलसम्पन्नां नानाजातिसमुद्भवाम् ।
नानादेशोद्भवां वाऽपि सद्गुणालयसंयुताम् ॥ ८३ ॥
द्वितीयवत्सरादूर्द्ध्वं यावत् स्यादष्टमाब्दकम् ।
तावज्जप्वा पूजयित्वा कन्यां सुन्दरमोहिनीम् ॥
दिव्यभावस्थितः साक्षात्तन्त्रमन्त्रफलं लभेत् ॥ ८४ ॥
कुमारीपूजनादेव कुमारीभोजनादिभिः ।
एकद्वित्र्यादिबीजानां फलदा नात्र संशयः ॥ ८५ ॥

ताभ्यः पुष्पफलं दत्त्वा अनुलेपादिकं तथा ।
बालप्रियञ्च नैवेद्यं दत्त्वा तद्भावभावितः ॥
मुदा तदङ्गमाख्यानां बालभावविचेष्टितः ॥ ८६ ॥
जातिप्रियकथाऽऽलाप-क्रीड़ाकौतूहलान्वितः ।
यथार्थं तत्प्रियं तत्र कृत्वा सिद्धीश्वरो भवेत् ॥ ८७ ॥
कन्या सर्वसमृद्धिः स्यात् कन्या सर्वपरन्तपः ।
होमं मन्त्रार्चनं नित्य-क्रियां कौलिकसत्क्रियाम् ॥ ८८ ॥
नानाफलं महाधर्मं कुमारीपूजनं विना ।
तत्तदर्द्धफलं नाथ ! प्राप्नोति साधकोत्तमः ॥ ८९ ॥
फलं कोटिगुणं वीरः कुमारीपूजया लभेत् ॥ ९० ॥
कुसुमाञ्जलिपूर्णञ्च कन्यायां कुलपण्डितः ।
ददाति यदि तत्पुष्पं कोटिमेरुप्रदो भवेत् ॥ ९१ ॥
तज्ज्ञानजं महापुण्यं क्षणादेव समालभेत् ।
कुमारी भोजिता येन त्रैलोक्यं तेन भोजितम् ॥ ९२ ॥
एकवर्षा भवेत् सन्ध्या द्विवर्षा च सरस्वती ।
त्रिवर्षा च त्रिधा मूर्त्तिश्चतुर्वर्षा च कालिका ॥ ९३ ॥
सुभगा पञ्चवर्षा च षड्वर्षा चैव रोहिणी ।
सप्तभिर्मालिनी साक्षादष्टवर्षा च कुब्जिका ॥ ९४ ॥
नवभिः कालसन्दर्भा दशभिश्चापराजिता ।
एकादशे च रुद्राणी द्वादशेऽब्दे तु भैरवी ॥ ९५ ॥
त्रयोदशे महालक्ष्मीर्द्विसप्तपीठनायिका ।
क्षेत्रज्ञा पञ्चदशभिः षोड़शे चाम्बिका मता ॥ ९६ ॥
एवंक्रमेण संपूज्य यावत् पुष्पं न विद्यते ।
प्रतिपदादिपूर्णान्तं वृद्धिभेदेन पूजयेत् ॥ ९७ ॥
महापर्वसु सर्वेषु विशेषाच्च पवित्रके ।
महानवम्यां देवेश ! कुमारीश्च प्रपूजयेत् ॥ ९८ ॥

तस्मात् षोड़शपर्य्यन्तं युवतीति प्रचक्षते ।
तत्र भावप्रकाशः स्यात् स भावः परमो मतः ॥
रक्षितव्यं प्रयत्नेन रक्षितास्ताः प्रकाशयेत् ॥ ९९ ॥
महापूजादिकं कृत्वा वस्त्रालङ्कारभोजनैः ।
पूजयेन्मन्दभाग्योऽपि लभते जयमङ्गलम् ॥ १०० ॥
अन्येषां कथने नाथ ! प्रयोजनमहाफलम् ॥ १०१ ॥
विधिना पूजयेद् यस्तु दिव्यवीरपशुस्थितः ।
भावत्रये महासौख्यं दिव्ये सत्कर्म सत्फलम् ॥ १०२ ॥

इति श्रीरुद्रयामले उत्तरतन्त्रे महातन्त्रोद्दीपने कुमार्य्युपचर्य्याविन्यासे सिद्धमन्त्रप्रकरणे भावनिर्णये भैरव-भैरवीसंवादे षष्ठः पटलः ॥ ६ ॥

अथ सप्तमः पटलः ।

कुमारीपूजा ।—

अथ पूजां प्रवक्ष्यामि कुमार्य्याश्चातिदुर्लभाम् ।
व्याधिवर्गविहीनानां शीघ्रं सिध्यति भूतले ॥ १ ॥
तत्प्रकारं महादेव ! वीराणामधिपाधिप ! ।
पूजास्थानं महापीठं देवालयमथापि वा ॥ २ ॥
सुन्दरीं परमानन्द-वर्द्धनीं जयदायिनीम् ।
कलारात्रिस्वरूपां श्रीं गौरीं रक्ताङ्गरागिणीम् ॥ ३ ॥
कन्यां देवकुलोद्भूतां राक्षसीं वा नरोत्तमाम् ।
नटीकन्यां हीनकन्यां तथा कापालिकन्यकाम् ॥ ४ ॥
रजकस्यापि कन्याञ्च तथा नापितकन्यकाम् ।
गोपालकन्यकाञ्चैव ब्राह्मणस्यापि कन्यकाम् ॥ ५ ॥
शूद्रकन्यां वैद्यकन्यां वणिक्कन्यामथापि वा ।
चण्डालकन्यकां वाऽपि यत्र कुत्राश्रमे स्थिताम् ॥ ६ ॥

सुहृद्वर्गस्य कन्याश्च समानीय प्रयत्नतः ।
पूजयेत् परमानन्दैरात्मध्यानपरायणः ॥ ७ ॥
क्रमशः शृणु देवेन्द्र ! वरहस्तनिषेवित ! ।
परमानन्दसौन्दर्य्य-कारणानन्दविग्रह ! ॥ ८ ॥
मम पूजां यः करोति प्रत्यहं शुद्धभक्तितः ।
तस्यावश्यं कुमारीणां पूजनं भोजनं वरम् ॥
तेजोरूपं विधोश्चाग्नेः सर्वभावे प्रशस्यते ॥ ९ ॥
तत्पूजनात्तदालापाद्भोजनादपि तत् शुभम् ।
मम प्रीतिर्भवेत् साक्षाद्देवता गुप्तिसंस्थिता ॥ १० ॥
कालभैरवदेवस्य कामिनी वटुकस्य च ।
मत्पुत्रस्य सर्वलोक-पूजितस्य महौजसः ॥ ११ ॥
पूजाभिर्विविधैर्द्रव्यैः कुमारी देवपूजिता ।
कुमारी कन्यका प्रोक्ता सर्वज्ञा जगदीश्वरी ॥ १२ ॥
पूजार्थं सर्वलोकस्य समानीय सुरेश्वर ! ।
पूजयन्ति महादेवीं गुप्तभावनिवासिनीम् ॥ १३ ॥
सदा भोजनवाञ्छाढ्या मान्या सन्तुष्टहासिनी ।
हया न रौति सा देवी कुमारी देवनायिका ॥ १४ ॥
सरस्वतीस्वरूपा च पूज्यते सर्वनायकैः ।
शिवभक्तैर्विष्णुभक्तैस्तथाऽन्यदेवपूजितैः ॥ १५ ॥
सर्वलोकैः पूजिता सा चावश्यं पूज्यते बुधैः ।
भक्तः कुमार्य्याः सततं पूजया लभते श्रियम् ॥ १६ ॥
पूजया धनमाप्नोति पूजया लभते महीम् ।
पूजया लभते लक्ष्मीं सरस्वतीं महौजसाम् ॥
महाविद्या प्रसीदन्ति सर्वे देवा न संशयः ॥ १७ ॥
कालभैरवब्रह्मेन्द्रा ब्राह्मणा ब्रह्मवादिनः ।
रुद्राश्च देववर्गाश्च वैष्णवा विष्णुरूपिणः ॥ १८ ॥

अवतारा द्विभुजाश्च विष्णवो मनुशोभिताः ।
अन्ये दिक्पालदेवाश्च चराचरगुरुस्तथा ॥ १९ ॥
नासविद्यायुताः सर्वे दानवाः कटशालिनः ।
अपवर्गस्थिता ये ये ते ते तुष्टा न संशयः ॥ २० ॥
यद्यहं तुष्टिरूपा हि अन्यलोके च का कथा ।
कुमारीपूजनं कृत्वा त्रैलोक्यं वशमानयेत् ॥ २१ ॥
महाशान्तिर्भवेत् क्षिप्रं सर्वपुण्यफलप्रदम् ।
तत्तन्मन्त्रमुल्लेखात् क्षणात् पुण्यायुतं लभेत् ॥ २२ ॥
मन्त्रेण पुटितं कृत्वा जप्वा सिद्धीश्वरो भवेत् ॥ २३ ॥
यद्यत् प्रकारमुच्चार्य्य वदामि सुरसुन्दर ! ।
तत्तत् कार्य्यमवश्यञ्च भिन्नबुद्धिं न कारयेत् ॥ २४ ॥

आनन्दभैरव उवाच ।—

अथ बीजप्रभेदञ्च वद शङ्करपूजिते ! ।
यदि मे स्नेहपुञ्जोऽस्ति मत्कुलार्थप्रवेशिनि ! ॥
वदस्व परमानन्दभैरवि ! प्राणवल्लभे ! ॥ २५ ॥

श्रीआनन्दभैरव्युवाच ।—

शृणु नाथ ! कुलार्थं मे कुमारीपूजने मनुम् ।
महामन्त्रं महामन्त्रं सिद्धमन्त्रं न संशयः ॥ २६ ॥
एतन्मन्त्रप्रसादेन जीवन्मुक्तो भवेत् सुधीः ।
अन्ते देवीपदं याति सत्यमानन्दभैरव ! ॥ २७ ॥
ऐहिके सुखसम्पत्तिर्मधुमत्याः प्रसादकम् ।
अवश्यं प्राप्नुयान्मर्त्त्यो विश्वासं कुरु शङ्कर ! ॥ २८ ॥
वाग्भवेन पुनः क्षोभं मायाबीजे गुणाष्टकम् ।
श्रिया बीजेऽश्रयो लाभो मायाबीजे रिपुक्षयः ॥ २[illegible] ॥
भैरवेण तु बीजेन खेचरत्वं सुरादिभिः ।
कुमारिका ह्यहं नाथ ! सदा त्वं हि कुमारकः ॥ ३० ॥

अष्टोत्तरशतं वाऽपि एकं वा परिपूजयेत् ।
पूजिताः प्रतिपद्यन्ते निर्दहन्त्यपमानिताः ॥ ३१ ॥
कुमारी योगिनी साक्षात् कुमारी परदेवता ।
असुरा अष्टनागाश्च ये ये दुष्टग्रहा अपि ॥ ३२ ॥
भूतवेतालगन्धर्वा डाकिनीयक्षराक्षसाः ।
ये चान्ये देवताः सर्वा भूर्भुवःस्वश्च भैरवाः ॥ ३३ ॥
पृथिव्यादीनि सर्वाणि ब्रह्माण्डं सचराचरम् ।
ब्रह्मा विष्णुश्च रुद्रश्च ईश्वरश्च सदाशिवः ॥ ३४ ॥
ते तुष्टाः सर्वतुष्टाश्च यस्तु कन्यां प्रपूजयेत् ।
निधियुक्तां कुमारीन्तु पूजयेच्चैव भैरव ॥ ३५ ॥
पाद्यार्घ्यञ्च तथा धूपं कुङ्कुमं चन्दनं शुभम ।
भक्तिभावेन संपूज्य कुमारीभ्यो निवेदयेत् ॥ ३६ ॥
प्रदक्षिणत्रयं कुर्य्यादादौ मध्ये तथाऽन्ततः ।
पश्चाच्च दक्षिणा देया रजतस्वर्णमौक्तिकैः ॥ ३७ ॥
दक्षिणां विधिवद्दत्त्वा कुमारीभ्यः क्रमेण तु ।
विवाहयेत् स्वयं कन्यां ब्रह्महत्यां व्यपोहति ॥ ३८ ॥
यावच्च पुण्यकाले तु कन्यादानं प्रकल्पयेत् ।
भुक्तिमुक्तिफलं तस्य सौभाग्यं सर्वसम्पदः ॥
रुद्रलोके वसेन्नित्यं त्रिनेत्रो भगवान् हरः ॥ ३९ ॥
तीर्थकोटिसहस्राणि अश्वमेधशतानि च ।
तत्फलं लभते सद्यो यस्तु कन्यां विवाहयेत् ॥ ४० ॥
वालुका सागरे ज्ञेया तावदब्दसहस्रकम् ।
एकैकं कुलमुद्धृत्य रुद्रलोके महीयते ॥ ४१ ॥
तत्तदिष्टदेवतानां प्रीतये तुष्टये सुधीः ।
कन्यादानं समाहृत्य मुक्तिमाप्नोति भैरव ! ॥ ४२ ॥
तत्तद्वर्षीयकन्यायास्तत्तद्रुद्रा च साधकः ।

विभाव्य शिवरूपत्वं सम्प्रदानीयकालके ॥ ४३ ॥
पूर्णरूपं शिवं ज्ञात्वा वरं सर्वाङ्गसुन्दरम् ।
तेजोमयं यशः कान्तं बालभैरवरूपिणम् ॥ ४४ ॥
वटुकेशं महादेवं वरयेत् साधकाग्रणीः ।
बालरूपं भैरवञ्च त्रैलोक्यसुन्दरीं वराम् ॥ ४५ ॥
नानाऽलङ्कारनम्राङ्गीं भद्रविद्याप्रकाशिनीम् ।
चारुहास्यां महानन्द-हृदयां शुभदां शुभाम् ॥ ४६ ॥
ध्यात्वा द्वादशपत्राब्जे पूर्णचन्द्रनिभाननाम् ।
सम्प्रदाने समानीय तत्तन्मन्त्रेण द्रापयेत् ॥ ४७ ॥
एतत् श्रुत्वा महावीरो बलरूपो निरञ्जनः ।
पुनर्जिज्ञासयामास परमानन्दभैरवीम् ॥ ४८ ॥

आनन्दभैरव उवाच ।—

कुमारीकुलतत्त्वार्थं मन्त्रार्थं जपनक्रमम् ।
यजमानप्रकारञ्च भोजनादिक्रमं तथा ॥ ४९ ॥
होमादिप्रक्रियां तस्याः स्तोत्रं प्रत्येकमेव हि ।
कवचञ्च कुमारीणां वदस्व क्रमशः प्रिये ! ॥ ५० ॥
येन क्रमेण सा विद्या कुमारीपरदेवता ।
निर्जने साधकस्याग्रे महावाक्यं स्वयं वदेत् ॥ ५१ ॥
बालिका चारुनयना केन हेतोः प्रसीदति ।
तत्प्रकारं वद स्नेहादानन्दभैरवप्रिये ! ॥ ५२ ॥

आनन्दभैरव्युवाच ।—

शृणु शम्भो ! प्रवक्ष्यामि कुमारीकुलमन्त्रकान् ।
येन विज्ञानमात्रेण धरणीशो नरोत्तमः ॥ ५३ ॥
सर्वेषां गुरुरूपः स्यात् कुमारीयजनेन च ।
एकवर्षा वरा सन्ध्या द्विकानां मनुरुत्तमम् ॥ ५४ ॥
षोडशाब्दान्तरूपाणां मन्त्रं शृणु महाप्रभो ! ।

क्रमादिकञ्च सर्वेषां चैतन्यसिद्धिसत्क्रियाम् ॥ ५५ ॥
आनीय सुन्दरीं नारीं कुमारीं वरनायिकाम् ।
रत्नालङ्कारसंयुक्तां शङ्खवस्त्रादिशोभिताम् ॥ ५६ ॥
वाग्भवेन जलं नाथ ! त्वन्नाम्ना परिदापयेत् ।
देवीबुद्ध्या सदा ध्यात्वा पूजयेत् साधकोत्तमः ॥ ५७ ॥
मायाबीजेन त्वन्नाम्ना पाद्यं दद्यात्तथा प्रभो ! ।
लक्ष्मीबीजेन चार्घ्यन्तु कुर्य्याद्बीजेन चन्दनम् ॥ ५८ ॥
मायाबीजेन पुष्पाणि कुमार्य्यै दापयेत् सुधीः ।
सदाशिवेन मन्त्रेण धूपदीपौ महोत्तमौ ॥ ५९ ॥
दत्त्वा षडङ्गमन्त्रेण पूजयेद्दैवनायक ।
तत्प्रकारं महादेव ! शृणुष्वानन्दरूपधृक् ॥ ६० ॥
महातेजोमयं शुभ्रं हृदयं हस्तदक्षिणे: ।
विभाव्य प्रपठेद्धीमान् तन्मन्त्रं शृणु शङ्कर ॥ ६१ ॥
आदौ वाग्भवमुच्चार्य्य मायां लक्ष्मीन्तु कूर्चकम् ।
प्रेतबीजं ततो ब्रूयात् सविसर्गेन्दुबिन्दुकम् ॥ ६२ ॥
कुलशब्दं समुच्चार्य्य कुमारिके ततो वदेत् ।
हृदयाय नमः प्रोच्य ततः शिरसि भावयेत ॥ ६३ ॥
शुक्लवर्णं सर्वमयं बीजमुच्चार्य्य संन्यसेत् ।
हकारं वाग्भवाख्यञ्च वकारं वाग्भवार्थकम् ॥ ६४ ॥
मायां लक्ष्मीं वाग्भवञ्च द्विठान्ते शिरसि पदम् ।
वह्निजायावधिर्मन्त्री न्यसेत् शिरसि साधकः ॥ ६५ ॥
शिखामध्ये कृष्णवर्णं नीलाञ्जनचयप्रभम् ।
विभाव्य संन्यसेन्मन्त्री कुमारीकुलसिद्धये ॥ ६६ ॥
आदौ प्रणवमुद्धृत्य तदन्ते वह्निसुन्दरी ।
शिखायै च समुद्धृत्य वषट्कारं ततो वदेत् ॥ ६७ ॥
ततः कवचमध्ये च बन्नवन्तं सुतेजसम् ।

प्रथमारुणसङ्काशं ध्यात्वा चारुकलेवरम् ॥ ६८ ॥
वाग्भवञ्च समुच्चार्य्य कुलशब्दं ततो वदेत् ।
वागीश्वरीपदं पश्चात् कवचाय ततो वदेत् ॥ ६९ ॥
तारकब्रह्मशब्दञ्च कवचन्यासजालकम् ।
ततो नेत्रत्रये ध्यात्वा महाबीजं महाप्रभम् ॥ ७० ॥
रक्तवर्णं कोटिकोटि-जवामण्डलमण्डितम् ।
विराजितं कोटिपुण्यार्जिततेजसि भास्करे ॥ ७१ ॥
वाग्भवञ्च समुच्चार्य्य कुलेश्वरि ! पदं ततः ।
नेत्रत्रयाय शब्दान्ते वौषट् लोचनमन्त्रकम् ॥ ७२ ॥
ततः साधकमन्त्री च वामहस्ततले तथा ।
मध्यमा-तर्जनीभ्याञ्च तालद्वयमुपाचरेत् ॥ ७३ ॥
तन्मन्त्रं कोटिसूर्य्योग्र-ज्योत्स्नाजालसमप्रभम् ।
महाकाशोद्भवं शब्द-महोग्रपरिपीड़नम् ॥ ७४ ॥
मायाबीजं तथास्त्राय-पदमुद्धृत्य यत्नतः ।
फान्तठान्तं समुद्धृत्य महामन्त्रं प्रकीर्त्तितम् ॥ ७५ ॥
ततस्तस्या हृन्निलये ध्यात्वा च परिवारकान् ।
पूजयेद् यत्नतो मन्त्री भेषजाऽमृतधारया ॥ ७६ ॥
तर्पयेत् पूजयेद्भक्त्या भैरवं बालभैरवम् ।
देवताभिः पूजयित्वा परिवारान् क्रमेण वै ॥ ७७ ॥
ततो वाग्भवमुच्चार्य्य सिद्धजायायशब्दतः ।
पूर्वं पदं समुच्चार्य्य वक्राय नम ईरितः ॥ ७८ ॥
ततो वाग्भवमुच्चार्य्य जायायशब्दमुद्धरेत् ।
उत्तरं वक्त्रमुद्धृत्य चतुर्थ्यन्तं नमः पदम् ॥ ७९ ॥
ततो वाग्भवमायाश्री-बीजमुच्चार्य्य यत्नतः ।
कुब्जिके पश्चिमान्ते च वक्राय नमः इत्यपि ॥ ८० ॥
ततो वाग्भवमुच्चार्य्य कालिके पदमुच्चरेत् ।

दचवक्त्राय शब्दान्ते नानामन्त्रं प्रकीर्त्तितम् ॥ ८१ ॥
एतन्मन्त्राचरान्नाथ ! समुच्चार्य्य कुलेश्वर ! ।
पूजयित्वा क्रमेणैव भास्करं परिपूजयेत् ॥ ८२ ॥
चन्द्रं दिक्पालदेवञ्च सन्ध्यादीन् परिपूजयेत् ॥ ८३ ॥
वीरभद्रां महाकालीं कौलिनीं कुलगामिनीम् ।
अष्टादशभुजां कालीं चतुर्वर्गां प्रपूजयेत् ॥ ८४ ॥
नैवेद्यादीन् समानीय नानाभोज्यादिसंयुतान् ।
दुग्धं घनावृतं चीरं पक्वान्नं पक्वसत्फलम् ॥ ८५ ॥
यद् यत् कालोपयोग्यञ्च सर्वकामधुमिश्रितम् ।
पञ्चतत्त्वं कुलद्रव्यं निजकल्याणवर्द्धनम् ॥ ८६ ॥
नानाद्रव्यञ्च नैवेद्यं स्वस्वकल्पोक्तसाधितम् ।
कुमारीभ्यो निवेद्यैवं नानासौरभशोभितम् ॥ ८७ ॥
शीतलं जलमानीय दद्यात्ताभ्यो महासुधीः ।
ततो हि तं महामन्त्र कुमार्य्याश्चातिदुर्लभम् ॥ ८८ ॥
अथवा स्वीयमूलञ्च जप्त्वा सिद्धीश्वरो भवेत् ॥ ८९ ॥
समर्प्य प्राणवायूनां धारयेत् कारयेत् स्वयम् ।
अष्टाङ्गादिप्रणामञ्च कुर्वन् स्तोत्रं पठन् दिशेत् ॥ ९० ॥
"नमामि कुलकामिनीं परमभाग्यसन्दायिनीम् ।
कुमाररतिचातुरीं सकलसिद्धिमानन्दिनीम् ॥ ९१ ॥
प्रवालगुटिकास्रजां रजतरागवस्त्रान्विताम् ।
हिरण्यतुलभूषणां भुवनवाक् कुमारीं भजे" ॥ ९२ ॥
इति मन्त्रेण संन्यस्य तारिणीं परिपूजयेत् ।
शिवं गणेशं संपूज्य प्रणमेत् साधकोत्तमः ॥ ९३ ॥

इति श्रीरुद्रयामले उत्तरतन्त्रे महातन्त्रोद्दीपने कुमार्य्युपचर्य्याविन्यासे सिद्धमन्त्रप्रकरणे दिव्यभावनिर्णये भैरव-भैरवीसंवादे सप्तमः पटलः ॥ ७ ॥

अथ अष्टमः पटलः ।

कुमारी-जपहोमौ ।—

अथ वच्ये महादेव ! कुमार्य्या जपहोमकम् ।
लचसंख्यं जपं कृत्वा मायां वा वाग्भवं रमाम् ॥ १ ॥
कालीबीजं वाऽपि नाथ ! मायां वा कामबीजकम् ।
सदाशिवेन पुटितं विन्दुचन्द्रविभूषितम् ॥ २ ॥
अथवा प्रणवेनाऽपि पुटितं त्रिदशेश्वर ! ।
जपित्वा मूलमन्त्रञ्च लचसंख्याविधानतः ॥ ३ ॥
तद्दशांशं महाहोमं घृताक्तविल्वपत्रकैः ।
अथवा श्वेतपुष्पैश्च कुन्दपुष्पैर्महाफलम् ॥ ४ ॥
एवं क्रमेण जुहुयात् करवीरप्रसूनकैः ।
घृताक्तैः केवलैर्वाऽपि चन्दनाऽगुरुमिश्रितैः ॥ ५ ॥
हविष्याशी दिवाभागे रात्रौ पूजापरो भवेत् ।
निजपूजावशेषैस्तु कुलद्रव्यैः प्रपूजयेत् ॥ ६ ॥
दिवा संख्यं जपेत्तत्र परमानन्दरूपधृक् ।
जपान्ते जुहुयान्मन्त्री मदुक्तद्रव्यसंयुतैः ॥ ७ ॥
ततः प्राणात्मकं वायुं मोचयित्वा पुनः पुनः ।
प्राणायामत्रयं कृत्वा चाष्टाङ्गे प्रणमेन्मुदा ॥ ८ ॥
प्रणामसमये नाथ ! इदं स्तोत्रं पठेद् यतिः ।
कवचञ्च तथा पाठ्यं कुमारीणामथापि वा ॥ ९ ॥
निजदेव्या महास्तोत्रं पठेद्धि कवचं तथा ।
कुमारीणां महादेव ! सहस्रनाम साष्टकम् ॥ १० ॥
पठित्वा सिद्धिमाप्नोति पठित्वा साधकोत्तमः ।
अग्रे संस्थाप्य ताः सर्वा रत्नकोटिसुशीतलाः ॥ ११ ॥
ततः स्तोत्रं पठेद्धीमान् समाहितमना वशी ।
महाविद्याऽऽचाररतो महाभावोत्त्वणोऽपि वा ॥ १२ ॥

एवं क्रमेण प्रपठेत् भक्तिभावपरायणः ।
महाविद्या महासेवा भक्तिश्रद्धाऽऽप्लुतार्पिता ॥
महाज्ञानी भवेत् क्षिप्रं वाञ्छासिद्धिमवाप्नुयात् ॥ १३ ॥

आनन्दभैरव उवाच ।—

कुमारीस्तवः ।—

देवेन्द्रादय इन्दुकोटिकिरणां वाराणसीवासिनीं
विद्यां वाग्भवकामिनीं त्रिनयनां नृत्यक्रियाकामिनीम् ।
चण्डोद्योगनिकृन्तनीं त्रिजगतां धात्रीं कुमारीं वरां
मूलाम्भोरुहवासिनीं शशिमुखीं सम्पूजयन्ति श्रिये ॥ १४ ॥
आद्यां देवगणैः शिवेन्द्रयतिभिर्मोक्षार्थिभिर्बालिकां
सन्ध्यां नित्यगुणोदयां द्विजगणश्रेष्ठोदयां सारुणाम् ।
शुक्लाभां परमेश्वरीं शुभकरीं भद्रां विशालाननां
गायत्रीगणमातरं दिनगतिं कृष्णाञ्च हृद्यां भजेत् ॥ १५ ॥
बालां बालकपूजितां गणभृतां विद्यावतां मोक्षदां
धात्रीं शुक्लसरस्वतीं नववरां वाक्यादिना चण्डिकाम् ।
स्वाधिष्ठानहरिप्रियां प्रियकरीं वेदान्तविद्याप्रदां
नित्यं मोक्षहिताय योगवपुषा चैतन्यरूपी भवेत् ॥ १६ ॥
नानारत्नसमूहनिर्मितगृहे पूज्यां सुरैर्बालिकां
वन्दे नन्दनकानने मनसिजे सिद्धान्तबीजानने ! ।
अर्थं देहि निरर्थकाय वपुषे हित्वा कुमारीकलां
मह्यं पातु कुमारिके ! त्रिविधमृत्याकाशतेजोमयीम् ॥ १७ ॥
हालास्ये ! हि सकालिकां कुलपथोल्लासैकबीजोद्भवां
मांसामोदकरालिनीं हि भजतां कामातिरिक्तप्रदाम् ।
बालोऽहं वटुकेश्वरस्य चरणाम्भोजाश्रितोऽहं सदा
हित्वा बालकुमारिकोरसि सदा शुद्धाम्बुरुहे भजे ॥ १८ ॥
सूर्याह्लादवलाकिनीं कलिमहापापासितां पापहां

वन्देऽमूं भुवि सूर्यगां भयहरां तेजोमयीं बालिकाम् ।
वन्देऽहं कमले ! सदा रविदले बालेन्द्रविद्यां सतीं
साक्षात् सिद्धिकरीं कुमारि ! विमलेऽन्वासाद्य रूपेश्वरि ॥ १९ ॥
नित्यं स्त्रीकुलकामिनीं कुलवतीं स्त्रीनामुमामम्बिकां
नानायोगनिवासिनीं सुरमणीं नित्यां तपस्याऽन्विताम् ।
वेदान्तार्थविशेषदेशवसनाभाषाविशेषस्थितां
वन्दे पर्वतराजराजतनयां कालप्रिये त्वामहम् ॥ २० ॥
कौमारीं कुलकामिनीं रिपुगणक्षोभाग्निसन्दाहिनीं
रक्तान्तानयनां शुभां परममार्गमुक्तिसंज्ञाप्रदाम् ।
आर्य्यां भागवतीं मतिं भवभङ्गामोदपञ्चाननां
पञ्चास्यप्रियकामिनीं भयहरां सधादिहारां भजे ॥ २१ ॥
चन्द्रास्यां चरणद्वयाम्बुजमहाशोभाविनोदीं नदीं
मोहादिक्षयकारिणीं वरकरां श्रीकुब्जिकां सुन्दरीम् ।
ये नित्यं परिपूजयन्ति सहसा राजेन्द्रचूडामणिं
सम्पत्तिं धनमायुषं जनयतो व्याप्यैश्वरत्वं जगुः ॥ २२ ॥
योगीशं भुवनेश्वरं प्रियकरं श्रीकालसन्दर्भया
शोभासागरगामिनं हरभवं वाञ्छाफलोद्दीपनम् ।
लोकानामघनाशनाय शिवया श्रीमन्त्रया विद्यया
धर्मप्राणसदैवतं प्रणमतां कल्पद्रुमं भावयेत् ॥ २३ ॥
विद्यां तामपराजितां मदनभावामोदमत्ताननां
हृत्पद्मस्थितपादुकां कुलकुलां कात्यायनीं भैरवीम् ।
ये ये पुण्यधियो भजन्ति परमानन्दाब्धिमध्ये मुदा
सर्वाच्छादिततेजसा भयकरीं मोक्षाय सत्कीर्त्तये ॥ २४ ॥
रुद्राणीं प्रणमामि पञ्चवदनां कोट्यर्कतेजोमयीं
नानालङ्कृतभूषणां कुलभुजामानन्दसन्दायिनीम् ।

श्रीमायाकमलाऽन्वितां हृदिगतां सन्तानबीजक्रियाम् ॥२५॥

नमामि वरभैरवीं चितितनयकालाननां
मृणालकुसुमारुणां भुवनोदधिसंशोधनीम् ।
जगद्भयहरां सतीं हरति या च योगेश्वरी
महापदसहस्रकं सकलभोगदान्तामहम् ॥ २६ ॥

साम्राज्यं प्रददाति याचितवती विद्यामहालक्षणा
साक्षादष्टसमृद्धिदातरि महालक्ष्मीः कुलक्षोभहा ।
स्वाधिष्ठानसुपङ्कजे विवसतां विष्णोरनन्तप्रिये !
वन्दे राजपदप्रदां शुभकरीं कौलेश्वरीं कौलिकीम् ॥ २७ ॥

पीठानामधिपाय ताश्च सुवहां विद्यां शुभां नायिकां
सर्वालङ्करणान्वितां त्रिजगतां क्षोभापहां वारुणीम् ।
वन्दे पीठगनायिकां त्रिभुवनच्छायाभिराच्छादितां
सर्वेषां हितकारिणीं जयवतामानन्दरूपेश्वरीम् ॥ २८ ॥

क्षेत्रस्थां मदविह्वलां कुलवतीं सिद्धिप्रियां प्रेयसीं
शम्भोः श्रीवटुकेश्वरस्य महतामानन्दसञ्चारिणीम् ॥२९ ॥

*   *   *   *

साक्षादापरमोहमां कमलमध्यसम्भाविनीं
शिरो दशशते दलेऽमृतमहाब्धिधाराधराम् ।
निजमनःक्षोभापहां साकिनीं वाक्यार्थ-
प्रकटामहं रजताभां वन्दे महाभैरवीम् ॥ ३० ॥

प्रणामफलदायिनीं सकलवाञ्छवश्यां
गुणां नमामि परमार्थिकां विषयसंहारिणीम् ।
सम्पूर्णविधुवन्मुखीं कमलमध्यसम्भाविनीं
शिरो दशशते दलेऽमृतमहाब्धिधाराधराम् ॥ ३१ ॥

साक्षादहं त्रिभुवनामृतपूर्णदेहां
ब्रह्मादिदेविकमलां कुलपण्डितेन्द्राम् ।

तस्मै भजे दशशते दलमध्यमध्ये
कौलेश्वरीं सकलदिव्यजनाश्रयां ताम् ॥ ३२ ॥

विश्वेश्वरीं स्वरकुले वरबालिके त्वां
सिद्धामले प्रतिदिनं प्रणमामि भक्त्या ।
भक्तिं धनं जयपदं यदि देहि दास्यं
तस्मिन् महामधुमतीं लघुगेहभाग्याम् ॥ ३३ ॥

एतत्स्तोत्रप्रसादेन कविताबाक्पतिर्भवेत् ।
महासिद्धीश्वरो दिव्यो वीरभावपरायणः ॥ ३४ ॥
सर्वत्र जयमाप्नोति स हि स्याद्देववल्लभः ।
वाचामीशो भवेत् क्षिप्रं कामरूपी भवेन्नरः ॥ ३५ ॥
पशुरेव महावीरो दिव्यो भवति निश्चितम् ।
क्रमशो ह्यष्टसिद्धिः स्यात् वाग्मी भवति निश्चितम् ॥ ३६ ॥
सर्वविद्याः प्रसीदन्ति तुष्टाः सर्वे दिगीश्वराः ।
वह्निः शीतलतां याति जलस्तम्भं स कारयेत् ॥ ३७ ॥
धनवान् पुत्रवान् राजा इहकाले भवेन्नरः ।
परे च याति वैकुण्ठे कैलासे शिवसन्निधौ ॥ ३८ ॥
मुक्तिरेव महादेव ! यो नित्यं सर्वदा पठेत् ।
महाविद्यापदाम्भोजं स हि पश्यति निश्चितम् ॥ ३९ ॥

कुमारीतर्पणम् ।—

शृणु नाथ ! प्रवक्ष्यामि कुमारीतर्पणादिकम् ।
यासां तर्पणमात्रेण कुलसिद्धिर्भवेत् ध्रुवम् ॥ ४० ॥
कुलबालां मूलपद्म-स्थितां कामविहारिणीम् ।
शतधा मूलमन्त्रेण तर्पयामि तव प्रिये ॥ ४१ ॥
मूलाधारमहातेजोजटामण्डलमण्डिताम् ।
सन्ध्या-देवीं तर्पयामि कामबीजेन मे शुभे ॥ ४२ ॥
मूलपङ्कजयोगीश ! कुमारीं श्रीसरस्वतीम् ।

तर्पयामि कुलद्रव्यैस्तव सन्तोषहेतुना ॥ ४३ ॥
चक्रे मूलाधारपद्मे त्रिमूर्त्तिबालनायिकाम् ।
सर्वकल्याणदां देवीं तर्पयामि परामृते: ॥ ४४ ॥
स्वाधिष्ठानमहापद्म-षड्दलान्त:प्रकाशिनीम् ।
श्रीबीजेन तर्पयामि भोगमोक्षाय केवलम् ॥ ४५ ॥
स्वाधिष्ठानकुलोल्लास-विष्णुसङ्केतगामिनीम् ।
कालिकां निजबीजेन तर्पयामि कुलामृते ॥ ४६ ॥
स्वाधिष्ठानाख्यपद्मस्थां महातेजोमयीं शिवाम् ।
सूर्यगां शीर्षमधुना तर्पयामि कुलेश्वरीम् ॥ ४७ ॥
मानपूजाब्जमध्ये तु मनोहरकलेवराम् ।
उमादेवीं तर्पयामि मायाबीजेन पार्वतीम् ॥ ४८ ॥
मणिपूराम्भोजमध्ये त्रैलोक्यपरिपूजिताम् ।
मालिनीं न च चित्तस्य सुबुद्धिं तर्पयाम्यहम् ॥ ४९ ॥
मणिपूरस्थितां रौद्रां परमानन्दवर्द्धिनीम् ।
आकाशगामिनीं देवीं कुब्जिकां तर्पयाम्यहम् ॥ ५० ॥
तर्पयामि महादेवीं महासाधनतत्पराम् ।
योगिनीं कालसन्दर्भां तर्पयामि कुलाननाम् ॥ ५१ ॥
शक्तिमन्त्रप्रदां रौद्रीं लोलजिह्वासमाकुलाम् ।
अपराजितां महादेवीं तर्पयामि कुलेश्वरीम् ॥ ५२ ॥
महाकौलप्रियां सिद्धां रुद्रलोकसुखप्रदाम् ।
रुद्राणीं रौद्रकिरणां तर्पयामि वधूप्रियाम् ॥ ५३ ॥
षोडशस्वरसंसिद्धिं महारौरवनाशिनीम् ।
महामद्यपानचित्तां भैरवीं तर्पयाम्यहम् ॥ ५४ ॥
त्रैलोक्यवरदां देवीं श्रीबीजमनयाऽऽहृताम् ।
महालक्ष्मीं भवैश्वर्य्य-दायिनीं तर्पयाम्यहम् ॥५५॥
लोकानां हितकर्त्रीञ्च हिताहितजनप्रियाम् ।

तर्पयामि रमाबीजां पीठाद्यां पीठनायिकाम् ॥ ५६ ॥
जयन्तीं वेदवेदाङ्ग-मातरं सूर्य्यमातरम् ।
तर्पयामि सुधाभिश्च चेतन्नां माययाऽऽहृताम् ॥ ५७ ॥
तर्पयामि कुलानन्द-परगां परमाननाम् ।
तर्पयाम्यम्बिकां देवीं मायालक्ष्मीहृदि स्थिताम् ॥ ५८ ॥
सर्वासां चरणद्वयाम्बुजतनुं चैतन्यविद्यावतीं
सौख्यार्थं ऋभषोड़शस्वरयुतां श्रीषाड़शीसङ्कुलाम् ।
आनन्दार्णवपद्मरागखचिते सिंहासने शोभितं
नित्यं तत् परितर्पयामि सबलं श्वेताब्जमध्यानने ! ॥ ५९ ॥
ये नित्यं प्रपठन्ति चारु सफलं स्तोत्रादिसन्तर्पणं
विद्यादाननिदानमोक्षपरमां मायामयं यान्ति ते ।
नश्यन्ति क्षितिमण्डलेष्वरिगणा: सर्वा विपत्कारका:
राजानं वशयन्ति योगसकलं नित्या भवन्ति क्षणात् ॥६०॥
तर्पयाम्येकमोक्षाख्यं पठन्ति यदि मानुषा: ।
अष्टैश्वर्य्ययुतो भूत्वा वत्सरार्द्धात् प्रपश्यति ॥ ६१ ॥
महायोगी भवेन्नाथ ! मासादभ्यासत: प्रभो ! ।
त्रैलोक्यं क्षोभयेत् क्षिप्रं वाञ्छाफलमवाप्नुयात् ॥
भ्रूमध्ये राजराजेशो लभते वरमङ्गलम् ॥ ६२ ॥
शत्रुनाशे तथोच्चाटे बन्धने व्याधिसङ्कटे ।
चातुरङ्गे तथा घोरे भये दूरस्य प्रेषणे ॥
महायुद्धे नरेन्द्राणां पठित्वा सिद्धिमाप्नुयात् ॥ ६३ ॥
य: पठेदेकभावेन सन्तर्पणफलं लभेत् ।
पूजाया: फलमाप्नोति कुमारीस्तोत्रपाठत: ॥ ६४ ॥
यो न कुर्य्यात् कुमार्य्यर्चां स्तोत्रञ्च नित्यमङ्गलम् ।
स भवेत् पार्थिव: कल्पो मृत्युस्तस्य पदे पदे ॥ ६५ ॥
इति श्रीरुद्रयामले उत्तरतन्त्रे महातन्त्रोद्दीपने कुमार्य्युपचर्य्याविलासे सिद्धमन्त्रप्रकरणे दिव्यभावनिर्णये भैरव-भैरवीसंवादे अष्टम: पटल: ॥ ८ ॥

अथ नवमः पटलः ।

आनन्दभैरव्युवाच ।—

कुमारीकवचम् ।—

अथातः संप्रवक्ष्यामि कुमारीकवचं शुभम् ।
त्रैलोक्यमङ्गलं नाम महापातकनाशनम् ॥ १ ॥
पठनाद्धारणाल्लोका महासिद्धाः प्रभाकराः ।
शक्रो देवाधिपः श्रीमान् देवे गुरुर्बृहस्पतिः ॥ २ ॥
सद्यस्तेजोमयो वह्निर्धर्मराजो भयानकः ।
वरुणो देवपूज्यो हि जलानामधिपः स्वयम् ॥ ३ ॥
सर्वहर्त्ता महावायुः कुवेरः कुञ्जरेश्वरः ।
धराधिपः प्रियः शम्भोः सर्वे देवा दिगीश्वराः ॥ ४ ॥
न मेरुः प्रभुरेकायाः सर्वेशो निर्मलो हयोः ।
एतत्कवचपाठेन सर्वस्वपो धनाधिपः ॥ ५ ॥
प्रणवो मे शिरः पातु माया सन्दायिका सती ।
ललाटोर्द्धं महामाया पातु मे श्रीसरस्वती ॥ ६ ॥
कामाख्या वटुकेशानी त्रिमूर्त्तिर्भालमेव मे ।
चामुण्डा वीजरूपा च वदनं कालिका मम ॥ ७ ॥
पातु मां सूर्य्यगा नित्यं तथा नेत्रद्वयं मम ।
कर्णयुग्मं कामवीजं स्वरूपं मा तपस्विनी ॥ ८ ॥
रसनाग्रं तथा पातु वाग्देवी मालिनी मम ।
डामरस्था कामरूपा दन्ताग्रं कुब्जिका मम ॥ ९ ॥
देवी प्रणवरूपाऽसौ पातु नित्यं शिवा मम ।
ओष्ठाधरं शक्तिवीजात्मिका स्वाहास्वरूपिणी ॥ १० ॥
पायान्मे कालसन्दर्भा पञ्चरश्मिस्वरूपिणी ।
गलदेशं महारौद्री पातु मे चापराजिता ॥ ११ ॥

चौं वीजं मे तथा कण्ठं रुद्राणी स्वाहयाऽन्विता ।
हृदयं भैरवी विद्या पातु षोड़श सुस्वराः ॥ १२ ॥
ह्रौ वाहू पातु सर्वत्र महालक्ष्मीः प्रधानिका ।
सर्वमन्त्रस्वरूपा मे चोदरं पीठनायिका ॥ १३ ॥
पार्श्वयुग्मं तथा पातु कुमारी वाग्भवात्मिका ।
कैशोरी कटिदेशं मे मायावीजस्वरूपिणी ॥ १४ ॥
जङ्घायुग्मं जयन्ती मे योगिनी कुल्लुकायुता ।
सर्वाङ्गमम्बिका देवी पातु मन्त्रार्थगामिनी ॥ १५ ॥
केशाग्रं कमला देवी नासाग्रं विन्ध्यवासिनी ।
चिवुकं चण्डिका देवी कुमारी पातु मे सदा ॥ १६ ॥
हृदयं ललिता देवी लिङ्गं गुह्यं सदाऽवतु ।
श्मशाने चाम्बिका देवी गङ्गागर्भे च वैष्णवी ॥ १७ ॥
शून्यागारे पञ्चमुद्रा मन्त्रयन्त्रप्रकाशिनी ।
चतुष्पथे तथा पातु मामेव वज्रधारिणी ॥ १८ ॥
शवासनगता चण्डा मुण्डमालाविभूषिता ।
पातु मामेकलिङ्गे च ईश्वरी शक्तिरूपिणी ॥ १९ ॥
वने पातु महावाला महारण्ये रणप्रिया ।
महाजले तड़ागे च शत्रुमध्ये सरस्वती ॥ २० ॥
महाऽऽकाशपथे पृथ्वी पातु मां शीतला सदा ।
रणमध्ये राजलक्ष्मीः कुमारी कुलकामिनी ॥ २१ ॥
अर्द्धनारीश्वरा पातु मम पादतलं मही ।
नवलक्षमहाविद्या कुमारीरूपधारिणी ॥ २२ ॥
कोटिसूर्य्यप्रतीकाशा चन्द्रकोटिसुशीतला ।
पातु मां वरदा वाणी वटुकेश्वरकामिनी ॥ २३ ॥
इति ते कथितं नाथ ! कवचं परमाद्भुतम् ।
कुमार्य्याः कुलदायिन्याः पञ्चतत्त्वार्थपारग ! २४ ॥

यो जपेत् पञ्चतत्त्वेन स्तोत्रेण कवचेन च ।
आकाशगामिनो सिद्धिर्भवेत्तस्य न संशयः ॥ २५ ॥
वज्रदेही भवेत् क्षिप्रं कवचस्य प्रपाठतः ।
सर्वसिद्धीश्वरो योगी ज्ञानी भवति यः पठेत् ॥ २६ ॥
विवादे व्यवहारे च सङ्ग्रामे कुलमण्डले ।
महापथे श्मशाने च योगसिद्धो भवेत् स च ॥ २७ ॥
पठित्वा जयमाप्नोति सत्यं सत्यं कुलेश्वर ! ।
वशीकरणकवचं सर्वत्र जयदं शुभम् ॥ २८ ॥
पुण्यवन्तो पठेन्नित्यं मतिश्रीमान् भवेद् ध्रुवम् ।
सिद्धविद्या कुमारी च ददाति सिद्धिमुत्तमाम् ॥ २९ ॥
पठेद् यः शृणुयाद्वाऽपि स भवेत् कल्पपादपः ।
भुक्तिमुक्तिं तुष्टिपुष्टि-राजलक्ष्मीसुसम्पदम् ॥ ३० ॥
प्राप्नोति साधकश्रेष्ठो धारयित्वा जपेद् यदि ।
असाध्यं साधयेद्विद्वान् पठित्वा कवचं शुभम् ॥ ३१ ॥
धनिनाञ्च महासौख्यं धर्मार्थकाममोक्षदम् ।
यो वशी दिवसे नित्यं कुमारीं पूजयेन्निशि ॥ ३२ ॥
उपचारविशेषेण त्रैलोक्यं वशमानयेत् ।
पललेनाऽऽसवेनापि मत्स्येन मुद्रया सह ॥ ३३ ॥
नानाक्षोभभवान्येव गन्धद्रव्याणि साधकः ।
अन्नेन स्वर्णरजताऽलङ्कारेण सुचेलकैः ॥ ३४ ॥
पूजयित्वा जपित्वा च तर्पयित्वा वराननाम् ।
यज्ञदानतपस्याभिः प्रयोगेण महेश्वर ! ॥ ३५ ॥
स्तु(श्रु)त्वा कुमारीकवचं यः पठेदेकभावतः ।
तस्य सिद्धिर्भवेत् क्षिप्रं राजराजेश्वरो भवेत् ॥ ३६ ॥
वाञ्छार्थफलमाप्नोति यद् यन्मनसि वर्त्तते ।
भूर्जपत्रे लिखित्वा च कवचं धारयेद् यदि ॥ ३७ ॥

शनिमङ्गलवारे च नवम्यामष्टमीदिने ।
चतुर्दश्यां पौर्णमास्यां कृष्णपक्षे विशेषतः ॥ ३८ ॥
लिखित्वा धारयेद्विद्वान् उत्तराभिमुखो भवन् ।
महापातकयुक्तो हि मुक्तः स्यात् सर्वपातकैः ॥ ३९ ॥
योषिद्वामभुजे धृत्वा सर्वकल्याणमालभेत् ।
बहुपुत्रान्विता कान्ता सर्वसम्पत्तिसंयुता ॥ ४० ॥
तथा श्रीपुरुषश्रेष्ठो दक्षिणे धारयेद् भुजे ।
ऐहिके दिव्यदेहः स्यात् पञ्चाननसमः प्रभुः ॥ ४१ ॥
शिवलोके परे याति वायुवेगी निरामयः ।
सूर्यमण्डलमाभेद्य परं लोकमवाप्नुयात् ॥ ४२ ॥
लोकानामतिसौख्यदं भयहरं श्रीपादभक्तिप्रदं
मोक्षार्थं कवचं शुभं प्रपठतामानन्दसिन्धूद्भवम् ।
पापानां कलिकालघोरकलुषध्वंसैकहेतुं जयं
ये नाम प्रपठन्ति धर्ममतुलं ते यान्ति मोक्षं क्षणात् ॥४३॥

इति श्रीरुद्रयामले उत्तरतन्त्रे महामन्त्रोद्दीपने कुमार्य्युपचर्य्याविन्यासे कुमारीकवचोल्लासे सिद्धमन्त्रप्रकरणे दिव्यभावनिर्णये भैरव-भैरवीसंवादे नवमः पटलः ॥९॥

अथ दशमः पटलः ।

आनन्दभैरव उवाच ।—
वद कान्ते ! सदानन्द-स्वरूपानन्दवल्लभे !
कुमार्य्या देवतायाश्च परमानन्दवर्द्धनम् ॥ १ ॥
अष्टोत्तरसहस्राख्यं नाम मङ्गलमद्भुतम् ।
यदि मे वर्त्तते विद्ये यदि स्नेहकणामला ॥ २ ॥
तदा वदस्व कौमारी-कृतकर्मफलप्रदम् ।
महास्तोत्रं कोटि कोटि कन्यादानफलं लभेत् ॥ ३ ॥

आनन्दभैरव्युवाच ।—

कुमार्य्याः सहस्रनामानि ।—

महापुण्यप्रदं नाथ ! शृणु सर्वेश्वर ! प्रिय ! ।
अष्टोत्तरसहस्राख्यं कुमार्य्याः परमाद्भुतम् ॥ ४ ॥
पठित्वा धारयित्वा वा नरो मुच्येत सङ्कटात् ।
सर्वत्र दुर्लभं धन्यं धन्यलोकनिषेवितम् ॥ ५ ॥
अणिमाद्यष्टसर्वाङ्ग-सर्वानन्दकरं परम् ।
मायामन्त्रनिरस्ताङ्गं मन्त्रसिद्धिप्रदं नृणाम् ॥ ६ ॥
न पूजा न जपः स्नानं पुरश्चर्य्याविधिश्च न ।
अस्मात् सिद्धिमवाप्नोति सहस्रनामपाठतः ॥ ७ ॥
सर्वयज्ञफलं नाथ ! प्राप्नोति साधकः क्षणात् ।
मन्त्रार्थं मन्त्रचैतन्यं योनिमुद्रास्वरूपकम् ॥ ८ ॥
कोटिवर्षशतेनापि फलं वक्तुं न शक्यते ।
तथाऽपि वक्तुमिच्छामि हिताय जगतां प्रभो ! ॥ ९ ॥

अस्य श्रीकुमार्य्याः अष्टोत्तरसहस्रनामकवचस्य वटुकभैरवऋषिरनुष्टुब् छन्दः कुमारी देवता सर्वमन्त्रसिद्धिसमृद्धये विनियोगः ।

"ओँ कुमारी कौशिकी काली कुरुकुल्ला कुलेश्वरी ।
कनकाभा काञ्चनाभा कमला कालकामिनी ॥ १० ॥
कपालिनी कालरूपा कौमारी कुलबालिका ।
कान्ता कुमारकान्ता च कारणा करिगामिनी ॥ ११ ॥
कन्थकान्ता कौलकान्ता कृतकर्मफलप्रदा ।
कार्य्याकार्य्यप्रवरचा कंसहन्त्री कुरुचया ॥ १२ ॥
कृष्णकान्ता कालरात्रिः कर्णपुधारिणीकरा ।
कामहा कपिला काला कालिका कुरुकामिनी ॥ १३ ॥
कुरुचैत्रप्रिया कौला कुन्ती कामातुरातुरा ।

कलञ्जभचा कैकेयी काकपुच्छध्वजा कला ॥ १४ ॥
कमला कामलक्ष्मीश्च कमलाननकामिनी ।
कामधेनुस्वरूपा च कामहा कामवर्द्धिनी ॥ १५ ॥
कामदा कामपूज्या च कामातीता कलावती ।
कौमारी कारणाढ्या च कैशोरी कुशलाकुला ॥ १६ ॥
कम्बुग्रीवा कृष्णनिभा कामराजप्रियावतिः ।
कङ्कणाऽलङ्कृता कङ्का केवला काकिनी किरा ॥ १७ ॥
किरातिनी काकभचा करालवदना कृशा ।
केशिनी केशिहा केशा केशोष्टा च कविप्रिया ॥ १८ ॥
कविनाथस्वरूपा च कटुवाणी कटुस्थिता ।
कोटरा कोटराक्षी च कटनाटकवासिनी ॥ १९ ॥
कटकस्था काष्ठसंस्था कन्दर्पा केतकीप्रिया ।
केलिप्रिया कम्बलस्था कालदैत्यविनाशिनी ॥ २० ॥
केतकीपुष्पशोभाढ्या कर्पूरपूर्णजिह्विका ।
कर्पूरकरकाकोला कैलासगिरिवासिनी ॥ २१ ॥
कुशासनस्था कादम्बा कुञ्जरेशी कुलानना ।
खर्वा खड्गधरा खड्ग-खिलहा खलुवर्द्धिदा ॥ २२ ॥
खञ्जना खररूपा च खरान्तिक्रमध्यगा ।
खेलना खेटककरा खरवाक्या खरोत्कटा ॥ २३ ॥
खद्योतचञ्चला खेला खद्योता खगवाहिनी ।
खेटकस्था खला खस्था खेचरी खेचरप्रिया ॥ २४ ॥
खचरा खचरप्रेमा खलाढ्या खचराननी ।
खेचरेशी खरोग्रा च खेचरप्रियभाषिणी ॥ २५ ॥
खर्जूरासवसंवर्त्ता खर्जूरफलभोगिनी ।
खातमध्यस्थिता खाता खाताम्बुपरिपूजनी ॥ २६ ॥
ख्यातिः खातजलानन्दा खुलना खञ्जनागतिः ।

खल्वा खरतरा खारी खारोद्वेगनिकृन्तनी ॥ २७ ॥
गगनस्था च भीता च गभीरनादिनी गया ।
गङ्गा गभीरा गौरी च गणनाथप्रिया गतिः ॥ २८ ॥
गुरुभक्ता ग्लानिहीना गेहिनी गोपिनी गिरा ।
गोगणस्था गाणपत्या गिरिजा गिरिपूजिता ॥ २९ ॥
गिरिकान्ता गणस्था च गिरिकन्या गणेश्वरी ।
गाधिराजसुता गीवा गुर्वी गुर्वश्वशाङ्करी ॥ ३० ॥
गन्धर्वयामिनी गीता गायत्री गुणदा गुणा ।
गुग्गुलुस्था गुरोः पूज्या गीतानन्दप्रकाशिनी ॥ ३१ ॥
गयासुरप्रिया गेहा गवाक्षजालमध्यगा ।
गुरुकन्या गुरोः पत्नी गहना गुरुनागिनी ॥ ३२ ॥
गुल्फवायुस्थिता गुल्फा गर्दभा गर्दभप्रिया ।
गुह्या गुह्यगणस्था च गरिमा गौरिका गुदा ॥ ३३ ॥
गुदोर्द्ध्वस्था च गलिता गणिका गोलका गणा ।
गान्धर्वी गाननगरी गन्धर्वगणपूजिता ॥ ३४ ॥
घोरनादा घोरमुखी घोरा घर्मनिवारिणी ।
घनदा घनवर्णा च घनवाहनवाहना ॥ ३५ ॥
घर्घरध्वनिचपला घोटा घटपटीघटी ।
घटिता घट्टना घोना घनरूपा घनेश्वरी ॥ ३६ ॥
घुष्यातीता घर्घरा च घोराननविमोहिनी ।
घोरनेत्रा घनरुचा घोरभैरवकन्यका ॥ ३७ ॥
घाता घातकहा घात्या घ्राणा घ्राणे गवायवी ।
घोरान्धकारसंस्था च घसना घस्वरा घरा ॥ ३८ ॥
घोटकस्था घोटका च घोटकेश्वरवाहना ।
घननीलमणिश्यामा घर्घरेश्वरकामिनी ॥ ३९ ॥
ङकारकूटसम्पन्ना ङकारचक्रगामिनी ।

ङकारी ङस्वशा चैव ङीपनीता ङकारिणी ॥ ४० ॥
चन्द्रमण्डलमध्यस्था चतुरा चारुहासिनी ।
चारुचन्द्रमुखी चैव चलाङ्गसुगतिप्रिया ॥ ४१ ॥
चञ्चला चपला चण्डी चेकिताना चरास्थिता ।
चलिता चालना चार्वी चारुभ्रमरनादिनी ॥ ४२ ॥
चोहरा चन्द्रनिलया चैन्द्री चक्रपुरस्थिता ।
चक्रकोला चक्ररूपा चक्रस्थः चक्रसिद्धिदा ॥ ४३ ॥
चक्रिणी चक्रहस्ता च चक्रनाथकुलप्रिया ।
चक्राभेद्या चक्रकुला चक्रमण्डलशोभिता ॥ ४४ ॥
चक्रेश्वरप्रिया चेला चेलाजिनकुशोत्तरा ।
चतुर्वेदस्थिता चण्डा चन्द्रकोटिसुशीतला ॥ ४५ ॥
चतुर्गुणा चन्द्रवर्णा चातुरी चतुरप्रिया ।
चक्षुःस्था चक्षुर्वसतिश्चलका चलनप्रिया ॥ ४६ ॥
चार्वङ्गी चन्द्रनिलया चलदम्बुजलोचना ।
चर्वरीशा चारुमुखी चारुदन्ता चरास्थिता ॥ ४७ ॥
चसकस्थासवा चेता चेतःस्था चैत्रपूजिता ।
चाक्षुषी चन्द्रमलिनी चन्द्रहासमणिप्रभा ॥ ४८ ॥
छत्रस्था छत्ररूपा च चत्रच्छायावनस्थिता ।
छजन्ना छेश्वरा छाया छायाछिन्नशवा छला ॥ ४९ ॥
छत्राचरणशोभाढ्या छात्रिणां छत्रधारिणी ।
छिन्नातीता छिन्नमस्ता छिन्नकेशा छलोद्भवा ॥ ५० ॥
छलहा छलदा छाला छन्ना छन्नजनप्रिया ।
छला छला-छभवती छक्षसम्बानिवासिनी ॥ ५१ ॥
छद्मगन्धा छदा छन्ना छद्मवेशा छकारिका ।
छागलारक्तभक्षा च छागलामोदरक्तपा ॥ ५२ ॥
छगलण्डेशकन्या च छगलण्डकुमारिका ।

छविका छुरिककरा छुरिकारिविनाशिनी ॥ ५३ ॥
छिन्ननाशा छिन्नहासा छोललोला छलोदरी ।
छलोद्वेगा छागरीज-माला छाङ्गवरप्रदा ॥ ५४ ॥
जटिला जठरश्रीदा जरा जन्नप्रिया जया ।
जन्तस्था जीवजा जीवा जयदा जीवयोगदा ॥ ५५ ॥
जयिनी जामलस्था च जामलोद्भवनायिका ।
जामलप्रियकन्या च जामलेशी जवाप्रिया ॥ ५६ ॥
जवाकोटिसमप्रख्या जवापुष्पप्रिया जना ।
जलस्था जागरिमया जरातीता जलस्थिता ॥ ५७ ॥
जीवहा जीवकन्या च जनार्दनकुमारिका ।
जतुका जलपूज्या च जगन्नाथादिकामिनी ॥ ५८ ॥
जीर्णाङ्गी जीर्णहीना च जीमूतात्यन्तशोभिता ।
जामदा जमदा जृम्भा जृम्भणान्तादिधारिणी ॥ ५९ ॥
जयन्या जारजप्रीता जगदानन्दवर्द्धिनी ।
जमलार्जुनदर्पघ्नी जमलार्जुनभञ्जिनी ॥ ६० ॥
जयविजगदानन्दा जामलोल्लाससिद्धिदा ।
जपमाला जाप्यसिद्धिर्जपयज्ञप्रकाशिनी ॥ ६१ ॥
जाम्ब(म्बु)वती जाम्ब(म्बु)वतः-कन्यका जलजा जपा ।
जवाह्वन्ती जगद्बुद्धिर्जगत्कर्त्री जगद्गतिः ॥ ६२ ॥
जवनी जीवनी जाया जगन्माता जनेश्वरी ।
झञ्झना झङ्कमध्यस्था झणत्कारस्वरूपिणी ॥ ६३ ॥
झणत्-झणद्दङ्गिरूपा झनना झल्वरीश्वरी ।
झटिताक्षा झरा झञ्झा झर्झराधरकन्यका ॥ ६४ ॥
झणत्कारी झना झन्ना झकारमालयाऽऽवृता ।
झङ्कारी झर्झरी झल्ली झल्लेश्वरनिवासिनी ॥ ६५ ॥
ञकारी ञकिराती च ञकारबीजमालिनी ।

ञनमोऽन्ता ञकारान्ता ञकारपरमेश्वरी ॥ ६६ ॥
ञान्तबीजपुत्रकरा ञेकनेत्रैककामिनी ।
ञेकनेत्रा ञस्वरूपा ञहारा ञहरीतकी ॥ ६७ ॥
टङ्कुनी टङ्कहस्ता च टान्तवर्गा टलावती ।
टपलाटालवालाख्या टङ्कारध्वनिरूपिणी ॥ ६८ ॥
टलाती टाचरातीता टिक्कारादिकुमारिका ।
टा(ट)ङ्कास्त्रधारिणी टाना टमोटार्थलभाषिणी ॥ ६९ ॥
टङ्कारीनिधना टाका टकाटर्कविमोहिनी ।
टङ्कारधरनामाढ्या टिवीखेचरनादिनी ॥ ७० ॥
ठठङ्कारी ठाठरूपा ठकारबीजकारणा ।
डमरुप्रियवाद्या च डामरस्था डरीजिका ॥ ७१ ॥
डान्तवर्गा डमरुका डरस्था डोरडामरा ।
डगरार्द्धा डलातीता डदारुकेश्वरी डुतरा ॥ ७२ ॥
ढार्द्दनारीश्वरा ढामा ढक्कारी ढलना ढला ।
ढकस्था ढेश्वरसुता ढेमनाभावढीनना ॥ ७३ ॥
णीमाकान्तेश्वरी णान्त-वर्गस्था णतुनावती ।
णनीमालङ्कल्याणी णाचवीणाच्चबीजिका ॥ ७४ ॥
तुलसी तन्तुसूक्ष्मस्था तारल्या तैलगन्धिका ।
तपस्या तापससुता तारिणी तरुणी तला ॥ ७५ ॥
तन्त्रस्था तारकब्रह्म-स्वरूपा तन्तुमध्यगा ।
तालभच्चविधामूर्त्तिस्तारका तैलभाचिका ॥ ७६ ॥
तारीभा तालमाला च तकरा तिन्तिड़ीप्रिया ।
तपसा तालसन्दर्भा तर्जयन्तीकुमारिका ॥ ७७ ॥
तोकाचारा तलोद्वेगा तचका तचकप्रिया ।
तचकाऽलङ्कृता तोषा तावद्रूपा तलप्रिया ॥ ७८ ॥
तलास्त्रधारिणी तापा तपसां-फलदायिनी ।

तल्वल्वप्रहरालीता तलारिगणनाशिनी ॥ ७९ ॥
तुला तौली तोलका च तलस्था तलपालिका ।
तरुणातपबुद्धिस्था तपाप्रधारिणी तपा ॥ ८० ॥
तन्त्रप्रकाशकरणी तन्त्रार्थदायिनी तथा ।
तुषारकिरणाङ्गी च त्रिचतुर्धा त्विषान्विता ॥ ८१ ॥
तैलमार्गाभिसूता च तन्त्रसिद्धिफलप्रदा ।
ताम्रपर्णा ताम्रकेशा ताम्रपात्रप्रिया तमा ॥ ८२ ॥
तमोगुणप्रिया तोला तचकारिनिवारिणी ।
तोषयुक्ता तमाग्राची तमषोढेश्वरप्रिया ॥ ८३ ॥
तुलना तुल्यरुचिरा तुल्यबुद्धिस्त्रिधा मतिः ।
तत्त्वभच्चा तालसिद्धिस्तस्तस्यास्तत्त्वगामिनी ॥ ८४ ॥
तलया तैलभा ताली तन्त्रगोपनतत्परा ।
तन्त्रमन्त्रप्रकाशा च त्रशरगुस्वरूपिणी ॥ ८५ ॥
त्रिंशदर्णप्रिया तुष्टा तुष्टिस्तुष्टजनप्रिया ।
थाकारकूटदण्डीशा थदण्डीशप्रियाऽथवा ॥ ८६ ॥
थकाराचररूढाङ्गी थान्तवर्गार्थकारिका ।
थान्ता थमीश्वरी थाका थकारवीजमालिनी ॥ ८७ ॥
दचदासप्रिया दोषा दोषजालवनाश्रिता ।
दशा दशनघोरा च देवीदासप्रिया दया ॥ ८८ ॥
दैत्यहन्त्रीपरा दैत्या दैत्यानां-मर्दिनी दिशा ।
दन्ता दान्तप्रिया दामा दामन्ता दीर्घकेशिका ॥ ८८ ॥
दशनारक्तवर्णा च दरीगृहनिवासिनी ।
देवमाता दुर्लभा च दीर्घाङ्गी दासकन्यका ॥ ८९ ॥
दशनश्री दीर्घनेत्रा दीर्घनासा च दोषहा ।
दमयन्ती दलस्था च द्वेषहन्त्री दशाश्रिता ॥ ९१ ॥
दैशेषि(कि)का दिशिगता दशनास्त्रविनाशिनी ।

दारिद्र्यहा दरिद्रस्था दरिद्रधनदायिनी ॥ ९२ ॥
दन्तुरा देशभाषा च देशस्था देशनायिका ।
द्वेषरूपा द्वेषहन्त्री द्वेषारिगणमोहिनी ॥ ९३ ॥
दामोदरस्थाननादा दलानां-बलदायिनी ।
दिग्दर्शनस्थानदर्श-दर्शनप्रियवादिनी ॥ ९४ ॥
दामोदरप्रिया दन्ता दामोदरकलेवरा ।
द्राविणी द्रावणी दचा दचकन्या दला दृढ़ा ॥ ९५ ॥
दृढ़ामना दासशक्तिर्द्वन्द्वयुद्धप्रकाशिनी ।
दधिप्रिया दधिस्था च दधिमङ्गलकारिणी ॥ ९६ ॥
दर्पहा दर्पदाहप्रा दर्भपुष्पप्रिया दधिः ।
दर्भस्था द्रुपदसुता द्रौपदी द्रुपदप्रिया ॥ ९७ ॥
धर्मचिन्ता धनाध्यचा धनेश्वरवरप्रदा ।
धनहा धनदा धन्वी धनुर्हस्ता धनुःप्रिया ॥ ९८ ॥
धरणी धैर्यरूपा च धनस्था धनमोहिनी ।
धीरा धीरप्रिया धारा धाराधारणतत्परा ॥ ९९ ॥
धान्यदा धान्यवीजा च धर्माधर्मस्वरूपिणी ।
धाराधरस्था धन्या च धर्मपुञ्जनिवासिनी ॥ १०० ॥
धनाढ्यप्रियकन्या च धन्यलोकनिषेविता ।
धर्मार्थकाममोक्षाङ्गी धर्मार्थकाममोक्षदा ॥ १०१ ॥
धराधरा धुरीणा च धवला धवलामुखी ।
धरा च धामरूपा च ध्रुवा ध्रौव्या ध्रुवप्रिया ॥ १०२ ॥
धनेशी धारणाख्या च धर्मनिन्दाविनाशिनी ।
धर्मतेजोमयी धर्म्या धैर्याग्रभर्गमोहिनी ॥ १०३ ॥
धारणा धौतवसना धुस्तूरफलभोगिनी ।
नारायणी नरेन्द्रस्था नारायणकलेवरा ॥ १०४ ॥
नरनारायणप्रीता धर्मनिन्दकमोहिनी !

नित्या नापितकन्या च नयनस्था नरप्रिया ॥ १०५ ॥
नाम्नी नामप्रिया नारा नारायणसुता नरा ।
नवीननायकप्रीता नव्या नवफलप्रिया ॥ १०६ ॥
नवीनकुसुमप्रीता नवोनानां-ध्वजा नुता ।
नारी निम्नस्थिता निन्दा नन्दिनी नन्दकारिका ॥ १०७॥
नवपुष्पमहाप्रीता नवपुष्पसुगन्धिका ।
नन्दनस्था नन्दकन्या नन्दमोचप्रदायिनी ॥ १०८ ॥
नमिता नम्रभेदा च नाम्नात्तवनमोहिनी ।
नवबुद्धिप्रियानेका नाकस्था नाककन्यका ॥ १०९ ॥
निन्दाहीना नवोल्लासा नाकस्थानप्रदायिनी ।
निम्बचक्षुःस्थिता निम्बा नानचेतनिवासिनी ॥ ११० ॥
नाश्यातीता नीलवर्णा नीलवर्णसरस्वती ।
नभःस्था नायकप्रीता नायकप्रियकामिनी ॥ १११ ॥
नैव(क)वर्णा निराहारा निरीहाणां-रजःप्रिया ।
निम्ननाभिप्रभाकारा नरेन्द्रहस्तपूजिता ॥ ११२ ॥
नलस्थिता नलप्रीता नलराजकुमारिका ।
परेश्वरी परानन्दा परापरविभेदिका ॥ ११३ ॥
परमा परचक्रस्था पार्वती पर्वतप्रिया ।
पारमेशी पर्वनामा पुष्पमाल्यप्रिया परा ॥ ११४ ॥
परा प्रिया प्रीतिदात्री प्रीतिः प्रथमकामिनी ।
प्रथमा प्रमथप्रीता पुष्पगन्धप्रिया परा ॥ ११५ ॥
पीष्टीपानरता पीना पीनस्तनसुशोभना ।
परमानरता पुंसां-पाशहस्ता पशुप्रिया ॥ ११६ ॥
पललानन्दरसिका पलालधूमरूपिणी ।
पलाशपुष्पसङ्काशा पलाशपुष्पमालिनी ॥ ११७ ॥
प्रेमभूता पद्ममुखी पद्मरागसुमालिनी ।

पद्ममाला पापहरा पतिप्रेमावलासिनी ॥ ११८ ॥
पद्मानन‌मनोहारी पद्मवक्त्रप्रकाशिनी ।
फलमूलाशना फाली फलदा फाल्गुनप्रिया ॥ ११९ ॥
फलनाथप्रिया फल्गी फल्गुकन्या फलोन्मुखी ।
फेत्कारीमन्त्रमुख्या च फेत्कारगणपूजिता ॥ १२० ॥
फेरवी फेरवसुता फलभोगोद्भवा फला ।
फलप्रिया फलासक्ता फाल्गुनानन्ददायिनी ॥ १२१ ॥
फालभोगोत्तरा फेला फुल्लाम्भोजनिवासिनी ।
विस(ष)भक्षा बुधसुता हुंकारी हुंवरप्रदा ॥ १२२ ॥
भारती भरतश्रीदा भवपत्नी भवात्मजा ।
भवानी भाविनी भीमा भिषक्भार्यातुरस्थिता ॥१२३॥
भूर्भुवःस्वःस्वरूपा च भूशार्त्ता भेकनादिनी ।
भीतीभङ्गप्रिया भङ्गा भङ्गहा भङ्गहारिणी ॥ १२४ ॥
भर्त्ता भगवती भाग्या भगीरथनमस्कृता ।
भगमाला भूतनाथेश्वरी भार्गवपूजिता ॥ १२५ ॥
भृगुवंशा भीतिहरा भूमिभुजङ्गहारिणी ।
भालचन्द्राभल्लबाला भवभूतिविभूतिदा ॥ १२६ ॥
मकरस्था मत्तगतिर्मदमत्ता मदप्रिया ।
मदिराष्टादशभुजा मदिरा मत्तगामिनी ॥
मदिरासिद्धिदा मध्या मदान्तगतिसिद्धिदा ॥ १२७ ॥
मीनभक्षा मीनरूपा मुद्रामुद्गप्रिया गतिः ।
मुषला मुक्तिदा मूर्त्ता मूकीकरणतत्परा ॥ १२८ ॥
मूषार्त्ता मृगतृष्णा च मेषभक्षणतत्परा ।
मैथुनानन्दसिद्धिश्च मैथुनानन्दसिद्धिदा ॥ १२९ ॥
महालक्ष्मीर्भैरवी च महेन्द्रपीठनायिका ।
मनःस्था माधवी मुख्या महादेवमनोरमा ॥ १३० ॥

यशोदा याचना यास्या(स्या) यमराजप्रिया यमा ।
यशोराशिविभूषाङ्गी यतिप्रेमकलावती ॥ १३१ ॥
रमणी रामपत्नी च रिपुहा रीतिमध्यगा ।
रुद्राणी रूपदा रूपा रूपसुन्दरधारिणी ॥ १३२ ॥
रेतःस्था रेतसःप्रीता रेतःस्थाननिवासिनी ।
रैन्द्रादेवसुता रेदा रिपुवर्गान्तकप्रिया ॥ १३३ ॥
रोमावलीन्द्रजननी रोमकूपजगत्पतिः ।
रौप्यवर्णा रौद्रवर्णा रौप्याऽलङ्कारभूषणा ॥
रङ्गणा रङ्गरागस्था रणर्वाङ्कुलेश्वरी ॥ १३४ ॥
लक्ष्मीः लाङ्गलहस्ता च लाङ्गलीकुलकामिनी ।
लिपिरूपा लीढ़पादा लतातन्तुस्वरूपिणी ॥ १३५ ॥
लिम्पती लेलिहा लीला लोमशप्रियसिद्धिदा ।
लौकिकी लौकिकीसिद्धिर्लङ्कानाथकुमारिका ॥
लक्षणा लक्ष्मीहीना च लप्रिया लार्णमध्यगा ॥ १३६ ॥
ब्राह्मी बृहस्पतिवाचा वाचस्पतिवरप्रदा ।
विबुद्धा वौषड़ाख्या च वंशीवदनपूजिता ॥
वासुदेवगृहस्था च वासवी वीरपूजिता ॥ १३७ ॥
वेदाचारी वेद्यपरा वासवक्षःस्थिता विभा ।
वज्रकान्ता वक्रगतिर्वदरीवंशवर्द्धिनी ॥
विवसा वसना वेशा विवस्वत्कुलकन्यका ॥ १३८ ॥
वातस्था वातरूपा च वेत्रमध्यनिवासिनी ।
श्मशानभूमिमध्यस्था श्मशानसाधनप्रिया ॥
शवस्था शवसिद्धार्था शववक्षसि-शोभिता ॥ १३९ ॥
शरणागतपाल्या च शिवकन्या शिवप्रिया ।
षट्चक्रभेदिनी षोढ़ा-न्यासजालदृढ़ाङ्गना ॥
सन्ध्या सरस्वती सुन्दा सूर्यगा सारदा सती ॥ १४० ॥

हरिप्रिया हराहाला लावण्यस्था क्षमा क्षुधा ।
चित्रस्था सिद्धिदात्री च अम्बिका अपराजिता ॥ १४१ ॥
आद्या इन्द्रप्रिया ईशा उमा ऊढ़ा ऋतुप्रिया ।
लृतुण्डा लृवर्वीजान्ता हरिवेशादिसिद्धिदा ॥ १४२ ॥
एकादशीव्रतस्था च ऐन्द्री ओषधिसिद्धिदा ।
औपकारी अंशरूपा अस्त्रवीजप्रकाशिनी ॥ १४३ ॥
इत्येतत् कामुकीनाथ ! कुमारीणां सुमङ्गलम् ।
त्रैलोक्यफलदं नित्यमष्टोत्तरसहस्रकम् ॥ १४४ ॥
महास्तोत्रं धर्मसारं धनधान्यसुतप्रदम् ।
सर्वविद्याफलोल्लासं भक्तिमान् यः पठेत सुधीः ॥ १४५ ॥
स सर्वदा दिवारात्रौ भवेद्धि मुक्तिमार्गगः ।
सर्वत्र जयमाप्नोति वीराणां वल्लभो भवेत् ॥ १४६ ॥
सर्वे देवा वशं यान्ति वशीभूताश्च मानवाः ।
ब्रह्माण्डे ये च संशन्ति ते तुष्टा नात्र संशयः ॥ १४७ ॥
वसन्ति ये च भूलोके देवतुल्यपराक्रमाः ।
ते सर्वे भृत्यतुल्याश्च सत्यं सत्यं कुलेश्वर ! ॥ १४८ ॥
अकस्मात् सिद्धिमाप्नोति होमेन यजनेन च ।
जाप्येन कवचाद्येन महास्तोत्रार्थपाठतः ॥ १४९ ॥
विना यज्ञैर्विना दानैर्विना जप्यैर्लभेत् फलम् ।
यः पठेत् स्तोत्रकं नाम चाष्टोत्तरसहस्रकम् ॥ १५० ॥
तस्य शान्तिर्भवेत् क्षिप्रं कन्यास्तोत्रं पठेत्ततः ।
वारत्रयप्रपाठेन राजानं वशमानयेत् ॥ १५१ ॥
वारैकं पठितो मन्त्री धर्मार्थकाममोक्षभाक् ।
त्रिदिनं प्रपठेद्विद्वान् यदि पुत्रं समिच्छति ॥ १५२ ॥
वारत्रयक्रमेणैव वारैकक्रमतोऽपि वा ।
पठित्वा धनरत्नानामधिपः सर्ववित्तगः ॥ १५३ ॥

त्रिजगन्मोहयेन्मन्त्री वत्सरार्द्धप्रपाठतः ।
वत्सरं व्याप्य यदि वा भक्तिभावेन यः पठेत् ॥ १५४ ॥
चिरजीवी खेचरत्वं प्राप्य योगी भवेन्नरः ।
महाऽऽहवस्थितं वर्णं पश्यति स्थिरमानसः ॥ १५५ ॥
महिलामण्डले स्थित्वा शक्तियुक्तः पठेत् सुधीः ।
स भवेत् साधकश्रेष्ठः क्षौरो कल्पद्रुमो भवेत् ॥ १५६ ॥
सर्वदा यः पठेन्नाथ ! भावोन्नतकलेवरः ।
दर्शनात् स्तम्भनं कर्त्तुं क्षमो भवति साधकः ॥ १५७ ॥
जलादिस्तम्भने शक्तो वह्निस्तम्भादिसिद्धिभाक् ।
वायुवेगी महावाग्मी वेदज्ञो भवति ध्रुवम् ॥ १५८ ॥
कविनाथो महाविद्यो वन्द्यकः पण्डितो भवेत् ।
सर्वदेशाधिपो भूत्वा देवपुत्रः स्वयं भवेत् ॥ १५९ ॥
कान्तिं श्रियं यशो बुद्धिं प्राप्नोति बलवान् यतिः ।
अष्टसिद्धियुतो नाथ ! यः पठेदर्थसिद्धये ॥ १६० ॥
उटजेऽरण्यमध्ये च पर्वते घोरकानने ।
कान्तारे प्रेतभूमौ च शरोपरि महारणे ॥ १६१ ॥
ग्रामभङ्गे गृहे वाऽपि शून्यागारे नदीतटे ।
गङ्गागर्भे महापीठे योनिपीठे गुरोर्गृहे ॥ १६२ ॥
धामक्षेत्रे देवगृहे कन्यागारे कुलालये ।
प्रान्तरे गोष्ठमध्ये वा राजादिभयहीनके ॥ १६३ ॥
निर्भयादिस्व(प्र)देशेषु शिवलिङ्गालयेऽथवा ।
भूगर्त्ते चैकलिङ्गे वा ग्राम्यदेशे शिवाकुले ॥ १६४ ॥
अश्वत्थमूले विल्वे वा कुलवृक्षसमीपगे ।
अन्येषु सिद्धदेशेषु कुलरूपश्च साधकः ॥ १६५ ॥
दिव्यो वा वीरभावस्थो यष्ट्वा कन्याः कुलाकुलीः ।
कुलद्रव्यैश्च विविधैः सिद्धिद्रव्यैश्च साधकः ॥ १६६ ॥

मांसासवेन जुहुयान्मदात्तकरसेन च ।
हुतशेषं कुलद्रव्यं ताभ्यो दद्यात् सुसिद्धये ॥ १६७ ॥
तासामुच्छिष्टमानीय जुहुयाद्रक्तपङ्कजे ।
घृणालज्जाविनिर्मुक्तः साधकः स्थिरमानसः ॥ १६८ ॥
पिबेन्मांसरसं मन्त्री सदानन्दो महाबली ।
महामांसाष्टकं ताभ्यो मदिराकुम्भपूरितम् ॥ १६९ ॥
तारो माया रमावह्निजायामन्त्रं पठन् सुधीः ।
नैवेद्यविधिदानेन पठित्वा स्तोत्रमङ्गलम् ॥ १७० ॥
स्वयं प्रसादं भुक्त्वा हि सर्वविद्याऽधिपो भवेत् ।
शूकरस्योष्ट्रमांसेन पीनमीनेन मुद्रया ॥ १७१ ॥
महाऽऽसवघटेनापि दत्त्वा पठति यो नरः ।
ध्रुवं स सर्वगामी स्याद्विना होमेन पूजया ॥ १७२ ॥
रुद्ररूपी भवेन्नित्यं महाकालात्मको भवेत् ।
सर्वपुण्यफलं नाथ ! कुलात् प्राप्नोति साधकः ॥ १७३ ॥
क्षीराब्धिरत्नकोषेशो विपद्गामी च योगिराट् ।
भक्त्या नाथ ! दयासिन्धुर्निष्कामत्वं लभेद् ध्रुवम् ॥१७४॥
महाशत्रुपातने च महाशत्रुभयार्दिते ।
वारैकपाठमात्रेण शत्रूणां बधमानयेत् ॥ १७५ ॥
शत्रून् संहारयेत् क्षिप्रमन्धकारं यथा रविः ।
उच्चाटने मारणे च भवेद्धारतरे निशि(पि) ॥ १७६ ॥
पठनाद्धारणान्मर्त्यो देवो वा राक्षसादयः ।
प्राप्नुवन्ति झटित् शान्तिं कुमारीनामपाठतः ॥ १७७ ॥
पुरुषो दक्षिणे बाहौ नारी वामकरे तथा ।
धृत्वा पुत्रादिसम्पत्तिं लभते नात्र संशयः ॥ १७८ ॥
ममाज्ञया मोक्षमुपैति साधको गजान्तकं नाथ ! सहस्रनाम ।
पठेन्मनुष्यो यदि भक्तिभावतस्तदादि सर्वत्र फलोदयं लभेत् ॥१७९

मोक्षं सत्फलभोगिनां स्तववरं सारं परानन्ददं
ये नित्यं हि मुदा पठन्ति विफलं सार्थञ्च चिन्ताकुला: ।
ते नित्या: प्रभवन्ति कीर्त्तिकमले श्रीरामतुल्यो जयी
कन्दर्पायुततुल्यरूपगुणवान् क्षोणीश ! रुद्रोपम: ॥ १८० ॥

इति श्रीरुद्रयामले उत्तरतन्त्रे महातन्त्रोद्दीपने कुमार्य्युपचर्य्याविन्यासे सिद्धमन्त्रप्रकरणे दिव्यभावनिर्णये कुमार्य्यष्टोत्तरसहस्रनाममङ्गलाख्ये भैरवी-भैरवसंवादे दशम: पटल: ॥ १० ॥

अथ एकादश: पटल: ।

भावार्थनिर्णय: ।—

आनन्दभैरव्युवाच ।—

अथात: संप्रवक्ष्यामि दिव्यभावादिनिर्णयम् ।
यमाश्रित्य महारुद्रो भुवनेश्वरनामधृक् ॥ १ ॥
यज्ज्ञात्वा कमलानाथो देवतानामधीश्वर: ।
चतुर्वेदाधिपो ब्रह्मा साक्षाद् ब्रह्म सनातन: ॥ २ ॥
वटुको मम पुत्रश्च शक्र: स्वर्गाधिदेवता ।
अष्टसिद्धियुता: सर्वे दिक्पाला: खेचरादय: ॥ ३ ॥
तत्प्रकारं महादेव ! आनन्दनाथभैरव ! ।
सुरानन्द ! हृदानन्द ! ज्ञानानन्द ! दयामय ! ॥ ४ ॥
शृणु त्वं कमलानाथ ! यदि त्वं सिद्धिमिच्छसि ।
मम प्रियानन्दरूप ! यतो मेऽन्यतनुस्थित: ॥ ॥ ५ ॥

भावत्रितयम् ।—

त्रिविधं दिव्यभावञ्च वेदागमविवेकजम् ।
वेदार्थमथ संप्रोक्तं मध्यमं चागमोद्भवम् ॥ ६ ॥
उत्तमं सकलं प्रोक्तं विवेकोल्लाससम्भवम् ।
तथैव त्रिविधं भावं दिव्यवीरपशुक्रमम् ॥ ७ ॥

दिव्यं विवेकजं प्रोक्तं सर्वसिद्धिप्रदायकम् ।
उत्तमं तद्विजानीयादानन्दरससागरम् ॥ ८ ॥
मध्यमं चागमोल्लासं वीरभावं क्रियाऽन्वितम् ।
वेदोद्भवफलार्थञ्च पशुभावं हि चाधमम् ॥ ९ ॥
सर्वनिन्दासमव्याप्तं भावानामधमं पशो: ।
उत्तमे उत्तमं ज्ञानं भावसिद्धिप्रदं नृणाम् ॥ १० ॥
मध्यमे मधुमत्याश्च यत्कुलागमसम्भवम् ।
अकालमृत्युहरणं भावानामतिदुर्लभम् ॥ ११ ॥
वीरभावं विना नाथ ! न सिध्यति कदाचन ।
अधमे अधमा व्याख्या निन्दार्थवाचकं सदा ॥ १२ ॥
यदि निन्दां न करोति तदा तत्फलमाप्नुयात् ।
पशुभावेऽपि सिद्धि: स्याद् यदि देवं सदाऽभ्यसेत् ॥ १३ ॥
वेदार्थचिन्तनं नित्यं वेदपाठध्वनिप्रियम् ।
सर्वनिन्दाविरहितं हिंसाऽऽलस्यविवर्जितम् ।
लोभमोहकामक्रोध-मदमात्सर्य्यवर्जितम् ॥ १४ ॥
यदि भावस्थितो मन्त्री पशुभावेऽपि सिद्धिभाक् ।
पशुभावं महाभावं ये जानन्ति महीतले ॥ १५ ॥
किमसाध्यं महादेव ! श्रमाभ्यासेन चास्ति तत् ।
श्रमाधीनं जगत्सर्वं श्रमाधीनाश्च देवता: ॥ १६ ॥
श्रमाधीनं महामन्त्रं श्रमाधीनं परन्तप: ।
श्रमाधीनं कुलाचारं पशुभावेऽपि लक्षणम् ॥ १७ ॥
वेदार्थज्ञानमात्रेण पशुभावं कुलप्रियम् ।
स्मृत्यागमपुराणानि वेदार्थविविधानि च ॥ १८ ॥
अभ्यस्य सर्वशास्त्राणि तत्त्वज्ञानात्तु बुद्धिमान् ।
पलालानि वधान्यार्थी सर्वशास्त्राणि संत्यजेत् ॥ १९ ॥
ज्ञानी भूत्वा भावसारमाश्रयेत् साधकोत्तम: ।

वेदे वेदक्रिया कार्य्या मदुक्तवचनान्वितः ॥ २० ॥
पशूनां श्रमदाहीनामिति लक्षणमीरितम् ।
आगमार्थक्रियाकार्य्या मत्कुलागमचेष्टया ॥ २१ ॥
वीराणामुद्धतानाञ्च मत्पदीरानुगामिनाम् ।
मद्येच्छाकुलतत्त्वानामिति लक्षणमीरितम् ।
विवेकसूत्रसंज्ञा कार्य्या सुदृढचेतसा ॥ २२ ॥
सर्वत्र समभावानां भावमात्रं हि साधनम् ।
सर्वत्र मत्पदाम्भोज-सम्भवं सचराचरम् ॥ २३ ॥
दृष्ट्वा यत् कुरुते कर्म चाखण्डफलसिद्धिदम् ।
अखण्डज्ञानचित्तानामिति भावं विवेकिनाम् ॥ २४ ॥
निर्मलानन्ददिव्यानामिति लक्षणमीरितम् ।
दिव्ये तु विविधं भावं यो जानाति महीतले ॥ २५ ॥
न नश्यति महावीरः कदाचित् साधकोत्तमः ।
क्रमेण दिव्यभावादिमाश्रित्य साधयेत् यदि ॥ २६ ॥
दिव्यभावे महासिद्धिं प्राप्नोति साधकोत्तमः ।
दिव्यभावं विना नाथ ! मत्पदाम्भोजदर्शनम् ॥ २७ ॥
य इच्छति महादेव ! स मूढः साधकः कथम् ? ।
पशुभावं प्रथमके द्वितीये वीरभावकम् ॥ २८ ॥
तृतीये दिव्यभावञ्च दिव्यभावत्रयं क्रमात् ।
तत्प्रकारं शृणु शिव ! त्रैलोक्यपरिपालक ! ॥ २९ ॥
भावत्रयविशेषज्ञः षड़ाचारस्य भेदनः ।
पञ्चतत्त्वार्थभावज्ञो दिव्याचाररतः सदा ॥ ३० ॥
स एव भवति श्रीमान् सिद्धानामादिपारगः ।
शिववद्‌ विहरेत् सोऽपि अष्टैश्वर्य्यसमन्वितः ॥ ३१ ॥
सर्वत्र शुचिभावेन आनन्दजनसाधनम् ।
प्रातःकालादिसन्ध्याङ्क-कालपर्य्यन्तधारणम् ॥ ३२ ॥

भोजनञ्चोक्तद्रव्येण संयमादिक्रमेण वा ।
यः साधयति स सिद्धो दिव्यभावे पशुक्रमात् ॥ ३३ ॥
दिव्यभावे वीरभावं वदामि तत् पुनः शृणु ।
मध्याह्नादिकसन्ध्यान्तं शुचिभावेन साधनम् ॥ ३४ ॥
जपेन धारणं वाऽपि चित्तमादाय यत्नतः ।
एकान्तनिर्जने देशे सिद्धो भवति निश्चितम् ॥ ३५ ॥
तत्कालं वीरभावार्थं भावमात्रं हि साधनम् ।
भावेन लभते सिद्धिं भावादन्यत्र कुत्रचित् ॥ ३६ ॥
रात्रौ गन्धादिसम्पूर्ण-ताम्बूलपूरिताननः ।
विजयानन्दसम्पन्नो जीवात्मपरमात्मनोः ॥ ३७ ॥
ऐक्यं चित्ते समाधाय आनन्दोद्रेकसंभ्रमः ।
यो जपेत् सकलां रात्रिं गतभीर्निर्जने गृहे ॥ ३८ ॥
स भवेत् कालिकादासो दिव्यानामुत्तमोत्तमः ।
एवं भावत्रयं ज्ञात्वा यः कर्म साधयेत्ततः ॥ ३९ ॥
अष्टैश्वर्य्ययुतो भूत्वा सर्वज्ञो भवति ध्रुवम् ।
भावत्रयाणां मध्ये तु भावपुष्प्यर्थनिर्णयम् ॥ ४० ॥
शृणु नाथ ! प्रवक्ष्यामि सावधानावधारय ।
अकस्मात् सिद्धिमाप्नोति ज्ञात्वा सङ्केतलाञ्छितम् ॥४१॥
यो जानाति महादेव ! तस्य सिद्धिर्न संशयः ।
द्वादशे पटले सूक्ष्म-सङ्केतार्थं वदामि तत् ॥ ४२ ॥
एकादशे च पटले शुद्धप्रश्नार्थनिर्णयम् ।
भावेन लभ्यते सर्वं भावाधीनमिदं जगत् ॥ ४३ ॥
भावं विना महाकाल ! न सिद्धिर्जायते क्वचित् ।
पशुभावाश्रयाणाञ्च अरुणोदयकालतः ॥ ४४ ॥
दशदण्डाश्रितं कालं प्रश्नार्थं कोमलं प्रभो ! ।
चक्रं द्वादशराशेश्च मासद्वादशकस्य च ॥ ४५ ॥

दशदण्डे विजानीयात् भावाभावं विचक्षणः।
अनुलोमविलोमेन पञ्चस्वरविभेदतः॥ ४६॥
बाल्यकैशोरसौन्दर्यं यौवनं वृद्धसंज्ञकम्।
अष्टमितं क्रमाज्ज्ञेयो विधिः पञ्चस्वरः स्वयम्॥ ४७॥
स्वकीयनासिकाग्रस्थं पञ्चमं परिकीर्त्तितम्।
यन्नासापुटमध्ये तु वायुर्भवति भैरव!॥ ४८॥
तन्नासापुटमध्ये तु भावाभावं विचारयेत्।
आकाशं वायुरूपं हि तैजसं वारुणं प्रभो!॥ ४९॥
पार्थिवं क्रमशो ज्ञेयं बाल्यास्तादिक्रमेण तु।
वामोदये शुभा वामा दक्षिणे पुरुषः शुभः॥ ५०॥
वायूनां गमनं ज्ञेयं गगनार्वाधरेव च।
केवलं मध्यदेशे तु गमनं पवनस्य च।
तदाकाशं विजानीयात् बाल्यभावं प्रकीर्त्तितम्॥ ५१॥
तिर्य्यग्गतिस्तु नासाग्रे वायोरुदयमेव च।
केवलं भ्रमणं ज्ञेयं सर्वमङ्गलमेव च॥ ५२॥
किशोरं तद्विजानीयात् वायौ तिर्य्यग्गते विभो!।
केवलोर्द्ध्वनासिकाग्रे वायुर्गच्छति दण्डवत्॥ ५३॥
तत्तैजसं विजानीयात्तेजसा बलवान् भवेत्।
यौवनं तद्विजानीयात् कर्मसिद्धिर्भवेद् ध्रुवम्॥ ५४॥
यदा व्याप्य गच्छतां हि नासापुटसमाकुलम्।
जलोदयं विजानीयात्तदा व्यामोहमेव च॥ ५५॥
तद् वृद्धगतभावञ्च विलम्बोऽधिकचेष्टया।
प्राप्नोति परमां प्रीतिं वारुणोदयनीरुजम्॥ ५६॥
यदाधो गच्छति क्षिप्रं किञ्चिद् वृद्धमगोचरम्।
यदा करोति प्रश्वासं तदा रोगोल्वणोदयः॥ ५७॥
पृथिव्या उन्नतं भाग्यं रोगातपप्रपीड़ितम्।

अस्तमितं महादेव! अनुलोमविलोमतः॥ ५८॥
पवनो गच्छति क्षिप्रं वामदक्षिणभेदतः।
वामनासापुटे याति पृथिवीजलमेव च॥ ५९॥
सदा फलाफलं धत्ते मुदिता कुलमण्डले।
तयोर्वै वायवो शक्तिः फलभोगं तदा लभेत्॥ ६०॥
यद्येवं वामभागे तु वामायाः प्रश्नकर्मणि।
यदि तत्र पुमान् प्रश्नं करोति वामगामिने॥ ६१॥
तदा रोगमवाप्नोति कर्महीनो भवेत् ध्रुवम्।
यदि वायूदयो वामे दक्षिणे पुरुषः स्थितः॥ ६२॥
तदा फलमवाप्नोति द्रव्यागमनदुर्लभः।
अकस्मात् द्रव्यहानिः स्यान्मनोगतफलापहम्॥ ६३॥
सुहृद्भङ्गविवादश्च भिन्नभिन्नोदयं शुभम्।
केवलं वरुणस्यैव पुरुषो दक्षिणे शुभम्॥ ६४॥
अशुभं पृथिवी दक्षे भेदोऽयं वरदुर्लभः।
सदोदयं दक्षिणे च वामे तैजस एव च॥ ६५॥
आकाशस्य विजानीयात् शुभाशुभफलं प्रभो!।
यदि भाग्यवशादेव वायोर्मन्दा गतिर्भवेत्॥ ६६॥
दक्षनासामध्यदेशे तदा वामोदयं शुभम्।
तदा वामे विचारश्च वायुतेजो द्वयस्य च॥ ६७॥
ज्ञात्वोदयं विजानीयात् मिश्रे हानिः स्वरे भयम्।
एवं स्वनाम्ना वामे तु यदि गच्छति वायवो॥ ६८॥
तस्मिन् काले पुमान् दक्षो दक्षभागस्थसंमुखः।
तदा कन्यादानफलं यथा प्राप्नोति मानवः॥ ६९॥
तदा वायुप्रसादेन प्राप्नोति धनमुत्तमम्।
देशान्तरचभारार्त्ता आयान्ति पुत्रसम्पदः॥ ७०॥
बाल्यादिकं भावमेवं रात्रिभेदे शुभं दिशेत्।

तत्तच्चक्रे फलं तस्य राशिद्वादशचक्रके ॥ ७१ ॥

चक्रनामानि ।—

सूक्ष्मं फलं विजानीयात् चक्रं नाम शृणु प्रभो ! ।
आज्ञाचक्रं कामचक्रं फलचक्रञ्च सारदम् ॥ ॥ ७२ ॥
प्रश्नचक्रं भूमिचक्रं स्वर्गचक्रं ततः परम् ।
तुलाचक्रं राशिचक्रं षट्चक्रं त्रिगुणात्मकम् ॥ ७३ ॥
सारचक्रमुल्काचक्रं मृत्युचक्रं क्रमात् प्रभो ! ।
षट्कोणं चात्र जानीयादनुलोमविलोमतः ॥ ७४ ॥
सर्वचक्रे स्वरज्ञानं सर्वत्र वायुसङ्गतिः ।
सर्वप्रश्नादिसञ्चारं भावेन जायते यदि ॥ ७५ ॥
तदा तद्दण्डमानञ्च ज्ञात्वा राश्युदयं बुधः ।
कुर्य्यात् प्रश्नविचारञ्च यदि कीर्त्तिमिहेच्छति ॥ ७६ ॥

इति श्रीरुद्रयामले उत्तरतन्त्रे महातन्त्रोद्दीपने भावप्रश्नार्थबोधनिर्णये पशुभावविचारे सारसङ्केते सिद्धमन्त्रप्रकरणे भैरवी-भैरवसंवादे एकादशः पटलः ॥ ११ ॥

अथ द्वादशः पटलः ।

भैरव्युवाच ।—

कामचक्रम् ।—

तन्नामसन्धिदेशस्थमष्टमाङ्कमधो लिखेत् ।
तदधः सन्धिदेशस्थं सप्ताङ्कं विलिखेद्बुधः ॥ १ ॥
तदूर्द्ध्वं वामकोणे च तृतीयाङ्कं लिखेत्ततः ।
तदूर्द्ध्वं कोणगेहे च युग्माङ्कं विलिखेत्तथा ॥ २ ॥
तद्दक्षिणे गृहे चैकमङ्कवर्णं शृणु प्रभो ! ।
वायुभावमन्यभावं षष्ठभावञ्च गुह्यकम् ॥ ३ ॥
एतन्मध्ये नास्ति वर्णं कोणाद्यञ्च सवर्णकम् ।

टतवर्गौ मूर्द्ध्नि लेख्यं शरं शून्याध एव च ॥ ४ ॥
वेदाङ्कस्थौ कचवर्गौ एऐकारसमन्वितौ ।
तृतीयाङ्कस्थितं वर्णं आदिक्षान्तं टवर्गमीम् ।
छपवर्गौ युगान्तस्थौ अकारं सावधानतः ॥ ५ ॥
विलिखेद्दक्षिणे तस्य गेहे चैकाङ्कमध्यके ।
उयुगं पतवर्गौ च अकारं युग्मशीर्षके ॥ ६ ॥
एतत् प्रोक्तं कामचक्रं प्रश्नकालफलप्रदम् ।
वामावर्त्तेन गणयेत् दशकोणस्थवर्णकात् ॥ ७ ॥
अनुलोमविलोमेन पञ्चस्वरादि नामतः ।
यस्मिन् गृहे स्वीयं नाम प्राप्नोति वेदपारगः ॥ ८ ॥
तद् गृहावधिप्रश्नार्थं गणयेद्भावसिद्धये ।
नवग्रह-नवस्थानं वर्णं ज्ञात्वा सुबुद्धिमान् ॥ ९ ॥
बाल्यभावादिकं ज्ञात्वा यत्र ग्रहास्तनुर्भवेत् ।
तन्नचत्रं समानीय वाराधिकारमानयेत् ॥ १० ॥
विना त्रिकोणयोगेन न षट्कोणं लिखेद् बुधः ।
तन्मध्ये अष्टकोणञ्च भित्त्वा देवगृहान्तरम् ॥ ११ ॥
तन्मध्ये चापि षट्कोणं तन्मध्ये च त्रिकोणकम् ।
क्रमेण विलिखेद्वर्णं दक्षिणावर्त्तयोगतः ॥ १२ ॥
ऊर्द्ध्ववामदेशभागे अ आ इ च कवर्गकम् ।
तद्दक्षिणे ई उयुगं चवर्गञ्च लिखेद् बुधः ॥ १३ ॥
दक्षपार्श्वे अधोभागे ऋयुगं टतवर्गकम् ।
तदधो ऌ ॡ ए ऐ च पवर्गञ्च लिखेद् बुधः ॥ १४ ॥
तद्वामपार्श्वभागे च ओ औ य रलवान् लिखेत् ।
शेषगेहे लिखेत् अं अः शादिक्षान्तं हि तद् गृहे ॥ १५ ॥
मध्यस्तमादिकोणे च एकाङ्कं सत्त्वकीं तनुम् ।
रुद्राग्निमूर्त्तिमतलं अग्निकोणे लिखेद् बुधः ॥ १६ ॥

यजमानः पशुपतिर्मूर्त्तिंषष्ठञ्च दक्षिणे ।
महादेवं सोममूर्त्तिं नैऋते विलिखेत् सुधीः ॥ १७ ॥
जलमूर्त्तिभवं युग्मं पश्चिमे विलिखेद् बुधः ।
उग्रं वीरं वायुमूर्त्तिं वामकोणे चतुर्थकम् ॥ १८ ॥
भीमरूपाकाशमूर्त्तिं पञ्चमं चोत्तरे लिखेत् ।
ईशानं सूर्य्यमूर्त्तिञ्च ईशाने षष्टमं लिखेत् ॥ १९ ॥
अधः षट्कोणमध्ये च चाष्टकोणं लिखेत्ततः ।
ऊर्द्धकोणे ग्रीष्मकालं शिशिरञ्चापि दक्षिणे ॥ २० ॥
वर्षाकालमधस्तस्य ससर्वमन्तकं लिखेत् ।
शरत्कालं पञ्चकोणे शीतकालञ्च षष्ठके ॥ २१ ॥
त्रिकोणाधिपतिं मध्ये वह्निरूपं वकारकम् ।
लिखित्वा गणयेन्मन्त्री वर्णवेदाङ्कवह्निभिः ॥ २२ ॥
एतच्चक्रं महासिद्धा फलचक्रं विशारदम् ।
अधुना कुलनायिश ! राशिचक्रं पुनः शृणु ॥ २३ ॥
विना ज्ञानेन यस्यैवं प्रश्नभारो न जायते ।
यदि प्रश्नचक्रभावं जानाति साधकोत्तमः ।
तदा निजफलं ज्ञात्वा सिद्धिमाप्नोति निश्चितम् ॥ २४ ॥

राशिचक्रम् ।—

षट्कोणं कारयेन्मन्त्री विना त्रिकोणसाधनैः ।
तन्मध्ये च चतुष्कोणं तन्मध्ये शादिवर्णकान् ॥ २५ ॥
लिखित्वा विलिखेत्तत्र तदङ्गमध्यदेशतः ।
षडङ्गं दापयेन्मन्त्री दीर्घदीर्घक्रमेण तु ॥ २६ ॥
तदग्रे षड्गृहं कुर्य्यात्तत्राङ्कार्णान् लिखेत् सुधीः ।
ऊर्द्धप्रथमगेहे च कवर्गं विलिखेद् बुधः ॥ २७ ॥
तद्दक्षिणे मन्दिरे च चवर्गं विलिखेद् बुधः ।
टवर्गं दक्षिणे चाधः सर्वाधस्तु तवर्गकम् ॥ २८ ॥

तन्नाममन्दिरे नाथ ! पवर्गं वर्णमङ्गलम् ।
तदूर्द्धं यादिवान्तञ्च दक्षिणावर्त्तयोगतः ॥ २९ ॥
आकारादिस्वरान् तत्र मन्दिरे विलिखेद् बुधः ।
यावत् स्वरस्थितिर्याति तावत्कालं विचारयेत् ॥ ३० ॥
मेषादिराशिसद्भावं वर्गलेखनमानतः ।
अनुलोमविलोमेन विलिखेत् षष्ठमन्दिरे ॥ ३१ ॥
यद् यद् गेहे साध्यनाम चास्ति नाथ ! स्वरादिकम् ।
एकीकृत्य हरेदङ्कं वाञ्छितं प्राप्यते वरम् ॥ ३२ ॥
षडङ्केन ततो नाथ ! हरेदनलसंख्यया ।
यदङ्कं प्राप्यते तत्र सराशिस्तत्क्षणस्य च ॥ ३३ ॥

आज्ञाचक्रफलम् ।—

आज्ञाचक्रफलं सिद्ध-विद्यानाथ ! वदामि तत् ।
येन विज्ञानमात्रेण सर्वज्ञो भवति ध्रुवम् ॥ ३४ ॥
अकस्मात् शक्तिमाप्नोति विद्यारत्नं वदामि तत् ।
रव्यादिसप्तवारञ्च कृते भद्रविवर्द्धनम् ॥ ३५ ॥
शन्यादिसप्तवारञ्च त्रेतायां सौख्यवर्द्धनम् ।
गुर्वादिसप्तवारञ्च द्वापरे धर्मसाधनम् ॥ ३६ ॥
शुक्रादिवारसप्तञ्च कलौ योगफलप्रदम् ।
अतः शुक्रादिपर्य्यन्तं गणनीयं विचक्षणैः ॥ ३७ ॥
गणयेत् सप्तवारञ्च मध्यचतुर्दले सुधीः ।
पूर्वादिक्रमतो वारान् गणयेद्भद्रवित्तमः ॥ ३८ ॥
निजवारो यत्र पत्रे समाप्तिस्तद्भवञ्च यत् ।
तद्भवावधिमानीय वर्णभेदं समानयेत् ॥ ३९ ॥
सामान्यफलमूलञ्च वदामि पत्रभेदतः ।
आज्ञाचक्रं शुभं मन्त्री आज्ञाचक्रं विचारयेत् ।
तत् फलाफलमाहात्म्यं शृणु सङ्केतपण्डित ! ॥ ४० ॥

दले पूर्वभागे अकाराद्य इन्दुस्फुटे वाद्यलाभं हकारान्तशब्दं
समानार्थभावं विशिष्टार्थयोगं क्रतुक्षेमयुक्तं तथा पुत्रलाभम्।
दयायुक्तभूपः समाप्नोति मर्त्ये विवाहं सुवासं सुखं लोकभक्तिं
विभाव्यं वक्तानां समाशौ समस्तं धनादिं सुकीर्त्तिं यशश्च त्रिवर्गम्॥
॥ ४१ ॥

* * * *

माहेन्द्रासुतयोगराजगहनं साक्षादुयमारोपणं
चित्तानां परिचञ्चलं खलु गुणाह्लादेन सामोदितम्॥ ४२॥
पुत्रार्थलाभं यदि चाध एव प्रगच्छति क्रूरबहुप्रतापः।
तथाऽपि हन्तुं न च वर्णमध्ये क्षमं स्वांसहिं भजते क्षमादिः॥४३॥
रसार्थप्रश्नं कुरुते यदि स्यान्नरो हि चाधो गृहमध्यभागे।
स्वकीय इन्दुप्रियवङ्गवेदुध्रुवं मनोगतं सौख्यविवर्द्धनञ्च॥ ४४॥
शत्रूणां हननं तदा कुलगतं सञ्चारवातं सदा
रोगाणां परिवर्द्धनं प्रभुपदे भक्तिं मनो ज्ञापनम्।
आह्लादं हृदयाम्बुजे सुतधनं तीर्थागमं शोकहं
शुष्कार्थं गणयेत्ततः प्रचपला वाग्देवतादर्शनम्॥ ४५॥
आर्थवे पत्रमध्ये निवसति कमला कोमला वा सुदावी
आगन्तव्यादिवार्त्तां कथयति सहसा सर्वदा मङ्गलानि।
नित्यावश्यं प्रतापं प्रियगणसुहितं प्रेमभावाश्रयत्वं
नित्यं कान्तामुखाम्भोरुह-विमलमधुप्रेमपानाभिलाषम्॥ ४६॥

* * * * *

मेषे हृष्टिमुपैति सिद्धनिवहैः कुम्भे च तेषां फलम्।
लाभं कुञ्जरधातुकेषु रजतं चौर्य्येण यद् योगतः
एवं कांस्यविहारणं शतपले सूर्य्योदयात्तिष्ठति॥ ४७॥
प्रातःकालफलाफलं कथयति श्रीकेशरी मेषगः
षष्ठेदेकगतं फलन्तु धनुषा व्याप्तं यदा भूतले।

वित्तानां दरणं तदा जलगते मित्रस्य राश्यादिकं
दूरस्थादिकमागतादिनमयं शत्रोर्महापीड़नम्॥ ४८॥
वाञ्छावर्गकुलोदयं समुदयात् सूर्य्यस्य चागण्यते
शेषे चौरकशात्रपालमुदितः कुम्भो महादुर्बलो।
दारिद्रस्य कथा कदा सुविषयं विद्यार्थभूषञ्च यो
लाभं देशविदेशकार्य्यगमनं शीघ्रं धनाद्यागमम्॥ ४९॥

* * * *

देवानां खलु दर्शनार्थकथनं व्यामोहसंनाशनम्॥ ५०॥
वारे शुक्रे शनिगतदिवसे क्रूरराहौ च सूर्य्ये
नित्यं ज्ञानोदयं यन्निजपथसुजुषां निर्णयं तत् प्रकाशम्।
अष्टौ वर्गानुदयति मुदा प्याधिरोमामहत्त्वं
लोकोल्लासं प्रथमखचरे चायुषि प्रश्नमात्रे॥ ५१॥

इति श्रीरुद्रयामले उत्तरतन्त्रे महामन्त्रोद्दीपने भावप्रश्नार्थबोधनिर्णये
पाशवकल्पे षाश्राचक्रसारसङ्केते सिद्धमन्त्रप्रकरणे भैरवीभैरव-
संवादे द्वादशः पटलः॥ १२॥

अथ त्रयोदशः पटलः।

आनन्दभैरव्युवाच।—

आज्ञाप्रश्नार्थभावञ्च वर्णविन्यासनिर्णयम्।
अधुनाशु सुसर्वज्ञ! भावज्ञानपरायण!॥ १॥
यदि मेषे स्वनक्षत्रं स्वराशिसंयुतं शुभम्।
ज्ञात्वा शुभादिपत्रञ्च पलमानेन साधकः॥ २॥
गणयेदाशु सारञ्च येन तत् प्रश्ननिर्णयः।
पूर्वे दले ककारस्य वर्णभेदं शृणु प्रभो!॥ ३॥
मनसि सुखसमूहं प्राणसौख्यार्थचिन्ता-
वसनगणनलाभं प्रीतिपुत्रार्थयोग्यम्।

स्थिरपदमपि देशे दर्शनं प्राणबन्धोः
सकलकलुषहानिश्चाटिपत्रे ककारे ॥ ४ ॥
सदा नृनाथिके सौख्यं सुखोल्वणस्य सेवनम् ।
भक्तिप्रदं सदाशिवे स्वकीयगेहमत्कुलम् ॥ ५ ॥
कलाधरस्य दृष्टिभिः प्रधानलोकपूजनम् ।
हिताहितं न बाधेत विवाहके विनाशनम् ॥ ६ ॥
गकारे विपदां ध्वंसं धैर्य्यं विद्याधनौधनम् ।
व्याधिपीड़ा स्वजनानां पीड़ाप्रश्नं वदेत्तदा ॥ ७ ॥
उकारे वायुभावस्य वृथागमनमेव च ।
दारिद्र्यहीना ये यान्ति दूरागमनदुर्लभम् ॥ ८ ॥
खकारे द्रव्यप्रश्नश्च शुभकार्य्ये गते भयम् ।
आशु धनं समाप्नोति प्राप्य निर्धनतां व्रजेत् ॥ ९ ॥
पञ्चत्वजिज्ञासनमेव सत्यं नित्यं सुखानामुदयाय चेष्टा ।
शत्रोर्विनाशाय हिताय बन्धोः पकारकूटे परचौरचेष्टा ॥ १० ॥
मारीभीतितिरोधानं धनपुत्रादिवर्द्धनम् ।
मरणं गमने चौरी नैनं लेख्यं शठे वके ॥ ११ ॥
हरिपूजा हरिध्यानं हरिपादाम्बुजे मतिः ।
चौर्य्याहरणद्रव्यस्य न हानिर्जन्महार्दके ॥ १२ ॥
आकारे वेतसो हाम्म हाशब्देन विनाशनम् ।
आगतानाञ्च हानिः स्यात् पक्षपातं गतो जयः ॥ १३ ॥
उशती निजगेहस्था उल्वणव्याधिपीड़नम् ।
उत्साहध्वंसशून्यस्य पाठे पाण्डित्यमुल्वणम् ॥ १४ ॥
दीर्घलृकारवर्णञ्च लावण्यलोचनो नृपः ।
लज्जानष्टं चेमवृद्धिमिन्द्रतुल्यश्रियो भवेत् ॥ १५ ॥
दीर्घप्रणवमोङ्कारे निराश्रयो न जीवति ।
महदाश्रयमात्रेण सर्वं चूर्णं करोति हि ॥ १६ ॥

सिंहे कार्मुकमिथलग्नसमये नित्याशिषं प्राप्नुयात्
किञ्चिद्भाति पराक्रमो गतिमतां श्रेष्ठो भवेत् कर्मणि ।
किञ्चिद्दोषकुलापहं नरपतेरुत्साहसंवर्द्धनम्
क्रोधी नित्यपराक्रमी भवति सः शीघ्राभिलाषान्वितः ॥ १७ ॥
अथ वक्ष्ये महादेव ! वीराणामुत्तमोत्तम ।
सर्वशास्त्रार्थभावज्ञ ! तत्त्वज्ञानपरायण ! ॥ १८ ॥
दक्षिणस्थदलस्यापि वर्णभेदार्थनिर्गमम् ।
फलमत्यन्तनिष्कर्षं वाञ्छावाक्यफलप्रदम् ॥ १९ ॥
कान्ते वीजे कमलनिलयागेहभागस्थिराया
नानादेशभ्रमणभयदा नैव कुत्रापि सुस्था ।
चण्डोद्वेगापहसति खलानाञ्च हानिः प्रवृद्धो
वाणी वश्या वसति वदने चक्रिणां हानयः स्युः ॥ २० ॥
चारुप्रतापं चरणे गुरूणां भक्तिर्दृढा स्याद् गमनेषु चारुः ।
तदा गतानां नृपतिप्रियाणां संप्रेरणं चारुफलञ्च कूटे ॥ २१ ॥
छन्तेषु कान्तावदनारविन्दे स्पष्टं पदत्वं रमणीविलासम् ।
आयुक्षयोद्वेगविनाशकारणं चाकर्षणं देशसुखं धनानाम् ॥ २२ ॥
टकारे धारणं देशे क्षयं शेषे विना सुखम् ।
विदेशस्थधनादीनां स्यादागमनमुत्तमम् ॥ २३ ॥
दकूटमधनं विना भवति विघ्नहानिः सदा
जयं स्वगृहकामिनीकमलनेत्रकान्ता यथा ।
सुसिद्धकरमेव हि प्रबललाभभावो भवेद्
भवे जयति मानुषसप्तमलग्नप्रश्नजिज्ञासने ॥ २४ ॥
व्याख्यातं मुनिभिः फलं फलमयं कालं रिपूणां सदा
लोकानां वशकारणं कुलवरो वेदागमे पारगः ।
प्राप्नोति प्रियपुत्रकं नरपतेरुत्साहसंकारणं
कार्य्यं दुर्जनपीड़नं भयसमूहानां विनाशं खके ॥ २५ ॥

यशांसि वयसि तेजो बुद्धिरेवं मकूटे
संमयफलदभूपो नाशबुद्धिः समृद्धा ।
यजनमपि सुराणामर्घ्यमातं न भया-
दतिशयधनवृद्धिः क्रेयविक्रेयकाले ॥ २६ ॥
शीतकाले धनप्राप्तिः स्वर्णरौप्यादिलाभकम् ।
पुत्रप्राप्तिः सुखप्राप्तिः सङ्कटे वदति ध्रुवम् ॥ २७ ॥
लक्ष्मीः प्रियं धनं दातुमुदिता भूमिमण्डले ।
जलेन जायते हानिर्लयं देवेन कूटके ॥ २८ ॥
प्रश्नाऽऽद्यचरमित्यादि स्वरमूलं हि यो नरः ।
जिज्ञासनं यदा कुर्य्यात्तदा स्यादुत्कटं फलम् ॥
शृणु तत्तत् स्वरं नाथ ! एतत् पवस्यमाजयम् ॥ २९ ॥

* * * *

ड्कारकूटमङ्गले धनादिलक्षणान्वितः ॥ ३० ॥
विशेषधर्म्मलक्षणं धनञ्च पैत्रिकं लभेत् ।
गतिप्रियं सुदेवता सुसम्पदं सदा सुखम् ॥ ३१ ॥
तथा हि सूक्ष्मबुद्धिभिः परास्तमाकरोदरिम् ।
ऋकारमपरप्रियं परमभक्तसन्दर्शनम् ॥ ३२ ॥
विदेशगमनं न हि प्रभूतराज्यसम्पदः ।
दया जगज्जनप्रियं तक्षणदोषसम्मानम् ॥ ३३ ॥
विकाररहितं सौख्यं सर्वप्रश्नयुगोदये ।
त्रयीजे बहुसन्तोषं कामनाफलसिद्धिदम् ॥ ३४ ॥
वायूनां हरणञ्चैव प्राप्नोति नृपमानसम् ।
असौत्येकाचरे वीजे वीजभूते जगत्पतिः ॥
प्राप्नोति कन्यादानादि-फलं वस्त्रञ्च तैजसम् ॥ ३५ ॥
गौकन्या मकरे खगे खररता सौन्दर्य्यलक्ष्मीर्भवेत्
मेषे काञ्चनपुञ्जलाभमतुलं सन्तोषसारं गतौ ।

संसारे निजदारिकान्यजनता रत्नादिकं सञ्चयं
सर्वं सञ्चयति प्रभो ! हितकरं प्रश्नार्थमाद्यचरे ॥ ३६ ॥
तृतीयदलराहित्यं यद्वा वर्णे विचारयेत् ।
प्रश्नाद्यचरवर्णेषु नीत्वा च गणनं चरेत् ॥ ३७ ॥
तत्प्रकारं शृणु प्राण-वल्लभ ! प्रेमपारग ! ।
यज्ज्ञानात् प्रश्नसिद्धिः स्यादकालफलदं नृपम् ॥
दृष्ट्वा ज्ञात्वा भावशुद्धिमुत्तमाधममध्यमम् ॥ ३८ ॥
लोकभावविधानज्ञो निजवृत्तादिकं तथा ।
सर्वं विषयरूपेण भावसारं विचारयेत् ॥ ३९ ॥
गवीजं मङ्गलं ज्ञेयं फलमत्यन्तभाग्यदम् ।
गतद्रव्यादिलाभश्च तथा लोकवशं फलम् ॥ ४० ॥
ड्कारकूटे कठिनं रिपूणां विद्रावणं धर्म्मविनाशकस्य ।
भूमिपतेर्वा शरणं त्रिनाशनं दिव्याङ्गनाया वररत्नलाभम् ॥४१॥
टकारे दूरगाणाञ्च दर्शनं भवति ध्रुवम् ।
उद्वाहं पुत्रसम्पत्तिः षष्ठमासेन लभ्यते ॥ ४२ ॥
ठान्ते चौरभयं नास्ति तद् द्रव्यागमनं भवेत् ।
विधिविद्याप्रकाशेन शिवे विष्णौ च भक्तिमान् ॥ ४३ ॥
धकारकूटे धरणीपतेर्वा व्याधेर्भयं नास्ति तथा पशोश्च ।
प्रवेशमात्रेण गतौ कलापि जीवादिसम्पत्तिमुपैति लक्ष्मीम् ॥४४॥
रवौ सिद्धिः सम्यक् खलु कुलवरो धीरगमनं
वाञ्छातुल्यं विभवमतुलं राजराज्यप्रियं स्यात् ।
प्रतापं सन्त्यज्यं सकलहितगोलोकरसता
रसं सर्वं नित्यं प्रियमतिसुखं लाभविविधम् ॥ ४५ ॥
वकारे वह्निवीजे च जितं सर्वं चराचरम् ।
यथा जयेन सर्वत्र गमने भाग्यदं फलम् ॥ ४६ ॥
प्रकारमध्यमे देशे वार्त्तादिशादुपैति हि ।

पत्रिकागमनं क्रेयं यः करोति धनं लभेत् ॥ ४७ ॥

चकारे सख्यभावञ्च मित्रभावं दयां लभेत् ।
अप्रीतिश्च भवेत्तस्य तदा प्राणभयं न च ॥ ४८ ॥

स्वराज्ये च भवेत् सौख्यं प्रश्नजिज्ञासकर्म्मणि ।
हसनान्ते तथा वर्णे पाचकादिह चादिमम् ॥
यदि स्यादुच्यते नाथ ! विपरीतफलं न च ॥ ४९ ॥

दीर्घे काले विषयघटना नाथ ! पादे मतिः स्यात्
यद्यारम्भो भवति कुशलं दीर्घजीवी नरेन्द्रः ।
बालापत्यं गमयति मुदा कालदेशाधिकारी
लोकारण्ये सकलकलुषध्वंसहानी मृगन्ते ॥ ५० ॥

सुखञ्चचार चाष्टमे महाधनेशमन्निधौ ।
प्रवृद्धवान् भवेन्नरः समाहितो भवेद् ध्रुवम् ॥ ५१ ॥

विचित्रचातुरी यदा महाकुचोरगा प्रभो ! ।
प्रहृष्यति चणादपि प्रभातसूर्य्यदर्शनात् ॥ ५२ ॥

* * *

अतीव धैर्य्यतां लभेत् विचित्रवाग् भवेज्जयः ॥ ५३ ॥

जयेन सेवितः पुरा देवैरपि हि मानुषः ।
न वाक्यलाभकं जगज्जनादिसेवनं लभेत् ॥ ५४ ॥

कुलागमं दया सुधीर्गंभीरतुल्यसत्फलम् ।
सदा हि पुण्यसागरे गुरोः पदाम्बुजं लभेत् ॥ ५५ ॥

विसर्जनीयसमये समाप्ति कोमलान्वितम् ।
जनागमं धनागमं विशालवेदनाऽन्वितम् ॥ ५६ ॥

मनोगतं कुबुद्धिदं सुखायुर्बन्धुसज्जनम् ।
कुलचर्य्यं भवे भवे लभेत् लभेत् कुबन्धनम् ॥ ५७ ॥

सकुलं निष्कुलं कान्तं वित्तश्रेष्ठा महर्षयः ।
हास्यमुखे हास्यफलं भावनायां भवेन्न हि ॥ ५८ ॥

क्रोधकर्म्मणैव तदैव चक्षुषोर्विकारभावेन हरेत् समस्तम् ।
शीर्षे करौ चेत्कलिकालसंयुतं फलं हि लाभे बध एव भूषणम् ॥ ५९ ॥

शेषे वेददले च भावय करा हाराविशब्दापहा
दूरादागमनं भवेद्धि नियतं बालागणैरावृतम् ।
घोरापायविमर्जनं जलगुणाह्लादेन सामोदितम्
कूपे कूपमकारवर्गलहगी भासापभासारसे ॥ ६० ॥

जवर्गे जतुकं वर्णं जीवनोपायचिन्तनम् ।
जराव्याधिममाक्रान्तं जीर्णवस्त्रापहारणम् ॥ ६१ ॥

ठकारकूपे यदि चक्रवर्त्ती भूमण्डले स्यात् पततीति निश्चितम् ।
अन्तःसुखं हन्ति यदादिभागे ठकारमात्रेण विभूत्तमो भवेत् ॥ ६२ ॥

आद्यप्रश्नाक्षरं नाथ ! भकारं तरुणाश्रयम् ।
पापान्धकारपटल-ध्वंसाय कल्पते तदा ॥ ६३ ॥

नकारमाद्ये यदि प्रश्नवाग्मी जिज्ञासमानो ध्रुवमर्थसञ्चयम् ।
आलापमात्रेण वशाः स्युरेव प्रवेशनं राजकुलेन्द्रसन्निधौ ॥ ६४ ॥

भीतो भवति देशे च भयस्थाने न दुःखभाक् ।
भूषासम्पत्तिवृद्धिश्च मकारकूटमङ्गले ॥ ६५ ॥

लोकानुरागं सर्वत्र आद्यचरविचारतः ।
लकारस्यापि लोकेश ! भार्य्या दुःखं विमुञ्चति ॥ ६६ ॥

सकारे मैथुनं कान्ताकुलस्य कुलवर्द्धनम् ।
धनवृद्धिर्वंशवृद्धिः सरस्वतीकृपा भवेत् ॥ ६७ ॥

विदपत्रे अकारस्य फलमाहात्म्यनिर्णयम् ।
शृणु नाथ ! प्रवक्ष्यामि सावधानावधारय ॥ ६८ ॥

ककारादि क्षकारान्तं व्याप्य तिष्ठति तत्त्वतः ।
अकारेण विना शक्तिर्जायते कुत्र न प्रभो ! ॥ ६९ ॥

अकारे ग्राह्यं तत्सर्वं चराचरकलेवरम् ।
यद्यकारमाद्यभागे प्रश्नजिज्ञासनं भवेत् ॥

कुफलेऽपि सत्फलानां सञ्चयं भवति ध्रुवम् ॥ ७० ॥
शत्रूणां वासहेतोश्च यादीनाञ्चैव सञ्चये ।
अन्त्यजनविद्यासु लोकस्यागमने तथा ॥
निजदुःखानुतापे च अकारविधिरुच्यते ॥ ७१ ॥
उकारफलमाहात्म्यं शृणु प्रश्नार्थपण्डित ! ।
उषाकाले चौर्य्यप्रश्नं मन्त्रासं मानसोत्तमम् ॥ ७२ ॥
उत्तमस्थलवासञ्च उत्कृष्टभोजनादिकम् ।
उत्वणा बुद्धिरुत्पत्तिरुषादेवीपदे सति ॥ ७३ ॥
ऌकारणकुलं चक्षुः शब्दस्य वचनं भवेत् ॥ ७४ ॥
लोचने दर्शदं स्त्रीणां लिखनं दूरसम्भवम् ॥ ७५ ॥
प्राप्नोति परमां लक्ष्मीं लोकवश्याय केवलम् ।
अङ्गनानां सञ्चयञ्च भूमिलाभो भवेद् ध्रुवम् ॥ ७६ ॥
ओकारे वाद्यवृद्धिः स्यात् पुत्रवृद्धिस्तथैव च ।
सदा सन्तोषमाप्नोति प्रणवः सर्वसिद्धिदः ॥ ७७ ॥
मीने कर्कटराशिवृश्चिकतुले धर्माग्निभानूदये
गेहे वेदविचारणे शुभफलं श्रीलाभतः सन्ततिः ।
विद्यावेदकथादिकं जयवतामानन्दसिन्धोः फलं
प्राप्नोति प्रतिपत्तिसिद्धपदवीं मर्त्यो मुदा हर्षणम् ॥ ७८ ॥
पत्रप्रमाणं कथितं हीनविद्याविनिर्गमम् ।
पुनः शृणु महाकाल ! कालिकालस्य उद्भवम् ॥ ७९ ॥
यद् यन्मासस्य प्रथमे तथा चाङ्कोर्मकस्य च ।
दण्डद्वये शुभफलं प्रथमस्य महेश्वर ! ॥ ८० ॥
तृतीयैकदण्डमात्रं विपरीतफलप्रदम् ।
तत्र दण्डेषु नक्षत्रे पूर्वप्रथमपत्रके ॥
तत् सुतारं विजानीयात दृष्टदोषे सुखं भवेत् ॥ ८१ ॥
अश्लेषामादिचित्रान्तं द्वितीये दक्षिणे दले ।

तत् फलं विपरीताख्यं सफले विफलापहम् ॥
तत् सुतारं विजानीयात् दृष्टदोषे सुखं भवेत् ॥ ८२ ॥
स्वात्यादि वसुनक्षत्रं तृतीयावोदले लिखेत् ।
तत् सुतारं क्रमाज्ज्ञेयं नान्यथा भावमानयेत् ॥ ८३ ॥
तत् फलार्थं कुत्सितञ्च विपरीतफलस्थले ।
अशुभं सत्फलस्थाने कुफलेषु फलं लभेत् ॥ ८४ ॥
उत्तराषाढ़के तारादिरेवत्यन्तमेव च ।
तत् फलन्तु भवेत् सद्यो यदि कर्मपरो भवेत् ॥ ८५ ॥
अथ वक्ष्ये महादेव ! अश्विन्यादिफलं प्रभो ! ।
यज्ज्ञात्वा देवताः सर्वा दिग्विदिक्स्थादिरक्षकाः ॥ ८६ ॥
तत्प्रकारं महापुण्यं देवदेव ! फलोद्भवम् ॥ ८७ ॥
त्रैलोक्ये सौख्यपुञ्जं त्रिभुवनविदितां त्रैगुणाढ्यसिद्धां
सिद्धभ्रान्तो विशालो वरदविदलितां वेदनाद्रांपहन्त्राम् ।
मन्दानां मन्दभाग्यापहगुणहननां हीनदीनापदाहां
लोकानां सत्फलानां फलगतवपुषा साश्विनी सा ददौ चेत् ॥ ८८ ॥
एवं क्रमेण देवेश ! तारकाणां फलाफलम् ।
पुनः पुनः शृणु प्राण-वल्लभ ! प्रेमभावक ! ॥ ८९ ॥

इति श्रीरुद्रयामले उत्तरतन्त्रे महातन्त्रोद्दीपने भावनिर्णये पाशवकल्पे आज्ञाचक्र-
सारसङ्केते सिद्धमन्त्रप्रकरणे भैरवीभैरवसंवादे त्रयोदशः पटलः ॥ १३ ॥

अथ चतुर्दशः पटलः ।

आनन्दभैरव्युवाच ।—

नाक्षत्रिकचक्रफलम् ।—

अथातः सम्प्रवक्ष्यामि योगमार्गेण शङ्कर ! ।
भरण्यादिसप्तविंशान् नक्षत्राथं सुसत्फलम् ॥ १ ॥

तत् फलाफलमाहात्म्य साक्षात्कारफलाफलम् ।
फलार्थं भरणीचेतं धर्म्मविद्यादिनिर्णयम् ॥ २ ॥
धर्मचिन्ताविनिर्बोधं गमनाभावमङ्गलम् ।
मकारादिवर्णजालं प्राप्नोति भरणीभके ॥ ३ ॥
कृत्तिकायाः शादिवर्णं व्याधिसङ्करसंचयात् ।
आरोग्याय धनस्यार्थे तत्र सूर्य्यं न चाचरेत् ॥ ४ ॥
या रोहिणी धनवतां धनहानयो न
प्राणप्रियं गणसुवर्द्धविहृद्धिवृद्धिम् ।
नागादिदोषगमनं चितिचक्रमध्ये
राजश्रियं विविधसिद्धिमुपैति हृद्धिम् ॥ ५ ॥
मृगेन्द्रशीर्षगामिनी नरेन्द्रमन्दिरे निधिम् ।
ददाति पापनिर्मले जले जघन्यशून्यके ॥ ६ ॥
भयं विवाहकालके चणे सुखं शुभेचणा
स्वकीयकिल्विषं दहेदनन्तवृद्धिमव्ययः ॥ ७ ॥
आर्द्रा विद्रुमरूपिणी रतिकलाकोलाहलोल्लासिनी
सा सत्यार्पणमेव सम्प्रकुरुते काले फलालापनम् ।
सौख्यं मुख्यसमृद्धिदा दरदलाम्भोजावृता निष्पटा
साधारं परिदच्यति प्रतिदिनं शान्तं दृशान्तं दहेत् ॥८॥
पुनर्वसुसुतारिका तरुणरूपरूपाकृपा
विशिष्टफलभावना-रहितचित्तदोषापहा ।
धनमन्तपरिमाणगं प्रचुरशोकसङ्घापहा
प्ररचति महाग्रहः परमपीड़ितं मानुषम् ॥ ९ ॥
सुष्या पोषमनाः करोति सहसा तेजस्विनां कान्तिदा
कान्तायाः कनकादिलाभविपदां ध्वंसेन वंशादिदा ।
वाशायां फलदा मृगा मृगपतेरानन्दतुल्यं श्रियं
काम्या पञ्चमवर्णजातकलिता प्रातीह सुतं यथा ॥ १० ॥

एतद्धि पूर्वपत्रान्ते तारामङ्गलदायिकाः ।
प्रतिभान्ति यथा चक्रे ग्रहाणां भ्रामणे शुभे ॥ ११ ॥
विपरीतफलं नाथ ! प्राप्नोति पातकं बहु ।
पुष्यायां न भवेत् क्रूरः कर्कटस्थोऽपि भास्करः ।
एतासां तारकाणाञ्च राशिदेवान् शृणु प्रभो ! ॥ १२ ॥
मेषः सिंहो धनुश्चैव अश्विन्यादिकदेवताः ।
येषां राशिस्थितं वर्णं न हानिर्विषयास्पदे ॥
सर्वत्र जयमाप्नोति ग्रहे क्रूरेऽपि सौख्यदः ॥ १३ ॥
विभिन्नराशौ श्रीभिन्ना धर्मनिन्दाविवर्जितः ।
स्वनक्षत्रफलं ज्ञात्वा प्रश्नार्थं कोमलं वदेत् ॥ १४ ॥
तत्तन्नक्षत्रसुफलं कुफलं वा भवेद् यदि ।
तदा वर्णविचारञ्च कृत्वा प्रश्नं सदा वदेत् ॥ १५ ॥
अक्षमालाक्रमेणैव तद्वर्णानां विचारतः ।
तत्तद्वर्णविचारे तु यद् यत् सौख्यं प्रवर्त्तते ॥
अधिके दोषजाले तु अधिकं दुःखमेव च ॥ १६ ॥
बहुसौख्यं नित्यसौख्यं प्राप्नोति साधकोत्तमः ॥ १७ ॥
एतासां तारकाणान्तु वर्णान् गृह्णन् यथा क्रमात् ।
रव्यादि रविवारान्तं ताराणामधिपं शुभम् ॥
अशुभञ्च तथा रुद्र ! ज्ञात्वा प्रश्नार्थमावदेत् ॥ १८ ॥
तद्वारनिर्णयं वक्ष्ये पूर्वपङ्केरुहे दले ॥ १९ ॥
रवौ राज्यं बालकानां यदि प्रश्नं प्रियं फलम् ।
धर्मार्थलाभमेवं हि त्रयोविंशाधिके नरे ॥ २० ॥
संस्थितं परमानन्दं योगिनस्तत्त्वचिन्तनम् ।
इत्यादि रविवारस्य ह्रदानामशुभं भवेत् ॥ २१ ॥
सोमे रत्नमुपैति देवकुसुमामोदेन पूर्णं सुखं
बालायां नवकन्यका शुभफलं मुद्राभयार्थं लभेत् ।

कैवल्यार्थविचेष्टनं नृपवधूप्रेमाभिलाषं सदा
वाञ्छापुण्यसुखास्पदेषु विमला भक्तिश्च सोमे दिने ॥ २२ ॥

पृथ्वीपुत्रो रुधिरवदनो बालबालोविशेषो
मुख्यं कार्य्यं दहति सहसा साहसं वासनायाम् ।
हन्ति प्रायो विफलघटितं शोकसन्तानसारं
मुख्यं पुण्यं घटयति सदा मङ्गले भूमिवारे ॥ २३ ॥

बुधे वारमुख्ये महाधर्मपुण्यं समाप्नोति मर्त्यस्तथा दुर्बलश्च ।
सदा कालदोषं महाघोरदुःखं रिपूणां धनिनां महावीर्य्यदर्पम् ॥ २४ ॥

सुराणां देवाहे विविधधनलाभं वितरणं
प्रतापं तत्कीर्त्तिं क्रतुफलविशेषं विधिगतम् ।
जनानामानन्दं समरवशतानन्दहृदयं
प्रतिष्ठा साधर्म्यं गमयति मुदा वासनगृहे ॥ २५ ॥

मन्दारमालाचयदेहधारी नाकस्थले गच्छति देवनिष्ठः ।
हरेः पदे भक्तिमुपैति सत्यं प्रसाधनात् शुक्रसुतारकाले ॥ २६ ॥

शनैश्चरदिने भयं गुरुजनेषु दोषान्वितं
चितिप्रियसुतप्रियं परमभावकं श्रीमुखम् ।

* * *

विशिष्टधनिको वदन् मरणसिद्धिकृद्भास्करजम् ॥ २७ ॥

भजन्ति यदि मानुषाः सकलकामनावदन्
प्रभाः पुरश्चराचरगं फलमतीव दुःखास्पदम् ।
प्रचण्डकिरणं सदा विकललोकरोगापहं
तमेव परिभावनं परिकरोति यो वा नरः ॥ २८ ॥

न लभ्यते कदाचन प्रचुरतापकारणम् ।
कलाधनफलं शृणु प्रणयवाक्यसूक्ष्माशयः ! ॥ २९ ॥

समप्रखचराकुलं समप्रखचराफलं
फलप्रवणं हि संज्ञाफलं फलप्रवणं हि संज्ञाफलम् ।

गभीरवचनं नृपप्रियकरस्य रत्नाकरं
यदिह भजनं मुदा फलं शुभादि शम्भो ! भवेत् ॥ १० ॥

द्वितीयदलमाहात्म्यं नक्षत्रमण्डलायुतम् ।
तत्तत्ताराफलं वक्ष्ये येन प्रश्नार्थनिर्णयः ॥ ११ ॥

अश्लेषाबहुदुःखवादनगतं व्यामोहशोभावृतं
नाना भृङ्गनिषेवणं धनवतां हानिः पदे सम्पदे ।
भूपालैः परिवर्जनं खलजनैराच्छादितं तापितं
सन्दद्यात् चितिजातिकेषु नियतं कोलाहले नारके ॥ १२ ॥

मघायां महेशि ! धनं हन्ति मध्ये
महोल्लासवृद्धिं भयं तस्य शत्रोः ।
चितिचोरहन्तारमत्यन्तभावं
कुकामातुराणां सदा सङ्करम् ॥ १३ ॥

पूर्वफल्गुनिनक्षत्र-दूरगाणां फलं पठेत् ।
अतिधैर्य्यं शत्रुपक्ष-हानयो यान्ति निश्चितम् ॥ १४ ॥

कुलमुत्तरफल्गुन्यादियातगतिरीश्वरी ।
यदि देवपरो नाथ ! तदा सर्वत्र सुन्दरम् ॥ १५ ॥

हस्तामस्तकलज्जया शुभविलोकोऽत्र त्वये भाग्यदा
रक्ताङ्गी गतिचञ्चलामलगुणाह्लादेन दाता सदा ।
नित्यं हि प्रददाति रुक्मशतकं भक्ताय यज्ञार्थिने
नासूपान्नभोजनैरतिसुखी शङ्का न काचिद् भवेत् ॥ १६ ॥

ददाति वित्तं जगतीह चित्रा मनोरथव्याकुलतामलङ्कृता ।
कदाचिदेषा हि शरीरदुःखं न प्राप्नुयादीश्वरभक्तिमालभेत् ॥ १७ ॥

अश्लेषानाथ शुक्रो विषदमपि कदा नो ददाति प्रदुःखं
दक्षे पात्रविभावना भयहरा चण्डोग्रतापापहा ।
जीवः श्रीमानमोघं धनदमपि विधिं ब्राह्मणः पीतवर्णम्
पूर्वान्ता फल्गुनीशो विधुतनुजवरो नानवर्णः सुपुत्रम् ॥ १८ ॥

90

कुरुते बहुसुखवित्तं उत्तरफल्गुनीनाथो मङ्गलेन ।
हस्तायाः पतिश्चन्द्रो विभवमनन्तं चित्रेशो रविः ॥ ३९ ॥
अथ स्वातीयपत्रस्य नक्षत्राणि शृणु प्रभो ! ।
यासां वारविशिष्टानां प्रश्ननिष्कर्षसत्फलम् ॥ ४० ॥
स्वातीं रविः पाति महोग्रतेजसा विनाशकाले विपरीतबुद्धिदः ।
इन्दुर्विशाखां सुखदः प्रपाति कुजोऽनुराधां विपदां पराधीः ॥ ४१ ॥
बुधो हि पायात् सकलार्थसाधनीं
ज्येष्ठाञ्च मूलां सुखदः पातु जीवः ।
तथा धनार्थं प्रददाति शुक्रः
पूर्वान्वितापाढ़िकयाऽन्वितः सुखम् ॥ ४२ ॥
चतुर्थपत्रं वामस्थं महामङ्गलकारणम् ।
अथर्ववेदरूपं तत् सर्वदस्रकथाहृतम् ॥ ४३ ॥
विपरीते महद्दुःखं वर्णसौख्येऽपि हानयः ॥ ४४ ॥
भवन्ति तारका नाथ ! शुभद्रव्यादहोदयाः ॥ ४५ ॥
तत्तारकाणामगुणं शुभाशुभफलप्रदम् ।
प्रश्नवर्णसमूहानां मनमालोक्य निर्णयम् ॥ ४६ ॥
शनिः पालुत्तराषाढ़ां हानिरूपां विपादकाम् ।
दुःखदारिद्रासंयुक्तां देवनिष्ठेन बाधते ॥ ४७ ॥
रविः प्रपाति श्रवणां धनादिभिः प्रधानदेवाश्रयनिर्विकल्पाम् ।
तथा धनिष्ठां फलदां सुधीः शुभं कुजो विपत्तिं शतभिक् गणेशः ॥ ४८
पूर्वभाद्रपदानाथो बुधः काञ्चनवर्द्धनः ।
तथा लोकं महादेवो पूर्वभाद्रपदापतिः ॥ ४९ ॥
बृहस्पतिः सुखोल्लासं रेवतीशस्तथा भृगुः ।
ददाति परमाह्लादं स्वस्वपत्रस्थराशिभिः ॥ ५० ॥
अभिजित्तारकं पाति शनिः श्रीमान् धनप्रदः ॥ ५१ ॥
फलभागं मुदा दातुं शनीराजा मृगान्तिके ॥ ५२ ॥

तच्चान्ते मितिके सौख्यं वदन्ति परमप्रियम् ।
राहुराजा ग्रहाः चन्द्रे अभिजित् कालवेष्टितः ॥ ५३ ॥
तत् कालं सूक्ष्मतद्रूपं यो जानाति महीतले ।
सन्ध्याकालमिति ज्ञेयं शनीराहुः सुखं तयोः ॥ ५४ ॥
तत्सन्धिकालमेवं हि सत्त्वगुणमहोदयम् ।
तत् कुम्भकं विजानीयान्मदीयदेहसम्भवम् ॥ ५५ ॥
महासूक्ष्मक्षणं तद्धि कुण्डलीमण्डलं यथा ।
तस्याः प्रथमभागे च धारणाख्यः शनिः प्रभुः ॥ ५६ ॥
स्वयं ब्रह्मा मुदा भाति निरञ्जनकलेवरः ।
तस्मात् शेषे रेचनाख्यः सह्वावारं ग्रहः शुचिः ॥ ५७ ॥
राहुरूपी स्वयं शम्भुः पञ्चतत्त्वविधानवित् ।
कालरूपी महादेवो विकटास्यो भयङ्करः ॥ ५८ ॥
सर्वपापानलं हन्ति चन्द्ररूपी सुधाकरः ।
कृष्णवर्णः कालयमः पुण्यापुण्यनिरूपकः ॥ ५९ ॥
द्वयोर्मध्ये सूक्ष्मरूपा तड़ित्कोटिसमप्रभा ।
महासत्त्वाश्रिता देवी विष्णुमायाग्रहाऽऽश्रिता ॥ ६० ॥
अभिजित्तारका सूक्ष्मा सन्धिकाललया जया ।
कुम्भकाऽऽक्रान्तहृदया ग्रहचक्रपुरोगमा ॥ ६१ ॥
नक्षत्रमण्डलग्राम-मध्यस्था तिथिषोड़शी ।
अमामयी सूक्ष्मकला तरुणानन्दनिर्भरा ॥ ६२ ॥
अस्या आद्यभागसंस्थो ब्रह्मरूपी रजोगुणः ।
अस्याः शेषा कालरूपो तमोगुणलयप्रियः ॥ ६३ ॥
चन्द्रो ब्रह्मा शिवः सूर्यो महामायातनूत्तरः ।
आत्रेयी परमाशक्तिः सुषुम्नान्तरगामिनी ॥ ६४ ॥
मध्यस्थः ब्रह्मशिवयोर्विधिशास्त्रस्य सिद्धिदा ।
यैर्ज्ञायते सर्वसंस्था सर्वानन्दहृदि स्थिता ॥ ६५ ॥

तैरानन्दफलोपेतैः सत्त्वसम्भोगकारिणी ।
महाविष्णुर्महामाया चन्द्रतारास्वरूपिणी ॥ ६६ ॥
मुक्तिदा भोगदा भोग्या शम्भोराद्या महेश्वरी ।
अज्ञानवल्लता घोरा कालसंहारहंसिनी ॥ ६७ ॥
मन्दवायुप्रिया यस्य कल्पनार्थे च वीरहा ।
सा पाति जगतां लोकान् तस्याधीनमिदं जगत् ॥ ६८ ॥
नाकाले म्रियते कश्चिद् यदि जानाति वायवीम् ।
वायवी परमा शक्तिरिति तन्त्रार्थनिर्णयः ॥ ६९ ॥
सूक्ष्मागमनरूपेण सूक्ष्मसिद्धिं ददाति या ।
नराणां भजनार्थाय अष्टैश्वर्यजयाय च ॥
कथितं ब्रह्मणा पूर्वं सिद्धाय तनुजाय च ॥ ७० ॥
लोभमोहभयक्रोध-मदमात्सर्यकाय च ।
तत् क्रमात् परमा प्रीति-वर्द्धनं भूतले प्रभो ! ॥ ७१ ॥
आज्ञाचक्रस्य मध्ये तु वायवी परितिष्ठति ।
चन्द्रसूर्याग्निरूपा सा धर्माधर्मविवर्जिता ॥
मनोरूपा शरीरं हि व्याप्य तिष्ठति खेचरी ॥ ७२ ॥
आज्ञाद्विदलमध्ये तु चतुर्दशसमुदाहृतम् ।
वेददले वेदवर्णं वादिशान्तं महाप्रभम् ॥ ७३ ॥
तदग्निरूपसम्पन्नं ऋग्वेदादिसमन्वितम् ।
शृणु तत्त्वेन माहात्म्यं क्रमशः क्रमशः प्रभो ! ॥ ७४ ॥

इति श्रीरुद्रयामले उत्तरतन्त्रे भावप्रश्नार्थबोधनिर्णये आज्ञाचक्रसारसङ्केते भैरवी-भैरवसंवादे चतुर्दशः पटलः ॥ १४ ॥

पञ्चदशः पटलः ।

वेदप्रकरणम् ।—

देवकार्य्यात् वेदशाखा-पल्लवं प्रणवं परम् ।
वदामि परमानन्द ! भैरवाह्लाद ! मे शृणु ॥ १ ॥
आद्यपत्रे अकारञ्च ऋग्वेदं परमाक्षरम् ।
ब्रह्माण्यं तं विजानीयात् आद्यवेदार्थनिर्णयम् ॥ २ ॥
वेदेन लभ्यते सर्वं वेदाधीनमिदं जगत् ।
वेदमन्त्रविहीनो यः शक्तिविद्यां समभ्यसेत् ॥
स भवेद्धि कथं योगी कौलमार्गपरायणः ? ॥ ३ ॥

आनन्दभैरव उवाच ।—

ब्रह्मस्रोतं हि किं ? देवि ! ब्रह्मविद्या च कीदृशी ? ।
ब्रह्मज्ञानी च को वा स्यात् ? को वा ब्रह्मशरीरधृक् ? ॥ ४ ॥
तत्प्रकारं कुलानन्द-कारिणि ! प्रियकौलिनि ! ।
वद शीघ्रं यदि स्नेह-दृष्टिश्चेन्मयि सुन्दरि ! ॥ ५ ॥

आनन्दभैरव्युवाच ।—

तदेव ब्रह्मस्रोतञ्च वायवीशक्तिसेवनम् ।
सूक्ष्मरूपेण मग्ना या ब्रह्मविद्या प्रकीर्त्तिता ॥ ६ ॥
सदा वायुपानरस-सूक्ष्मान्नित्यप्रसन्नधीः ।
एकान्तभक्तिः श्रीनाथे ब्रह्मविद्या प्रकीर्त्तिता ॥ ७ ॥
अष्टाङ्गाभ्यासनिरतः सूक्ष्मसञ्चयकृत् शुचिः ।
सदा विवेकमत् कुर्यात् ब्रह्मज्ञानी प्रकीर्त्तितः ॥ ८ ॥
ब्रह्मानन्दहृदि श्रीमन् शक्तिं धारय वायवीम् ।
सदा भजति यो ज्ञानी ब्रह्मज्ञानी प्रकीर्त्तितः ॥ ९ ॥
विजयारससारेण विना वाह्यासवेन च ।
वायव्यानन्दसंयुक्तो ब्रह्मज्ञानी प्रकीर्त्तितः ॥ १० ॥

सदानन्दरसे मग्न: परिपूर्णकलेवर: ।
आनन्दाश्रुजलोन्मत्तो ज्ञातो ब्रह्मशरीरधृक् ॥ ११ ॥
एकान्तभक्ति: श्रीनाथे जीवात्मपरमात्मनि ।
विवेकी विचरेदेको ज्ञातो ब्रह्मशरीरधृक् ॥ १२ ॥
वायवीशक्तिमाश्रित्य सदा ध्यानपरायण: ।
वशी ज्ञानरसाच्छन्नो ज्ञातो ब्रह्मशरीरधृक् ॥ १३ ॥
शक्ति: कुण्डलिनी देवी जगन्मातास्वरूपिणी ।
प्राप्यते यै: सदा भक्त्या मुक्तेरेवागमं फलम् ॥ १४ ॥
आद्यपत्रे प्रतिष्ठन्ति वर्णजालसमाश्रिता: ।
वायवीशक्तय: कान्ता ब्रह्माण्डमण्डलस्थिता: ॥ १५ ॥
शशिनच्चवतिथिभि: सर्वदा जननायिका: ।
भ्रान्तिब्रह्मसिद्धये ता अवश्यमेवमाश्रयेत् ॥ १६ ॥
मासेन जायते सिद्धि: खेचरी वायुशोषणी ।
द्विमासे वज्रदेह: स्यात् क्रमेण वर्द्धयेत् समान् ॥ १७ ॥
द्विमासे कल्पसंयुक्तो यस्य सम्बन्धरूपत: ।
चैतन्या कुण्डलीशक्तिर्वायवीज्वलतेजसा ॥ १८ ॥
चैतन्या सिद्धिहेतुस्था ज्ञानमात्रं ददाति सा ।
ज्ञानमात्रेण मोक्ष: स्याद् वायवीज्ञानमाश्रयेत् ॥ १९ ॥
महाबली महावाग्मी वर्द्धते च दिने दिने ।
आयुर्वृद्धि: सदा तस्य जरामृत्युविवर्जित: ॥ २० ॥
कुण्डलीकृपया नाथ ! विना किञ्चिन्न सिध्यति ।
ब्रह्मा विष्णुश्च रुद्रश्च ईश्वरश्च सदाशिव: ॥ २१ ॥
तत: पर: शिवो देव ! वायवी परिकल्पिता ।
एते षट् शङ्करा: सर्व-सिद्धिदाश्चित्तसंस्थिता: ॥ २२ ॥
सर्वे तिष्ठन्ति पत्राग्राऽमृतधाररसाप्लुता: ।
अधोमुखा: सूक्ष्मरूपा: कोटिसूर्य्यसमप्रभा: ॥ २३ ॥

ब्रह्ममार्गस्थिता: सर्वे सन्ति षट्चक्रमण्डले ।
आज्ञया अध एवं हि चक्रं द्वादशकं स्मरेत् ॥ २४ ॥
गलितामृतधाराभिराप्लुतं कुण्डलीप्रियम् ।
आग्नेयीं कुण्डलीं मत्वा अधोधाराभितर्पणम् ॥ २५ ॥
प्रकुर्वन्ति परानन्द-रसिका: षट् शिवा: सदा ।
चन्द्रमण्डलसञ्जाता जीवरूपधराव्यया: ॥ २६ ॥
आत्मज्ञानसमासक्ता शक्तितर्पणतत्पर: ।
द्वितीयदलरूपं हि यजुर्वेदं कुलेश्वर ! ॥ २७ ॥
अकस्मात् सिद्धिकरणं विष्णुना परिमोलितम् ।
वज्रकोटिमहाध्वान-घोरनादसमाकुलम् ॥ २८ ॥
हरिमीश्वरमीशानं वासुदेवं सनातनम् ।
मन्त्राधिष्ठाननिलयं चतुर्वर्गफलप्रदम् ॥ २९ ॥
वाञ्छातिरिक्तदातारं कृष्णं योगीश्वरं प्रभुम् ।
राधिका राकिणी देवी वायवीशक्तिलालितम् ॥ ३० ॥
महाबलं महावीरं शङ्खचक्रगदाधरम् ।
पीताम्बरं सारभूतं यौवनामोदनाभितम् ॥ ३१ ॥
श्रुतिकन्यासमाक्रान्ता श्रीविद्या राधिका प्रभुम् ।
दैत्यदानवहन्तारं शरीरस्य सुखावहम् ॥ ३२ ॥
भावदं भक्तिनिलयं दयासागरचन्द्रकम् ।
गरुडासनमारूढं मनोरूपं जगन्मयम् ॥ ३३ ॥
यज्ञकर्मविधानज्ञं आज्ञाचक्रोपरि स्थितम् ।
अध:परामृतरस-पानोन्मत्तकलेवर: ॥ ३४ ॥
साधको योगनिरत: स्वाधिष्ठानगतं तथा ।
तदाकारं विभाव्याशु सिद्धिमाप्नोति शङ्कर ! ३५ ॥

आनन्दभैरव उवाच ।—

को वैष्णवो याज्ञिक: को धार्मिको वाऽपि को भुवि ? ।

को वा भवति योगी च तन्मे वद सुरेश्वरि ॥ ३६ ॥

आनन्दभैरव्युवाच ।—

याज्ञिकलक्षणम् ।—

शङ्कर ! शृणु वक्ष्यामि कालनिर्गमलक्षणम् ।

वैष्णवानां वैष्णवत्वं आज्ञाचक्रे फलाफलम् ॥ ३७ ॥

आज्ञाचक्रं महाचक्रं यो जानाति महीतले ।

तस्यासाध्यं त्रिभुवने किञ्चिदपि न विद्यते ॥

सदा शुचिर्ध्याननिष्ठो मुहुर्जाप्यपरायणः ॥ ३८ ॥

स्मृतिवेदक्रियायुक्तो विधिश्रुतिमनुप्रियः ।

ध्यात्वा यः कुरुते कर्म वैष्णवः परिकीर्त्तितः ॥ ३९ ॥

समता शत्रुमित्रेषु कृष्णभक्तिपरायणः ।

योगशिक्षापरो नित्यं वैष्णवः परिकीर्त्तितः ॥ ४० ॥

यजुर्वेदाख्यरसतो वेदाचारविचारवान् ।

सदा साधुषु संसर्गी वैष्णवः परिकीर्त्तितः ॥ ४१ ॥

विवेकधर्मविद्यार्थी कृष्णे चित्तं निधाय च ।

शिववत् कुरुते कर्म वैष्णवः परिकीर्त्तितः ॥ ४२ ॥

याज्ञिको ब्राह्मणो धीरो मनःप्रेमाभिलाषवान् ।

वनस्थो घोरविपिने नवीनतरुशोभिते ॥ ४३ ॥

एकाकी कुरुते योगं जीवात्मपरमात्मनोः ।

वायुवग्नी रेचकः सूर्य्यः पूरकश्चन्द्रमास्तथा ॥ ४४ ॥

ज्वलच्छिखा सूर्य्यरूपा न च योजनमेव च ।

पुनः पूरकयोगस्य चन्द्रस्य तेजसा हविः ॥ ४५ ॥

ऊर्द्ध्वविषज्वलन्मूर्द्धा वायवीयस्थलेऽपि च ।

योऽनिशं कुरुते होमं मौनी याज्ञिक उच्यते ॥ ४६ ॥

तीव्रसूर्य्याग्निकिरणे आत्मचन्द्राख्यपूरके ।

स्थाने यः कुरुते होमं याज्ञिकः परिकीर्त्तितः ॥ ४७ ॥

गुरुशक्तिः शिवो मांसं तद्भोक्ता भैरवः स्वयम् ।

शत्रून् जुहुयान्मांसं याज्ञिकः परिकीर्त्तितः ॥ ४८ ॥

चिच्छिवत् कुलकुण्डे च कुलवह्नौ शिवात्मकः ।

पूर्णहोमं यः करोति याज्ञिकः परिकीर्त्तितः ॥ ४९ ॥

भूमण्डले धर्मशीलो निर्जने कामवेश्मनि ।

दृढभक्त्या बीजसारं यो जपेत् स हि धार्मिकः ॥ ५० ॥

यत्ने लोष्ट्रसमं ज्ञानं धर्माऽधर्मे जयेऽजये ।

कृत्वा त्यागी भवेद् यस्तु ब्रह्मज्ञानी स धार्मिकः ॥ ५१ ॥

नित्यमीश्वरचिन्तायां गुरोराज्ञाश्रयस्थितः ।

सुशीलो दीनबन्धुश्च धार्मिकः परिकीर्त्तितः ॥ ५२ ॥

कालज्ञो विधिवेत्ता च अष्टाङ्गयोगविग्रहः ।

पर्वते कन्दरे मौनी भक्तो योगी प्रकीर्त्तितः ।

ब्रह्मज्ञानी चावधूतो कृती सिद्धो वशी शुचिः ।

वाञ्छाविहीनो धर्मात्मा स योगी परिकीर्त्तितः ॥ ५४ ॥

वाग्वादिनीजपापात्तं षड़ाधारस्य भेदकः ।

ऊर्द्ध्वरेताः स्त्रीविहीनः स योगी परिकीर्त्तितः ॥ ५५ ॥

यजुर्वेदपुरोगामी यजुःपत्रस्थवर्णधृक् ।

वर्णमालाचित्तजापी भावुकः स हि योगिराट् ॥ ५६ ॥

मासद्वादशकग्रस्तं राशिद्वादशकाऽन्वितम् ।

तिथिवारञ्च नक्षत्र-युक्ताज्ञाम्बुजं भजेत् ॥ ५७ ॥

दिक्कालदेशपश्वार्थ-वायवीशक्तिनिर्णयम् ।

बालवृद्धाऽस्तादिदण्ड-पलनिश्वाससंख्यया ॥

व्याप्तमाज्ञाचक्रसारं भजेत् परमपावनम् ॥ ५८ ॥

चक्रे सर्वं सुखदं सत्यं हानिर्न च प्रभो ! ।

खलानां विपरीतञ्च निन्दकानां पदे पदे ॥ ५९ ॥

दुःखानि प्रभवन्तीह पापिनाञ्च फलाफलम् ।

पार्श्वे [illegible] [illegible] ॥

[illegible] श्वासकाले [illegible] परिकीर्तितम् ॥ ११ ॥

श्वासकाले न [illegible] परिकीर्तिता ॥ १२ ॥

यजुर्वेदं सत्त्वगुणं [illegible] ।

गुरोराज्ञाक्रमेणैव [illegible] कुण्डलीम् ॥ १२ ॥

महाशक्तिं समाप्नोति [illegible] क्रमयोगतः ।

यजुर्वेदमहापात्र-सत्त्वाधिष्ठावसेवया ॥ १३ ॥

ललाटामृतधाराभिश्चैतन्या कुण्डली भवेत् ।

विभाव्य द्विदलं चक्रं होमं कुर्यादहर्निशम् ॥ १४ ॥

चतुर्दलस्थपूर्णेन्दु-सुधाधारापराप्लुतैः ।

शुद्धाज्यैर्जुहुयान्मन्त्री अधस्तुण्डेन कुण्डलीम् ॥ १५ ॥

[illegible] कुण्डलिन्द्रियशुद्धयोगिनं प्रचण्डरश्मिप्रणताङ्घ्र [illegible] ।

[illegible] पङ्कजं चक्रवरं चतुर्दलं यन्मध्यदेशे शतकोटितेजसम् ॥ १६ ॥

[illegible] श्रीरुद्रयामले उत्तरतन्त्रे महातन्त्रोद्दीपने भावनिर्णये पाशवकल्पे [illegible]

[illegible] चक्रसारसङ्केते [illegible] कमलचक्रस्य विदग्धवर्णोल्लासे

[illegible] भैरव-भैरवी संवादे पञ्चदशः पटलः ॥ १५ ॥

अथ षोडशः पटलः ।

आनन्दभैरव्युवाच ।—

आज्ञाचक्रसाधना ।—

शृणुष्वानन्दरुद्र ! त्वं तृतीयदललक्षणम् ।

सामवेदमधश्चक्रं तमोगुणनिराकुलम् ॥ १ ॥

वर्णजालादिनाऽऽक्रान्तं रुद्ररूपं महेश्वरम् ।

लयस्थानं कामरूपं परमानन्द [illegible] ॥ [illegible] ॥

वाङ्निर्वाणसुखस्थानं [illegible]

तत् स्थाने योगिनी [illegible]

[illegible] द्विदलाम्बुजे ।

[illegible] समीरास्यदभास्वरम् ॥ [illegible] ॥

[illegible] मनसा वाचा कर्मणा सूक्ष्मवायुना ।

[illegible] कृत्वा सदा ध्यायेत् सदा हर्षकलेवरः ॥ [illegible] ॥

सहस्रारे यथा ध्यानं तद्ध्यानं द्विदलाम्बुजे ।

गुरुमात्मानमीशानं देवदेवं सनातनम् ॥

अकस्मात् सिद्धिदातारं योगीच्छाङ्गफलप्रदम् ॥ [illegible] ॥

नित्यं शब्दमयं प्रमाविषयगं नित्योपमेयं गुरुं

चन्द्रोल्लासतनुप्रभं शतविधूल्लासस्य पङ्केरुहम् ।

[illegible] गतिस्थमचलं ज्ञानार्थनिर्लेपनं

[illegible] लयमयं स्वामोदनिष्ठं भजे ॥ [illegible] ॥

यदि भजेज्जगतामशनेश्वरं स्मरहरं गुरुमीश्वरमात्मनि ।

परमसुन्दरचन्द्रसमाकुलं निपतितात्यकुलाननसञ्चयम् ॥

प्रणमतां समतां कुरुते गुरोर्यदि भवान् विफलं परिहन्ति [illegible]

तव पदाम्बुजसङ्गतलीलया परिभजे भवसागरपारगम् [illegible] ॥

गुरुपदं सितपङ्कजराजितं कनकनूपुरसुन्दरखञ्जनम् ।

रचितचित्रचारुनखेन्दुकं भुवनभावनमाश्रये ॥ १० ॥

सकल [illegible] कोमलं विमलशोणितपङ्कजमिहिर [illegible]

पदतलं खलु निग्रहपालनं खचितरत्नधराचल [illegible] ॥ ११ ॥

सुकनकाञ्चितासनपङ्कजे परिभवं भवरागरसम्भवम् [illegible]

यदि कृपा भवति मयि पामरे वद्मा तव पादतलं भजे ॥ १२ ॥

परमहंसमनुं हरचापिनं ललोकवरं गुरुमीश्वरम् ।

सकलदीपितचन्द्र [illegible] करं वरगुरोर्मुखपङ्कजमाश्रये ॥ १३ ॥

[illegible] चक्रं भुवनकरणं [illegible] वलमयं

[illegible] च विमलम्

[illegible] श्यामोदमिलित [illegible]

[illegible]

[illegible]

दि[illegible]न्दुनिलये ध्यान [illegible] ॥

महार्वाङ्गे शिखाकारं तन्मध्ये चिन्तयेत् सुधीः ॥ १५ ॥

एतद् योगप्रसादेन वीजभाग् [illegible]

चिरजीवी भवेत् रुद्रो वागीशत्वमवाप्नुयात् ॥ १६ ॥

श्रीगुरोश्चरणाम्भोज-निःसृतं यत् [illegible] ।

तत्परामृतधाराभिः सन्तर्प्य कुलनायिकाम् ॥ १७ ॥

[illegible] पुनः [illegible] स्मरेत् सदा ।

[illegible] परासं धारयेत् [illegible] सुधीः ॥ १८ ॥

[illegible] परामृतधाराभिः सन्तर्प्य कुलनायिकाम् ।

[illegible] पुनः पुनः प्राच्यं सर्वपुण्यफलं [illegible] ॥ १९ ॥

[illegible] लक्ष्मीं प्राप्नोति [illegible] ।

[illegible] जयमाप्नोति युद्धे क्रोधे महाभये ॥ २० ॥

[illegible] स्थिरो याति सुधीरो [illegible] ।

[illegible] कथितं नाथ ! [illegible] ॥ २१ ॥

[illegible] खण्डस्य दलस्य कामरूपतः ।

[illegible] समवाप्नोति [illegible] भावयेद् [illegible] ॥ २२ ॥

[illegible] कामरूपं [illegible] ।

[illegible] श्मशानाधिपवेष्टितम् ॥ २३ ॥

[illegible]

[illegible] महाकालैः [illegible] ॥ २४ ॥

[illegible] कोटिसमं [illegible] तीक्ष्णदंष्ट्रं [illegible]

[illegible]

[illegible]

नासिकाग्रे भ्रुवोर्मध्ये आज्ञाचक्रे महाप्रभो ।

विद्याद्य परमं स्थानं तत् ज्ञानात्तन्मयो भवेत् ॥ २७ ॥

डाकिनीं भावयेत्तन्त्रीं रौरवादिविनाशिनीम् ।

कोटिसौदाम(मि)नीभासाममृतानन्दविग्रहाम् ॥ २८ ॥

अयुतेन्दुपूर्णशोभां हेमवाराणसीस्थिताम् ।

नानाऽलङ्कारशोभाङ्गीं नवयौवनशालिनीम् ॥ २९ ॥

पीनस्तनीं वल्लोन्मत्तां सर्वाधारस्वरूपिणीम् ।

दीर्घप्रणवजापेन तोषयन्तीं त्रिविक्रमम् ॥ ३० ॥

मौनां मनोमयीं देवीं सर्वविद्यास्वरूपिणीम् ।

महाकालीं महानीलां पीतवर्णां शशिप्रभाम् ॥ ३१ ॥

त्रिपुरसुन्दरीं वामां वामकामहरां शिवाम् ।

ध्यायेदेकासने वामे परनाथस्य पावनीम् ॥ ३२ ॥

सर्वाधारात्मिकां शक्तिं दुर्निवार्य्यां दुरत्ययाम् ।

श्वासमार्गेण वसयेत् कुलमार्गेण पण्डितः ॥ ३३ ॥

कुलाकुलविभागेन आत्मानं नीयते परा ।

श्वासाभ्यासं विना नाथ ! अष्टाङ्गाभ्यसनेन च ॥ ३४ ॥

विना दमेन धैर्य्येण कुलमार्गो न सिध्यति ।

तथा पूरकयोगेन रेचको नापि तिष्ठति ॥ ३५ ॥

विना कुम्भकसत्त्वेन यथैतौ नापि तिष्ठतः ।

तथा योगं विना नाथ ! अष्टाङ्गाभ्यसनं विना ॥ ३६ ॥

कुलमार्गो महातत्त्वो न सिध्यति कदाचन ।

कुलमार्गं विना मोक्षं कः प्राप्नोति महीतले ? ॥ ३७ ॥

कुलमार्गं न जानाति योगवाक्यागमाकुलम् ।

स कथं पूजयेद्देवीं तस्य योगः कथं प्रभो ! ॥ ३८ ॥

[illegible] वीरनाथानामाचारं यः करोति हि ।

[illegible] योग-[illegible] भवति निष्फलम् ॥ ३९ ॥

प्राणायामं महाधर्मं वेदानामप्यगोचरम् ।
सर्वपुण्यस्य सारं हि पापराशितुलानलम् ॥ ४० ॥
महापातककोटीनां तत्कोटीनाञ्च दुष्कृतम् ।
पूर्वजन्मार्जितं पापं नानादुष्कर्मपातकम् ॥ ४१ ॥
नश्यत्येव महादेव ! धन्यस्याभ्यासयोगतः ।
सन्ध्याकाले प्रभाते च यः करोति दिवानिशम् ॥ ४२ ॥
वशी षोडशसंख्याभिः प्राणायामान् पुनः पुनः ।
संवत्सरं वशी ध्यात्वा खेचरो योगिराड् भवेत् ॥ ४३ ॥
योगी भूत्वा कौलमार्गं समाश्रित्यामरो भवेत् ।
महाविद्यापतिर्भूत्वा विचरेत् साधकोत्तमः ॥ ४४ ॥

इति श्रीरुद्रयामले उत्तरतन्त्रे महामन्त्रोद्दीपने भावनिर्णये पाशववाक्ये षट्चक्रसारसङ्केते सिद्धमन्त्रप्रकरणे वेदभाषाप्रकाशे भैरवी-भैरवसंवादे षोडशः पटलः ॥ १६ ॥

अथ सप्तदशः पटलः ।

अथर्ववेदप्रशंसा ।—

अथ वक्ष्ये महादेव ! अथर्ववेदलक्षणम् ।
सर्ववर्णस्य सारं हि शक्त्याचारसमन्वितम् ॥ १ ॥
अथर्ववेदादुत्पन्नः सामवेदस्तमोगुणः ।
सामवेदाद् यजुर्वेदो महासत्त्वसमुद्भवः ॥ २ ॥
रजोगुणमयो ब्रह्मा ऋग्वेदो यजुषि स्थितः ।
मृणालसूत्रसदृशी अथर्ववेदरूपिणी ॥ ३ ॥
अथर्वे सर्वदेवाश्च जलखेचरभूचराः ।
निवसन्ति कामविद्या महाविद्या महर्षयः ॥ ४ ॥

समाप्तिपर्वशेषार्थमसीमं लोकमण्डले ।
शक्तिचक्रसमाक्रान्तं दिव्यभावात्मकं शुभम् ॥ ५ ॥
तत्रैव वीरभावञ्च तत्रैव पशुभावकम् ।
सर्वभावात् परं तत्त्वं अथर्ववेदपत्रकम् ॥ ६ ॥
द्विबिन्दुनिलयस्थानं ब्रह्मविष्णुशिवात्मकम् ।
चतुर्वेदान्वितं तत्त्वं शरीरं दृढनिर्मितम् ॥ ७ ॥
चतुर्विंशतितत्त्वानि सन्ति पात्रे मनोहरे ।
ब्रह्मा रजोगुणाऽऽक्रान्तः पूरकेणाभिरक्षति ॥ ८ ॥
विष्णुः सत्त्वगुणाऽऽक्रान्तः कुम्भकैः स्थिरभावनैः ।
हरस्तमोगुणाऽऽक्रान्तो रेचकेणापि विग्रहः ॥ ९ ॥
अथर्ववेदचक्रस्था कुण्डली परदेवता ।
एतस्यां पृथिव्यां हि ब्रह्मविष्णुशिवैः कृताम् ॥ १० ॥
शरीरे देवनिलये भक्तो ज्ञात्वा प्रमुच्यति ।
सर्वदेवमयी देवी सर्वमन्त्रस्वरूपिणी ॥ ११ ॥
सर्वमन्त्रात्मिका विद्या वेदविद्याप्रकाशिनी ।
चैतन्या सर्वधर्मज्ञा अधर्मस्थानवासिनी ॥ १२ ॥
अचैतन्या ज्ञानरूपा हेमचम्पकमालिनी ।
अकलङ्का निराधारा शुद्धज्ञानमनोभवा ॥ १३ ॥
सर्वसङ्कटहन्त्री च सा शरीरं प्रपाति हि ।
तस्याः कार्यमिदं विश्वं तस्याः पुण्यानि सन्ति च ॥ १४ ॥
तस्याश्चैतन्यकरणे सर्वदाऽऽकुलचेतसः ।
महात्मानः प्रसिध्यन्ति यदि कुर्वन्ति चेतनाम् ॥ १५ ॥
तस्या ह्यनुग्रहादेव किं न सिध्यति भूतले ? ।
धन्यस्याभ्यासयोगेन चैतन्या कुण्डली भवेत् ॥ १६ ॥
सा देवी वायवी शक्तिः परमाकाशरूपिणी ।
तारिणी देवमाता च शक्तिर्याति दिने दिने ॥ १७ ॥

द्वादशाङ्गुलमानेन वायुः चरति नित्यशः।
द्वादशाङ्गुलवायुश्च चयं कुर्य्यात् दिने दिने ॥ १८ ॥
यावद् यावद्वहिर्याति कुण्डली परदेवता।
तावत्तावत् खण्डलयं भवाब्धिपापमोचणम् ॥ १९ ॥
यदा यदा न चरति वायवी सूक्ष्मरूपिणी।
बाह्यचन्द्रे महादेव! आग्नेयी सूर्य्यमण्डले ॥ २० ॥
मूलाधारे कामरूपे ज्वलन्ती चण्डिका शिखा।
यदा शिरोमण्डले च सहस्रदलपङ्कजे ॥ २१ ॥
तेजोमयी सदा याति शिवं कामेश्वरं प्रभुम्।
अच्युताख्यं महादेवं तदा ज्ञानी स योगिराट् ॥ २२ ॥
यदि चरति सा देवी बाह्यचन्द्रे मनोलये।
तदा योगं समाकुर्य्याद् यावत् शीर्षेण गच्छति ॥ २३ ॥
यदि शीर्षे समागम्याऽमृतपानं करोति सा।
वायवी सूक्ष्मदेहस्था सूक्ष्मालयप्रिया सती ॥ २४ ॥
तदैव परमा सिद्धिर्भक्तिमार्गे न संशयः।
चतुर्वेदज्ञानसार अथर्वः परिकीर्त्तितः ॥ ॥ २५ ॥
अथर्ववेदविद्या च देवता वायवी मता।
तस्याः सेवनमात्रेण रुद्ररूपो भवेन्नरः।
केवलं कुम्भकस्थाया एका ब्रह्मप्रकाशिनी ॥ २६ ॥

भैरव उवाच।—

केन वा वायवीशक्ति-कृपा भवति पार्वति!।
स्थिरचेता भवेत् केन? विवेको वा कथं भवेत्? ॥ २७॥
मन्त्रसिद्धिर्भवेत् केन? कायसिद्धिः कथं भवेत्?।
विस्तार्य्य वद चामुण्डे! यदि स्नेहोऽस्ति मां प्रति ॥ २८ ॥

आनन्दभैरव्युवाच।—

शृणुष्वैकमनाः शम्भो! मम प्राणकुलेश्वर!।

एकवाक्येन सकलं कथयामि समासतः ॥ २९ ॥

प्राणायामप्रणाली।—

श्रद्धया परया भक्त्या मनो नियमतत्परः।
स प्राप्नोति परां शक्तिं वायवीं सूक्ष्मगामिनीम् ॥ ३० ॥
धीरः क्षान्तो मिताहारी शान्तियुक्तो यतिर्महान्।
सत्यवादी ब्रह्मचारी दयाधर्मसुखोदयः ॥ ३१ ॥
मनसः संयमज्ञानी दिगम्बरकलेवरः।
सर्वत्र समबुद्धिश्च परमाणुविचारवित् ॥ ३२ ॥
वरशय्या भूमितले वायवी परमामृता।
य एव पिबति क्षिप्रं तत्रैव वायवी कृपा ॥ ३३ ॥
गुरुसेवापरे धीरे शुद्धसत्त्वतनुप्रभे।
भक्ते अष्टाङ्गनिरते वायवी सुकृपा भवेत् ॥ ३४ ॥
अतिथिं भोजयेद् यस्तु न भुङ्क्ते स्वयमेव च।
सर्वपापविनिर्मुक्तो प्राप्नोति वायवीं कृपाम् ॥ ३५ ॥
अन्तरात्मा महात्मा यः कुरुते वायुधारणम्।
देवे गुरौ सत्यबुद्धिर्वायवी सुकृपा ततः ॥ ३६ ॥
एककालो वृथा याति नैव यस्य महेश्वर!।
वायव्यां चित्तमाधाय तत्रानिलकृपा भवेत् ॥ ३७ ॥
विचरन्ति महीमध्ये योगशिक्षानिबन्धनम्।
प्राणायामेच्छुको यो वा वायवी सुकृपा ततः ॥ ३८ ॥
प्रतिवत्सरमानेन पीठे पीठे वसन्ति ये।
वायवीं प्रजपन्तीह वायवी सुकृपा ततः ॥ ३९ ॥
अल्पाहारी नीरोगश्च विजयानन्दनन्दितः।
वायवीभजनाद् योगी वायवी सुकृपा भवेत् ॥ ४० ॥
अन्तर्यागे पीठचक्रे चित्तमाधाय यत्नतः।
ध्याननिष्ठो धारणाख्यो वायवी सुकृपा ततः ॥ ४१ ॥

पशुभावसमाक्रान्तः सदा रेतोविवर्जितः ।
शुचिर्मैथुनहीनश्च वायवी सुरूपा ततः ॥ ४२ ॥
अकालेऽपि सुकालेऽपि नित्यं धारणतत्परः ।
योगिनामपि सङ्गी यो वायवी सुरूपा ततः ॥ ४३ ॥
बन्धुबान्धवहीनश्च विवेकाऽऽक्रान्तमानसः ।
शोकाशोके समं भावं वायवी सुरूपा ततः ॥ ४४ ॥
सदाऽऽनन्दहृदयः कालज्ञो योगसाधनः ।
मौनधारणजापश्च वायवी सुरूपा ततः ॥ ४५ ॥
निर्जनस्थाननिरतो निश्चेष्टो दीनवत्सलः ।
बहुजल्पनशून्यश्च स्थिरचेताः प्रकीर्त्तितः ॥ ४६ ॥
हास्यसन्तोषहिंसादि-रहितः पाठपारगः ।
योगशिक्षासमाश्रयैः स्थिरचेताः प्रकीर्त्तितः ॥ ४७ ॥
कामशास्त्रकलाज्ञान-रहितः स्थिरभावनः ।
अल्पाहारी निर्विकल्पो स्थिरचेताः प्रकीर्त्तितः ॥ ४८ ॥
कलौ श्रीकालिकापीठे कामरूपे सुमन्त्रवित् ।
पीत्वा वायुं जपेद् यस्तु स्थिरचेताः प्रकीर्त्तितः ॥ ४९ ॥
सत्कुलागमभावज्ञो महाविद्यादिमन्त्रवित् ।
शुद्धभक्तियुतः शान्तः स्थिरचेताः प्रकीर्त्तितः ॥ ५० ॥
मूलाधारे कामरूपे हृदि जालन्धरे तथा ।
ललाटे पूर्णगिर्य्याख्यो उड्डीयाने तु तद्वकः ॥ ५१ ॥
वाराणस्यां भ्रुवोर्मध्ये ज्वलन्त्यां लोचनत्रये ।
मायाख्ये सुखवृत्ते चान्यषड़ष्टपुरे तथा ॥ ५२ ॥
अयोध्यायां नाभिदेशे कन्यां काञ्चयां महेश्वर ! ।
पीठेषु तेषु भूलोके चित्तमाधाय यत्नतः ॥ ५३ ॥
उदरे पूरयेद्वायुं सूक्ष्मसङ्केतभाषया ।
पादगुल्फे च जङ्घायां जानुयुग्मे च मूलके ॥ ५४ ॥

चतुर्दले षड्दले च तथा दशदले शुभे ।
दले द्वादशके ह्यङ्के सिद्धिसिद्धान्तसङ्कुले ॥ ५५ ॥
कण्ठे षोड़शपत्रे च द्विदले पूर्णतेजसि ।
कैलासाख्ये ब्रह्मरन्ध्र-पदे निर्मलतेजसि ॥ ५६ ॥
सहस्रारे महापद्मे कोटिकोटिविधुप्रभे ।
चालयित्वा महावायुं कुम्भयित्वा पुनः पुनः ॥ ५७ ॥
पूरयित्वा रेचयित्वा लोकमुखाद्विनिर्गतः ।
त्रीणि कोट्यर्द्धकोटीनि यानि लोमानि मानुषे ॥ ५८ ॥
नाड़ीमुखानि सर्वाणि घर्मबिन्दुश्च तत्र हि ।
यावत्तद्विन्दुपातश्च तावत्कालं लयं स्मृतम् ॥ ५९ ॥
तावत्कालं प्राणयोगात् प्रस्वेदाऽधमसिद्धिदम् ।
सूक्ष्मवायुसेवया च किन्न सिध्यति भूतले ? ॥ ६० ॥
लोमकूपे मनो दद्यात् लयस्थाने मनोरमे ।
स्थिरचेता भवेत् शीघ्रं नात्र कार्य्या विचारणा ॥ ६१ ॥
वायुसेवां विना नाथ ! कथं सिद्धिर्भवेद्भवे ? ।
स्थिरचित्तं विना नाथ ! मध्यमापि न जायते ॥ ६२ ॥
स्थाने स्थाने मनो दत्त्वा वायुना कुम्भकेन च ।
धारयेन्मारुतं मन्त्री कालज्ञानी दिवानिशम् ॥ ६३ ॥
एकान्तनिर्जने स्थित्वा स्थिरचेता भवेद् ध्रुवम् ।
स्थिरचित्तं विना शम्भो ! सिद्धिः स्यादुत्तमा कथम् ? ॥ ६४ ॥
निवार्य्य पार्थिवकसंज्ञकाले यत्नेन धैर्य्यात् यतिरीश्वरत्वम् ।
प्राप्नोति मासत्रयसाधनेन विषासवं भोक्तुमना समर्थः ॥ ६५ ॥
मासत्रयाभ्याससुसञ्चयेन स्थिरेन्द्रियः स्यादधमादिसिद्धिः ।
सा खेचरीसिद्धिरथ प्रबुद्धा चतुष्टये मासि भवेद्धि कल्पनम् ॥ ६६ ॥
तदाधिकारी पवनाशनोऽसौ स्थिरासनानन्दसुचेतसामसौ ।
प्रकल्पने सिद्धियथार्थगामिनीमुपैति शीघ्रं वरवीरभावम् ॥ ६७ ॥

99

सा वायवीशक्तिरनन्तरूपिणी लोमावलीनां कुहरे महासुखम्।
ददाति सौख्यं गतिचञ्चलं जयं स्थिराशयत्वं मतिशास्त्रकोविदाम्॥६८
षण्मासयोगासननिष्ठदेहो वायुश्रमानन्दरसाप्तविग्रहः।
विहाय कल्पान्वितयोगभावं मृत्युागमाकालमसौ समर्थः॥ ६९ ॥

स्थिरचेता महासिद्धिं प्राप्नोति नात्र संशयः।
संवत्सरकृताभ्यासे महाखेचरतां व्रजेत्॥ ७० ॥
यावन्निर्गच्छति प्रोता वायवी शक्तिरुत्तमा।
नासाग्रमवधार्य्यैव स्थिरचेता महामतिः॥ ७१ ॥
चण्डवेशा यदा चिप्रमन्तरालं न गच्छति।
सर्वत्रगामिनो भावान् तावत्कालं विचक्षणः॥ ७२ ॥
यदि शीर्षादूर्द्ध्वदेशे द्वादशाङ्गुलकोपरि।
गन्तुं समर्थो भगवान् शिवतुल्यो गणेश्वरः॥ ७३ ॥
सर्वत्रगामी प्रभवेत् खेचरो योगिराड् बली।
इति सिद्धिर्वत्सरे स्यात् स्थिरचित्तेन शङ्कर!॥ ७४ ॥
योगी भूत्वा मनः स्थैर्य्यं न करोति यदा भुवि।
कृच्छ्रेण पदमारुह्य प्रपतेन्नारकी यथा॥ ७५ ॥
अतएव महाकाल! स्थिरचेता भव प्रभो!।
तदानीं प्राप्स्यसि चिप्रं वायवीमष्टसिद्धिदाम्॥ ७६ ॥
यदि सिद्धो भवेद्भूमौ वायवीसुकृपादिभिः।
तदा शिव! स्थिरो भूत्वा गोपयेन्मातृजारवत्॥ ७७ ॥
यदा यदा महादेव! योगाभ्यासं करोति यः।
शिष्येभ्योऽपि सुतेभ्योऽपि दत्त्वा कार्य्यं करोति यः॥७८॥
तदैव स महासिद्धिं प्राप्नोति नात्र संशयः।
संवत्सरं चरेद्धर्मं योगमार्गं हि दुर्गमम्॥ ७९ ॥
प्रकाशयेन्न कदापि कृत्वा मृत्युमवाप्नुयात्।
योगयोगाङ्गवेन्मोक्षो मन्त्रसिद्धिरखण्डिता॥ ८० ॥

न प्रकाश्यमतो योगं भुक्तिमुक्तिफलाय च।
नित्यं सुखं महाधर्मं प्राप्नोति वत्सराद्वहिः॥ ८१ ॥
आत्मसुखं नित्यसुखं मन्त्रं यन्त्रं तथागमम्।
प्रकाशयेन्न कदाऽपि कुलमार्गं कुलेश्वर!॥ ८२ ॥
यद्येवं कुरुतेऽधर्मं तदा मरणमाप्नुयात्।
योगभ्रष्टो विधानज्ञो जडो मृत्युमवाप्नुयात्॥ ८३ ॥
येन मृत्युवशो याति तत्कार्य्यं नापि दर्शयेत्॥ ८४ ॥
दत्तात्रेयो यथा योगी शुको नारद एव च।
कृतं येन सिद्धमन्त्र वर्णजालं कुलार्णवम्॥
एतेन लोकनाथेन योगमार्गपरेण च॥ ८५ ॥
तथा मङ्गलकार्य्येण ध्यानेन साधकोत्तमः।
उत्तमां सिद्धिमाप्नोति वत्सराद्योगशासनात्॥ ८६ ॥
आदौ वै ब्रह्मणो ध्यानं पूरकाऽष्टाङ्गलक्षणैः।
कुर्य्यात् सकलसिद्ध्यर्थमाम्बिकापूजनेन च॥ ८७ ॥
ऋग्वेदं चेतसि ध्यात्वा मूलाधारे चतुर्दले।
वायुना चन्द्ररूपेण धारयेन्मारुतं सुधीः॥ ८८ ॥
अथर्वान्निर्गतं सर्वं ऋग्वेदादिचराचरम्।
तेन पूर्णचन्द्रमसा जीवेनाद्यामृतेन च॥
जुहुयादेकभावेन कुण्डली सूर्य्यगामिने॥ ८९ ॥
कुम्भकं कारयेन्मन्त्री यजुर्वेदपुरःसरम्।
सर्वसत्त्वाधिष्ठितं तत् सर्वविज्ञानमुत्तमम्॥ ९० ॥
वायव्याः पूर्णसंस्थानं योगिनामभिधायकम्॥ ९१ ॥
पुनः पुनः कुम्भयित्वा सत्त्वनिर्मलतेजसि।
महाप्रलयसारज्ञो भवतीति न संशयः॥ ९२ ॥
रेचकं शम्भुना व्याप्तं तमोगुणमनोलयम्।
सर्वमृत्युकुलस्थानं व्याप्तधर्मफलाफलैः॥ ९३ ॥

पुनः पुनः चोभनिष्ठो रेचकेन प्रवर्त्तते।
रेचकेन लयं याति रेचनेन परं पदम् ॥ ९४ ॥
प्राप्नोति साधकश्रेष्ठो रेचकेनापि सिद्धिभाक्।
रेचकं वह्निरूपञ्च कोटिवह्निशिखोज्ज्वलम् ॥ ९५ ॥
द्वादशाङ्गुलमध्यस्थं ध्यात्वा राज्ये लयं दिशेत्।
चन्द्रव्याप्तं सर्वलोकं सर्वपुण्यमसुद्भवम् ॥ ९६ ॥
रेचकाग्निस्तिष्ठतीह वायुसख्यो महाबली।
तत् शशाङ्कजीवरूपं पीत्वा जीवति वायवी ॥ ९७ ॥
आग्नेयी दह्यते चिप्रं एष होमः परो मतः।
एतत् कार्य्यं यः करोति स न मृत्युवशो भवेत् ॥ ९८ ॥
एतयोः सन्धिकालञ्च कुम्भकं सत्त्वसाधनम्।
तदेव भावकालञ्च परमस्थानमेव च ॥ ९९ ॥
महाकुम्भकलाकृत्ये स्थिरं स्थित्वा च कुम्भके।
अथर्वगामिनीं देवीं भावयेदमरो महान् ॥ १०० ॥
अनन्तभावनं शम्भोरशेषसृष्टिशोभितम्।
अथर्वं भावयेन्मन्त्री शक्तिचक्रक्रमेण तु ॥ १०१ ॥
आज्ञाचक्रे वेददले चतुर्दलसुमन्दिरे।
अथर्वयोगिनीं ध्यायेत् समाधिस्थेन चेतसा ॥ १०२ ॥
तत्राच्युताख्यं जगतामीश्वरं शीर्षपङ्कजे।
प्रपश्यन्ति जगन्नाथं नित्यमुख्यसुखोदयम् ॥ १०३ ॥
आज्ञाचक्रे शोधनं हि चाथर्वपरिकीर्त्तितम्।
ज्योतिश्चक्रञ्च तन्मध्ये योगमार्गोक्तसद्विलम् ॥ १०४ ॥
प्रपश्यति महाज्ञानी सूक्ष्मदृश्या यथाम्बुजम्।
कालेन सिद्धिमाप्नोति ब्रह्मज्ञानी च साधकः ॥ १०५ ॥
ततो भजेत् कौलमार्गं ततो विद्यां प्रपश्यति।
महाविद्यां कोटिसूर्य्य-ज्वालामालासमाकुलाम् ॥ १०६ ॥

एतत्तत्त्वं विना नाथ! न पश्यति कदाचन ॥ १०७ ॥

वशिष्ठस्य तपस्याप्रसङ्गः।—

वशिष्ठो ब्रह्मपुत्रोऽपि चिरकालं सुसाधनम्।
चकार निर्जने देशे कष्टेण तपसा वशी ॥ १०८ ॥
वत्सरं शतसहस्रं व्याप्य योगादिसाधनम्।
तथाऽपि साक्षाद्विज्ञानं न बभूव महीतले ॥ १०९ ॥
ततो जगाम क्रुद्धोऽसौ तातस्य निकटे प्रभुः।
सर्वं तत् कथयामास स्वीयाचारक्रमं प्रभो! ॥
अन्यमन्त्रं देहि नाथ! एषा विद्या न सिद्धिदा ॥ ११० ॥
अन्यथा सुदृढं शापं तवाग्रे प्रददामि हि।
ततस्तं वारयामास एवं न कुरु भो सुत! ॥ १११ ॥
पुनस्तां भज भावेन योगमार्गेण पण्डित।
ततः सा वरदा भूत्वा ह्यागमिष्यति तेऽग्रतः ॥ ११२ ॥
सा देवी परमा शक्तिः सर्वसङ्कटतारिणी।
कोटिसूर्य्यप्रभा नीला चन्द्रकोटिसुशीतला ॥ ११३ ॥
शिवविद्युल्लताकोटि-सदृशी कालकामिनी।
सा पाति जगतां लोकान् तस्याः कर्म चराचरम् ॥ ११४ ॥
भज पुत्र! स्थिरोऽनन्तां कथं सुप्तः सुशिचितः?।
एकान्तचेतसा नित्यं भज पुत्र! दयानिधे! ॥
तस्या दर्शनमेवं हि अवश्यं समवाप्स्यसि ॥ ११५ ॥
एतत् श्रुत्वा गुरोर्वाक्यं प्रणम्य च पुनः पुनः।
जगाम च तपः कर्त्तुं ततो वेदान्तवित् शुचिः ॥
सहस्रवत्सरं सम्यक् जजाप परमं जपम् ॥ ११६ ॥
देवी तुष्टा(श्रोटिशिरोऽपि) न बभूव ततः क्रोधपरो मुनिः।
व्याकुलात्मा महाविद्यां वशिष्ठः शप्तुमुद्यतः ॥ ११७ ॥
भयङ्करं महाशापं प्रदातुञ्च सुदारुणम्।

क्रुद्धस्य च वशिष्ठस्य मुनेरग्रे कुलेश्वरी ॥ ११८ ॥
आजगाम महाविद्या योगिनामभयप्रदा ।
अकारणमरे विप्र ! शापो दत्तः सुदारुणः ॥ ११९ ॥
मम सेवां न जानासि मत्कुलागमचिन्तनम् ।
कथं योगाभ्यासवशात् मत्पादाम्भोजदर्शनम् ? ॥ १२० ॥
प्राप्नोषि मानुषो भूत्वा मम ध्यानं हि दुःखदम् ।
यः कुलार्थी सिद्धमन्त्रो भवदाचारनिर्मलः ॥
प्राप्नोति साधनं मुख्यं वेदानामप्यगोचरम् ॥ १२१ ॥
बौद्धदेशेऽथर्ववेदे महाचीने सदा व्रज ॥ १२२ ॥
तत्र गत्वा महाभावं विलोक्य मत्पदाम्बुजम् ।
मत्कुलज्ञो महर्षे ! त्वं महासिद्धो भविष्यसि ॥ १२३ ॥
एतद्वाक्यं कथित्वा सा वायव्याकाशवाहिनी ।
निराकाराभवत् शीघ्रं स्वतः साकाशवाहिनी ॥ १२४ ॥

वशिष्ठस्य महाचीने गमनम् ।—

ततो मुनिवरः श्रुत्वा महाविद्यासरस्वतीम् ।
जगाम चीनभूमौ च यत्र बुद्धः प्रतिष्ठति ॥ १२५ ॥
पुनः पुनः प्रणम्यासौ वशिष्ठः क्षितिमण्डले ।
रक्ष रक्ष महादेव ! बुद्धरूपधराव्यय ! ॥ १२६ ॥
अतिदीनं वशिष्ठं मां सदा व्याकुलचेतसम् ।
ब्रह्मपुत्रं महादेवी-साधनायागतं खलु ॥ १२७ ॥
सिद्धिमार्गं न जानामि वेदमार्गपरो ह्यहम् ।
तवाचारं समालोक्य शङ्का हि सन्ति मे हृदि ॥ १२८ ॥
तन्नाशय मम क्षिप्रं दुर्बुद्धिं वेदगामिनीम् ।
वेदबहिष्कृतं कर्म सदा ते चालये प्रभो ! ॥ १२९ ॥
कथमेतत् प्रकारश्च ? मद्यं मांसं तथाऽङ्गनाम् ।
सर्वे दिगम्बराः सिद्धा रक्तपानोद्यता वराः ॥ १३० ॥

मुहुर्मुहुः प्रपिबन्ति रमयन्ति वराङ्गनाम् ।
सदा मांसासवैः पूर्णा मत्ता रक्तविलोचनाः ॥ १३१ ॥
निग्रहानुग्रहे शक्ताः पूर्णान्तःकरणोद्यताः ।
वेदस्यागोचराः सर्वे मद्यस्त्रीसेवने रताः ॥ १३२ ॥
इत्युवाच महायोगी दृष्ट्वा वेदबहिष्कृतम् ।
प्राञ्जलिर्विनयाविष्टो वद चैतत् कुलं प्रभो ! ॥ १३३ ॥
मनःप्रवृत्तिरेतेषां कथं भवति पावन ! ।
कथं वा जायते सिद्धिर्वेदकार्यं विना प्रभो ! ॥ १३४ ॥

महाचीनाचारः ।—

बुद्ध उवाच ।—

वशिष्ठ ! शृणु वक्ष्यामि कुलमार्गमनुत्तमम् ।
येन विज्ञानमात्रेण रुद्ररूपी भवेत् क्षणात् ॥ १३५ ॥
संक्षेपेण सर्वसारं कुलसिद्ध्यर्थमागमम् ।
आदौ शुचिर्भवेद्धीरो विवेकाऽऽक्रान्तमानसः ॥ १३६ ॥
पशुभावस्थिरचेताः पशुसङ्गविवर्जितः ।
एकाकी निर्जने स्थित्वा कामक्रोधादिवर्जितः ॥ १३७ ॥
दमयोगाऽभ्यासरतो योगशिक्षो दृढव्रतः ।
वेदमार्गाऽऽश्रयो नित्यं वेदार्थनिपुणो महान् ॥ १३८ ॥
एवं क्रमेण धर्मात्मा शीलौदार्यगुणान्वितः ।
धारयेन्मारुतं नित्यं श्वासमार्गे मनोलयम् ॥ १३९ ॥
एवमभ्यासयोगेन वशी योगी दिने दिने ।
शनैः शनैः क्रमाभ्यासाद्देहे स्वेदोद्भवोऽधमः ॥ १४० ॥
मध्यमः कम्पसंयुक्तो भूमित्यागः परो मतः ।
प्राणायामेन सिद्धिः स्यान्नरो योगेश्वरो भवेत् ॥ १४१ ॥
योगी भूत्वा कुम्भकज्ञो मौनी भक्तो दिवानिशम् ।
शिवे कृष्णे ब्रह्मपदे एकान्तभक्तिसंयुतः ॥ १४२ ॥

ब्रह्मविष्णुशिवा एते वायवीगतिचञ्चलाः ।
एवं विभाव्य मनसा कर्मणा वचसा शुचिः ॥ १४३ ॥
शक्तौ चित्तं समाधाय चिद्रूपायां स्थिराशयः ।
ततो महावीरभावं कृतमार्गमहोदयम् ॥ १४४ ॥
शक्तिचक्रं सत्त्वचक्रं वैष्णवं नवविग्रहम् ।
समाश्रित्य भजेन्मन्त्री कुलकात्यायनीं पराम् ॥ १४५ ॥
प्रत्यक्षदेवतां शोदां चण्डोग्रेगनिकृन्तनीम् ।
चिद्रूपां ज्ञाननिलयां चैतन्यानन्दविग्रहाम् ॥ १४६ ॥
कोटिसौदाम(मि)नीभासां सर्वतत्त्वस्वरूपिणीम् ।
अष्टादशभुजां रौद्रीं शिववासाऽचलप्रियाम् ॥ १४७ ॥
आश्रित्य प्रजपेन्मन्त्रं कुलमार्गाश्रयी नरः ।
कुलमार्गात् परं मार्गं को जानाति जगत्त्रये ? ॥ १४८ ॥
एतन्मार्गप्रसादेन ब्रह्मा स्रष्टा स्वयं महान् ।
विष्णुश्च पालने शक्तो निर्मलः सत्त्वरूपधृक् ॥ १४९ ॥
सर्वसेव्यो महापूज्यो यजुर्वेदाधिपो महान् ।
हरः संहारकर्त्ता च विवेशो मत्तमानसः ॥ १५० ॥
सर्वः समान्तकः क्रोधी क्रोधराजो महाबली ।
वीरभावप्रसादेन दिक्पाला रुद्ररूपिणः ॥ १५१ ॥
वीराधीनमिदं विश्वं कुलाधीनञ्च वीरकम् ।
अतः कुलं समाश्रित्य सर्वसिद्धीश्वरो भव ॥ १५२ ॥
मासेनाकर्षणं सिद्धिर्द्विमासे वाक्पतिर्भवेत् ।
मासत्रयेण संयोगाज्जायते सुरवल्लभः ॥ १५३ ॥
एवं चतुष्टये मासि भवेद्दिक्पालगोचरः ।
पञ्चमे पञ्चवाणः स्यात् षष्ठे रुद्रो भवेद् ध्रुवम् ॥ १५४ ॥
एतदाचारसारं हि सर्वेषामप्यगोचरम् ।
एतन्मार्गं कौलमार्गं कौलमार्गात् परं न हि ॥ १५५ ॥

योगिनां दृढचित्तानां भक्तानामिकमासतः ।
कार्यसिद्धिर्भवेन्नारी-कुलमार्गप्रसादतः ॥ १५६ ॥
पूर्णयोगी भवेद्विप्रः सन्न्यासाऽभ्यासयोगतः ।
शक्तिं विना शिवोऽशक्तः किमन्ये जड़बुद्धयः ॥ १५७ ॥
इत्युक्त्वा बुद्धरूपी च कारयामास साधनम् ।
कुरु विप्र ! महाशक्ति-सेवनं मद्यसाधनम् ॥ १५८ ॥
महाविद्यापदाम्भोज-दर्शनं समवाप्स्यसि ।
एतत् श्रुत्वा गुरोर्वाक्यं स्मृत्वा देवीं सरस्वतीम् ॥ १५९ ॥
मदिरासाधनं कर्त्तुं जगाम कुलमण्डले ।
मद्यं मांसं तथा मत्स्यं मुद्रामैथुनमेव च ॥ १६० ॥
पुनः पुनः साधयित्वा पूर्णयोगी बभूव सः ।
योगमार्गं कौलमार्गमेकाचारक्रमं तथा ॥ १६१ ॥
योगी भूत्वा कुलं ध्यात्वा सर्वसिद्धीश्वरोऽभवत् ।
सन्धिकालं कुलपथं योगिन जाड़तं सदा ॥ १६१ ॥
भगसंयोगमात्रेण सर्वसिद्धीश्वरो भवेत् ।
एतद् योग विजानीयाज्जीवात्मपरमात्मनोः ॥ १६३ ॥

इति श्रीरुद्रयामले उत्तरतन्त्रे महातन्त्रोद्दीपने भावप्रश्नार्थनिर्णये पाशवकल्पे षट्चक्रसारनिर्णये सिद्धमन्त्रप्रकरणे चतुर्वेदोल्लासे भैरवीभैरवसंवादे सप्तदशः पटलः ॥ १७ ॥

अथ अष्टादशः पटलः ।

आनन्दभैरव्युवाच ।—

कामचक्ररचना ।—

शृणु नाथ ! प्रवक्ष्यामि असाध्यसाधनं परम् ।
कामचक्रस्य वर्णानां मध्यतं पूर्णानन्दमयम् ॥ १ ॥

आज्ञाचक्रमध्यभागे नाड़ीकोटिरसान्विता ।
तन्मध्ये भावयेन्मन्त्री कामचक्रं मनोरमम् ॥ २ ॥
कामचक्रे च पूर्वोक्त-वर्णमालोक्य साधकः ।
न्यासमन्त्रे पुटीकृत्य जपित्वा योगिराड् भवेत् ॥ ३ ॥
एकमन्दिरमध्यस्थो मन्त्रमाश्रित्य यत्नतः ।
निजनामाक्षरं तत्र तत्कोष्ठमनुमाश्रयेत् ॥ ४ ॥
एतेषां कोष्ठसंस्थानां वर्णानां हि फलाफलम् ।
वद कान्ते ! रहस्यं मे कामचक्रफलोद्भवम् ॥ ५ ॥
कामचक्रं कालरूपं ततो वाराणसीपुरम् ।
तत्र सर्वपीठचक्रं चक्राणामुत्तमोत्तमम् ॥ ६ ॥
एतच्चक्रप्रसादेन ते पादाम्बुजदर्शनम् ।
प्राप्नोति साधकान् सत्यं सर्वं जानाति साधकः ॥ ७ ॥
कामनाफलसिद्ध्यर्थं मन्त्रार्थादिविचारणाम् ।
बुद्धिमांस्तद्गतां कृत्वा गृह्णीयान्मन्त्रमुत्तमम् ॥ ८ ॥
शृणु वर्णफलं नाथ ! असाध्यप्रश्ननिर्णयम् ।
वर्णानाञ्च नाथ ! राशि-भेदेन संशृणु प्रभो ! ॥ ९ ॥
बाल्यादिषु स्थितान् वर्णान् आश्रयेत् साधकोत्तमः ।
वर्जयेद्दुरुभावञ्च तथाऽस्तमितमेव च ॥ १० ॥
आश्रयेत् राशिभेदेन बाल्यकैशोरयौवनम् ।
अथवाऽन्यं वर्णभेदं विचारे वामयोगतः ॥ ११ ॥
मन्त्राणाञ्चापि गणयेत् प्रश्नकर्मणि दक्षिणात् ।
मध्यकोणावधि नाथ ! गणनीयं विचक्षणैः ॥ १२ ॥
ऊर्द्धदक्षिणयोगेन गणयेत् प्रश्नकर्मणि ।
वामयोगेन गणयेत् मन्त्रादीनां विचारणे ॥ १३ ॥
शृणु तद्वर्गवर्णानां फलमत्यन्तसुन्दरम् ।
वदामि परमानन्द-रससिन्धुमधुव्रत ! ॥ १४ ॥

कवर्गं कामाख्याभवनमणिपीठे त्रिजगतां
धरित्री सा धात्री वसति सततं सिद्धगवके ।
हुताशेष्वाकाशे जलदतनुराकाशजननी
गभीरा सङ्काभा करहरकरा घोरमुखरा ॥ १५ ॥
अभ्यासयोगात् कलिकालपावनीं कुलानन्दरूपां रमेशीं महेशीम् ।
महारसोल्लाससुवेल्ललोचनां कामेश्वरीं कूर्मपदां भजेज्जयी ॥ १६ ॥
कालागुरोरुत्तमसिद्धसेविता मनोहरा खेचरसारशाखिनी ।
उक्ता समग्रा भवदीपहृत्तिस्तेजश्छटाकोमललीनदेहा ॥ १७ ॥
खड्गासुधाखर्परधारिणी सा चण्डोद्गमा वायुपथस्थखेचरी ।
विद्याभयाखञ्जनलोचनागतिः चितिश्चये खेचरवर्गधारिणी ॥ १८ ॥
खारीविहारीखलखेलनेन खेरीखरोन्मत्तगतिप्रिया खगा ।
रूपोढपाद्या खलसंस्थिता सदा प्रपाति विद्याबलविक्रमस्थिता १९

* * *

व्यापारनिद्रागहनार्थचिन्ता खरप्रभाखरभीर्यदा यदा ॥ २० ॥
गायत्री गणनायिका मतिगतिग्लानिघ्नभूताश्रया
गीता गोकुलकामिनी गुरुतरा गार्हाग्निजेया यदा ।
गोरूपा गयुता गया गुणवती गाथापथस्थायिनी
कुर्वन्ती प्रतिपालनं त्रिजगतां गायत्रिकां तां भजे ॥ २१ ॥
घाघोर्घर्मकरानन्द-मोहिनी घर्घरा घना ।
निद्रया घ्राणघटना नीलघोटकवाहिनी ॥ २२ ॥

* * *

बिन्दुस्था विषभोजनानलकथा बीजभ्रमादप्रिया
प्रद्धाव्या अनुनासिका सुखमयी देवप्रिया षण्मुखी ॥ २३ ॥

* * *

कृत्वा विचित्रवसनाचरणाञ्चलं
विधाय च स्थास्यसि देहि चञ्चले ! ॥ २४ ॥

इति वर्णं चवर्गस्य महापातकनाशनम् ।
कामचक्रे स्थितं यद्‌ तत् प्रश्ने मन्त्रगृहे तथा ॥ २५ ॥
चवर्गफलमत्यन्त-निष्कर्षं सूक्ष्मभावनम् ।
धिया सर्वाक्षरश्रेणीं भावयन्ति पुनः पुनः ॥ २६ ॥
सर्वं जानासि शम्भो ! त्वं परं किं कथयामि ते ? ।
तथाऽपि वर्गमाहात्म्यं कामचक्रस्थनिर्मलम् ॥ २७ ॥
यो जानाति कामचक्रं यमो न हन्ति तं जनम् ।
तत् प्रकारं भावयुक्तं भावनाज्ञाननिर्मलम् ॥ २८ ॥
यज्ज्ञात्वा कामरूपस्था मूलाधारनिवासिनः ।
देवताः पार्थिवाः सर्वे योगिनः परमेष्ठिनः ॥ २९ ॥
न जानन्ति बालका ये तेषां योगादिसिद्धये ।
कामचक्रं कामरूपं कामनाफलसिद्धिदम् ॥ ३० ॥
तन्मन्त्रग्रहणादेव साक्षाद्दीक्षा भवेन्नरः ।
श्रुतिशास्त्राणि सर्वाणि करे तस्य न संशयः ॥ ३१ ॥
योगशिक्षादिकं सर्वं जानाति कामचक्रतः ।
कामचक्रप्रसादेन कामरूपी भवेद्‌ ध्रुवम् ॥ ३२ ॥
तद्वर्णस्थं तदन्तःस्थं दशकोणस्थमेव च ।
अष्टदलस्थं तत्रापि विचार्य्य साधकोत्तमः ॥ ३३ ॥
अनुलोमविलोमेन शास्त्रस्यानुक्रमेण च ।
बाल्यं कैशोरमुल्लासं वृद्धिः सिद्धिश्च यौवने ॥ ३४ ॥
वृद्धो वृद्धत्वमाप्नोति अस्ते च निधनं भवेत् ।
नवग्रहास्तत्र मध्ये पञ्चप्राणाश्च सन्ति वै ॥ ३५ ॥
अनुलोमविलोमेन गणयेद्दशकोणके ।
दशकोणे सर्वसिद्धिरष्टसिद्धिश्च तत्र्यके ॥ ३६ ॥
अष्टपत्रे प्रशंसन्ति अधोऽनन्तमधो गृहे ।
ब्राह्मणाः शूद्रगेहे च मन्त्रवर्णांश्च तान् शृणु ॥ ३७ ॥

समाश्रित्य जपेद्विद्यां सूरयः क्रमरूपिणीम् ।
क्रूरदेवी क्रूरबुद्धिं ददाति साधकाय च ॥ ३८ ॥
यदि क्रोधतरा विद्या भक्षयेत् साधकं लघु ।
अतः समवयोरूपा देवता ह्यष्टसिद्धिदा ॥ ३९ ॥
देवो भूत्वा भजेद्देवं तदा मोक्षं समाप्नुयात् ।
यदि वर्णं न जानाति कोटिपुत्रोऽप्यधो व्रजेत् ॥ ४० ॥
डाकिनी तं भक्षयन्ति दीक्षामन्त्रार्णहीनकम् ।
ततो वर्णविचारञ्च प्रवक्ष्यामि समासतः ॥ ४१ ॥

चापान् धृत्वा नरेन्द्रस्तमपि च मनुजं पालयन्तीह लोके
सर्वं चिन्ताविघातं प्रचुरभवभयं भास्करो हन्ति शोकान् ।
चातुर्य्यां चक्रपाणेः पदमपि पठनं सन्ददाति द्रुमादे-
र्योगोद्‌योगी गुरुगतमनसा साधको यस्तु योगम् ॥ ४२ ॥

छत्राशाकमले स्थिता स्थितिलये वाञ्छाफलश्रीधरा
छायामण्डपमध्यगस्थलगता छत्राटवी तेजसा ।
त्रैलोक्यं परिपातु पाशुपतिभिः क्षेत्राधिपैः श्रीधरैः
प्राणप्रेमविहारिणी भगवती छत्रेण तं साधकम् ॥ ४३ ॥

जातिख्यातिरनुत्तमा प्रभवती प्रीता यमाख्या मता
जीवानामतिदुःखराशिहननादेकार्थसञ्चारिणी ।
वज्री जीवनमध्यगा गतिमती विद्या जया यामिनी
जाताजातनिवारिणी जनमनःसंहारचिन्तावनु ॥ ४४ ॥

झं झत्वादं विवादं झटिति झारझरा झारया बीजझङ्का
गङ्गा हन्ति हता शुभाशमुनखी कैवल्यमुक्तिप्रदा ।
त्वा रक्षति साधकं वरझणत्कारेण सूक्ष्मानिला
कामक्रोधविनाशिनी शशिमुखी झङ्कारशब्दप्रिया ॥ ४५ ॥

ञकारबीजामलभावसारे शस्यस्य पुञ्ज प्रतिहन्ति योगिनी ।
खड्गायुधा सा रसपानमत्ता संहारनिद्राकुलसाधुदुःखहा ॥ ४६ ॥

* * *

चन्द्रातपस्निग्धसुकान्तविग्रहा टङ्कास्त्रवज्रास्त्रयुता रिपुघ्नरा ॥४७॥
टिं टिं महामन्त्रजपेन सिद्धिदा हन्ति श्रियं कापुरुषस्य पातकम् ।
विशालनेत्रा यति चारुकाङ्गी ठं ठं स्वबीजं परिपाति ठाकुरी ॥४८

* * *

मनोगतं दुःखसमूहमुर्व्वशी रत्नाकरा शत्रुकुलं निहन्ति ।
डामरा जगतामाद्या डं डां डिं डीं स्वरूपिणी ॥ ४९ ॥
कामचक्रे सुखं दत्त्वा सारयेवं तनोति सा ।
ढं ढां बीजात्मिका विद्या रत्नमन्दिरसंस्थिता ॥
ढकारी पाशहस्ता च साधकं पाति सुन्दरी ॥ ५० ॥
णं णां णिं णीं जपति सुजनो जीवनीमध्यसंस्था
अष्टैश्वर्य्यं प्रभवति हृदि क्षोभपुञ्जापहाय ।
वाराणस्यां सकलभयहा सन्ददातीह लक्ष्मीं
सूक्ष्मात्यन्तानलपरमुखी कालजालं निहन्ति ॥ ५१ ॥
ताराचरूपा त्रिनयनकुटिला तारकाख्या निहन्त्री
तन्त्रश्रेणी तरुवरकलावाणहेतोरतीता ।
तालवेत्रा तड़िदिवकला कोटिसूर्य्यप्रकाशा
तोकादीनां वहनतरणी तारकं पाति भक्तम् ॥ ५२ ॥
स्थितिक्रमेणैव विमुक्तिदायिनी मनोहरा नीरजनेत्रकोमला ।
स्थिता थकाराक्षरमालिनी स्थला प्रपाति मुख्यं वरसाधकं शिवा ५३
दात्री दरिद्रार्तिनिकृष्टदुःखहा दान्तप्रिया दैत्यविदारिणी दहा ।
दलस्थलस्था दयिता जगत्पते-र्दयां ददाति द्रवदेवदारा ॥ ५४ ॥
धात्री धराधारणतत्परा धनी धनप्रदा धर्मगतिर्धरित्री ।
दधार धीरं धनबीजमालिनी ध्यानस्थिता धर्मनिरूपणाय ॥५५॥
नन्दस्य प्रतिपालनाय जगतामानन्दपुञ्जोदया
योगिन्यो नयनाम्बुजोज्ज्वलशिखाशोभा प्रभा नाचरा ।

नीता नावपथस्थितामतिमतीं याः पालयन्तीह ताः
पातु श्रीश्वरतेजसा खलु यथा कालक्रमात् साधकम् ॥५६॥
प्रीता प्रेमविलासिनी वरपथज्ञानाश्रया पालनात्
पूज्या पायसपापरा परपदा पीताम्बरा पोषणा ।
प्रौढ़ा पुत्रवती पुराणकथना पायात् पुरा पावनी
या कामिश्वरपावनं परजनं श्रीसाधकं पाति सा ॥ ५७ ॥
स्फुतफणिवरमाला फेरवी फेरुरूपा
फणधरमुखफुल्लाम्भोजवाक्यामृताब्धी ।
निरवधिहरकण्ठे वाक्यरूपा फलस्था
फलगतफणिचूड़ा पाति फुल्लारविन्दे ॥ ५८ ॥
वज्राख्यां वशकारणां यदि जपेत् श्रीपादसंसेवनात्
बालां वेदविनिर्गतां भगवतीं श्रीरामदेवेहितां ॥ ५९ ॥

* * *

वश्या तस्य कराम्बुजे वसति सा धीरा मनःस्था वसा
वक्त्राम्भोरुहकोमले भगवती भूमीशभाराम्बुजे ।
मातामन्दिरमालिनी मतिमतामानन्दमालामला
मिथ्यामैथुनमोहिनी मनसि सा मित्रामहन्मेलनी ॥ ६० ॥

* * *

भानी तं वदते महेश्वरमहित्वं तस्य वक्षःस्थले
स्थित्वा सा मरणं निहन्ति सहसा मौनावलम्बी भवेत् ॥६१॥
यतिप्रिया या प्रतिपाति योगिनी यामास्थिता योगमुखास्पदा यथा ।
योनिस्थले सा यतिसाधकं यशो-यावासदा पाति यमादिकं दहेत्६२
रत्नस्था रतिराजिता रणसुखे राज्ञः प्रिया रीतिहा
रुद्राणीकृतरङ्गिणी रसवती रागापहा रोगहा ।
राजेन्द्रं रजनीरथे प्रकुपिता रावाऽमृता पाति तं
स्वाहारूपमनोरमा सुरमणी रामा रकाराक्षरी ॥ ६३ ॥

लक्ष्मीर्लाङ्गलिलक्षणा सुललना लीलानलालालया
मूलामूलनिरामतां सबलणाकुलाशलीलाकुला ।
लोलाकोलकुलाननानलमूलीलग्नालदूराकुला
कौलाकांकुललोचना लयकरी लीलालयं पाति माम् ॥६४॥
विषासवस्थानरणस्थवासना वश्या वहन्ती सकला वसार्थम् ।
सा पाति वीरं यदि तां भजेद्वशी त्रिसावनं ते निवसन्ति वारुणाम् ॥६५॥
शीतां शशी शोकविशेषनाशिनीं भजेत् सुशीलां स भवेद्दिवाकरः ।
शिवां शचीं शौचशुभां शवप्रियां शवस्थितां शीतलदेशशोभिताम् ॥६६॥
षट्चक्रे षट्पदाषाटी षडङ्गस्था षडानना ।
षट्चक्रे सिद्धिदा पाति साधकं षोडशी मुदा ॥ ६७ ॥
सा मानुष्मारस इति सुजनं सप्तलोकस्थलाद्या
सारा साक्षात् सुखसमरसोज्ज्वालमाह्लादसाम्या ।
साकारास्थाम्बुजमधुगिरा पूरयन्ति महार्थैं
देवा सौरा सुरमति निवहा सामवेदान्तरस्था ॥ ६८ ॥
हठात्कारेण साहारा हरति प्राणहं जनम् ।
निहारिणं न सा हन्ति हिरण्यहारमालिनी ॥ ६९ ॥
आलोका लक्षजयदा लालाक्षराङ्गलोमशा ।
आलस्लोल्वान सा लाषा पाति तं यो भजेल्लघु ॥ ७० ॥
क्षयं क्षिणो याति सुसूक्ष्मभावनं विहाय मन्त्री क्षयरोगहारिणी ।
सूक्ष्मातिसूक्ष्मान्यतमं विचिन्तयेत् क्षोभादिकं पक्षकलाक्षयन्ती ७१
षोडशस्वरभेदेन फलं शृणु महाप्रभो ! ।
संक्षेपेण प्रवक्तव्यमुत्कृष्टफलकाङ्क्षिणाम् ॥ ७२ ॥
श्लोकत्रयेण तत्सर्वं फलमत्यन्तसाधनम् ।
ये कुर्वन्ति महादेव ! कामचक्रोत्सवं यथा ॥ ७३ ॥
आद्यष्टस्वरमङ्गलं जपति यः श्रीनाथवक्ताम्बुजात्
प्राप्य श्रीवरनायकः क्षितितले सिद्धो भवेत्तत्क्षणात् ।

राजाराजकुलेश्वरो जयपथे दीपोज्ज्वलामालया
सम्प्राप्स्यात् परमां कलां जयति सः कामानलं तद्व्रचेत् ॥७४॥
अ आ इ ई उ ऊ ऋ ॠ ।
शेषाष्टस्वरपावनो प्रियतमानन्देन मन्दोदरी
मन्त्रं हन्ति मदानना त्रिजगतां साध्योत्तमानां सुखम् ।
दत्त्वा पालयति प्रभा प्रलयके कौटिल्यविद्यापहा
त्यक्ता यः क्षितिपालनं निजजपध्यानाकुलामङ्गलम् ॥७५॥
ऌ ॡ ए ऐ ओ औ अं अः ।
इति वर्णफलं ज्ञात्वा यो गृह्णाति मनूत्तमम् ।
स भवेत् कुलयोगार्थी सिद्धज्ञानी महीतले ॥ ७६ ॥
वर्गे वर्गे फलं नाथ शृणु वक्ष्यामि अद्भुतम् ।
प्रश्नादीनाञ्च कथनं येन जानाति साधकः ॥ ७७ ॥
कवर्गे कामसम्पत्तिं श्रिया व्याप्तं सुमन्दिरम् ।
प्राप्नोति कामचक्रार्थं राशिनक्षत्रसम्मतम् ॥ ७८ ॥
चवर्गे दीर्घजीवी स्यात् दृढसम्पदमेव च ।
वृत्तिं प्राप्नोति गमनादनुदेश्यशरीरिणः ॥ ७९ ॥
समाचारं समाप्नोति गमने सर्वमुत्तमम् ।
टवर्गे सम्भवे नाथ महदुच्चाटनादिकम् ॥ ८० ॥
पुत्राणामपि वृद्धिः स्यात्तवर्गे धनलाभकम् ।
पवर्गे मरणं नाथ ! यादिक्षान्ते महागुणी ॥ ८१ ॥
कामचक्रे फलं नाथ ! राशिदण्डेन योजयेत् ।
निजगेहस्थितं राशिं ज्ञात्वा हि दिनदण्डतः ।
गणयित्वा शुभं ज्ञानी अनुलोमविलोमतः ॥ ८२ ॥
घटस्थं सफलं सन्धि-कालस्थं पार्श्वके शुभम् ।
शुभमन्त्रं गृहीत्वा तु सिद्धिमाप्नोति साधकः ॥ ८३ ॥

इति श्रीरुद्रयामले उत्तरतन्त्रे महातन्त्रोद्दीपने भावप्रश्नार्थनिर्णये पाशवकल्पे कामचक्रसारसङ्केते सिद्धमन्त्रप्रकरणे चतुर्वेदोल्लासे भैरवी-भैरवसंवादे अष्टादशः पटलः ॥ १८ ॥

अथ एकोनविंशः पटलः ।

षट्चक्रभेदः ।—

इदन्तु शृणु वक्ष्यामि सर्वतन्त्रार्थगोपनम् ।
तत्त्वं प्रश्नचक्रे च षड़ाधारस्य भेदनम् ॥ १ ॥
कालचक्रफलं तत्र निर्विकल्पादिसाधनम् ।
प्रश्नचक्रं कामरूपं चैतन्यं सर्वदा मनोः ॥ २ ॥
षण्मन्दिरे षट् कलापं कैवल्यसाधनादिकम् ।
नानाभोगं योगसिद्धिं हित्वा यो यन्तु संजपेत् ॥
स भवेद्देवताद्रोही कोटिकल्पे न सिध्यति ॥ ३ ॥
हृदि यस्य महाभक्तिः प्रतिभाति महोदया ।
क्षणादेव हि सिद्धिः स्यात् किं जपैर्मन्त्रसाधनैः ? ॥ ४ ॥
अतो भक्तिं सदा कुर्य्याद्देवताभावसिद्धये ॥ ५ ॥

भैरव उवाच ।—

एतच्चक्रप्रसादेन को वा किं सिद्धिमाप्नुयात् ? ।
एतस्य भावनादेव किं फलं भावनं शुभम् ॥ ६ ॥
को वा प्रश्नादिकथने क्षमो भवति सुन्दरि ! ।
तत्प्रकारं विधानेन वद मे फलसिद्धये ॥ ७ ॥

आनन्दभैरव्युवाच ।—

यः करोति पूर्णहोमं पुत्रार्थं योगसिद्धये ।
कुण्डलीक्रमयोगेन पुनः पुनः क्रमेण च ॥ ८ ॥
एतच्चक्रार्थभावज्ञः स एव नात्र संशयः ।
यः करोति सदा नाथ ! वायुनिर्गमलक्षणम् ॥ ९ ॥
ऊर्द्ध्वं संस्थाप्य निवित् भावना कुरुते नरः ।
स एव सिद्धिमाप्नोति सिद्धिमार्गो न संशयः ॥ १० ॥
फलमेतद्भावनार्थं कामक्रोधादिवर्जितः ।
भावनाफलसिद्ध्यर्थं वायुसंयोगक्रमात् ॥ ११ ॥

लेपयित्वा शोधयित्वा मन्त्रयित्वा पुनः पुनः ।
धर्माधर्मविरोधेन सूक्ष्मवायुक्रमेण च ॥ १२ ॥
प्राप्नोति महतीं सिद्धिमेतच्चक्रस्य तत्फलम् ।
फलञ्च द्विविधं प्रोक्तं स्थूलसूक्ष्मपदस्थितम् ॥ १३ ॥
स्थूलं त्यक्त्वा महासूक्ष्मे मनो याति यदा यदा ।
तदा हि महती सिद्धिरमरस्तत्क्षणाद्भवेत् ॥ १४ ॥
एकवारं भावयेद् यः सिद्धचक्रस्य वर्णकान् ।
तस्यैव भावसिद्धिः स्याद् भावेन किं न सिध्यति ? ॥ १५ ॥
महद्भावं विना नाथ ! कः सिद्धिफलकाग्रही ? ।
योगभ्रष्टः स्थूलफले परजन्मनि सिद्धिभाक् ॥ १६ ॥
अतिके सिद्धिमाप्नोति सूक्ष्मफलक्रमेण तु ।
यो जानाति सूक्ष्मफलं स योगी भवति ध्रुवम् ॥ १७ ॥
स एव प्रश्नकथने योग्यो भवति साधकः ।
यः सूक्ष्मफलभोक्ता स्यात् क्रियागोपनतत्परः ॥ १८ ॥
निरन्तरं प्रश्नचक्रं आज्ञाचक्रोपरि स्थितम् ।
विभाव्य कालसिद्धिः स्यात् सर्वज्ञो वेदपारगः ॥ १९ ॥
कालज्ञानी च सर्वज्ञ इति तत्त्वार्थनिर्णयः ।
प्रश्नचक्रस्थितं वर्णं सूक्ष्मकालफलावहम् ॥ २० ॥
मनोरूपं दण्डमेदं सर्वस्यापि सवर्गकम् ।
मनसो भ्रम एवं हि काल एको न संशयः ॥ २१ ॥
मृत्युवशं करोत्येव कालज्ञानी स योगिराट् ।
कालेन लीयते सर्वं त्रैलोक्यं सचराचरम् ॥ २२ ॥
कालाधीनमिदं विश्वं तस्मात् कालवशं नयेत् ।
तत्कालं सूक्ष्मनिलयं दुर्भाग्यं प्रश्नकं शृणु ॥ २३ ॥
मेषं तुलाराशिमनुत्तमं सदा वैशाखमासे फलसिद्धिकारणम् ।
कवर्गमाव्याप्य सुरान् य एव विभावयेत् स क्षितिनाथ आभवेत् २४

आज्ञाचक्रोपरि ध्यात्वा सर्वचक्रं महाप्रभो !।
एकक्षणेन सिद्धिः स्यात् परभावेन हेतुना ॥ २५ ॥
सिद्धेशचक्रचैतन्यं यो जानाति महीतले।
वाक्सिद्धिर्जायते मासाद्दिवारात्रिश्रमेण च ॥ २६ ॥
वर्णमालासमाक्रान्तं राशिनक्षत्रसंयुतम्।
ग्रहचक्रं भावयित्वा सर्वं जयति साधकः ॥ २७ ॥
चवर्गे च वराभिद्धिः संक्लेशो वृद्धिकारणम्।
द्विमाससाधनादेव सर्वज्ञो भवति ध्रुवम् ॥ २८ ॥
योगिनी खेचरी विद्या आयाति निकटे सताम्।
ग्रहचक्रप्रसादेन जीवन्मुक्तस्तु साधकः ॥ २९ ॥
यदि कर्म करोत्येव एकान्तचित्तनिर्मलः।
तस्यासाध्यं त्रिभुवने न किञ्चिदपि वर्त्तते ॥ ३० ॥
प्रश्नचक्रप्रसादेन सर्वे वै योगिनो भुवि।
यदि योगी भवेद्भूमौ तदा मोक्षमवाप्नुयात् ॥ ३१ ॥
विना योगसाधनेन कः सिद्धो भूमिमण्डले ?।
साधनेन विना सिद्धिः कस्य भक्तस्य जायते ? ॥ ३२ ॥
भक्तानां निकटे सर्वे प्रतिष्ठन्ति महर्षयः।
अतो भक्तिं सदा कुर्य्यात् सर्वधर्मान् विहाय च ॥ ३३ ॥
तत्कालं भक्तिमाप्नोति प्रश्नचक्रप्रसादतः।
तत्प्रकारं महाधर्मं को वक्तुं क्षम एव हि ? ॥ ३४ ॥
किञ्चित्तद्भावसारञ्च प्रश्नचक्रे ददाम्यहम्।
चवर्गभावनादेव भक्तिं प्राप्नोति साधकः ॥ ३५ ॥
समाधाय परं देवं आज्ञाचक्रोपरि प्रभो !।
विभाव्य नित्यभावं हि प्राप्नोति तत्फलादपि ॥ ३६ ॥
आनन्दाश्रुणिपुलके देहावेशो मनोलयम्।
सर्वकर्मसु संत्यागी यः करोति स योगिराट् ॥ ३७ ॥

टवर्गे वासनासिद्धिः संसाररहितो भवेत्।
बलवान् सर्वविज्ञानी त्रिमासे खेचरो भवेत् ॥
खेचरीमिलनं तस्य पारं प्राप्नोति चक्रतः ॥ ३८ ॥
टवर्गं व्याप्य तिष्ठन्ति मिथुनः कुम्भयोनयः।
स्वनक्षत्रस्वयोगञ्च विभाव्य योगिराड् भवेत् ॥ ३९ ॥
चातुर्मासि पूर्णयोगी तवर्गसाधनादपि।
वेतालादिमहासिद्धिं सिन्धुसिद्धिं समाप्नुयात् ॥ ४० ॥
तवर्गं व्याप्य तिष्ठन्ति मकारावृक्षकर्कटः।
चिरजीवी भवेदीश इन्दुतुल्यप्रियो भवेत् ॥ ४१ ॥
तिष्ठेत् प्रलयपर्य्यन्तं महाप्रलयरूपवान्।
कृत्वा कालवशं मन्त्री महावायोर्महालयम् ॥ ४२ ॥
महाचन्द्रसूर्य्यमध्ये वह्निमण्डलमध्यगे।
वाग्देवता तस्य साक्षाद्भवतीति न संशयः ॥ ४३ ॥
पवर्गं व्याप्य तिष्ठन्ति धनुः सिंहस्तु चित्कलाः।
विभाव्य परमस्थानं न नश्यति महानिलम् ॥ ४४ ॥
त्रैलोक्यमष्टवर्गञ्च षट्चक्रं चक्षुषेक्षणात्।
यदि वान्त ब्रह्मरूपं सर्वतीर्थपदाश्रयम् ॥ ४५ ॥
महामहागुणाक्रान्तं सत्त्वनिर्मलचक्षुषा।
कन्यावृषिकराशिभ्यां ब्रह्ममार्गं विलोकयेत् ॥ ४६ ॥
षष्ठमासेऽनलसिद्धिः स्यात् महाकौलं भवेत् ध्रुवम्।
मौनी एवान्तभक्तः स्यात् श्रीपादाम्भोजदर्शनम् ॥ ४७ ॥
प्राप्नोति साधकश्रेष्ठः सायुज्यपदवीं लभेत्।
त्रयो मध्ये प्रगच्छन्ति योगिनस्तत्त्वचिन्तकाः ॥ ४८ ॥
शादिक्षान्ते चतुष्कोणे सर्वयोगाश्रये पदे।
विभाव्य यामि शीघ्र सः श्रीदेवीलोकमण्डले ॥
महाकालो भवेद्धीमान् प्रश्नचक्रस्य भावकः ॥ ४९ ॥

इति श्रीरुद्रयामले उत्तरतन्त्रे महातन्त्रोद्दीपने भावप्रश्नार्थबोधनिर्णये पाशवकल्पे प्रश्नचक्रसारसङ्केते सिद्धमन्त्रप्रकरणे चतुर्वेदोल्लासे भैरवी-भैरवसंवादे एकोनविंशः पटलः ॥ १९ ॥

अथ विंशः पटलः ।

आनन्दभैरव्युवाच ।—

आज्ञाचक्रान्तर्गतचक्राणि ।—

अथ वक्ष्ये महादेव ! सिद्धमन्त्रविचारणम् ।
जपित्वा भावयित्वा च नरो मुच्येत सङ्कटात् ॥ १ ॥
फलचक्रे सर्वमन्त्रं सर्वसारं तनुप्रियम् ।
क्रियायोगाद्भवेत् सिद्धिर्वीर्यवीशक्तिसेवनात् ॥ २ ॥
वह्निवीजं त्रिकोणस्थं षट्कोणं तद्बहिः प्रभो ! ।
षट्कोणे षड् मनुं ध्यात्वा षण्मासाद्रुद्ररूपिणम् ॥ ३ ॥
अष्टकोणे स्थितान् वर्णान् अङ्गभेदेन मण्डितान् ।
अङ्कसंख्या क्रमेणैव ज्ञात्वा तद्बहिरेव च ॥ ४ ॥
तत्संख्या सुगतान् वर्णान् विभाव्य खेचरो भवेत् ।
विना एकोनयोगेन षट्कोणं तत्र वर्णकान् ॥ ५ ॥
आज्ञाचक्रमध्यदेशे कामचक्रं मनोरमम् ।
कामचक्रं मध्यदेशे महासूक्ष्मफलोदयम् ॥ ६ ॥
प्रश्नचक्रं षट्पदार्थं षट्चक्रफलसाधनम् ।
प्रश्नचक्रे फलचक्रं योगाष्टाङ्गफलप्रदम् ॥ ७ ॥
फलचक्रस्योर्द्ध्वभागे वर्णमालाक्रमेण तु ।
तद्वर्णान् मौनजापेन फलसारं समाप्नुयात् ॥ ८ ॥
फलचक्रप्रसादेन तत्त्वचिन्तापरो यतिः ।
स्थित्वा भूमध्यकुहरे सदा भावयतीश्वरम् ॥ ९ ॥
भावज्ञानी भवेत् शीघ्रं मूढोऽपि भावनावशात् ।
आदौ सूक्ष्मफलं वक्ष्ये वर्णभेदेन शङ्कर ! ॥ १० ॥
वह्निवीजसूक्ष्मफलं साक्षात् प्रत्यक्षकारणम् ॥ ११ ॥

वह्निर्भाति निरन्तरं त्रिजगतां नाशाय रक्षा करो
वीजः सर्वचलाचलस्थदहनं श्रीकालिकाविग्रहः ।

सर्वव्यापक ईश्वरः क्षयति यः कामान् मनः पल्लवं
ध्यात्वा तं समरूपवान् परशिव-ज्ञानी भवेत्तत्क्षणात् ॥१२॥

त्रिकोणस्थं वह्निवीजं विषविद्याप्रकाशकम् ।
अकस्मात् सिद्धिदातारं यो भजेत् स भवेत् सुखी ॥ १३ ॥
षट्कोणस्थवर्णमन्त्रान् शृणुष्वानन्दभैरव ! ।
यज्ज्ञात्वा देवताः सर्वा दिग्विदिक्षु प्रपालकाः ॥ १४ ॥
अद्भुतं कमनीयार्थं सङ्केतशुद्धिलाञ्छितम् ।
वह्निवीजस्योर्द्ध्वदेशे चन्द्रवीजमनुत्तमम् ॥
तत्र यो भावयेन्मन्त्री स सिद्धो नात्र संशयः ॥ १५ ॥

दिक्षोर्वी यत् सूक्ष्मं विमलकमलं कान्तकिरणं
सदा जीवस्थानं प्रलयनिलयं वायुजाड़ितम् ।
ततो वामे सूर्य्यं सकलविफलं धर्मनिकरं
महावुद्धिस्थानं भजति सुजनो भावविधिना ॥ १६ ॥

तदधः कोणगेहे च वीजं पञ्चस्वरान्वितम् ।
भावकल्पलतासारं सकारादिकुलाक्षरम् ॥ १७ ॥
चतुःपञ्चाशदङ्कस्थं वायुवीजमधस्ततः ।
विभाव्य वायवी सिद्धिमवाप्नोति नराधिपः ॥ १८ ॥
तदङ्गदक्षिणे नाथ ! भवानीवीजमण्डलम् ।
युग्मस्वरसमाक्रान्तं विभाव्य योगिराड् भवेत् ॥ १९ ॥
तद्दक्षिणोर्द्ध्वकोणे च सोऽहं वीजमनुत्तमम् ।
विभाव्य जगतामीश-दर्शनं प्राप्नुयान्नरः ॥ २० ॥
तदूर्द्ध्वे परमं वीजं साक्षात्कारफलप्रदम् ।
मासैकभावनादेव देवीलोके गतिर्भवेत् ॥ २१ ॥
तदूर्द्ध्वकोणगेहे च रुक्मिणी-वीजमण्डितम् ।
साधनादेव सिद्धिः स्यात् लक्ष्मीनाथो भवेदिह ॥ २२ ॥
अङ्कक्रमेण सर्वत्र ज्ञेयं स्वरविधानकम् ।

येन तेन स्वरेणापि वेष्टितं फलवीजकम् ॥
फलत्येव महादेव ! वायुसिद्ध्यादिकारणम् ॥ २३ ॥
अष्टकोणं ततो नाथ ! षट्कोणे यानि सन्ति वै ।
तद्बीजानि सत्कुलानि ध्यात्वा वाक्सिद्धिमाप्नुयात् ॥ २४ ॥
रेफोर्द्ध्वं कामनावीजं भावकल्पद्रुमाकरम् ।
सर्वत्र तेजसा व्याप्तं विभाव्य योगिनीपतिः ॥ २५ ॥
तदधः शीतलावीजं वामभागक्रमेण तु ।
विभाव्य परमानन्द-रसे मग्नो महासुखी ॥ २६ ॥
तदधः कालवीजञ्च कामनाफलसिद्धिदम् ।
यो भजेत् परमानन्दो नित्यज्ञानी च वायुना ॥ २७ ॥
तदग्रे वेदकोणे च वरुणं वीजमुत्तमम् ।
विभाव्य भावको भूत्वा चिरजीवी भवेत् ध्रुवम् ॥ २८ ॥
तदूर्द्ध्वं पञ्चमे कोणे वज्रवीजं वकारकम् ।
अष्टसिद्धिकरं साक्षाद् भजतां शीघ्रसिद्धिदम् ॥ २९ ॥
षट्कोणे च तदूर्द्ध्वं च सुरवीजं महाफलम् ।
हृदि यो भावयेन्मन्त्री तस्य सिद्धिः प्रतिष्ठिता ॥ ३० ॥
अष्टकोणस्योर्द्ध्वदेशे वर्णमालाविधिं शृणु ।
येन चिन्तनमात्रेण सर्वज्ञो जगदीश्वरः ॥ ३१ ॥
ओ औ पवर्गमेवं हि यो नित्यं भजतेऽनिशम् ।
तस्य सिद्धिः क्षणादेव वायवीरूपभावनात् ॥ ३२ ॥
चन्द्रवीजस्योर्द्ध्वदेशे विभाति पूर्णतेजसा ॥ ३३ ॥
ऌ ए ऐ तवर्गमेव तद्दीक्षाविधानतः ।
तेजोमयी वायुशक्तिर्ददाति सर्वमङ्गलम् ॥ ३४ ॥
टवर्गं भावयेन्मन्त्री ऋ ॠ ऌ स्वरसंयुतम् ।
अष्टैश्वर्य्यप्रदं नित्यं कमलासनसिद्धिदम् ॥ ३५ ॥
तदधो भावयेद् यस्तु स भवेत् कल्पपादपः ।

भवानीवीजरूपस्य अधो गेहे विभावयेत् ॥ ३६ ॥
ई उ-युग्मं चवर्गञ्च भावयित्वाऽमरो भवेत् ।
अ आ इ संयुतो नाथ ! कवर्गः कुरुते जयम् ॥ ३७ ॥
भावयेत् परया भक्त्या सोऽभीष्टं फलमाप्नुयात् ।
इत्येतत् कथितं नाथ ! फलचक्रञ्च सारदम् ॥ ३८ ॥
एतच्चक्रभावनाभिर्महाविद्यापतिर्भवेत् ।
कामरूपे महापीठे लिङ्गपीठे प्रयत्नतः ॥ ३९ ॥
आज्ञाचक्रं चतुश्चक्रं भावयित्वाऽमरो भवेत् ।
महायोगी हिरण्याक्षो मासैकभावनावशात् ॥ ४० ॥
सप्तद्वीपेश्वरो भूत्वा अन्ते विष्णुर्बभूव सः ।
स्थिरचेताः स योगी स्यादिति तन्त्रार्थनिश्चयः ॥ ४१ ॥
एतानि चक्रसाराणि आज्ञाचक्रस्थितानि च ।
विभाव्य परमानन्दैरात्मसिद्धिर्भवेद् ध्रुवम् ॥
सूक्ष्मवायुप्रसादेन चिरजीवी भवेदिह ॥ ४२ ॥

इति श्रीरुद्रयामले उत्तरतन्त्रे महातन्त्रोद्दीपने भावप्रश्नार्थनिर्णये पाशवकल्पे फलचक्रसारसङ्केते सिद्धमन्त्रप्रकरणे षट्चक्रप्रकाशे भैरवी-भैरवसंवादे विंशः पटलः ॥ २० ॥

अथ एकविंशः पटलः ।

श्रीभैरव उवाच ।—

वीरभावस्य माहात्म्यम् ।—

वद कान्ते ! रहस्यं मे येन सिद्धो भवेन्नरः ।
तत् प्रकारं विशेषेण देवानामतिदुर्लभम् ॥ १ ॥
वीरभावस्य माहात्म्यमकस्मात् सिद्धिदायकम् ।
करुणादृष्टिरानन्दो यदि चेदस्ति सुन्दरि ! ॥ २ ॥

आनन्दभैरव्युवाच ।—

परमानन्दसारज्ञ ! योगज्ञ ! वेदपारग ! ।
रहस्यं शृणु मे नाथ ! महाकालस्य भावग ! ॥ ३ ॥
योगमार्गानुसारेण वीरभावं श्रयेत कः ? ।
आनन्दोद्रेकपुच्छे तत् शक्तिवेदार्थनिर्णयम् ॥ ४ ॥
वेदाधीनं महायोगं योगाधीना च कुण्डली ।
कुण्डल्यधीनं चित्तन्तु चित्ताधीनं चराचरम् ॥ ५ ॥
मनसः सिद्धिमात्रेण शक्तिसिद्धिर्भवेद् ध्रुवम् ।
यदा शक्तिर्वशीभूता त्रैलोक्यञ्च तदा वशम् ॥ ६ ॥
अमरः स भवेदेव सत्यं सत्यं कुलेश्वर ! ।
सहस्रश्लोकयोगेन वीरयोगार्थनिर्णयम ॥ ७ ॥
पटलैकादशे क्षेम-योगेन योगमण्डलम् ।
षट्चक्रबोधनी विद्या सहस्रदलपङ्कजम ॥ ८ ॥
कैलासाख्यं सूक्ष्मपथं ब्रह्मज्ञानाय योगिनाम् ।
कथयामि महावीर ! क्रमशः क्रमशः शृणु ॥ ९ ॥
वीराणामुत्तमानाञ्च श्रेष्टानां प्रहिताय च ।
साक्षात् सिद्धिकरं यद् यत् तत्सर्वं प्रवदामि ते ॥ १० ॥
योगमार्गक्रमेणैव स सिद्धिफलमिच्छति ।
स एव भवति क्षिप्रं ब्रह्ममार्गे न संशयः ॥ ११ ॥
ब्रह्मविद्यास्वरूपेण जपहोमार्चनादिकम् ।
कुरुते फलसिद्ध्यैव स ब्रह्मज्ञानवान् शुचिः ॥ १२ ॥
षट्चक्रभेदने प्रीतिर्यस्य साधनचेतसः ।
संसारे वा वने वाऽपि स सिद्धो भवति ध्रुवम् ॥ १३ ॥
षट्चक्रार्थं स जानाति यो भजेदम्बिकापदम् ।
तस्य पापं क्षयं याति सप्तजन्मसु सिद्धिभाक् ॥ १४ ॥
ज्ञात्वा षट्चक्रभेदञ्च यः कर्म कुरुतेऽनिशम् ।

संवत्सराद्भवेत् सिद्धिरिति तन्त्रार्थनिर्णयः ॥ १५ ॥
प्रस्वेदनाशमाप्नोति मासत्रयनिषेवणात् ।
अष्टमासात् कम्पनाशो वत्सरात् खेचरी गतिः ॥ १६ ॥
प्रस्वेदमधमं प्रोक्तं कम्पनं मध्यमं स्मृतम् ।
भूमेरुत्थापनं नाथ ! खेचरत्वं महासुखम् ॥ १७ ॥
द्वात्रिंशद्बिन्दुभेदञ्च मूलाधारावधिस्थितम ।
मेरुदण्डाश्रितं देशं कृत्वा ब्रह्ममयो भवेत् ॥ १८ ॥
सुषुम्ना बाह्यदेशे च यद् यद्बिन्दुपदं प्रभो ! ।
क्रमशः क्रमशो भित्त्वा खेचरो भवति ध्रुवम् ॥ १९ ॥
अल्पकार्य्ये मनो दत्त्वा ध्यानज्ञानविवर्जितः ।
उन्मत्तः स भवेदेव शास्त्राणां योगिराड् भवेत् ॥ २० ॥
हिमकुन्देन्दुधवलां बालां शक्तिं महोज्ज्वलाम् ।
कालीकालफलानन्दां मूले ध्यात्वा भवेद्वशी ॥ २१ ॥
मूलपद्मं महाज्ञानी ध्यात्वा चारुचतुर्दले ।
कपिलाकोटिदानस्य फलं प्राप्नोति योगिराट् ॥ २२ ॥
मूलपद्मे कोटिचन्द्र-कलायुक्तं सरक्तकम् ।
गणं सुधारसामोद-वदनाब्जसमाकुलम् ॥ २३ ॥
निर्मलं कोटिवीरोग्र-तेजसं ब्रह्मरूपिणम् ।
वामपार्श्वे कुण्डलिन्या विभाव्य शीतलो भवेत् ॥ २४ ॥
ततः श्रीजटिलं वीरं तदाकारं तदुद्भवम् ।
ललाटवह्निजं देव्या नाथं भजति योगिराट् ॥ २५ ॥
तत्तत्पद्मपूर्वदले सिन्धुवारणविग्रहम् ।
वकारं कोटिचपला मानं भजति योगिराट् ॥ २६ ॥
तत्पार्श्वे शोणितदले भूमिचक्रं मनोरमम् ।
यथा ध्यानं कुण्डलिन्या आज्ञाचक्रे तथाऽत्र च ॥ २७ ॥
भूमिचक्रक्रमं नाथ ! शृणु शङ्कर ! योगिनाम् ।

यत् ध्यात्वा सिद्धिमाप्नोति सिद्धिदं यद् गृहं भजेत् ॥ २८ ॥
यद् गृहं विकलागेहमेकतस्थं महाप्रभम् ।
यो ध्यायेद् योगिनीं देव ! वीजकं सिद्धिदायकम् ॥ २९ ॥
वकारं दक्षिणे गेहे हेममालिनमञ्जनम् ।
डाकिनीवीजसंयुक्तं ब्रह्मवीजं विभावयेत् ॥ ३० ॥
वकारं वामपार्श्वे च योगिनां योगसाधनम् ।
सदाशिव रमावीज विभाव्य योगिराड् भवेत् ॥ ३१ ॥
वं वीजं वारुणाख्यञ्च हिमकुन्देन्दुनिर्मलम् ।
तद्विश्वोर्जन्मसंस्थानं सत्त्वं द्रवमुपाश्रयेत् ॥ ३२ ॥
तदूर्द्ध्वपूर्वगेहे च लं वीजमिन्द्रपूजितम् ।
विद्युल्लतामिववर्णं विभाव्य योगिनां पतिः ॥ ३३ ॥
इन्द्रवीजं दक्षपार्श्वे श्रीवीजविन्दुलाञ्छितम् ।
स्थिरविद्युल्लतारूपमिन्द्राख्याः साधु भावयेत् ॥ ३४ ॥
तद्वामपार्श्वभागे च प्रणवं ब्रह्मसेवितम् ।
विभाव्य कोटिमिहिरं योगिराड् भवति ध्रुवम् ॥ ३५ ॥
वं वीजाधो मन्दिरे श्री-विद्यया वीरतेजसम् ।
कोटीसूर्य्यप्रभाकारं विभाव्य सर्वगो भवेत् ॥ ३६ ॥
निजदेव्या वामभागे ह्यधः कनकमन्दिरे ।
श्रीगुरौ रमणं वीजं ध्यात्वा वाग्भवमीश्वरम् ॥ ३७ ॥
निजदेव्या दक्षपार्श्वे दीर्घप्रणवतेजसम् ।
कोटिसूर्य्यप्रभारूपं ध्यात्वा योगी भवेद् यतिः ॥ ३८ ॥
निजदेवीं तत्र पद्मे मनःसद्वाक्ययोगकैः ।
यथा ध्यानं तथा मौनं ध्यानं कुर्य्यात् जगत्पतिः ॥ ३९ ॥
ब्रह्मणः पूरकेणैव महायोगक्रमेण तु ।
सूक्ष्मवायुक्रमेणापि भूमिचक्रे जपञ्चरेत् ॥ ४० ॥
चतुष्कोणं धरायास्तु नवभूमिगृहान्वितम् ।

अष्टगेहं विभाव्यादौ विश्वमूलं यजेद् यतिः ॥ ४१ ॥
धरावीजं पाण्डुवर्णं शक्रेण परिपूजितम् ।
विभाव्य कुण्डलीतत्त्वं सर्वसिद्धीश्वरो भवेत् ॥ ४२ ॥
राजमन्त्रं तत्र नाके श्वेतकुञ्जरवाहनम् ।
चतुर्बाहुं देवराजं विद्यापुञ्ज भयच्चयम् ॥ ४३ ॥
डाकिन्या मन्दिरे कान्तं ब्रह्माणं हंसहंसगम् ।
नवीनार्कं चतुर्बाहुं चतुर्वक्त्रं भजेद्वशी ॥ ४४ ॥
ब्रह्माणं डाकिनीयुक्तं सिन्दूराप्लुतभास्करम् ।
परमामोदमतुलं विभाव्य योगिराड् भवेत् ॥ ४५ ॥
विद्युल्लतावदुज्ज्वलां श्रीदेवडाकिनीं सुराट् ।
अभीक्ष्णं रक्तनयनां हंसस्थां भावयेद्वशी ॥ ४६ ॥
हंसोर्द्ध्वे कमलावीजं सर्वालङ्कारभूषितम् ।
महालक्ष्मीस्वरूपं यत्तद्भजन्ति महर्षयः ॥ ४७ ॥
इन्द्रपृथ्वीवीजवामे प्रणवं ब्रह्मसेवितम् ।
प्राणायामसिद्धिदं यत्तद् भजन्ति महर्षयः ॥ ४८ ॥
तदधः प्राणनिलयं प्रेतवीजं शशिप्रभम् ।
विभाव्य शिवतुल्यः स्याद् भूमिचक्रे सदाशिवः ॥ ४९ ॥
तदधो वाग्भवं ध्यायेत् कोटिसौदाम(मि)नीप्रभम् ।
गुरुवीजं भूमिचक्रे महाविद्यागुरुर्भवेत् ॥ ५० ॥
दक्षिणे मध्यगेहे च श्रीविद्यानिर्मलं पदम् ।
विभाव्य मानसे ध्याने सिद्धो भवति साधकः ॥ ५१ ॥
तद्दक्षिणे शेषगेहे प्रणवान्तं मनूत्तमम् ।
सर्वाधारं ब्रह्मविष्णु-शिवदुर्गापद भजेत् ॥ ५२ ॥
एतत् श्रीभूमिचक्रार्थं सर्वचैतन्यकारकम् ।
मूलाधारपूर्वदले वकारं व्याप्य तिष्ठति ॥ ५३ ॥
भूमिचक्रमण्डले तु वकारस्थं स्मरेद् यदि ।

ब्रह्माण्डमण्डलेश: स्यादखण्डं व्याप्यैकपत्रकम् ॥ ५४ ॥
तदेकपत्रं पद्मस्य शोणितं निर्मलद्युतिम् ।
तन्मध्यान्ते भूमिचक्रे मध्ये वं भावयेद्वशी ॥ ५५ ॥
एतच्चक्रप्रसादेन वरुणो मदिरापति: ।
अमृतानन्दहृदय: सर्वैश्वर्यान्वितो भवेत् ॥ ५६ ॥
द्वितीये दक्षिणे पत्रे वान्तबीजं महाप्रभम् ।
मनो विधाय योगीन्द्रो ध्यायेद् योगार्थसिद्धये ॥ ५७ ॥
तत्र ध्यायेत् स्वर्गचक्रं स्वर्गशोभासमाकुलम् ।
विभाव्य स्वर्गनाथ: स्याद्देवेन्द्रसहसा भुवि ॥ ५८ ॥
पञ्चकोणं विभाव्यापि पञ्चकोणं विभाति यत् ।
तन्मध्ये वृत्तयुगलं तत्र षट्कोणगं भजेत् ॥ ५९ ॥
एतत् स्वर्गाख्यचक्रन्तु प्रपूरद्वयमध्यके ।
दक्षिणोत्तरपत्रस्थे विभाव्य दान्तमीश्वरम् ॥ ६० ॥
षट्कोणान्तर्गतं वान्तं विद्युत्कोटिसमप्रभम् ।
समाश्रित्य सुरा: सर्वे दशकोणे वसन्ति ते ॥ ६१ ॥
पूर्वकोणे महेन्द्रञ्च सर्वदेवसभास्थितम् ।
इन्द्राणीसहितं ध्यात्वा योगीन्द्रो भवति ध्रुवम् ॥ ६२ ॥
तद्दक्षिणे रक्तकोणे वह्निं स्वाहाऽन्वितं स्मरेत् ।
कोटिकालानलसमं परिवारगणान्वितम् ॥ ६३ ॥
दक्षिणे कालरूपी च क्षयशक्तियुत: प्रभु: ।
परिवारान्वितं ध्यात्वा तं मृत्युवशमानयेत् ॥ ६४ ॥
नैर्ऋतं विद्युदाकार-सुप्रभं मदनप्रियम् ।
शक्तियुक्तं सुरानन्दो विभाव्य योगिनीपति: ॥ ६५ ॥
तदधो वरुणं ध्यात्वा सुशक्तिपरिलालिताम् ।
जलानामधिपं सत्त्वं नित्यसत्त्वाश्रयी भवेत् ॥ ६६ ॥
तद्वामे मरुत: कोणं मरुद्गणविभाकरम् ।

वायुस्थानं लयस्थानं वायुव्याप्तं भजेत् सुधी: ॥ ६७ ॥
तत् पश्चात् धननाथञ्च मत्तं शक्तिसमन्वितम् ।
परिवारगणानन्दं विभाव्य स्यात् कुलेश्वर: ॥
तत्पश्चात् परमं स्थानमीशं शक्तिसमन्वितम् ॥ ६८ ॥
परिवारान्वितं ध्यात्वा कामरूपी भवेद् यति: ।
तत्पश्चात् कोणगेहे च चन्द्रसूर्याग्नितेजसम् ॥ ६९ ॥
एकरूपमूर्द्धसंस्थं ब्रह्माणं भावयेद् यति: ।
इन्द्रवामकोणगेहे अनन्तं वह्निरूपिणम् ॥ ७० ॥
अनन्तसहितं ध्यात्वा अनन्तसदृशो भवेत् ।
एतत् स्वश्चक्रमध्ये तु वृत्तयुग्मं महाप्रभम् ॥ ७१ ॥
सर्वदा वह्निना व्याप्त ज्वलदग्निं विभावयेत् ।
वृत्तमध्ये च षट्कोणं कोणे कोणे रिपुच्चयम् ॥ ७२ ॥
लोभमोहादिषट्कञ्च हरेत् षट्कोणसंस्थितम् ।
लोभं दूरत इन्द्राग्नि-मोहं हरति दण्डधृक् ॥ ७३ ॥
कामं नैर्ऋतवरुणौ क्रोधं वायुश्च योगिनाम् ।
मदच्चरैरईशश्च व्राह्मनन्तो हि योगिनाम् ॥ ७४ ॥
मात्सर्यात् संहरत्येव मासत्रयनिषेवणात् ।
षट्कोणमध्यदेशस्थं वान्तबीजं शशिप्रभम् ॥ ७५ ॥
स्वर्णालङ्कारजड़ितं भावयेद् योगसिद्धये ।
सदा व्याप्तं कुण्डलिन्या पालितं मण्डितं सुधी: ॥ ७६ ॥
तैले यथा दीपपुञ्जं भवेत् विभाव्य योगिराट् ।
स्वयम्भूलिङ्गं तत्रैव विभाव्य चन्द्रमण्डलम् ॥ ७७ ॥
आप्लुतं कारयेन्मन्त्री कुण्डलीसहितं वशी ।
एवं क्रमेण सिद्धि: स्यात् कुण्डल्या च कुलेन च ॥ ७८ ॥
सदाऽभ्यासी महायोगी संस्थाप्य वायवीं तत: ।
वायव्याभ्यासमात्रेण एतच्चक्राश्रयेण च ॥ ७९ ॥

मूकोऽपि वाक्पतिर्भूयात् फलभागी दिने दिने ।
द्वितीयदलमाहात्म्यं योगिज्ञानोदयं परम् ॥ ८० ॥
भावसिद्धिर्भवेत्तस्य यो भजेदात्मचिन्तनम् ।
दलमध्ये तुलाचक्रं चतुष्कोणे गृहाणि च ॥ ८१ ॥
द्वात्रिंशद्बिन्दुरूपाणि शान्तिग्रन्थिविभेदने ।
तुलाचक्रस्य नाडीभिर्द्वात्रिंशद् ग्रन्थिभेदनम् ॥ ८२ ॥
गलदेशावधिध्यानं मेरुमध्ये प्रकारयेत् ।
द्वात्रिंशद् ग्रन्थिगेहस्य मध्यवृत्तत्रयं शुभम् ॥ ८३ ॥
तन्मध्ये च त्रिकोणे च षं मूर्द्धन्यं भजेद्वशी ।
तत्र गेहे विभाव्यानि वर्णजालफलानि च ॥ ८४ ॥
दक्षिणावर्त्तयोगेन विभाव्य वाक्पतिर्भवेत् ।
अकारमाद्यगेहे च अनुभावं द्वितीयके ॥ ८५ ॥
विसर्गन्तु तृतीये च यो भजेत् स भवेद्वशी ।
एतदन्यमन्दिरेषु कादिहान्तं विभावयेत् ॥
वादिशान्तं वर्जयित्वा सबिन्दुं स भवेद्वशी ॥ ८६ ॥
आज्ञाचक्रे यथा नाम फलं प्राप्नोति साधकः ॥ ८७ ॥
वर्णानां मूलपद्मे तु तत्फलं हि तुलागृहे ।
भजेन्मध्यं सकारस्य त्रिवृत्तस्थत्रिकोणके ॥ ८८ ॥
ज्वालामालासहस्राढ्यं स्वर्णालङ्कृतमाश्रयेत् ।
प्रत्येकवर्णपुटितं तुलाचक्रे च मौनवान् ॥ ८९ ॥
मौनं जपं यः करोति षकारं व्याप्य योगिराट् ।
एतद् योगप्रसादेन चैतन्या कुण्डली भवेत् ॥ ९० ॥
वाक्सिद्धिश्च भवेत्तस्य तापत्रयविनाशिनी ।
सिद्धमन्त्रस्य वर्णानां जपमात्रेण शङ्कर ! ॥ ९१ ॥
तुलाचक्रान्तरस्थानं विभाव्य मन्त्रसिद्धिभाक् ।
एतच्चक्रं विना नाथ ! कुण्डली नापि सिध्यति ॥ ९२ ॥

तावज्ज्ञानं विना कुत्र योगी भवति भारते ।
अथान्यदलमाहात्म्यं शृणु वक्ष्यामि तत्त्वतः ॥ ९३ ॥
योगसञ्चारसारं यत् कुण्डलीशक्तिसाधनम् ।
शक्तिबीजं बिन्दुयुक्तं अष्टकोणस्थनिर्मलम् ॥ ९४ ॥
विद्युत्पुञ्जं स्वर्णमाला-वेष्टितं भावयेद् यतिः ।
चतुष्कोणं विभाव्यापि चतुष्कोणं मनोहरम् ॥ ९५ ॥
तन्मध्ये च चतुष्कोणं सबीजं भावयेत्ततः ।
कोटिसूर्य्यसमां देवीं कुण्डलीं देवमातरम् ॥ ९६ ॥
यावद्भिर्यावतीं ध्यात्वा सर्वसिद्धीश्वरो भवेत् ।
यदि वारिचक्रमध्ये ध्यानं कुर्वन्ति मानुषाः ॥ ९७ ॥
अमरा सत्त्वयोगस्थाः षट्चक्रफलभोगिनः ।
तच्चतुष्के समा व्याप्य वारि व्याप्तं सुनिर्मलम् ॥ ९८ ॥
वामावर्त्तस्थितं ध्यायेत् सप्तखण्डं महाबली ।
सप्तवृत्तोपरि ध्यायेत् दलषोड़शपङ्कजम् ॥
दले दले महातीर्थं सिद्धो भवति निश्चितम् ॥ ९९ ॥
तीर्थमालावृतं नाथ ! दलं षोड़शशोभितम् ।
तदेकपत्रमध्ये तु भाति विद्युल्लताऽन्वितम् ॥ १०० ॥
पूर्वादौ दक्षिणे पातु तीर्थमालाफलं शृणु ।
येषां दर्शनमात्रेण जीवन्मुक्तस्तु साधकः ॥ १०१ ॥
गङ्गा गोदावरी देवी गया गुह्या महाफला ।
यमुना कोटीफलदा बुद्धिदा च सरस्वती ॥ १०२ ॥
मणिद्वीपं श्वेतद्वीपं पञ्चतीर्थं महाफलम् ।
श्वेतगङ्गा महापुण्या तलगङ्गा महाफला ॥ १०३ ॥
स्वर्गगङ्गा महाक्षेत्रं पुष्करं तीर्थपावनम् ।
कावेरी सिन्धुपुण्या च नर्मदा शुभदा सदा ॥ १०४ ॥
अष्टकोणे अष्टसिद्धिं वारिपूर्णां फलोदयाम् ।

सप्तकोणे सप्तसिन्धून् पूर्वादौ भावयेद् यतिः ॥ १०५ ॥
लवणेक्षुसुरासर्पिर्दधिदुग्धजलान्तकाः ।
सकारं व्याप्य तिष्ठन्तं महासत्त्वं स्मरेद् यतिः ॥ १०६ ॥
मध्ये चतुष्के शक्तिञ्च कोटिसौदाम(मि)नीतनुम् ।
विभाव्य वारिचक्रे तु कोटिविद्यापतिर्भवेत् ॥ १०७ ॥
शाक्तवीजं वामभागे आद्या प्रकृतिसुन्दरी ।
विभाति कामनाशाय योगिनी मां सताङ्गतिः ॥ १०८ ॥
शक्तिवीजं दक्षिणे च पुङ्गलापुंशिवात्मकम् ।
रूपाढ्यं ध्यानगम्यञ्च यो भजेदीशसिद्धये ॥ १०९ ॥
शक्तिवीजस्योर्द्धभागे पूर्णचन्द्रमनोहरम् ।
भजन्ति साधवः सर्वे धर्मकामार्थसिद्धये ॥ ११० ॥
शक्तिवीजतले गेहे श्रीसूर्य्यं कालवद् द्विजम् ।
भक्तकोटीसमं ध्यात्वा वाञ्छाऽतिरिक्तमाप्नुयात् ॥ १११ ॥
वारिचक्रप्रसादेन चिरजीवी भवेन्नरः ।
भूमौ महाकालरूपी मूलाधारे चतुर्दले ॥ ११२ ॥
चतुर्दलशेषदेशे वारिचक्रं सषान्तकम् ।
कोटिसौदाम(मि)नीभासं विभाव्य योगिराड् भवेत् ॥ ११३ ॥

इति श्रीरुद्रयामले उत्तरतन्त्रे महातन्त्रोद्दीपने भावप्रश्नार्थनिर्णये पाशव-कल्पे मूलपद्मोल्लासे भूमिचक्र-स्वर्गचक्र-तुलाचक्र वारिचक्रसारसङ्केते सिद्धमन्त्रप्रकरणे भैरवी-भैरवसंवादे एकविंशः पटलः ॥ २१ ॥

अथ द्वाविंशः पटलः ।

भैरव्युवाच ।—

षट्चक्रनिरूपणम् ।—

शृणु शम्भो ! प्रवक्ष्यामि षट्चक्रस्य फलोदयम् ।
यज्ज्ञात्वा योगिनः सर्वे चिरं तिष्ठन्ति भूतले ॥ १ ॥

योगधारणा ।—

मूलाधार-महापद्मं चतुर्दलसुशोभितम् ।
वादि सान्तं स्वर्णवर्णं शक्तिब्रह्मपदं भजेत् ॥ २ ॥
क्षित्यप्तेजोमरुत्व्योम-मण्डलं षट्सु पङ्कजे ।
क्रमेण भावयेन्मन्त्री मूलविद्याप्रसिद्धये ॥ ३ ॥
मूलपद्मोर्द्धदेशे च स्वाधिष्ठानं महाप्रभम् ।
षड्दले राकिणीविष्णू कर्णिकायां स्मरेद् यतिः ॥ ४ ॥
षड्दले वादिलान्तञ्च वर्णं ध्यात्वा सुराधिपः ।
कन्दर्पवायुना व्याप्तं लिङ्गमूले भजेद् यतिः ॥ ५ ॥
तदूर्द्ध्वं नाभिमूले च मणिकोटीसमप्रभम् ।
दशदलं योगधर्मं डादिफार्णान्तगं भजेत् ॥ ६ ॥
लाकिनीसहितं रुद्रं ध्यायेद् योगादिसिद्धये ।
महामोक्षपदं दृष्ट्वा जीवन्मुक्तो भवेद् ध्रुवम् ॥ ७ ॥
बन्धूकपुष्पसङ्काशं दलद्वादश-शोभितम् ।
कादिठान्तार्णसहितमीश्वरं काकिनीं भजेत् ॥ ८ ॥
तदूर्द्ध्वं षोड़शोल्लास-दले साक्षात् सदाशिवम् ।
महादेवं साकिनीगं कण्ठे ध्यात्वा शिवो भवेत् ॥ ९ ॥
विशुद्धाख्यं महापुण्यं धर्मार्थकाममोक्षदम् ।
धूम्रं धूमाकरं विद्युत्पुञ्जं भजति योगिराट् ॥ १० ॥
अज्ञानामात्मजं शुभ्रं हिमकुन्देन्दुमन्दिरम् ।
हंसस्थानं बिन्दुपदं द्विदलं भ्रूपदे भजेत् ॥ ११ ॥
लक्षवर्णद्वयाढ्यं यद्विन्दुयुक्तं मनोलयम् ।
तयोः स्त्रीपुंप्रकृत्याख्यं कोटिचन्द्रोज्ज्वलं भजेत् ॥ १२ ॥
कण्ठे षोड़शपत्रे च षोड़शस्वरवेष्टितम् ।
अकारादि विसर्गान्तं विभाव्य कुण्डलीं नयेत् ॥ १३ ॥
आज्ञाचक्रे समानीय कोटिचन्द्रसमोदयात् ।

कण्ठाधारां कुण्डलिनीं जीवन्मुक्तो भवेदिह ॥ १४ ॥
यदि श्वासं न त्यजति बाह्यचन्द्रमसि प्रभो ! ।
भ्रूमध्ये चन्द्रनिकरे त्यक्तो योगी भवेदिह ॥ १५ ॥
सूक्ष्मवायूद्गमेनैव त्यजेद्वायुं मुहुर्मुहुः ।
सहस्राऽराऽऽगतं मूले मूलं तत्रैवमानयेत् ॥ १६ ॥
चन्द्रः सूर्य्ये लयं याति सूर्य्यश्चन्द्रमसि प्रभो ! ।
यो बाह्येनानयेत् शब्दं तस्य बिन्दुजयो भवेत् ॥ १७ ॥
यावद्बाह्ये चन्द्रमसि मनो याति रविप्लुते ।
अन्तर्गते चन्द्रसूर्य्ये न तस्य दुरितं तनौ ॥ १८ ॥
केवलं सूक्ष्मवायुस्थं वायवीशक्तिलालितम् ।
मानसं यः करोतीति तस्य योगादिवर्द्धनम् ॥ १९ ॥
प्राप्ते यज्ञोपवीते यः श्रीवरो ब्राह्मणोत्तमः ।
योगाभ्यासं तदा कुर्य्यात् स भावी योगिवल्लभः ॥ २० ॥
यावत्कालं स्थितं बिन्दुं बाल्यभावे यथा यथा ।
तथा तथा योगमार्गे बिन्दुपातान्मरिष्यति ॥ २१ ॥
तथापि यदि मासं वा पक्षं वा दशभिर्दिनम् ।
यदि तिष्ठति बिन्द्वग्रे साक्षादभ्यासतो जयी ॥ २२ ॥
कामानलमहापीडा-विशिष्टः पुरुषो यदा ।
तत्कामादिसंहरणे विना योगेन कः क्षमः ? ॥ २३ ॥

योगभ्रंशकारणम् ।—

समसंसर्गगूढेन कामो भवति निश्चितम् ।
तत्कामात् क्रोध उत्पन्नो महाशत्रुविनाशकृत् ॥ २४ ॥
क्रोधाद्भवति सम्मोहः सम्मोहात् स्मृतिविभ्रमः ।
स्मृतिभ्रंशाद् बुद्धिनाशो बुद्धिनाशाद्विनाशनम् ॥ २५ ॥

योगग्रहणकालः ।—

अतः सद्बुद्धिमावाश्य मूलादिब्रह्ममण्डले ।

ध्यात्वा श्रीनाथपादाब्जं सिद्धो भवति साधकः ॥ २६ ॥
ईश्वरस्य कृपाचिह्नादादौ शान्तिर्भवेद् भुवि ।
शान्तिभिर्जायते ज्ञानं ज्ञानान्मोक्षमवाप्नुयात् ॥ २७ ॥
शान्तिविद्याप्रतिष्ठा च निवृत्तिरिति ताः स्मृताः ।
चतुर्व्यूहस्ततो देवः प्रोच्यते परमेश्वरः ॥ २८ ॥
इदं ज्ञानमिदं ज्ञेयमिति चिन्तासमाकुलाः ।
पठन्त्यहर्निशं शास्त्रं परतत्त्वपराङ्मुखम् ॥ २९ ॥
शिरो वहति पुष्पाणि गन्धं जानाति नासिका ।
पठन्ति मम तन्त्राणि दुर्लभा भावबोधकाः ॥ ३० ॥
यज्ञोपवीतकाले च पशुभावाश्रयो भवेत् ।
कुतस्तावद्वीराचारो यावद् योगो न सिध्यति ॥ ३१ ॥
आचारो विनयो विद्या प्रतिष्ठा योगसाधनम् ।
तस्यैव जायते सिद्धिरिष्टा पादाम्बुजे मतिः ॥ ३२ ॥
देवगुरौ महाभक्तिर्यस्य नित्यं विवर्द्धते ।
संवत्सरात्तस्य सिद्धिर्भवत्येव न संशयः ॥ ३३ ॥
वेदागमपुराणानां सारमालोक्य यत्नतः ।
मनः संस्थापयेदिष्ट-पादाम्भोरुहमण्डले ॥ ३४ ॥
चेतसि चेतकमले षट्चक्रे योगनिर्मले ।
मनो निधाय मौनी यः स भवेद् योगिवल्लभः ॥ ३५ ॥
मनः करोति कर्माणि मनो लिप्यति पातके ।
मनःसंयमनो भूत्वा पापपुण्यैर्न लिप्यते ॥ ३६ ॥

भैरव उवाच ।—

वद कान्ते ! रहस्यं मे येन सिद्धो भवेन्नरः ।
तत्प्रकारं विशेषेण योगिनामप्यगोचरम् ॥ ३७ ॥
यत्नेव गोपयेद् यद् यद् न निन्देन्न निरोक्षयेत् ।
पूजयेद्भावयेच्चैव वर्जयेन्न जुगुप्सयेत् ॥ ३८ ॥

क्रमेण वद तत्त्वञ्च यदि स्नेहोऽस्ति योगिनि ! ।
अज्ञात्वा पीठतत्त्वञ्च योगी मोहाश्रितो भवेत् ॥ ३९ ॥

आनन्दभैरव्युवाच ।—

त्रैलोक्ययोगयोग्योऽस्मि षट्चक्रभेदने रतः ।
त्वमेव परमानन्द ! सत्त्वाधिष्ठाननिर्मल ! ॥ ४० ॥

वीरसाधना-विधिनिषेधः ।—

संघातयेन्महावीर ! एतान् दोषान् महाभयान् ।
कामक्रोधलोभमोह-मदमात्सर्य्यसंज्ञकान् ॥ ४१ ॥
संघातयेन्महावीरो विकारं चिन्तयेद्भवम् ।
निद्रा लज्जा दौर्मनस्यं दशकालानलः प्रभो ! ॥ ४२
संगोपयेन्महावीरो महामन्त्रं कुलक्रियाम् ।
मुद्राचसूत्रतन्त्रार्थं योगिनीवीरसङ्गमम् ॥ ४३ ॥
अत्याचारं भैरवाणां योगिनीनाञ्च साधनम् ।
नाडीग्रथनमानञ्च गोपयेन्मातृजारवत् ॥ ४४ ॥
न निन्देत् प्राणनिधने देवतां गुरुमीश्वरम् ।
सुरां विद्यां महाचैत्रं पीठं योगादिकारणम् ॥ ४५ ॥
योगिनीं जडमुन्मत्तं जन्मकर्मकुलप्रियाम् ।
प्रयोगधर्मकर्त्तारं न निन्देत् प्राणसंस्थितौ ॥ ४६ ॥
ज्येष्ठभ्रातृवधूञ्चैव बौद्धाचारञ्च योगिनम् ।
कर्माशुभशुभञ्चैव महावीरो न निन्दयेत् ॥ ४७ ॥
निरीक्षयेन्न कदाऽपि कन्यायोनिं दिने रतिम् ।
पशुक्रीड़ां विवसनां कामिनीं प्रकटस्तनीम् ॥ ४८ ॥
विग्रहं द्यूतपापार्थं क्लीवं विष्ठादिकं शुचौ ।
अविचारमारणञ्च अप्रमत्तस्य नेक्षयेत् ॥ ४९ ॥
पूजयेत् परया भक्त्या देवतां गुरुमीश्वरम् ।
शक्तिसाध्यमात्मरूपं स्थूलसूक्ष्मं प्रयत्नतः ॥ ५० ॥

अतिथिं मातरं सिद्धं पितरं योगिनं तथा ।
पूजयेत् परया भक्त्या सिद्धमन्त्रसुसिद्धये ॥ ५१ ॥
भावयेदेकचित्तेन साधूक्तं योगसाधनम् ।
गुरोर्वाक्योपदेशञ्च स्वधर्मं तीर्थदेवताम् ॥ ५२ ॥
कुलाचारं वीरतन्त्रमात्मानं परमेष्ठिनम् ।
भावयेद्विधिविद्याञ्च तन्त्रसिद्धार्थनिर्णयम् ॥ ५३ ॥
वर्जयेत् साधकश्रेष्ठो ह्यगम्यागमनादिकम् ।
धूर्त्तसङ्गं वञ्चकञ्च प्रलापमनृताशुभम् ॥ ५४ ॥
वर्जयेत् पापगोष्ठीञ्च ह्यालस्यं बहुजल्पनम् ।
अवेदकर्मसञ्चारं गोसरं ब्राह्मणस्य च ॥
जुगुप्सयेन्न कदापि विण्मूत्रं क्लेदशोणितम् ॥ ५५ ॥
हीनाङ्गीपिशितं नाथ ! कपालहरणादिकम् ।
सुरां गोपालनञ्चैव निजपापं रिपोर्भयम् ॥ ५६ ॥
वर्ज्यान्येतानि सर्वाणि यदि सिद्धिमिहेच्छति ।
समयाचारमेवेदं योगिनां वीरभाविनाम् ॥ ५७ ॥
गुर्वाज्ञया यः करोति जीवन्मुक्तो भवेद् भुवि ।
वृथा धर्मं वृथा चर्य्यं वृथा दीक्षां वृथा तपः ॥ ५८ ॥
वृथा सुकृतमाख्येति गुर्वाज्ञालङ्घनं नृणाम् ।
ब्राह्मणक्षत्रियादीनामादौ योगादिसाधनम् ॥ ५९ ॥
पश्चात् कुलक्रिया नाथ ! योगविद्याप्रसिद्धये ।
विना भावेन वीरेण पूर्णयोगी कुतो भवेत् ? ॥ ६० ॥
आदौ कुर्य्यात् पशोर्भावं पश्चात् कुलविचारणम् ।
मम तन्त्रे महादेव ! केवलं सारनिर्णयम् ॥ ६१ ॥
अकस्मात् भक्तिसिद्ध्यर्थं कुलाचारञ्च योगिनाम् ।
ब्राह्मणानां कुलाचारं केवलं ज्ञानसिद्धये ॥ ६२ ॥
ज्ञानेन जायते योगी योगादमरविग्रहः ।

भूत्वा योगी कुलीनश्च योगाभ्यासमहर्निशम् ॥ ६३ ॥
षट्चक्रं भूतनिलयं भावयेद्भावसिद्धये ।
मूलपद्मस्योर्द्धदेशे लिङ्गमूले महाशुचिः ॥ ६४ ॥
स्वाधिष्ठाने महापद्मं सम्भुग्णं वायुना यजेत् ।
एतत् षड्दलवर्णानां भावनां हि करोति यः ॥
तस्य साक्षाद्भवेद्विष्णू राकिणीसहितः प्रभो ! ६५ ॥
स्वाधिष्ठानषड्दलस्य कर्णिकामध्यमण्डले ।
दलाष्टकं भावयित्वा नागयुक्तं स ईश्वरः ॥ ६६ ॥
अष्टनागा अष्टदले प्रतिभान्ति यथारुणाः ।
जलस्योपरि पद्मे च ध्यायेत्तन्नागसुप्रभान् ॥ ६७ ॥
अनन्तं वासुकिं पद्मं महापद्मञ्च तक्षकम् ।
कुलीरं कर्कटं शङ्खं दक्षिणादौ दले भजेत् ॥ ६८ ॥
अष्टदलोपरि ध्यायेत् कर्णिकावृत्तयुग्मकम् ॥ ६९ ॥
तदूर्द्ध्वं षड्दलं वादि-लान्तयुक्तं सबिन्दुकम् ।
पूर्वादिक्रमयोगेन दक्षिणावर्त्तवायुना ॥ ७० ॥
पुनः पुनः कुम्भयित्वा ध्यायेत् षड्वर्णवायवीम् ।
केशरं युगलं ध्यायेत् फणाद्रिमाकृतिं मुदा ॥ ७१ ॥
अष्टदले षड्दले च विभाव्य योगिराड् भवेत् ॥ ७२ ॥
अष्टदलस्योर्द्ध्वदेशे वृत्तयुग्मं मनोहरम् ।
तस्योपरि पुनर्ध्यायेत् षड्दले वा दिनान्तकम् ॥ ७३ ॥
दलाष्टकाधो ध्यायेद् यो वृत्तयुग्मं मनोहरम् ।
वृत्ताधो मण्डलाकारं स्वबीजं व्याप्य तिष्ठति ॥ ७४ ॥
वृत्तलग्नं समाव्याप्तं वां-बीजं विद्युदाकरम् ।
कोटिसूर्य्यसमाभासं विभाव्य योगिनां पतिः ॥ ७५ ॥
यान्तबीजकलानान्तु अधः षट्कोणमण्डलम् ।
षट्कोणे दक्षिणादौ च भावयेद् यादिलान्तकम् ॥ ७६ ॥

तत् षट्कोणमध्यदेशे षट्कोणं धूम्रतेजसम् ।
तत् कोणे दक्षिणादौ च द्रव्यादि षट्कमाश्रयेत् ॥ ७७ ॥
द्रव्यं गुणास्तथा कर्म सामान्यं सविशेषकम् ।
समवायं क्रमेणैव षट्कोणेषु विभावयेत् ॥
पूर्वादिक्रमयोगेन दक्षिणावर्त्तवायुना ॥ ७८ ॥
सर्वत्र भावयेन्मन्त्री कुम्भयित्वा पुनः पुनः ।
द्रव्यषट्कोणमध्ये तु षट्कोणं चारुतेजसम् ॥
कोणे कोणे च षड्वर्गान् भावयेत् स्थिरचञ्चलान् ॥ ७९ ॥
तन्मध्ये च त्रिकोणे च रुक्मिणीसहितं हरिम् ॥ ८० ॥
कोटिचन्द्रमरीचिस्थं ध्यायेद् योगी विशालधीः ।
षड्दलान्तर्गतं पद्मं योगिनामपि साधनम् ॥ ८१ ॥
योगी नित्यं यः कुरुते तस्य मासात् प्रसिध्यति ।
एतच्चक्रप्रसादेन नीरोगी निरहङ्कृतः ॥ ८२ ॥
सर्वज्ञो भवति क्षिप्रं श्रीनाथपदभावनात् ।
ज्योतीरूपं योगमार्गं सूक्ष्मातिसूक्ष्मनिर्मलम् ॥ ८३ ॥
त्रैलोक्यकामनासिद्धिः षट्चक्रे भावयेद्धरिम् ।
यो हरिः स समस्तस्य यः शम्भुः सूक्ष्मरूपधृक् ॥ ८४ ॥
सूक्ष्मरूपस्थितो ब्रह्मा ब्रह्माधीनमिदं जगत् ।
एकमूर्त्तिस्त्रयो देवा ब्रह्मविष्णुमहेश्वराः ॥ ८५ ॥
मम विग्रहसंक्लृप्ताः सृजत्यवति हन्ति च ।
प्राणायामाद्भवा एते योगविघ्नकराः स्मृताः ॥ ८६ ॥
प्राणायामेन निष्पत्तिः प्रणवे सिद्धिमाप्नुयात् ।
अकारं ब्रह्मणो वर्णं शब्दरूपं महाप्रभम् ॥ ८७ ॥
प्रणवान्तर्गतं नित्यं यो हि पूरकमाश्रयेत् ।
उकारं वैष्णवं वर्णं शब्दभेदनमीश्वरम् ॥ ८८ ॥
प्रणवान्तर्गतं सत्वं योगकुम्भकमाश्रयेत् ।

मकारं शाम्भवं रूपं जीवभूतं विधूततम् ॥ ८९ ॥
प्रणवान्तस्थितं कालं लयस्थानं समाश्रयेत् ।
वर्णत्रयविभागेन प्रणवं परिकल्पितम् ॥ ९० ॥

हंसमन्त्रः ।—

प्रणवाज्जायते हंसो हंसः सोऽहं परो भवेत् ।
सोऽहं ज्ञानं महाज्ञानं योगिनामपि दुर्लभम् ॥ ९१ ॥
निरन्तरं भावयेद् यः स एव परमो भवेत् ।
हं पुमान् श्वासरूपेण चन्द्रेण प्रकृतिस्तु सः ॥ ९२ ॥
एतद्धंसं विजानीयात् सूर्य्यमण्डलभेदकः ।
विपरीतक्रमेणैव सोऽहं-ज्ञानं यदा भवेत् ॥
तदैव सूर्य्यः सिद्धः स्यात् सुरासुरप्रपूजितः ॥ ९३ ॥
हकारार्णं सकारार्णं गोपयित्वा ततः परम् ।
सन्धिं कुर्य्यात्ततः पश्चात् प्रणवोऽसौ महामनुः ॥ ९४ ॥
एतत् हंसं महामन्त्रं स्वाधिष्ठाने मनोगृहे ॥ ९५ ॥
मनो रूपं भजेद् यस्तु स भवेत् सूर्य्यमध्यगः ।
हंसं सूर्य्यं विजानीयात् सोऽहं चन्द्रो न संशयः ॥
विपरीतो यदा भूयात्तदैव मोक्षभाग्भवेत् ॥ ९६ ॥
यदि हंसमनो रूपं स्वाधिष्ठाने हरेः पदे ।
विभाव्य श्रीगुरोः पादे नीयते नात्र संशयः ॥ ९७ ॥
सोऽहं यदा शक्तिकूटं अकाराऽऽकारसम्पुटम् ।
कृत्वा जपति यो ज्ञानी स भवेत् कल्पपादपः ॥ ९८ ॥
जपहोमादिकं सर्वं हंसेन यः करोति हि ।
तदैव चन्द्रसूर्य्यस्य चाङ्गमन्त्रप्रसाधकः ॥ ९९ ॥
एतज्जपं महादेव ! देहमध्ये करोम्यहम् ॥ १०० ॥
एकविंशत् सहस्राणि षट्शतानि च हं मनुम् ।
पुंरूपेण हकारञ्च स्त्रीरूपेण सकारकम् ॥

जप्त्वा रक्षां करोतीह चन्द्रबिन्दुशतेन च ॥ १०१ ॥
प्रणवान्तं महाहंसं नित्यं जपति यो नरः ।
वायुसिद्धिर्भवेत्तस्य वायवी सुकृपा भवेत् ॥ १०२ ॥
हृद्धंसं प्रवक्ष्यामि येन सिद्धो भवेन्नरः ॥ १०३ ॥
कामरूपी कुलादेव वाक्सिद्धिरिति निश्चितम् ।
आदौ प्रणवमुच्चार्य्य ततो हंसपदं लिखेत् ॥ १०४ ॥
तत्पश्चात् प्रणवं ज्ञेयं ततः प्रणवमेव च ।
तर्पयामि पदस्यान्ते प्रणवं फडिति स्मरेत् ॥ १०५ ॥
एतद्धि हंसमन्त्रस्तु वीराणामुदयाय च ।
हृद्धंसप्रसादेन षट्चक्रभेदको भवेत् ॥ १०६ ॥
षट्चक्रे च प्रशंसन्ति सर्वे देवाश्चराचराः ।
योगसिद्धविद्यया मे भ्रमन्ति क्रोधिनस्ततो ॥ १०७ ॥
यदि हंसं हृद्धंसं जपन्ति वायुसिद्धये ।
तदा सर्वे पलायन्ते राक्षसान्मानुषा यथा ॥ १०८ ॥

इति श्रीरुद्रयामले उत्तरतन्त्रे महातन्त्रोद्दीपने भावनिर्णये पाशवकल्पे षट्चक्रसारसङ्केते योगशिक्षाविधिनिर्णये सिद्धमन्त्रप्रकरणे भैरव-भैरवीसंवादे द्वाविंशः पटलः ॥ २२ ॥

अथ त्रयोविंशः पटलः ।

भैरव्युवाच ।—

अथातः संप्रवक्ष्यामि ब्रह्ममार्गमनुत्तमम् ।
यद् यज्ज्ञात्वा सुराः सर्वे जडाख्याः परमं जगुः ॥ १ ॥
नमस्तेजःप्रकाशाय महतां धर्मवृद्धये ।
योगाय योगिनां देव ! भक्षप्रश्ननिरूपणम् ॥ २ ॥
योगाभ्यासं यः करोति न जानातीह भक्षणम् ।

कोटिवर्षसहस्रेण न योगी भवति ध्रुवम् ॥ ३ ॥
अतो भक्षणमाहात्म्यं प्रवदामि समासतः ।
यज्ज्ञात्वा सिद्धिमाप्नोति स्वाधिष्ठानादिसेदनम् ॥ ४ ॥

योगिनां भोजननियमः ।—

आदौ विवेकी यो भूयाद् भूतले परमेश्वर ! ।
स एव भक्षणीयञ्च गृहेऽरण्ये समाचरेत् ॥ ५ ॥
वायुासनदृढ़ानन्दः परमानन्दनिर्भरः ।
मिताहारं सदा कुर्य्यात् पूरकाह्लादहेतुना ॥ ६ ॥
तदा पूरकसिद्धिः स्याद्भक्षणादिनिरूपणात् ।
उदरं पूरयेन्नित्यं कुम्भयित्वा पुनः पुनः ॥ ७ ॥
निजहस्तप्रमाणत्रिः पूरयेत् पूर्णमेव च ।
तत् प्रस्थं स्थापयेन्नाथ विश्वामित्रकपालके ॥ ८ ॥
हंसद्वादशवारेण शिलायामपि घर्षयेत् ।
नित्यं तत्पात्रपूर्णञ्च वायुनैकेन भक्षयेत् ॥ ९ ॥
तण्डुलान् शालिसम्भूतान् कपालप्रस्थपूर्णकान् ।
दिने दिने क्षयं कुर्य्याद्भक्षणादिषु कर्मसु ॥ १० ॥
हंसद्वादशवारेण जपेन संचयञ्चरेत् ।
शिलायां तत्कपालञ्च वर्द्धयेत् पूरकादिकम् ॥ ११ ॥
यावत्कालं क्षयं याति निजभक्षणनिर्णयम् ।
तत्कालं वायुनाऽऽपूर्य्य स्वोदरं काकचञ्चुभिः ॥ १२ ॥
आकुञ्चयेत् सदा मूले कुण्डलीं भक्षधारणात् ।
तत्र संपूरयेद् योगी भक्षप्रस्थावनाशनात् ॥ १३ ॥
कालक्रमेण तत् सिद्धिमवाप्नोति जितेन्द्रियः ।
यत् स्थानं भक्षणस्यैव तत् स्थाने पूरयेत् सुखम् ॥ १४ ॥
पुनः पुनर्भक्षणेन भक्ष्यसिद्धिमुपैति हि ।
विना पूरकयोगेन भक्षणं नापि सिध्यति ॥ १५ ॥

अथवाऽन्यप्रकारेण भक्ष्यत्यागविनिर्णयम् ।
येन हीना न सिध्यन्ति नाड़ीचक्रस्य देवताः ॥ १६ ॥
द्वात्रिंशद् ग्रासमादाय त्रिपर्वणि यथास्थितम् ।
अर्द्धग्रासं विहायापि नित्यं भक्षणमाचरेत् ॥ १७ ॥
सदा सम्पूरयेद्वायुं भावको गतभीर्महान् ।
भक्ष्यस्थाने समायोज्य पिबेद्वायुमहर्निशम् ॥ १८ ॥
चतुःषष्टिदिने सर्वं क्षयं कृत्वा ततः सुधीः ।
पयोभक्षणमाकुर्य्यात् स्थिरचेता जितेन्द्रियः ॥ १९ ॥
पयःप्रमाणं वक्ष्यामि हस्तप्रस्थं त्रयं त्रयम् ।
शनैः शनैर्विजेतव्याः प्राणा मत्तगजेन्द्रवत् ॥ २० ॥
षण्मासाज्जायते सिद्धिः पूरकादिषु लक्षणम् ।
क्रमेणाष्टाङ्गसिद्धिः स्याद् यतीनां कामरूपिणाम् ॥ २१ ॥
बद्धपद्मासनं कृत्वा विजयानन्दनन्दितः ।
धारयेन्मारुतं मन्त्री मूलाधारे मनोलयम् ॥ २२ ॥

आसननियमस्तद्भेदाश्च ।—

अथासनप्रभेदञ्च शृणु मत्सिद्धिकाङ्क्षिणाम् ।
येन विना पूरकाणां सिद्धिभाक् न महीतले ॥ २३ ॥
अधोमुण्डासनं वक्ष्ये सर्वेषां प्राणिनां सुखम् ।
ऊर्द्ध्वमार्गे पदे दत्त्वा धारयेन्मारुतं सुधीः ॥ २४ ॥
सर्वासनानां श्रेष्ठं हि ऊर्द्ध्वपादो यदाचरेत् ।
तदैव महतीं सिद्धिं ददाति वायवी कला ॥ २५ ॥
एतत् पद्मासनं कुर्य्यात् प्राणवायुप्रसिद्धये ।
शुभासनः सदा ध्यायेत् पूरयित्वा पुनः पुनः ॥ २६ ॥
ऊरुमूले वामपादं पुनस्तद्दक्षिणं पदम् ।
वामोरौ स्थापयित्वा च पद्मासनमिति स्मृतम् ॥ २७ ॥
सव्यपादस्य योगेन आसनं परिकल्पयेत् ।

तदैकासनकाले तु द्वितीयासनमाचरेत् ॥ २८ ॥
पृष्ठे करद्वयं नीत्वा बद्धाङ्गुष्ठद्वयं सुधीः ।
कायसङ्कोचमाकृत्य धृत्वा बद्धासनो भवेत् ॥ २९ ॥
बद्धपद्मासनं कृत्वा वायुबद्धं पुनः पुनः ।
चिबुकं स्थापयेद् यत्नाद्धादितेजसि भास्करे ॥ ३० ॥
इत्यासनं हि सर्वेषां प्राणिनां सिद्धिकारणम् ।
वायुवश्याय यः कुर्यात् स योगी नात्र संशयः ॥ ३१ ॥
स्वभावसिद्धिकरणं सर्वेषां स्वस्तिकासनम् ।
वामपादतले कुर्यात् पाददक्षिणमेव च ॥ ३२ ॥
सव्यापसव्ययोगेन आसनद्वयमेव च ।
सर्वत्रैवं प्रकारञ्च कृत्वा नारीव सा रमेत् ॥ ३३ ॥
आसनानि शृणु ह्येतत् त्रिंशतासंख्यकानि च ।
सव्यापसव्ययोगेन द्विगुणं प्रभवेदिह ॥ ३४ ॥
चतुःषष्ट्यासनानीह वदामि वायुसाधनात् ।
द्वात्रिंशद्विन्दुभेदाय कल्पयद्वायुहृद्वये ॥ ३५ ॥
कार्मुकासनमाकृत्य उदरे पूरयेत् सुखम् ।
तदा वायुर्वशा याति कालेन सूक्ष्मवायुना ॥ ३६ ॥
कृत्वा पद्मासनं मन्त्री वेष्टयित्वा प्रधारयेत् ।
करेण दक्षिणेनैव वामपादान्तिकं तटम् ॥ ३७ ॥
सव्यापसव्यद्विगुणं कार्मुकासनमेव च ।
कार्मुकद्वययोगेन शरवद्वायुमानयेत् ॥ ३८ ॥
कुक्कुटासनमावक्ष्ये नाडीनिर्मलहेतुना ।
मत्कुलागमयोगेन कुर्याद्वायुनिषेवणम् ॥ ३९ ॥
निजहस्तद्वयं भूमौ पातयित्वा जितेन्द्रियः ।
पद्भ्यां बद्धं यः करोति कूर्परद्वयमध्यतः ॥ ४० ॥
सव्यापसव्ययुगलं कुक्कुटं ब्रह्मणा कृतम् ।

बद्धं कृत्वा अधःशीर्षं यः करोति खगासनम् ॥ ४१ ॥
खगासनप्रसादेन श्रमलेपो भवेद् द्रुतम् ।
पुनः पुनः श्रयादेव त्रिश्रयश्रमलोपकृत् ॥ ४२ ॥
लोलासनं सदा कुर्यात् वायुलोलापघातनात् ।
स्थिरवायुप्रसादेन स्थिरचेता भवेद् द्रुतम् ॥ ४३ ॥
पद्मासनं समाकृत्य पादयोः सन्धिगह्वरे ।
हस्तद्वयं मध्यदेशे नियोज्य कुक्कुटाकृतिः ॥ ४४ ॥
निजहस्तद्वयं पश्चात् निपात्य हस्तनिर्भरम् ।
कृत्वा शरीरमुत्थाप्य स्थित्वा पद्मासनेऽनिलम् ॥ ४५ ॥
स्थित्वैतदासने मन्त्री अधःशीर्षं करोति चेत् ।
उत्तमाङ्गासनं ज्ञेयं योगिनामतिदुर्लभम् ॥ ४६ ॥
एतदासनमात्रेण शरीरं शीतलं भवेत् ।
पुनः पुनः प्रसादेन चैतन्या कुण्डली भवेत् ॥ ४७ ॥
सव्यापसव्ययोगेन यः करोति पुनः पुनः ।
पूरयित्वा मूलपद्मे सूक्ष्मवायुं विकुम्भयेत् ॥ ४८ ॥
कृत्वा कुम्भकमेवं हि सूक्ष्मवायुलयं विधौ ।
मूलादिब्रह्मरन्ध्रान्ते स्थापयेल्लयगे पदे ॥ ४९ ॥
एतत् शुभासनं कृत्वा सूक्ष्मरन्ध्रे मनोलयम् ।
सूचीरन्ध्रे यथा सूत्रं पूरयेत् सूक्ष्मवायुना ॥ ५० ॥
एतत् क्रमेण षण्मासात् पूरकस्यापि लक्षणम् ।
महासुखं समाप्नोति योगाऽष्टाङ्गनिषेवणात् ॥ ५१ ॥
अथ वक्ष्ये महादेव ! पर्वतासनमङ्गलम् ।
यत् कृत्वा स्थिरलग्नौ स्यात् षट्चक्रादिविलोपनम् ॥ ५२ ॥
योन्यासनं पर्वतेन योगं योगफलेऽनिलम् ।
तत्कालफलवन्तीव खेचरो यावदेव हि ॥ ५३ ॥
पादयोगेन चक्रस्य लिङ्गाग्रं यो नियोजयेत् ।

अन्यत् पदमुरौ दत्त्वा तत्र योन्यासनं भुवि ॥ ५४ ॥
तत्र मध्ये महादेव ! वन्ध्ययोन्यासनं शृणु ।
यत् कृत्वा खेचरो भूत्वा विचरेदीश्वरो यथा ॥ ५५ ॥
कृत्वा योन्यासनं नाथ ! लिङ्गगुह्यादिबन्धनम् ।
मुखनासानेत्रकर्णं कनिष्ठाङ्गुलिभिस्तथा ॥ ५६ ॥
ओष्ठाधरकनिष्ठाभ्यां तथैव मध्यनासिके ।
मध्यमाभ्यां नेत्रयुग्मं तर्जनीभ्यां परैः श्रुतौ ॥ ५७ ॥
एतद् योन्यासनं नाथ ! योगिनामतिदुर्लभम् ।
कृत्वा यः पूरयेद्वायुमूलमाकुञ्च्य स्तम्भयेत् ॥ ५८ ॥
सव्यापसव्ययोगेन सिद्धो भवति साधकः ।
शनैः शनैः समारुह्य कुम्भकं परिपूरयेत् ॥ ५९ ॥
अरुणोदयकालाच्च वसुदण्डे सदाशिव ! ।
सव्यापसव्ययोगेन गृह्णीयाद्वायुगानिलम् ॥ ६० ॥
द्वितीयप्रहरे कुर्याद्वायुपूजां मनोरमाम् ।
एतदासनमाकृत्य सिद्धो भवति साधकः ॥ ६१ ॥
अथान्यदासनं वक्ष्ये यत् कृत्वा सोऽमरो भवेत् ।
मत्साधकः शुचिः श्रीमान् कुर्याद् गत्वा निराविले ॥६२॥
भेकानामासनं योगं निजवर्चसि सम्मुखम् ।
निधाय पादयुगलं स्कन्धे बाहू पदोपरि ॥ ६३ ॥
ध्यायेद्धि चित्पदं भ्रान्तमासनस्थः सुखाय च ।
यदि सर्वाङ्गमुत्तोल्य गगने खेचरासनम् ॥ ६४ ॥
महाभेकासनं प्रोक्तं सर्वसिद्धिप्रदायकम् ।
महाविद्यामहामन्त्रं प्राप्नोति जपतीह यः ॥ ६५ ॥
एतत् प्रभेदं वक्ष्यामि करोति यः स चामरः ।
एकपादमुरौ बद्ध्वा स्कन्धेऽन्यत् पादरचणम् ॥ ६६ ॥
एतत् प्राणासनं नाम सर्वसिद्धिप्रदायकम् ।

वायुमूले समारोप्य ध्यात्वाऽऽकुञ्च्य प्रकारयेत् ॥ ६७ ॥
केवलं पादमेकञ्च स्कन्धे चारोप्य यत्नतः ।
एकपादेन गगने तिष्ठेत् स दण्डवत् प्रभो ! ॥ ६८ ॥
अपानासनमेतद्धि सर्वेषां पूरकाश्रयम् ।
कृत्वा सूक्ष्मे शीर्षपद्मे समारोप्य च वायुभिः ॥ ६९ ॥
तदा सिद्धो भवेन्मर्त्यः प्राणाऽपानसमागमम् ।
अपानासनयोगेन कृत्वा योगीश्वरो भुवि ॥ ७० ॥
समानासनमावक्ष्ये सिद्धमन्त्रादिसाधनात् ।
एकपादमुरौ दत्त्वा गुह्येऽन्यल्लिङ्गवक्त्रके ॥ ७१ ॥
एतद्वीरासनं नाथ ! समानासनसंज्ञकम् ।
इत्याकृत्य जपेन्मन्त्रं धृत्वा वायुं चतुर्दले ॥ ७२ ॥
कुण्डलीं भावयेन्मन्त्री कोटिविद्युल्लताकृतिम् ।
आत्मचन्द्रामृतरसैराप्लुतां योगिनीं सदा ॥ ७३ ॥
वीरासनन्तु वीराणां योगवायुप्रधारणम् ।
यो जानाति महावीरः स योगी भवति ध्रुवम् ॥ ७४ ॥
अथ वक्ष्ये महाकाल ! समानासनसाधनः ।
भेदक्रमेण यज्ज्ञात्वा वीराणामधिपो भवेत् ॥ ७५ ॥
समानासनमाकृत्य वृद्धाङ्गुष्ठं करेण च ।
एकेन साधिकारी स्याद् स्वरयोगादिसाधने ॥ ७६ ॥
आसनं यो हि जानाति वायूनां हरणं तथा ।
कालादीनां निर्णयन्तु स कदाचिन्न नश्यति ॥ ७७ ॥
कालेन लभ्यते सिद्धिः कालरूपो महोज्ज्वलः ।
साधकैर्योगिभिर्ध्येयः सिद्धवीरासनात्मना ॥ ७८ ॥
अथ वक्ष्ये नीलकण्ठ ! ग्रन्थिभेदासनं शुभम् ।
ज्ञात्वा रुद्रो भवेत् क्षिप्रं सूक्ष्मवायुनिषेवणात् ॥ ७९ ॥
कृत्वा पद्मासनं मन्त्री जङ्घयोर्हृदये करौ ।

कूर्परस्थानपर्य्यन्तं विभेद्य स्कन्धधारणम् ॥ ८० ॥
भित्त्वा पद्मासनं मन्त्री सहस्रार्द्धेन घाटनम् ।
येन शीर्षं भावनस्त्वं सर्वाङ्गुलिभिराश्रमम् ॥ ८१ ॥
ग्रन्थिभेदासनञ्चैतत् खेचरादिप्रदर्शनम् ।
कृत्वा सूक्ष्मवायुलयं परमात्मनि कारयेत् ॥ ८२ ॥
अथान्यासनमावक्ष्ये योगपूरकरक्षणात् ।
कृत्वा पद्मासनं पादा अङ्गुष्ठजङ्घयोः स्थितम् ॥ ८३ ॥
हस्तमेकन्तु जङ्घायां कार्मुके कूर्परोर्द्धके ।
पद्मासने समाधाय अङ्गुष्ठं परिधावयेत् ॥ ८४ ॥
कार्मुकासनमेतद्धि सव्यापसव्ययोगतः ।
पद्मासनं वेष्टयित्वा अङ्गुष्ठाग्रं प्रधावयेत् ॥ ८५ ॥
यः करोति सदा नाथ ! कार्मुकासनमुत्तमम् ।
स वै रोगादिशत्रूंश्च क्षयं नीत्वा सुखी भवेत् ॥ ८६ ॥
अथ वक्ष्येऽत्र संक्षेपात् सर्वाङ्गासनमुत्तमम् ।
यत् कृत्वा योगनिपुणो विद्याभिः पण्डितो यथा ॥ ८७
अधो निधाय शीर्षञ्च ऊर्द्ध्वपादद्वयञ्चरेत् ।
पद्मासनन्तु तत्रैव भूमौ कूर्परयुग्मकम् ॥ ८८ ॥
दण्डे दण्डे सदा कुर्य्यात् श्रमशान्तिपरः सुधीः ।
नित्यं सर्वासनं हित्वा न कुर्य्यात् वायुधारणम् ॥ ८९ ॥
मासेन सूक्ष्मवायूनां गमनञ्चोपलभ्यते ।
त्रिमासे देवपदवीं त्रिमासे शीतलो भवेत् ॥ ९० ॥
अथ वक्ष्ये महादेव ! मयूरासनमुत्तमम् ।
भूमौ निपात्य हस्तौ द्वौ कूर्परोपरि देहकम् ॥ ९१ ॥
कूर्परोपरि संस्थाप्य सर्वदेहं स्थिराशयः ।
केवलं हस्तयुगलं निपात्य भुवि सुस्थिरः ॥ ९२ ॥
एतदासनमात्रेण नाड़ीसम्भेदनं भवेत् ।

पूरकेण दृढ़ो याति सर्वत्राङ्गाश्रयेण च ॥ ९३ ॥
अथान्यदासनं कृत्वा सर्वव्याधिनिवारणम् ।
योगाभ्यासी भवेत् क्षिप्रं ज्ञानासनप्रसादतः ॥ ९४ ॥
दक्षपादोरुमूले च वामपादतलं तथा ।
दक्षपादतलं दक्ष-पार्श्वे संयोज्य धारयेत् ॥ ९५ ॥
एतज्ज्ञानासनं नाथ ! ज्ञानादिद्याप्रकाशकम् ।
निरन्तरं यः करोति तस्य ग्रन्थिः श्लथोभवेत् ॥ ९६ ॥
सव्यापसव्ययोगेन मुण्डासनमिति स्मृतम् ।
कृत्वा ध्यात्वा स्थिरो भूत्वा लीयते परमात्मनि ॥ ९७ ॥
गरुड़ासनमावक्ष्ये येन ध्यानं स्थिरं भुवि ।
सर्वदोषादिनिर्मुक्तो भवतीह महाबली ॥ ९८ ॥
एकपादमुरौ बद्ध्वा एकपादेन दण्डवत् ।
जङ्घापादसन्धिदेशे ज्ञानव्यग्रं व्यवस्थितम् ॥ ९९॥
एतदासनमाकृत्य पृष्ठे संहारमुद्रया ।
आराध्य योगनाथञ्च स दास ईश्वरस्य च ॥ १०० ॥
अथान्यदासनं वक्ष्ये येन सिद्धो भवेन्नरः ।
अकस्माद्वायुसञ्चारं कोकिलाख्याऽऽसनेन च ॥ १०१ ॥
ऊर्द्ध्वं हस्तद्वयं कृत्वा तदग्रे पादयोः सुधीः ।
वृद्धाङ्गुष्ठद्वयं नाथ ! शनैः शनैः प्रकारयेत् ॥
पद्मासनं समाकृत्य कूर्परोपरि संस्थितः ॥ १०२ ॥
अथ वक्ष्ये वीरनाथ ! आनन्दमन्दिरासनम् ।
यत् कृत्वा अमरो धीरो भवत्येवेह साधकः ॥ १०३ ॥
हस्तयुग्मं पार्श्वदेशे पादयुग्मं प्रदापयेत् ।
प्रकृत्य दण्डवत् कौल ! नितम्बाग्रे प्रतिष्ठति ॥ १०४ ॥
खञ्जनासनमावक्ष्ये यत् कृत्वा सुस्थिरो भवेत् ।
पृष्ठे पादद्वयं बद्ध्वा हस्तौ भूमौ प्रधारयेत् ॥ १०५ ॥

भूमौ हस्तद्वयं नाथ ! पातयित्वाऽनिलं पिबेत् ।
पृष्ठे पादद्वयं बद्धा खञ्जनेन जयी भवेत् ॥ १०६ ॥
अथान्यदासनं वक्ष्ये साधकानां हिताय च ।
पवनासनरूपेण खेचरो योगिराड् भवेत् ॥ १०७ ॥
स्थित्वा बद्धासने धीरो नाभेरधः करद्वयम् ।
ऊर्द्ध्वमुण्डः पिबेद्वायुं निरुध्येत यमाविले ॥ १०८ ॥
अथ सर्पासनं वक्ष्ये वायुपानाय केवलम् ।
शरीरं दण्डवत्तिष्ठेद्रज्जुबद्धस्तु पादयोः ॥ १०९ ॥
वायवी कुण्डली देवी कुण्डलाकारमण्डले ।
मण्डिता भूषणाद्यैश्च वक्ष्ये सर्पासनस्थितिम् ॥ ११० ॥
निद्राऽऽलस्यभयान् त्यक्त्वा रात्रौ कुर्य्यात् पुनः पुनः ।
सर्वान् विघ्नान् वशीकृत्य निद्रादीन् वायुसाधनात् ॥१११॥
अथ वक्ष्ये कालरूप ! स्कन्धासनमनुत्तमम् ।
कलिपापात् प्रमुच्येत वायवी वशमानयेत् ॥ ११२ ॥
निजपादद्वयं बद्धा स्कन्धदेशे च साधकः ।
नित्यमेतत् पदद्वन्द्वं भूमौ पुष्टिकरं परम् ॥ ११३ ॥

इति श्रीरुद्रयामले उत्तरतन्त्रे महातन्त्रोद्दीपने भावासननिर्णये पाशवकल्पे षट्चक्रसारसङ्केते सिद्धमन्त्रप्रकरणे भैरव-भैरवीसंवादे त्रयोविंशः पटलः ॥ २३ ॥

अथ चतुर्विंशः पटलः ॥

आनन्दभैरव्युवाच ।—

अथ वक्ष्ये महाकाल ! योगशास्त्रार्थनिर्णयम् ।
येन विज्ञानमात्रेण षट्चक्रग्रन्थिभेदकः ॥ १ ॥

योगसाधना ।—

पर्वातिरिक्तदिवसे कुर्य्यात् श्रीयोगसाधनम् ।

कालिकाकुलसर्वस्वं कलिकालान्वितं तथा ॥ २ ॥
आसनं विधिना ज्ञानं कोटिकोटिक्रियाऽन्वितम् ।
शतलक्षसहस्राणि ह्यासनानि महीतले ॥ ३ ॥
स्वर्गे पातालमध्ये च संयुक्तानि महर्षिभिः ।
भेदाभेदक्रमेणैव कुर्य्यान्नित्यं सदासनम् ॥ ४ ॥
तत प्रकारञ्च विविधं यत् ज्ञात्वा सोऽमरो भवेत् ।
अमरः सिद्ध इत्येवमष्टैश्वर्य्यसमन्वितः ॥ ५ ॥
प्रतिभाति स एवाथ सूक्ष्ममन्त्रार्थवेदिनः ।
अमरास्तं प्रशंसन्ति सर्वलोके निरन्तरम् ॥ ६ ॥
देवाः श्रीकामिनीकान्ताः प्रभवन्ति जगत्त्रये ।
कालं हि वशमाकर्त्तुं नियुक्तो यश्च भावकः ॥ ७ ॥
ते सर्वे विचरन्तीह कोटिवर्षशतेषु च ।
तत्तदासननामानि शृणु तत् साधनानि च ॥
येन विज्ञानमात्रेण साक्षाद्योगस्य भक्तिमान् ॥ ८ ॥
अथ कूर्मासनं नाथ ! कृत्वा वायुं प्रपूरयेत् ।
कामरूपी भवेत् क्षिप्रं कलिकल्मषनाशनम् ॥ ९ ॥
समानासनमाकृत्य लिङ्गाग्रे किल मस्तकम् ।
नितम्बे हस्तयुगलं भूमौ सङ्कोचितः पतेत् ॥ १० ॥
कुक्कुटासनमावक्ष्ये वायूनां धारणाय च ॥ ११ ॥
तिष्ठेत् कुण्डाकृतिर्भूमौ करशीर्षोपरि स्थितौ ।
पदोपरि पदं दत्त्वा शीर्षोपरि करद्वयम् ॥
तिष्ठेत् कुण्डाकृतिर्भूमौ कुक्कुटासनमेव तत् ॥ १२ ॥
अथ मत्स्यासनं वक्ष्ये हस्तोपरि कराङ्गुलेः ।
पादयुग्मप्रमाणेन हृद्वाङ्गुष्ठस्य योजनम् ॥ १३ ॥
मकरासनमावक्ष्ये वायुपानाय कुम्भयेत् ।
पृष्ठे पादद्वयं बद्धा हस्ताभ्यां पृष्ठबन्धनम् ॥ १४ ॥

अथ सिंहासनं नाथ ! कूर्परोपरि जानुनी।
स्थापयित्वा ऊर्द्ध्वमुखो वायुपानं समाचरेत् ॥ १५ ॥
अथ वच्ये महाकाल ! कुञ्जरासनमुत्तमम् ।
करेणैकेन पादाभ्यां भूमौ तिष्ठेत् शिरःकरः ॥ १६ ॥
व्याघ्रासनमतो वच्ये क्रोधकालविनाशनम् ।
एकपादं शीर्षमध्ये मेरुदण्डोपरि स्थितम् ॥ १७ ॥
भल्लूकासनमावच्ये यत् कृत्वा योगिराड् भवेत् ।
नितम्बे च पादगोष्ठी हस्ताभ्यामङ्गुलीयकम् ॥ १८ ॥
अथ कामासनं वच्ये कामसङ्गेन हेतुना ।
गरुड़ासनमाकृत्य कनिष्ठाग्रैः स्पृशेद्भवम् ॥ १९ ॥
वर्त्तुलासनमावच्ये यत् कृत्वा भैरवो भवेत् ।
आकाशस्थितपादाभ्यां पृष्ठदेशं निबन्धयेत् ॥ २० ॥
अथ चेमासनं वच्ये यत कृत्वा चेमभाक् भवेत् ।
दचहस्तं दचपादं केवलं स्थापयेत् सुधीः ॥ २१ ॥
वच्ये मालासनं नाथ ! यत् कृत्वा वायवीप्रियः ।
शुभयोगं समाप्नोति एकहस्तस्थितो नरः ॥ २२ ॥
अथ दिव्यासनं वच्ये पृष्ठं हस्तेन बन्धयेत् ।
एकहस्तमध्यदेशं भूमिहस्तश्च नासया ॥ २३ ॥
अर्द्धोदयासनं नाथ ! सर्वाङ्ग खे नियोजयेत् ।
केवलं हस्तयुगलं भुवि चालोड़येत् तथा ॥ २४ ॥
अथ चन्द्रासनं वच्ये पादाभ्यां स्वशरीरकम् ।
पुनः पुनर्भ्रामयेद् यो वायुधारणपूर्वकम् ॥ २५ ॥
अथ हंसासनं वच्ये शरीरेण पुनः पुनः ।
भूमौ सन्ताड़येत् श्वासैः प्राणवायुं दृढ़ः सुधीः ॥ २६ ॥
अथ सूर्य्यासनं वच्ये पृष्ठात् पादेन बन्धनम् ।
पृष्ठे भेदान्वितं पादं तस्य हस्तेन बन्धयेत् ॥ २७ ॥

अथ योगासनं वच्ये यत् कृत्वा योगिराड् भवेत् ।
तिष्ठेत्पादतलद्वन्द्वे स्वाङ्गे बद्धा करद्वयम् ॥ २८ ॥
गदासनमतो वच्ये गदाकृतिर्वसेद्भुवि ।
ऊर्द्ध्वबाहुर्भवेद् येन कायशोधनहेतुना ॥ २९ ॥
अथ लच्यासनं वच्ये लिङ्गाग्रेऽङ्घ्रितलद्वयम् ।
गुह्यदेशे हस्तयुग्मं तलाभ्यां बन्धयेद्भुवि ॥ ३० ॥
अथ कुल्यासनं वच्ये यत्कृत्वा कौलिको भवेत् ।
एकहस्तं मस्तकस्थोऽधःशीर्षेऽभिन्नगे करम् ॥ ३१ ॥
ब्राह्मणासनमावच्ये यत्कृत्वा ब्राह्मणो भवेत् ।
एकपादमुरौ दत्त्वा तिष्ठेद्दण्डाकृतिर्भुवि ॥ ३२ ॥
चत्रियासनमावच्ये यत्कृत्वा वीर्य्यवान् भवेत् ।
केशेन पादयुगलं बद्धा तिष्ठेदधोमुखः ॥ ३३ ॥
अथ वैश्यासनं वच्ये यत्कृत्वा धनवान् भवेत् ।
वृद्धाङ्गुष्ठेन यस्तिष्ठेत् हस्तयुग्मं स्वकोरसि ॥ ३४ ॥
अथ शूद्रासनं वच्ये यत्कृत्वा सेवको भवेत् ।
धृत्वाऽङ्गुष्ठद्वयं योज्य नासाग्रपादमध्यके ॥ ३५ ॥
अथ जात्यासनं वच्ये येन जातिस्मरो भवेत् ।
हस्ताङ्घ्रियुग्म भूमौ च गमनागमनं ततः ॥ ३६ ॥
पाशवासनमावच्ये कृत्वा पशुपतिर्भवेत् ।
पृष्ठे हस्तद्वयं बद्धा कूर्पराग्रे स्वमस्तकम् ॥ ३७ ॥
एतेषां साधनादेव चिरजीवी भवेन्नरः ।
संवत्सरं साधनाद्वै जीवन्मुक्तो भवेद् ध्रुवम् ॥ ३८ ॥
श्रीविद्यासाधनं पश्चात् कथितव्यं तव प्रभो ! ।
आसनं योगसिद्ध्यर्थं कायशोधनहेतुना ॥ ३९ ॥
इदानीं शृणु देवेश ! रहस्यं कोमलासनम् ।
योगसिद्धिविचाराय सिद्धचर्मासनं शुभम् ॥ ४० ॥

अथ नरासनं वक्ष्ये षोड़शादिप्रकारकम् ।
येन साधनमात्रेण योगी भवति साधकः ॥ ४१ ॥
प्रकारं षोड़शं प्रोक्तं मत्कुलागमसम्भवम् ।
येन साधनमात्रेण साक्षाद् योगी महीतले ॥ ४२ ॥
एकमासाद्भवेत् कल्पो द्विमासे द्रुतकल्पनम् ।
त्रिमासे योगकल्पः स्याच्चतुर्मासे स्थिराशयः ॥ ४३ ॥
पञ्चमासे सूक्ष्मकल्पे षष्ठमासे विवेकगः ।
सप्तमासे ज्ञानयुक्तो भावको भवति ध्रुवम् ॥ ४४ ॥
अष्टमासेऽन्नसंयुक्तो जितेन्द्रियकलेवरः ।
नवमे सिद्धमिलनो दशमे चक्रभेदवान् ॥ ४५ ॥
एकादशे महावीरो द्वादशे खेचरो भवेत् ।
इति योगासनस्थश्च योगी भवति साधकः ॥ ४६ ॥

नरासनम् ।—

नरासनं यः करोति स सिद्धो नात्र संशयः ।
तत्प्रकारं प्रवक्ष्यामि येन सिद्धो भवेत् प्रभो ! ॥ ४७ ॥
अधोमुखं महादेव । नरासनस्य साधने ।
करणीयं साधकेन्द्रैर्योगशास्त्रार्थसम्मतम् ॥ ४८ ॥
अक्षीणं यौवनोद्दामं सुन्दरं चारुकुन्तलम् ।
लोकानां श्रेष्ठमेवं हि पतितं रणसम्मुखे ॥ ४९ ॥
तत्सर्वं हि समानीय मङ्गले वासरे निशि ।
चन्द्रसूर्यासनं कृत्वा साधयेत्तत्र कौलिकः ॥ ५० ॥
अथान्यत् सम्प्रवक्ष्यामि सर्वसिद्धिप्रकारकम् ।
भेकासनं यः करोति स एव योगिनीपतिः ॥ ५१ ॥
अथान्यत् सम्प्रवक्ष्यामि यत् कृत्वा योगिराड् भवेत् ।
तत्सर्वोत्तरशिरसि स्थित्वा चन्द्रासने जपेत् ॥ ५२ ॥
अथान्यत तत्प्रकारश्च महाविद्यादिदर्शनात् ।

मत्सरे गौरवर्णे च तत्र शैलासने जपेत् ॥ ५३ ॥
अथान्यत्तत्प्रकारश्च योगिकौलो न संशयः ।
यद्येवं म्रियते सोऽपि तदा भद्रासने जपेत् ॥ ५४ ॥
तत्तत्साधनकाले च एवं कुर्य्याद्दिने दिने ।
नृत्यवाद्यगीतराग-भोगोनविंशतौ दिने ॥ ५५ ॥
चतुर्दशं न वीक्ष्येत भैरवाणां भयार्दनात् ।
मनोनिवेशमात्रेण योगी भवति भैरव ! ॥ ५६ ॥
स्वेच्छासनं समाकृत्य मन्त्रं जपति यो नरः ।
महासारो वीतरागः सिद्धो भवति निश्चितम् ॥ ५७ ॥

शवसाधना ।—

अथान्यत् शवमाहात्म्यं शृणुष्वावहितो मम ।
तत्सर्वं गृहमानीयाऽऽच्छाद्य शार्दूलचर्मणा ॥ ५८ ॥
तत्र मन्त्री महापूजां कृत्वा प्रविश्य संजपेत् ।
पद्मासनस्थस्तस्यैव कृतयोगो न संशयः ॥ ५९ ॥
एतत्प्रकारासनमाशु कृत्वा जितेन्द्रियो योगफलार्थविज्ञः ।
भवेन्मनुष्यो मम चाज्ञया हि सिद्धो गणोऽसौ जगतामधीशः ॥ ६० ॥
शृणु शङ्खासनं वक्ष्ये तव वारादिनामृतम् ।
भल्लूकञ्च सर्पराजं व्याघ्रं सद्यो मृतं यजेत् ॥ ६१ ॥
यस्य मृत्युर्भवेन्नाथ ! भैरवस्य सुरापतेः ।
रणे सम्मुखयुद्धस्य तमानीय जपञ्चरेत् ॥ ६२ ॥
तत्र कौलासनं कृत्वा अथवा कमलासनम् ।
महाविद्यामहामन्त्रं जप्त्वा लिङ्गमवाप्नुयात् ॥ ६३ ॥
एतत्सर्वं न गृह्णीयाद् यदीच्छेदात्मनो हितम् ।
कुव्याधिमरणं कुष्ठं स्त्रीवश्यं पतितं मृतम् ॥ ६४ ॥
दुर्भिक्षमृतमुन्मत्तमव्यक्तलिङ्गमेव च ।
हीनाङ्गं भूचरं वृद्धं पलायनपरं तथा ॥ ६५ ॥

अन्यथा यद् विचारेण हत्वा लोकं जपन्ति ये ।
ते सर्वे व्याघ्रभक्षाः स्युः खादन्ति व्याघ्ररूपिणः ॥ ६६ ॥
पर्य्युषितं तथाऽस्वस्थमधिकाङ्गं कुकिल्बिषम् ।
ब्राह्मणं गोमयं वीरं धार्म्मिकं सन्त्यजेत् सुधीः ॥ ६७ ॥
स्त्रीजनं योगिनं त्यक्त्वा साधयेद्वीरसाधनम् ।
तदा सिद्धो भवेन्मन्त्री आज्ञया मे न संशयः ॥ ६८ ॥
तरुणं सुन्दरं शूरं मन्त्रविद्धं समुज्ज्वलम् ।
गृहीत्वा जपमाकृत्य सिद्धो भवति नान्यथा ॥ ६९ ॥
मनुष्यशवहृत्पद्मे सर्वसिद्धिकुलाकुलाः ।
तत्र सर्व्वासनान्येव सिध्यन्ति नात्र संशयः ॥ ७० ॥
अथान्यत्तत्प्रकारन्तु यत् कृत्वा योगिराड् भवेत् ।
कोमलाद्यासने स्थित्वा धारयन् मारुतं सुधीः ॥ ७१ ॥
तत्कोमलासनं वक्ष्ये शृणुष्व मम तद्वचः ।
अहृद्धकं मृतं बालं षण्मासात् कोमलं परम् ॥ ७२ ॥
तद्विभेदं प्रवक्ष्यामि गर्भच्युतमहाशवम् ।
तद्वि व्याघ्रत्वचाऽऽबद्धं कृत्वा तत्र जपेत् स्थिरः ॥ ७३ ॥
षण्मासानन्तरं यावद्दशमासाच्च पूर्व्वकम् ।
मृतं चारुमुखं बालं गर्भाष्टमपुरःसरम् ॥ ७४ ॥
एकहस्ते द्विहस्ते वा चतुर्हस्ते समन्ततः ।
विशुद्ध आसने कुर्य्यात् संस्कारं पूजनं ततः ॥ ७५ ॥
पूर्णे पञ्चमवर्षे च साधको वीतभीः स्वयम् ।
हीनवीतोपनयनो यो मृतः स हि कोमलः ॥ ७६ ॥
गर्भच्युतफलं नाथ ! शृणु तत् फलसिद्धये ।
अणिमाद्यष्टसिद्धिः स्यात् संवत्सरस्य साधनात् ॥ ७७ ॥
मृतासने जपेन्मन्त्री महाविद्यामनुं शुभम् ।
अचिरात्तस्य सिद्धिः स्यान्नात्र कार्य्या विचारणा ॥ ७८ ॥

अथान्यत् शवमाहात्म्यं शृणु सिद्धिश्च साधनात् ।
साधको योगिराड् भूत्वा मम पादतले वसेत् ॥ ७९ ॥
दशसंवत्सरे पूर्णे यो म्रियेत शुभे दिने ।
शनौ मङ्गलवारे च तमानीय प्रसाधयेत् ॥ ८० ॥
तत्र वीरासनं कृत्वा यो जपेद्भद्रकालिकाम् ।
अथवा बद्धपद्मे च स सिद्धो भवति ध्रुवम् ॥ ८१ ॥
अथ भावफलं वक्ष्ये येन शवादिसाधनम् ।
अकस्मात् प्राप्तिमात्रेण शवस्य विहितस्य च ॥ ८२ ॥
यं पञ्चदशवर्षीयं सुन्दरं पतितं रणे ।
तमानीय जपेद्विद्यां निशि वीरासने स्थितः ॥ ८३ ॥
शीघ्रमेव सुसिद्धिः स्यात् खेचरी वायुपूरणी ।
धारणाशक्तिसिद्धिः स्यात् यः करोतीह साधनम् ॥ ८४ ॥
अथ षोड़शवर्षीयं सर्व्वसिद्धिकरं नृणाम् ।
भोगमोक्षौ करे तस्य शवेन्द्रस्यापि साधनात् ॥ ८५ ॥
एवंक्रमेण पञ्चाशद्वर्षीयं सुन्दरं वरम् ।
आनीय साधयेद् यस्तु स योगी भवति ध्रुवम् ॥ ८६ ॥
शवं रणस्थमानीय साधयेत् सुसमाहितः ।
इन्द्रतुल्यो भवेन्नाथ ! रणस्थशवसाधनात् ॥ ८७ ॥
यदि सम्मुखयुद्धे वा शृणु पट्टीशघातनम् ।
शवमानीय वीरेन्द्रो जपेद्वीरासनस्थितः ॥ ८८ ॥
तत् शवन्तु महादेव ! पूजार्थं निजमन्दिरे ।
देवालये निर्ज्जने च स्थापयित्वा जपञ्चरेत् ॥ ८९ ॥
तत्र वीरासनं किंवा योनिमुद्रासनादिकम् ।
पद्मासनं तथा कृत्वा वायुं धृत्वा जपञ्चरेत् ॥ ९० ॥
मासैकेन भवेद् योगी विप्रो गुणधरः शुचिः ।
सूक्ष्मवायुधारणज्ञो जपेद् यौवनगे शवे ॥ ९१ ॥

शवसाधनकाले च यद्‌यत् कर्म करोति हि।
तत्कर्म्मसाधनादेव योगी स्यादमरो नरः ॥ ९२ ॥

आनन्दभैरव्युवाच।—

कालक्रियादिकं ज्ञात्वा सूक्ष्मानिलविधारणम्।
साधको विचरेद्वीरो वीराचारविवेचकः ॥ ९३ ॥
शवादे रणघातस्य क्रियामाहात्म्यमुत्तमम्।
शृणु सङ्केतभाषाभिः शिवेन्द्रचन्द्रशेखर ! ॥ ९४ ॥
एकहस्तार्द्धमाने तु भूम्यधो विधिमन्दिरे।
संस्थाप्य सुशवं नाथ ! मायादावगतः प्रभो ! ॥ ९५ ॥
एकाहं जगदाधारा आधारान्तर्गता सती।
पतिहीना सूक्ष्मरूपा सधरादिचराचरे ॥ ९६ ॥
मदीयं साधकं पुण्यं धर्म्मकामार्थमोक्षगम्।
एका पामि सदा दक्षा धात्रीरूपा सरस्वती ॥ ९७ ॥
केवलं तत्त्वभावेन शम्भो ! योगपरायण !।
मग्ना संसारकरणात्त्वयि त्वञ्चाहमेव च ॥ ९८ ॥
यद्‌यत् पदार्थनिकरे तिष्ठसि त्वं सदा मुदा।
तत्रैव संस्थिरा हृष्टा चाहमेव न संशयः ॥ ९९ ॥
एतद्भावं त्वं करोषि कस्य हेतोस्तव प्रिया।
वामाङ्गे संस्थिरा नित्यं कामक्रोधविवर्जिता ॥ १०० ॥

आनन्दभैरव उवाच।—

किं प्रयोजनमेवं हि शवादीनाञ्च साधनात्।
यदि ते श्रीपदाम्भोज-मधुन्यक्तो भवेद् यतिः ॥ १०१ ॥
त्रैलोक्यपूजिते भीमे ! वाग्वादिनीस्वरूपिणि !।
शवसाधनमात्रेण केन योगी भवेद्वद ॥ १०२ ॥
आनन्दरसलावण्ये ! मन्दहासमुखाम्बुजे !।
योगी भजति योगार्थं केन तत्फलमावद ॥ १०३ ॥

आनन्दभैरव्युवाच।—

यदि शङ्कर ! भक्तोऽसि मम जापपरायणः।
तथापि शवभावेन शववत् शवसाधनम् ॥ १०४ ॥
रात्रियोगे प्रकर्त्तव्यं दिवसे न कदाचन।
शवे स्थिरो यो भवति स भक्तो मे न संशयः ॥ १०५ ॥
शवो मेऽतीव सद्द्रव्यं मम तुष्टिनिबन्धनम्।
ममाज्ञापालने योग्यः कुर्य्याद्वीरः शवासनम् ॥ १०६ ॥
यद्यहं तत्र गच्छामि तदैव स शिवो भवेत्।
निःशेषत्यागमात्रेण शवत्वं प्रलयं तनोः ॥ १०७ ॥
यः करोति भावराशिं मयि देव्यां महेश्वर !।
त्रैलोक्यपूजितायान्तु स शिवः शवमाश्रयेत् ॥ १०८ ॥
अधिकारी तु भक्तस्य पालने परपृष्ठतः।
करोमि कामिनीनाथं सन्देहो नात्र भूतले ॥ १०९ ॥
यदा वै त्यज्यते गात्रं पशूनां मारणाय च।
तदैते च मृताः सर्वे जीवन्ते केन हेतुना ॥ ११० ॥
तदाहुतिमहाद्रव्यं शवेन्द्रं रणहानिगम्।
आनीय साधयेद् यस्तु स स्थिरो मे सुभक्तिगः ॥ १११ ॥
सदा क्रोधी भवेद् यस्तु स क्रूरो नात्र संशयः।
स कथं वीररात्रौ च साधयेद्विह्वलः शवम् ॥ ११२ ॥
भयविह्वलचेता यः स क्रोधी नात्र संशयः।
नास्ति क्रोधसमं पापं पापात् क्षिप्तो भवेत् शवे ॥ ११३ ॥
यो भक्तः पापनिर्मुक्तः सिद्धरूपो निराश्रयः।
विवेकी ध्याननिष्ठश्च स्थिरः संसाधयेत् शवम् ॥ ११४ ॥
यावत्कालं स्थिरचित्तं न प्राप्नोति जितेन्द्रियः।
तावत्कालं नापि कुर्य्यात् शवेन्द्रस्यापि साधनम् ॥ ११५ ॥
तद्दिनात्तद्दिनं यावत् यद्वा व्याप्य साधयेत् ॥ ११६ ॥

एवं कृत्वा हविष्याशी महाविद्यादिसाधनम्।
जितेन्द्रियो मुदा कुर्य्यादष्टाङ्गसाधनेन च ॥ ११७ ॥

शवसाधनासिद्धिः।—

तदष्टाङ्गफलं ह्येतत् यत् कृत्वा सिद्धिभाग्भवेत्।
नाड़ीमुद्राभेदकस्य कुलाचारफलान्वितम् ॥ ११८ ॥
अष्टाङ्गसाधनादेव सिद्धरूपी महीतले।
पश्चादन्यं स्वर्गगामी भवेन्न भूतलं विना ॥ ११९ ॥
आदौ भूतलसिद्धिः स्याद्भवलोकस्य सिद्धिभाक्।
पश्चात् स्वर्लोकसिद्धिः स्यान्महर्लोकस्य सिद्धिभाक् ॥१२०॥
जनलोकस्य सिद्धीशस्तपोलोकस्य सिद्धिभाक्।
सत्यलोकस्य सिद्धीशः पश्चाद्भवति साधकः ॥ १२१ ॥
एवंक्रमेण सिद्धिः स्यात् स्वर्गादीनां महेश्वर!।
अष्टाङ्गसाधनार्थाय देवा भवन्ति भूतले ॥ १२२ ॥
भूतले सिद्धिमाहृत्य गच्छन्ति ब्रह्ममन्दिरे।
क्रमेणैवं विलीनास्ते अतो भूतलसाधनम् ॥ १२३ ॥

जापकस्य विधिनिषेधः।—

भूतले शवमास्थाय ब्रह्मचारी दिवा शुचिः।
निशायां पञ्चतत्त्वेन दिवसेऽष्टाङ्गसाधनम् ॥ १२४ ॥
जितेन्द्रियो निर्विकारो वित्तवान् हि परो नरः।
शवं संसाधयेद्धीरश्चिन्ताऽऽलस्यविवर्जितः ॥ १२५ ॥
चिन्ताभिर्जायते लोभो लोभात् कामः प्रपद्यते।
कामाद्भवति सम्मोहो मोहादालस्यसञ्चयः ॥ १२६ ॥
आलस्यदोषजालेन निद्रा भवति तत्क्षणात्।
महानिद्राविपाकेन मृत्युर्भवति निश्चितम् ॥ १२७ ॥
अपक्वनिद्राभङ्गेन क्रोधो भवति निश्चितम्।
तत्क्रोधाच्चित्तविकलो विकलात् श्वासवर्द्धनः ॥ १२८ ॥

वृथायुः क्षयमाप्नोति विस्तरे श्वाससंचये।
बलं बुद्धिः क्षयं याति बुद्धिहीनो जड़ात्मकः ॥ १२९ ॥
जड़भावेन मन्त्राणां जपहीनो भवेन्नरः।
जपहीने श्वासनाशः श्वासनाशे तनुक्षयम् ॥ १३० ॥
अतस्तनुं समाश्रित्य जपनिष्ठो भवेत् शुचिः।
अष्टाङ्गधारणेनैव सिद्धो भवति नान्यथा ॥ १३१ ॥
अष्टाङ्गलक्षणं वक्ष्ये साक्षात् सिद्धिकरं परम्।
जन्मकोटिसहस्राणां फलेन कुरुते नरः ॥ १३२ ॥
यमेन लभ्यते ज्ञान ज्ञानात् कुलपतिर्भवेत्।
यो योगीशः स कुलेशः शिशुभावस्थनिर्मलः ॥ १३३ ॥
नियमेन भवेत् पूजा पूजया लभते शिवम्।
यत्र पूजा न सम्पूर्णा सम्पूर्णः शुचिरुच्यते ॥ १३४ ॥
आसनेन दीर्घजीवी रोगशोकविवर्जितः।
ग्रन्थिभेदनमात्रेण साधकः शीतलो भवेत् ॥ १३५ ॥
प्राणायामेन शुद्धः स्यात् प्राणवायुवशेन च।
वशीभवति देवेश! आत्मारामेऽपि लीयते ॥ १३६ ॥
प्रत्याहारेण चित्तन्तु चञ्चलं कामनाप्रियम्।
तत्कामनाविनाशाय स्थापयेत् पदपङ्कजे ॥ १३७ ॥
धारणेन वायुसिद्धिरिष्टसिद्धिस्ततः परम्।
अणिमासिद्धिमाप्नोति अणुरूपेण वायुना ॥ १३८ ॥
ध्यानेन लभते मोक्षं मोक्षेण लभते सुखम्।
सुखेनानन्दवृद्धिः स्यादानन्दो ब्रह्मविग्रहः ॥ १३९ ॥
समाधिना महाज्ञानी सूर्य्याचन्द्रमसोर्गतिः।
महाशून्ये लयस्थाने श्रीपादाऽऽनन्दसागरः ॥ १४० ॥
तत्तरङ्गे मनो दत्त्वा परमार्थविनिर्मले।
श्रीपादमूर्त्तिमाकल्प्य ध्यायेत् कोटिरवीन्दुवत् ॥ १४१ ॥

श्रीमूर्त्तिं कोटिचपला-प्रोज्ज्वलाञ्च सुनिर्मलाम् ।
ध्यायेद् योगी सहस्रारे कोटिसूर्य्येन्दुमन्दिराम् ॥ १४२ ॥
श्रीविद्यामतिसुन्दरीं त्रिजगतामानन्दपुञ्जेश्वरीं
कोट्यर्कायुततेजसि प्रियकरीं योगादरीं शाङ्करीम् ।
तां मालां स्थिरचञ्चलां गुरुघनां व्यालाचलां केवलां
ध्यायेत् सूक्ष्मसमाधिना स्थिरमतिः स श्रीपतिर्गच्छति ॥ १४३ ॥

इति श्रीरुद्रयामले उत्तरतन्त्रे महातन्त्रोद्दीपने भावनिर्णये पाशवकल्पे
षट्चक्रसारसङ्केते योगविद्याप्रकरणे मन्त्रसिद्धिप्रत्युपाये
भैरव-भैरवीसंवादे चतुर्विंशः पटलः ॥ २४ ॥

अथ पञ्चविंशः पटलः ।

आनन्दभैरव उवाच ।—

वद कान्ते ! रहस्यं मे तत्त्वावधानपूर्वकम् ।
यत् यत् ज्ञात्वा महायोगी प्रविशत्यनलाम्बुजे ॥ १ ॥
यदि स्नेहदृष्टिरस्ति मम ब्रह्मनिरूपणम् ।
योगसारं तत्त्वपथं निर्मलं वद योगिनि ! ॥ २ ॥

आनन्दभैरव्युवाच ।—

शृणु प्राणेश ! वक्ष्यामि योगनाथ ! क्रियागुरो ! ।
योगाङ्गं योगिनामिष्टं तत्त्वब्रह्मनिरूपणम् ॥ ३ ॥
एतत् सृष्टिप्रकारञ्च प्रपालनविधिं तथा ।
असंख्यसृष्टिसंहारं वदामि तत्त्वतः शृणु ॥ ४ ॥

सूक्ष्मसृष्टिस्थितिसंहाराः ।—

त्वमेव संहारको हि वरप्रियः प्रधानमेषु त्रितयेषु शङ्कर ! ।
संहारभावं जननाशनात् सदा प्रधानमाद्यस्य जगत्प्रपालनम् ॥ ५ ॥
तत्साधनं मेरुभुजङ्गमङ्गं सृष्टिप्रकारं खलु तत्र मध्यमम् ।
तत्पालनञ्चेति मयैव राज्ये संहाररूपं प्रकृतेर्गुणार्थकम् ॥ ६ ॥

एतत्त्रय नाथ ! भयादिकारणं तन्नाशनाम्ने प्रणवं गुणात्मकम् ।
त्रयं गुणातीतमनन्तमक्षरं सम्भाव्य योगी भवतीह साधकः ॥ ७ ॥
अव्यक्तरूपात् प्रणवादि सृष्टिस्तल्लीयते व्यक्ततनौ स्वभासा ।
सूक्ष्माद्यकारात्प्रतिभाति खे सदा प्रणश्यति स्थूलकलान्निरक्षरात् ॥ ८
अतीवचित्रं जगतां विचित्रं नित्यं चरित्रं कथितुं न शक्यते ।
हंसाश्रितास्ते भववासिनो जना ज्ञात्वा न देहस्थमुपाश्रयन्ते ॥ ९ ॥
देहाधिकारी प्रणवादिदेव मायाश्रितो निद्रित एष कालः ।
प्रलीयते दीर्घपथे च काले तदा प्रणश्यन्ति जगत्स्थिता जनाः ॥ १० ॥
कालो जगद्भक्षक ईशवेशी तरौ तु जीर्णा पतिहीनदीना ।
स एव मृत्युर्विहितं चराचरं प्रभुञ्जति श्रीरहितं पलायनम् ॥ ११ ॥
पञ्चेन्दुतत्त्वेन महेन्द्रसृष्टिः प्रतिष्ठिता यज्ञविधानहेतुना ।
सदैव यज्ञं कुरुते भवार्णवे निःसृष्टिकाले वरयज्ञसाधनम् ॥ १२ ॥
हिताहितं तत्र महार्णवे भयं विलोक्य लोका भयविह्वलाः सदा ।
विशन्ति ते कुत्सितमार्गमण्डले अतो महानारकिबुद्धिसंयुता ॥ १३ ॥
मायामये धर्मकुलानले भवे लीनो हरेर्याति पथानुसारी ।
म्रियेत कालानलतुल्यमृत्युना कथन्तु योगी कथमेव साधकः ? १४
यः साधक. प्रेमकलासु भक्त्या स एव मूर्खो यदि याति संसृतौ ।
संसारहीनः प्रियचारुकान्त्याः सिद्धो भवेत् कामदचक्रवर्त्ती ॥ १५ ॥
वसेन्न सिद्धो गृहिणीसमृद्धां महाविपद् दुःखविशोषिकायाम् ।
यदीह काले प्रकरोति वासनां तदा भवेन्मृत्युरतीव निश्चितम् ॥ १६
कृपावलोकं वदनारविन्दं तदैव हे नाथ ! ममैव चेद् यदि ।
सदैव यः साधुगणाश्रितो नरो ध्यात्वा निगूढं मतिभावगद्गदः ॥ १७
स एव साधुः प्रकृतेर्गुणाश्रितः कृती वशी वेदपुराणवक्ता ।
स त्वं महाकाल ! इति स्म चाहं प्रनिश्चयं ते कथितं श्रिये मया ॥ १८
गुणेन भक्तेन्द्रगणाधिकानां साक्षात् फलं योगजयाख्यसङ्गतिम् ।
अष्टाङ्गभेदेन शृणुष्व काम-प्रेमात्मभावाय जयाय वक्ष्ये ॥ १९ ॥

मायादिकं यः प्रथमं वशं नयेत् स एव योगी जगतां प्रतिष्ठितः ।
रविप्रकारं यमवासनावशे शृणुष्व तं कालवशार्थकेवलम् ॥ २० ॥
सर्वत्र कामादिकमाशु जित्वा जेतुं समर्थो यमकर्मसाधकः ।
कामं तथा क्रोधमतीव लोभं मोहं मदं मत्सरितं सुदुष्कृतम् ॥२१॥
अतो यमद्वादशशब्दघातकं वशं समाक्रम्य महेन्द्रतुल्यम् ।
सर्वत्र वायोर्वशकारणाय करोति योगी स ध्रुवो यथा भवेत् ॥२२॥
अहिंसनं सत्यसुवाक्यसुप्रियं अस्तेयभावं कुरुते वशिष्ठवत् ।
सुब्रह्मचर्य्यं सुदृढ़ार्जवं सदा क्षमाधृतौ तिष्ठति सूक्ष्मवायुगः ॥२३॥
तथा मिताहारमसंशयं मनःशौचं प्रपञ्चार्थविवर्जनं प्रभो ! ।
करोति यः साधकचक्रवर्त्ती वाद्योत्सवाज्ञानविवर्जनं सदा ॥२४॥
वशी यमद्वादशसंख्ययेति करोति चाष्टाङ्गफलार्थसाधनम् ।
वरानना श्रीचरणारविन्दं लब्ध्वा दशां नेच्छति नेत्रगोचरम् ॥२५॥
तपश्च सन्तोषमनःस्थिरं सदा आस्तिक्यमेवं द्विजदेवपूजनम् ।
नितान्तदेवार्चनमेव भक्त्या सिद्धान्तशुद्धश्रवणञ्च ह्रीर्मतिः ॥ २६ ॥
जपो हुतं तर्पणमेव सेवनं तद्भावनं चेष्टनमेव नित्यम् ।
इतीह शास्त्रे नियमाश्चतुर्दश भक्तिक्रियामङ्गलसूचनानि ॥ २७ ॥
पूर्वोक्तयोन्यासनमेव सत्यं भेकासनं बद्धमहोत्पलाऽऽसनम् ।
वीरासनं भद्रसुभद्रकासनं पूर्वोक्तमेवासनमाशु कुर्य्यात् ॥ २८ ॥
सर्वाणि तन्त्राणि कृतानि नाथ ! सूक्ष्माणि नालं वशहेतुना मया ।
तथापि मूढ़ो यदि वायुपानमाहृत्य योनौ भ्रमतीह पातकी ॥२९
प्राणानिलानन्दवशेन मत्तो गजेन्द्रगामी पुरुषोत्तमः स्मृतः ।
यस्त्वेवमेवानिपुणो भवेद्वशी ब्रह्माण्डलोकं परिपाति यो बली ॥३०
वदामि देवादिसुरेश्वर ! प्रभो ! सूक्ष्मानिलं प्राणवशेन धारयेत् ।
सिद्धो भवेत् साधकचक्रवर्त्ती सर्वान्तरस्थं परिपश्यति प्रभुम् ॥३१

आनन्दभैरव उवाच ।—

वद कान्ते ! महाब्रह्म-ज्ञानं सर्वत्र शोभनम् ।

येन वायुवशं ज्ञात्वा खेचरो भूभृतां पतिः ॥ ३२ ॥
साधको ब्रह्मरूपी स्यात् ब्रह्मज्ञानप्रसादतः ।
ब्रह्मज्ञानात् परं ज्ञानं कुत्रास्ति ? वद सुन्दरि ! ॥ ३३ ॥

आनन्दभैरव्युवाच ।—

शृणुष्व योगिनां नाथ ! धर्मज्ञो ब्रह्मसंज्ञक ! ।
अज्ञानध्वान्तमोहानां निर्मलं ब्रह्मसाधनम् ॥ ३४ ॥

ब्रह्मसाधनम् ।—

ब्रह्मज्ञानसमो धर्मो नान्यधर्मो विधीयते ।
यदि ब्रह्मज्ञानधर्मी स सिद्धो नात्र संशयः ॥ ३५ ॥
कोटिकन्याप्रदानेन कोटिजापेन किं फलम् ? ।
ब्रह्मज्ञानसमो धर्मो नान्यधर्मो विधीयते ॥ ३६ ॥
सरोवरसहस्रेण कोटिहेमाऽचलेन च ।
कोटिब्राह्मणभोज्येन कोटितीर्थेन किं फलम् ? ॥ ३७ ॥
कामरूपे महापीठे साधकैर्लभ्यते यदि ।
ब्रह्मज्ञानसमो धर्मो नान्यधर्मो विधीयते ॥ ३८ ॥
ब्रह्मज्ञानन्तु द्विविधं प्राणायामजमव्ययम् ।
भक्तिवाक्यं शब्दरसं स्वरूपं ब्रह्मणः पदम् ॥ ३९ ॥
प्राणायामन्तु द्विविधं निर्गर्भञ्च सगर्भकम् ।
जपध्यानं सगर्भं स्यात् निर्गर्भं तद्विवर्ज्जितम् ॥ ४० ॥
अव्ययालक्षणाक्रान्तं प्राणायामं परात्परम् ।
ब्रह्मज्ञानेन जानाति साधको विजितेन्द्रियः ॥ ४१ ॥
तत्प्रकारद्वयं नाथ ! मात्रावर्त्तिजपक्रमम् ।
मात्रावर्त्तिद्वादशकं जपक्रमन्तु षोड़शम् ॥ ४२ ॥
नासिकायां महादेव ! लक्षणत्रयमुत्तमम् ।
पूरकं कुम्भकं तत्र रेचकं देवतात्रयम् ॥ ४३ ॥
एतेषामप्यधिष्ठानं ब्रह्मविष्णुशिवाः प्रजाः ।

त्रिवेणीसङ्गमे यान्ति सर्वपापापहारकाः ॥ ४४ ॥

योगिनां सूक्ष्मतीर्थानि ।—

इडा च भारती गङ्गा पिङ्गला यमुना मता ।
इडापिङ्गलयोर्मध्ये सुषुम्ना च सरस्वती ॥ ४५ ॥
त्रिवेणीसङ्गमो यत्र तीर्थराजः स उच्यते ।
त्रिवेणीसङ्गमे वीरश्चालयेत्तान् पुनः पुनः ॥ ४६ ॥
सर्वपापादिनिर्मुक्तः सिद्धो भवति नान्यथा ।
पुनः पुनर्भ्रामयित्वा महातीर्थे निरञ्जने ॥ ४७ ॥
वायुरूपं महादेवं सिद्धो भवति नान्यथा ।
चन्द्रसूर्य्यात्मिका मध्ये वह्निरूपे महोज्ज्वले ॥ ४८ ॥
ध्यात्वा कोटिशीरकरं कुण्डलीकिरणं वशी ।
त्रिवारभ्रमणं वायोरुत्तमाधममध्यमम् ॥ ४९ ॥
यत्र यत्र गतो वायुस्तत्र तत्र त्रयं त्रयम् ।
इडा देवी च चन्द्राख्या सूर्य्याख्या पिङ्गला तथा ॥ ५० ॥
सुषुम्ना जननी मुख्या सूक्ष्मा पङ्कजतन्तुवत् ।
सुषुम्नामध्यदेशे तु वज्राख्या नाड़िका शुभा ॥ ५१ ॥
तत्र सूक्ष्मा चित्रिणी च तत्र श्रीकुण्डली गतिः ।
तया संगृह्य तत् नाड्या षट्पद्मं सुमनोहरम् ॥ ५२ ॥
ध्यानगम्यापरं ज्ञानं षट्शरं शक्तिसंयुतम् ।
ब्रह्मा विष्णुश्च रुद्रश्च ईश्वरश्च सदाशिवः ॥ ५३ ॥
ततः परशिवो नाथ ! षट्शिवाः परिकीर्त्तिताः ।
डाकिनी राकिणी शक्तिर्लाकिनी काकिनी तथा ॥ ५४ ॥
साकिनी तत्र षट्पद्मे शक्तयः षट्शिवान्विताः ।
मूलाधारं स्वाधिष्ठानं मणिपूरं सुपङ्कजम् ॥ ५५ ॥
अनाहतं विशुद्धाख्यमाज्ञाचक्रं महोत्पलम् ।
आज्ञाचक्रादि मध्ये तु चन्द्रं शीतलतेजसम् ॥ ५६ ॥

प्रपतन्तं मूलपद्मे तं ध्यात्वा पूरकानिलम् ।
यावत्कालं स्थैर्य्यगुणं तत्कालं कुम्भकं स्मृतम् ॥ ५७ ॥
पिङ्गलायां प्रगच्छन्तं रेचकं तं वशं नयेत् ।
अङ्गुष्ठैकपर्वणा च दक्षनासापुटं वशी ॥ ५८ ॥
धृत्वा षोड़शवारेण प्रणवेन जपञ्चरेत् ।
एतत् पूरकमाकृत्य कुर्य्यात् कुम्भकमद्भुतम् ॥ ५९ ॥
चतुःषष्टिप्रणवेन जपं ध्यानं समाचरेत् ।
कुम्भकानन्तरं नाथ ! रेचकं कारयेद् बुधः ॥ ६० ॥
द्वात्रिंशद्वारजापेन मूलेन प्रणवेन वा ।
द्विनासिकापुटं बद्ध्वा कुम्भकं सर्वसिद्धिदम् ॥ ६१ ॥
कनिष्ठाऽनामिकाभ्यान्तु वाममङ्गुष्ठदक्षिणम् ।
पुनर्दक्षिणनासाग्रे वायुमापूरयेद् बुधः ॥ ६२ ॥
मनुषोड़शजापेन कुम्भयेत् पूर्ववत्ततः ।
ततो वामे रेचकञ्च द्वात्रिंशत् प्रणवेन तु ॥ ६३ ॥
पुनर्वामेन सम्पूर्य्य षोड़शप्रणवेन तु ।
पुनर्दक्षिणनासाग्रे द्वादशाङ्गुलमानतः ॥ ६४ ॥
कुम्भयित्वा रेचयेद् यः सर्वत्र पूर्ववत् प्रभो ! ।
प्राणायामत्रयेणैव प्राणायामैकमुत्तमम् ॥ ६५ ॥
द्विवारं मध्यमं प्रोक्तं मध्यमञ्चैकवारकम् ।
त्रिकालं कारयेद् यत्नादनन्तफलसिद्धये ॥ ६६ ॥
प्रातर्मध्याह्नकाले च सायाह्ने नियतः शुचिः ।
जपध्यानादिभिर्मुक्तं सगर्भं यः करोति हि ॥ ६७ ॥
मासात् सल्लक्षणं प्राप्य षण्मासे पवनाशनः ।
तालुमूले समारोप्य जिह्वाग्रं योगसिद्धये ॥ ६८ ॥
त्रिकाले सिद्धिमाप्नोति प्राणायामेन षोड़श ।
सदाऽभ्यासी वशीभूत्वा पवनं जनयेत् पुमान् ॥ ६९ ॥

षण्मासाभ्यन्तरे सिद्धिरिति योगार्थनिर्णयः ।
योगेन लभ्यते सर्वं योगाधीनमिदं जगत् ॥ ७० ॥
तस्माद्योगं परं कार्य्यं यदा योगी तदा सुखी ।
विना योगं न सिध्येत कुण्डलीपरदेवता ॥ ७१ ॥
अथ योगं सदा कुर्य्यादीश्वरीपाददर्शनात् ।
योगयोगाद्भवेन्मोक्ष इति योगार्थनिर्णयः ॥ ७२ ॥
मन्त्रसिद्धीच्छुको यो वा सेव योगं सदाऽभ्यसेत् ।
मात्रावृत्तिं प्रवक्ष्यामि काकचञ्चुपुटं तथा ।
सूक्ष्मवायुभक्षणन्तत् चन्द्रमण्डलचालनम् ॥ ७३ ॥

आनन्दभैरव्युवाच ।—

त्रावृत्तिश्चैव विविधं तन्मध्ये उत्तमं त्रयम् ।
वर्णं सचन्द्रं संयुक्तं मूलं त्रात्तरमेव वा ॥ ७४ ॥
जानुजङ्घामध्यदेशे तत्तत् सर्वासनस्थितः ।
वामहस्ततालुमूलं भ्रामयेद् द्वादशक्रमात् ॥ ७५ ॥
द्वादशक्रमशः कुर्य्यात् प्राणायामं हि पूर्ववत् ।
मात्रावृत्तिक्रमेणैव जपमष्टसहस्रकम् ॥ ७६ ॥
प्राणायामद्वादशकैर्भवेदष्टसहस्रकम् ।
कृत्वा सिद्धेश्वरो नाथ ! निष्पापश्चैकमासतः ॥ ७७ ॥
त्रिसन्ध्यां कारयेद् यत्नाद् ब्रह्मज्ञानी निरञ्जनः ।
भवतीति न सन्देहः सदाऽभ्यासी हि योगिराट् ॥ ७८ ॥
योगाभ्यासाद्भवेन्मुक्तो योगाभ्यासात् कुलेश्वरः ।
योगाभ्यासाच्च सन्न्यासी ब्रह्मज्ञानी निरामयः ॥ ७९ ॥
सदाऽभ्यासाद्भवेद् योगी सदाऽभ्यासात् परन्तपः ।
सदाऽभ्यासात् पापमुक्तो विधिविद्या सकृत्सकृत् ॥ ८० ॥
काकचञ्चुपुटं कृत्वा पिबेद्वायुमहर्निशम् ।
सूक्ष्मवायुक्रमेणैव सिद्धो भवति योगिराट् ॥ ८१ ॥

योगिनां जपनियमः ।—

बद्धपद्मासनं कृत्वा योगिमुद्रां विभाव्य च ।
मूले सम्पूरयेद्वायुं काकचञ्चुपुटेन तु ॥ ८२ ॥
मूलमाकुञ्च्य सर्वत्र प्राणायामे मनोरमे ।
प्रबोधयेत् कुण्डलिनीं चैतन्यां चित्स्वरूपिणीम् ॥ ८३ ॥
ओष्ठाधरे काकतुण्डं दत्त्वा दन्तान् प्रगाढकम ।
बद्ध्वा वा यद्जपेद् योगी जिह्वां नैव प्रसारयेत् ॥ ८४ ॥
राजदन्तयुगं नाथ ! न स्पृशेज्जिह्वया सुधीः ।
काकचञ्चुपुटं कृत्वा बद्ध्वा वीरासने स्थितः ॥ ८५ ॥
तालुजिह्वामूलदेशे योगी जिह्वां प्रयोजयेत् ।
तद्भूतामृतरसं काकचञ्चुपुटे पिबेत् ॥ ८६ ॥
सूक्ष्मवायुक्रमेणैव सिद्धो भवति योगिराट् ।
करोति स्तम्भनं योगी सोऽमरो भवति ध्रुवम् ॥ ८७ ॥
एतद् योगप्रसादेन जीवन्मुक्तस्तु साधकः ।
जराव्याधिमहापीड़ा-रहितो भवति क्षणात् ॥ ८८ ॥
अथवा मात्रया कुर्य्यात् षोड़शस्वरसम्पुटम् ।
स्वमन्त्रं प्रणवं वाऽपि जप्त्वा योगी भवेन्नरः ॥ ८९ ॥
अथर्ववर्णमालाभिः पुटितं मूलमन्त्रकम् ।
मात्रासंख्याक्रमेणैव जप्त्वा कालवशं नयेत् ॥ ९० ॥
वदने नोच्चरेद्वर्णं वाञ्छाफलसमृद्धये ।
केवलं जिह्वया जप्यं कामनाफलसिद्धये ॥ ९१ ॥
नाभौ सूर्य्यो वह्निरूपो ललाटे चन्द्रमास्तथा ।
अग्निशिखास्पर्शनेन गलितं चन्द्रमण्डलम ॥ ९२ ॥
तत्परामृतधाराभिर्दीप्तिमाप्नोति भास्करः ।
सन्तुष्टः पाति सततं पूरकेण च योगिनम् ॥ ९३ ॥
ततः पूरकयोगेन अमृतं स्रावयेत् सुधीः ।

कुर्यात् प्रज्वलितं वह्निं रेचकेन वराग्निना ॥ ९४ ॥
अथ मौनजपं कृत्वा ततः सूक्ष्मानिलं मुदा ।
सहस्रारे गुरुं ध्यात्वा योगी भवति भावकः ॥ ९५ ॥
प्राणवायुस्थिरो यावत्तावन्मृत्युभयं कुतः ? ।
ऊर्द्धरेता भवेद् यावत्तावत्कालभयं कुतः ? ॥ ९६ ॥
यावद्बिन्दुः स्थितो देहे विधुरूपो सुनिर्मलः ।
सदा गलत्सुधाव्याप्तस्तावन्मृत्युभयं कुतः ? ॥ ९७ ॥

आनन्दभैरव उवाच ।—

वद कान्ते ! कुलानन्द-रसिके ! ज्ञानरूपिणि ! ।
सर्वतेजोग्रदेवेन येन सिद्धो भवेन्नरः ॥ ९८ ॥
महामृता खेचरी च सर्वतत्त्वस्वरूपिणी ।
कीदृशी शाङ्करी विद्या श्रोतुमिच्छामि तत्क्रियाम् ॥ ९९ ॥
अध्यात्मविद्या योगेशि ! कीदृशी भवितव्यता ।
कीदृशी परमा देवी तत्प्रकारं वदस्व मे ॥ १०० ॥

आनन्दभैरव्युवाच ।—

अध्यात्मज्ञानम् ।—

यस्य नाथ ! मनःस्थैर्यं महासत्त्वे सुनिर्मले ।
भक्त्या सम्भावनं यत्र विनाऽवलम्बनं प्रभो ! ॥ १०१ ॥
यस्य मनश्चित्तवशं स्वमिन्द्रियं स्थिरा स्वदृष्टिर्जगदीश्वरीपदे ।
नखेन्दुशोभे च विनाऽवलोकनं वायुः स्थिरो यस्य विना निरोधनम् १०२
त एव मुद्रा विचरन्ति खेचरी पापादिमुक्ताः प्रविशन्ति वायुम् ।
यथा हि बालस्य च तस्य चेष्टा निद्राविहीनाः प्रतियान्ति निद्राम् १०३
पथापथज्ञानविवर्जिता ये धर्मार्थकामादिविहीनमानसाः ।
विनाऽवलम्बं जगतामधीश्वर ! एषैव मुद्रा विचरन्ति शाङ्करी ॥ १०४ ॥
ज्ञाने साध्यात्मविद्यार्थं जानाति कुलनायकम् ।
अध्याज्ञाचक्रपद्मस्थं शिवात्मानं सुविद्यया ॥ १०५ ॥

अध्यात्मज्ञानमात्रेण सिद्धो योगी न संशयः ।
षट्चक्रभेदको यो हि अध्यात्मज्ञः स उच्यते ॥ १०६ ॥
अध्यात्मशास्त्रसङ्केतमात्मना मण्डितं शिवम् ।
कोटिचन्द्राकृतिं शान्तिं यो जानाति षडम्बुजे ॥ १०७ ॥
स ज्ञानी सैव योगी स्यात् सैव देवो महेश्वरः ।
स मां जानाति हे कान्त ! विस्मयो नास्ति शङ्कर ! ॥ १०८ ॥
मम सर्वात्मकं रूपं जगत्स्थावरजङ्गमम् ।
सृष्टिस्थितिप्रलयगं यो जानाति स योगिराट् ॥ १०९ ॥
अध्यात्मविद्यां विज्ञाप्य नानाशास्त्रं प्रकाशितम् ।
तच्छास्त्रजालयुक्ता ये तेऽध्यात्मज्ञाः कथं नराः ? ॥ ११० ॥
त्रिदण्डी स्यात् सदा भक्तो वेदाभ्यासपरः कृती ।
वेदादुद्धृतशास्त्राणि त्यक्त्वा मां भावयेद् यतिः ॥ १११ ॥
वेदाभ्यासं समाकृत्य नानाशास्त्रार्थनिर्णयम् ।
समुत्पन्नां महाशक्तिं समालोक्य भजेद् यतिः ॥ ११२ ॥
सर्वत्र व्यापिकाशक्तिं कामरूपां निराश्रयाम् ।
व्यक्ताव्यक्तां स्थिरपदां वायवीं मां भजेद् यतिः ॥ ११३ ॥
यस्या ह्यानन्दमतुलं ज्ञानं यस्याः फलाफलम् ।
योगिनां निश्चयज्ञानमेकमेव न संशयः ॥ ११४ ॥
यस्याः प्रभावमात्रेण तत्त्वचिन्तापरो नरः ।
तामेव परमां देवीं सर्पराजसुकुण्डलीम् ॥ ११५ ॥
तामेव वायवीं शक्तिं सूक्ष्मरूपां स्थिराशयाम् ।
आनन्दरसिकां गौरीं ध्यायेत् श्वासनिवासिनीम् ॥ ११६ ॥
आनन्दं ब्रह्मणो रूपं तच्चदेहे व्यवस्थितम् ।
तस्याभिव्यञ्जकं द्रव्यं योगिभिः परिपीयते ॥ ११७ ॥
तद्द्रव्यस्थां महादेवीं नीलोत्पलदलप्रभाम् ।
मानवीं परमां देवीमष्टादशभुजैर्युताम् ॥ ११८ ॥

कुण्डलीं चेतनाकान्तिं चैतन्यां परदेवताम् ।
आनन्दभैरवीं नित्यां घोरहासां भयानकाम् ॥ ११९ ॥
तामेव परमां देवीं सर्ववायुवशङ्करीम् ।
मदिरासिन्धुसम्भूतां मत्तां रौद्रीं वराभयाम् ॥ १२० ॥
योगिनीं यागजननीं ज्ञानिनां मोहिनीसमाम् ।
सर्वभूतसर्वयत्त-स्थितिरूपां महोज्ज्वलाम् ॥ १२१ ॥
षट्चक्रभेदिकां सिद्धिं तासां नित्यां मतिस्थिताम् ।
विमलां निर्मलां ध्यात्वा योगी मूलाम्बुजे यजेत् ॥ १२२ ॥
एतत् पटलपाठे तु पापमुक्तो विभाकरः ।
यथोर्द्धरेता धर्मज्ञो विचरेत् ज्ञानसिद्धये ॥ १२३ ॥
एतत् क्रियादर्शनेन ज्ञानी भवति साधकः ।
ज्ञानादेव हि मोक्षः स्यान्मोक्षः समाधिसाधनः ॥ १२४ ॥
यदुद्धरति वायुश्च धारणाशक्तिरेव च ।
तत्तन्मन्त्रं वर्द्धयित्वा प्राणायामं समाचरेत् ॥ १२५ ॥
प्राणायामात् परं नास्ति पापराशिक्षयाय च ।
सर्वपापक्षये याते किं न सिध्यति भूतले ? ॥ १२६ ॥
प्राणवायुं महोग्रन्तु महत्तेजोमयं परम् ।
प्राणायामेन जित्वा च योगोत्तमो गजं यथा ॥ १२७ ॥
प्राणायामं विना नाथ ! कुत्र सिद्धो भवेन्नरः ? ।
सर्वसिद्धिक्रियासारं प्राणायामं परं स्मृतम् ॥ १२८ ॥
प्राणायामं त्रिवेणीस्थ यः करोति मुहुर्मुहुः ।
तस्याष्टाङ्गसमृद्धिः स्याद् योगिनां योगवल्लभः ॥ १२९ ॥

इति श्रीरुद्रयामले उत्तरतन्त्रे महातन्त्रोद्दीपने भावनिर्णये पाशवकल्पे षट्चक्र-
सारसङ्केते सिद्धमन्त्रप्रकरणे प्राणायामोल्लासे भैरव-भैरवीसंवादे
पञ्चविंशः पटलः ॥ २५ ॥

अथ षड्विंशः पटलः ।

आनन्दभैरव्युवाच ।—

षट्चक्रभेदः ।—

शृणु प्राणेश ! सफलं प्राणायामनिरूपणम् ।
प्राणायामे जपं ध्यानं तत्त्वयुक्तं वदामि ते ॥ १ ॥
प्रकारमेयमुल्लासं प्राणायामेषु शोभितम् ।
देवता विधिविष्णुशास्तूत्तमाधममध्यमाः ॥ २ ॥
रजस्तमोगुणं नाथ ! सत्त्वे संस्थाप्य यत्नतः ।
कामक्रोधादिकं त्यक्त्वा योगी भवति योगवित् ॥ ३ ॥
रजोगुणं नृपाणान्तु तमोगुणमतीव च ।
अधिकन्तु पशूनां हि साधूनां सत्त्वमेव च ॥ ४ ॥
सत्त्वं विष्णुर्वेदरूपं निर्मलं द्वैतवर्जितम् ।
आत्मोपलब्धिविषयं त्रिमूर्त्तिमूलमाश्रयेत् ॥ ५ ॥
सत्त्वगुणाश्रयादेव निष्पापः सर्वसिद्धिभाक् ।
जितेन्द्रियो भवेत् शीघ्रं ब्रह्मचारिव्रतेन च ॥ ६ ॥
प्राणवायुवशेनापि वशीभूताश्चराचराः ।
तस्यैव कारणे नाथ ! जपं ध्यानं समाचरेत् ॥ ७ ॥
वक्ष्यामि तत् प्रकारञ्च जपध्यानं विधिद्वयम् ।
एतत्करणमात्रेण योगी स्यान्नात्र संशयः ॥ ८ ॥
जपञ्च त्रिविधं प्रोक्तं व्यक्ताव्यक्तातिसूक्ष्मगम् ।
व्यक्तं वाचिकमुपांशु ह्यव्यक्तं सूक्ष्म-मानसम् ॥ ९ ॥
तत्र ध्यानं प्रवक्ष्यामि प्रकारमेकविंशति ।
ध्यानेन जपसिद्धिः स्याज्जपात् सिद्धिर्न संशयः ॥ १० ॥
आदौ विद्यामहादेवी ध्यानं वक्ष्यामि शङ्कर ! ।
एषा देवी कुण्डलिनी यस्या मूलाम्बुजे मनः ॥ ११ ॥

मन: करोति सर्वाणि धर्मकर्म्माणि सर्वदा।
यत्र गच्छति स श्रीमान् तत्र वायुश्च गच्छति ॥ १२ ॥
अतो मूले समारोप्य मानसं वायुरूपिणम्।
द्वादशाङ्गुलगं वाह्यं नासाग्रे चावधारयेत् ॥ १३ ॥
मन:स्वरूपमाकल्प्य मनो धर्मे मुहुर्मुहु:।
मन: सहस्रधा याति मतिर्यत्र सदा भवेत् ॥ १४ ॥
मनोविकाररूपन्तु एकमेव न संशय:।
अज्ञानिनां हि देवेश ! ब्रह्मणो रूपकल्पना ॥ १५ ॥
अव्यक्तं ब्रह्मरूपं हि तच्च देहे व्यवस्थितम्।
धर्मकर्मविनिर्मुक्तं मनो गम्यं भजेद् यति: ॥ १६ ॥
पद्मं चतुर्दलं मूले स्वर्णवर्णं मनोहरम।
तत्कर्णिकामध्यदेशे स्वयम्भूवेष्टितां भजेत् ॥ १७ ॥
कोटिसूर्य्यप्रतिकाशां सुषुम्नावज्रगामिनीम्।
ऊर्द्ध्वं गलत्सुधाधारा-मण्डितां कुण्डलीं भजेत् ॥ १८ ॥
स्वयम्भूलिङ्ग परमं ज्ञानं चिरविवर्द्धनम्।
सूक्ष्मातिसूक्ष्ममाकाशं कुण्डलीजड़ितं भजेत् ॥ १९ ॥
पूर्वोक्तयोगपटलं तत्र मूले विभावयेत्।
कुण्डलीध्यानमात्रेण षट्चक्रभेदको भवेत् ॥ २० ॥
ध्यायेद्देवीं कुण्डलिनीं परापरगुरुप्रियाम्।
आनन्दां भुवि मध्यस्थां योगिनीं योगमातरम् ॥ २१ ॥
कोटिविद्युल्लताभासां सूक्ष्मातिसूक्ष्मवर्त्मगाम्।
ऊर्द्ध्वमार्गं व्याचलन्तीं परमारुणविग्रहाम् ॥ २२ ॥
प्रथमोद्गमने कौल-ज्ञानमार्गप्रकाशिकाम्।
प्रतिप्रमाणे प्रत्यक्षामस्तव्याप्तविग्रहाम् ॥ २३ ॥
धर्मोदयां भानुमतीं जगत्स्थावरजङ्गमाम्।
सर्वव्रस्थां निर्विकल्पां चैतन्यानन्दनिर्मलाम् ॥ २४ ॥

आकाशवाहिनीं नित्यां निर्निर्वर्णस्वरूपिणीम्।
महाकुण्डलिनीं ध्येयां ब्रह्मविष्णुशिवादिभि: ॥ २५ ॥
प्रणवान्त:स्थितां शुद्धां शुद्धज्ञानाश्रयां शिवाम्।
कुलकुण्डलिनीं सिद्धं चन्द्रमण्डलभेदिनीम् ॥ २६ ॥
मूलाम्भोजस्थितामाद्यां जगद्योनिं जगत्प्रियाम्।
स्वाधिष्ठानादिपद्मस्थां सर्वशक्तिमयीं पराम् ॥ २७ ॥
आत्मविद्यां शिवानन्दां पीठस्थामतिसुन्दरीम्।
सर्पाकृतिं रक्तवर्णां सर्परूपविमोहिनीम् ॥ २८ ॥
कामिनीं कामरूपस्थां मातृकामात्मदायिनीम्।
कुलमार्गानन्दमयीं कालीं कुण्डलिनीं भजेत् ॥ २९ ॥
इति ध्यात्वा मूलपद्मे निर्मले योगसाधने।
धर्मोदये ज्ञानरूपी साधयेत् परकुण्डलीम् ॥ ३० ॥
कुण्डलीभावनादेव खेचराद्यष्टसिद्धिभाक्।
ईश्वरत्वमवाप्नोति साधको भूपतिर्भवेत् ॥ ३१ ॥
योगाभ्यासे भावसिद्धौ स्मृतो वायुर्महोदय:।
प्राणिनामनिवार्य्यो हि यत्नेन तं प्रचालयेत् ॥ ३२ ॥
प्रतिक्षणं समाकृष्य मूलपद्मस्थकुण्डलीम्।
तदा प्राणमहावायुर्वशो भवति निश्चितम् ॥ ३३ ॥
ये देवाश्चैव ब्रह्माण्डे चैत्रे पीठे सुतीर्थके।
शिलायां शून्यगे नाथ ! सिद्धा: स्यु: प्राणवायुना ॥ ३४ ॥
ब्रह्माण्डे यानि वै सन्ति तानि सन्ति कलेवरे।
ते सर्वे प्राणसंलग्ना: प्राणातीतो निरञ्जन: ॥ ३५ ॥
यावत् प्राण: स्थितो देहे तावन्मृत्युभयं कुत: ?।
गते प्राणे समायान्ति देवताश्चेतनास्थिता: ॥ ३६ ॥
सर्वेषां मूलभूता सा कुण्डली भूतदेवता।
वायुरूपा पाति सर्वमानन्दचेतनामयी ॥ ३७ ॥

जगतां चेतनारूपा कुण्डली योगदेवता ।
आत्ममनःसमायुक्ता ददाति मोक्षमेव सा ॥ ३८ ॥
अतस्तां भावयेन्मन्त्री भावज्ञानप्रसिद्धये ।
भवानीं भोगमोक्षस्थां यदि योगमिहेच्छति ॥ ३९ ॥
वायुरोधनकाले च कुण्डली चेतनामुखी ।
ब्रह्मरन्ध्रावधि ध्येया योगिनं पाति कामिनी ॥ ४० ॥
जयारूपां परां देवीं नित्यां योगेश्वरीं जयाम् ।
निर्विकल्पां त्रिकोणस्थां सदा ध्यायेत कुलेश्वरीम् ॥४१॥
अनन्तां कोटिसूर्य्याभां ब्रह्मविष्णुशिवात्मिकाम् ।
अनन्तज्ञाननिलयां यां भजन्ति मुमुक्षवः ॥ ४२ ॥
अज्ञानतिमिरे घोरे सा लग्ना मूढचेतसी ।
सुप्ता सर्पासना मौला पाति साधकमीश्वरी ॥ ४३ ॥
ईश्वरीं सर्वभूतानां ज्ञानाज्ञानप्रकाशिनीम् ।
धर्माधर्मफलव्याप्तां करुणामयविग्रहाम् ॥ ४४ ॥
नित्यां ध्यायन्ति योगीन्द्राः काञ्चनाभाः कलिस्थिताः ।
कुलकुण्डलिनीं देवीं चैतन्यानन्दनिर्भराम् ॥ ४५ ॥
वकारादिमान्तवर्ण-मालाविद्युल्लताच्युताम् ।
हेमालङ्कारभूषाङ्गीं ये मां सम्भावयन्ति ते ॥ ४६ ॥
ये वै कुण्डलिनीं विद्यां कुलमार्गप्रकाशिनीम् ।
ध्यायन्ति वर्षसंयुक्तास्ते मुक्ता नात्र संशयः ॥ ४७ ॥
ये मुक्ताः पापराशिस्तु धर्मज्ञानसुमानसाः ।
तेऽवश्यं ध्यानमाकुर्वन् स्तुवन्ति कुण्डलीं पराम् ॥ ४८ ॥
कुलकुण्डलिनीध्यानं भोगमोक्षप्रदायकम् ।
यः करोति महायोगी भूतले नात्र संशयः ॥ ४९ ॥
त्रिविधं कुण्डलीध्यानं दिव्यवीरपशुक्रमम् ।
पशुभावादियोगेन सिद्धो भवति योगिराट् ॥ ५० ॥

दिव्यध्यानं प्रवक्ष्यामि सामान्यानन्तरं प्रभो ! ।
आदौ सामान्यमाकृत्य दिव्यादीन् कारयेत्ततः ॥ ५१ ॥
कोटिचन्द्रप्रतीकाशां तेजोविद्यां निराकुलाम् ।
प्राणायामसहस्राढ्यां कालानलशतोपमाम् ॥ ५२ ॥
दंष्ट्राकरालदुर्द्धर्षां जटामण्डलमण्डिताम् ।
घोररूपां महारौद्रीं सहस्रकोटिचञ्चलाम् ॥ ५३ ॥
कोटिचन्द्रसमास्निग्धां सर्वत्रस्थां भयानकाम् ।
अनन्तसृष्टिसंहार-पालनोन्मत्तमानसाम् ॥ ५४ ॥
सर्वव्यापकरूपाढ्यामादिलीलाकलेवराम् ।
अनन्तसृष्टिनिलयां ध्यायन्ति तां मुमुक्षवः ॥ ५५ ॥
वीरध्यानं प्रवक्ष्यामि यत् कृत्वा वीरवल्लभः ।
वीराणां वल्लभो यो हि मुक्तो भोगी स उच्यते ॥ ५६ ॥
वीराचारे सत्त्वगुणं निर्मलं दिव्यमुत्तमम् ।
सम्प्राप्य च महावीरो योगी भवति तत्क्षणात् ॥ ५७ ॥
वीराचारं विना नाथ ! दिव्याचारं न लभ्यते ।
ततो वीराचारधर्मं कृत्वा दिव्यं समाचरेत् ॥ ५८ ॥
वीराचारं कोटिफलं वारैकजपसाधनम् ।
कोटिकोटिजन्मपाप-दुःखनाशन्तु भक्तके ॥ ५९ ॥
कुलाचारसमाचारं वीराचारं महाफलम् ।
कृत्वा सिद्धिञ्च वै ध्यानं कुलध्यानं मदीयकम् ॥ ६० ॥
कुलकुण्डलिनीं देवीं मां ध्यात्वा पूजयन्ति ये ।
मूलपद्मे महावीरां भैरवीं सुवशेन्द्रियाम् ॥ ६१ ॥

देव्या वीरध्येयरूपम् ।—

कालीं कीलां कुलेशीं कलकलकलिजध्यानकालानलाकां
कल्लोल्कां कालकल्पां किलिकिलिकलिकां केलिलावण्यलीलाम् ।

सूक्ष्माख्यां संचयाख्यां चयकुलकमले सूक्ष्मतेजोमयीं तां
आद्यन्तस्थां भजन्ति प्रणतमदयां सुन्दरीं चारुवर्णाम् ॥ ६१ ॥
अष्टादशभुजैर्युक्तां नीलेन्दीवरलोचनाम् ।
मदिरासागरोत्पन्नां चन्द्रसूर्य्याग्निरूपिणीम् ॥ ६२ ॥
चन्द्रसूर्य्याग्निमध्यस्थां सुन्दरीं वरदायिनीम् ।
कामिनीं कोटिकन्दर्प-दर्पान्तकपतिप्रियाम् ॥ ६३ ॥
आनन्दभैरवाक्रान्तामानन्दभैरवीं पराम् ।
योगिनीं कोटिशीतांशु-गलद्गात्रमनोहराम् ॥ ६४ ॥
कोटिविद्युल्लताकारां सदसद्भक्तिवर्जिताम् ।
ज्ञानचैतन्यनिरतां तां वीरां भावयन्ति हि ॥ ६५ ॥
अस्या ध्यानप्रसादेन त्वं तुष्टो भैरवः स्वयम् ।
अहञ्च तुष्टा संसारे सर्वे तुष्टा न संशयः ॥ ६६ ॥
प्राणायामान् यः करोति साधकः स्थिरमानसः ।
ध्यात्वा देवीं मूलपद्मे वीरो योगमवाप्नुयात् ॥ ६७ ॥
वीरभावं सूक्ष्मवायु-धारणेन महेश्वर ! ।
साधको भुवि जानाति स्वमृत्युं जन्मसङ्कटम् ॥ ६८ ॥
मासादाकर्षणीसिद्धिर्वाक्सिद्धिश्च द्विमासतः ।
मासत्रयेण स योगी जायते देववल्लभः ॥ ६९ ॥
एवं चतुर्थमासे तु भवेत् दिक्पालगोचरः ।
पञ्चमे पञ्चबाणः स्यात् षष्ठे रुद्रो न संशयः ॥ ७० ॥
वीरभावस्य माहात्म्यं कोटिजन्मफलेन च ।
जानाति साधकश्रेष्ठो देवभक्तः स योगराट् ॥ ७१ ॥
वीराचारं महाधर्मं चित्तस्थैर्य्यस्य कारणम् ।
यस्य प्रसादमात्रेण दिव्यभावाश्रितो भवेत् ॥ ७२ ॥
स्वयं रुद्रो महायोगी महाविष्णुः कृपानिधिः ।
महावीरस्तथा शीघ्रं मोक्षभागी न संशयः ॥ ७३ ॥

योगिनां सूक्ष्मस्नानम् ।—

वक्ष्ये नाथ ! महावीर-भावस्नानं कुलाश्रयम् ।
यत्कृत्वा शुचिरेव स्यात् शुचिश्चेत् किं न सिध्यति ॥ ७४ ॥
कुलस्नानं महास्नानं योगिनामतिदुर्लभम् ।
ज्ञात्वा जितेन्द्रियो वीरः कुलध्यानं समाचरेत् ॥ ७५ ॥
स्नानन्तु त्रिविधं प्रोक्तं मज्जनं गात्रमार्जनम् ।
मन्त्रस्नानादिभिः स्नानमुत्तमं परिकीर्त्तितम् ॥ ७६ ॥
तत्प्रकारं शृणु प्राण-वल्लभ ! प्रियकारक ! ।
स्नानमात्रेण मुक्तः स्यात् पापशैलादनन्तगः ॥ ७७ ॥
स्नानञ्च विमले तीर्थे हृदयाम्भोजपुष्करे ।
बिन्दुतीर्थेऽथवा स्नायात् सर्वजन्माघमुक्तये ॥ ७८ ॥
इडासुषुम्ने शिवतीर्थकेऽस्मिन् ज्ञानाम्बुपूर्णे वहतः शरीरे ।
ब्रह्मादिभिः स्नाति तयोस्तु नीरे किं तस्य गाङ्गैरपि पौष्करैर्वा ॥ ७९ ॥
इडा मलस्थाननिवासिनी या सूर्य्यात्मिकायां यमुना प्रवाहिका ।
तथा सुषुम्नामलदेशगामिनी सरस्वती रक्षति मज्जनार्थकम् ॥ ८० ॥
मनोगतस्नानपरो मनुष्यो मन्त्रक्रियायोगविशिष्टतत्त्ववित् ।
महीस्थतीर्थे विमले जले सुदा मूलाम्बुजे स्नाति स मुक्तिभाग्भवेत् ॥ ८१ ॥
सर्वादितीर्थे सुरतीर्थपावनी गङ्गा महासत्त्वविनिर्गता सती ।
करोति पापक्षयमेव मुक्तिं ददाति साक्षादतुलार्थपुण्यदा ॥ ८२ ॥
स्वर्गस्थं यावता तीर्थं स्वाधिष्ठाने तु पङ्कजे ।
मनो निधाय योगीन्द्रः स्नाति गङ्गाजले यथा ॥ ८३ ॥
मणिपूरे देवतीर्थं पञ्चकुण्डं सरोवरम् ।
एतत् श्रीकामनातीर्थे स्नाति यो मुक्तिमिच्छति ॥ ८४ ॥
अनाहते सर्वतीर्थं सूर्य्यमण्डलमध्यगम् ।
विभवे सर्वतीर्थेषु स्नाति यो मुक्तिमिच्छति ॥ ८५ ॥
विशुद्धाख्ये महापद्मे अष्टतीर्थं समुद्भवम् ।

कैवल्यमुक्तिदं ध्यात्वा स्नाति वीरो विमुक्तये ॥ ८६ ॥
मानसं विन्दुतीर्थञ्च कालीकुण्डं कलात्मकम् ।
आज्ञाचक्रं सदा ध्यात्वा स्नाति निर्वाणसिद्धये ॥ ८७ ॥
एतत्कुलप्रियस्नानं कुर्वन्ति योगिनो मुदा ।
अतो वीराः सत्त्वयुक्ताः सर्वसिद्धियुताः सुराः ॥ ८८ ॥
नानापापं सदा कृत्वा ब्रह्महत्यादि गर्हितम् ।
कृत्वा स्नानं महातीर्थे सिद्धाः स्युरणिमादिगाः ॥ ८९ ॥
स्नानमात्रेण निष्पापः शक्तः स्वाहायुसंग्रहे ।
तीर्थानां दर्शने शक्तो स वै योगी भवेद् ध्रुवम् ॥ ९० ॥

कौलानां सन्ध्या ।—

अथ सन्ध्यां महातीर्थे कुलनिष्ठः समाचरेत् ।
कुलरूपां योगविद्यां योगी योगाद् यतीश्वरः ॥ ९१ ॥
शिवशक्त्योः समायोगो यस्मिन् काले प्रजायते ।
सा सन्ध्या कुलनिष्ठानां समाधिस्थे प्रजायते ॥ ९२ ॥
शिवं सूर्यं हृदि ध्यात्वा मालशक्तीन्दुसङ्गमम् ।
सा सन्ध्या कुलनिष्ठानां समाधिस्थे प्रजायते ॥ ९३ ॥
अथवेन्दुं शिवं ध्यात्वा हृत्सूर्यशक्तिसङ्गमम् ।
संयोगविद्या सा सन्ध्या समाधिस्थे प्रजायते ॥ ९४ ॥
इति सन्ध्या च कथिता ज्ञानरूपा जगन्मयी ।
सा नित्या वायवीशक्तिः छिन्नभिन्ना विनाशनात् ॥ ९५ ॥

कौलतर्पणम् ।—

तत्त्वतीर्थे महादेव ! तर्पणं यः करोति हि ।
त्रैलोक्यं तर्पितं तेन तत्प्रकारं शृणु प्रभो ! ॥ ९६ ॥
मूलाम्भोजे कुण्डलिनीं सोमसूर्याग्निरूपिणीम् ।
समुत्थाप्य कुण्डलिनीं परं बिन्दुं निवेश्य च ॥ ९७ ॥
तदुद्भवामृतेनेह तर्पयेद्दृढदेवताम् ।

कुलेश्वरीमादिविद्यां स सिद्धो भवति ध्रुवम् ॥ ९८ ॥
चन्द्रसूर्यमहावह्नि-सम्भूताऽमृतधारया ।
तर्पयेत् कौलिनीं नित्याममृताक्तां विभावयेत् ॥ ९९ ॥
एतत् परपदा काली स्त्रीविद्यादिप्रतर्पणम् ।
कृत्वा योगी भवेदेव सत्यं सत्यं कुलेश्वर ! ॥ १०० ॥
मूले पात्रं चान्द्रमसं ललाटेन्द्वमृतेन च ।
संपूर्य ज्ञानमार्गेण तर्पयेत्तेन खेचरीम् ॥ १०१ ॥
सुधासिन्धोर्मध्यदेशे कुलकन्यां प्रतर्पयेत् ।
मदिराऽमृतधाराभिः सिद्धो भवति योगिराट् ॥ १०२ ॥
तत्र तीर्थे महाज्ञानी ध्यानं कुर्यात् प्रयत्नतः ।
तद्गर्भसन्निधौ नित्यं ध्यानमेतद्धि योगिनाम् ॥ १०३ ॥
स्वीयां कन्यां भोजयेद्वै परकीयामथापि वा ।
परितोषाय सर्वेषां युवतीं वा प्रतोषयेत् ॥ १०४ ॥
स्तोत्रेणानेन दिव्येन तोषयेत् शङ्करं प्रभो ! ।
सहस्रनाम्ना कौमार्याः स्तुत्वा देवीं प्रतोषयेत् ॥ १०५ ॥
यः करोति पूर्णयज्ञं पञ्चाङ्गं जपकर्मणि ।
पुरश्चरणकार्येऽच प्राणायामं न कारयेत् ॥ १०६ ॥
प्राणवायुः स्थिरो देहे पूजाग्रहणहेतुना ।
येऽन्तरस्थं न कुर्वन्ति तेषां सिद्धिः कथं स्थिता ? ॥ १०७ ॥
अतोऽन्तर्यजनेनैव कुण्डली तुष्टमानसा ।
यदि तुष्टा महादेवी तदैव सिद्धिभाक् पुमान् ॥ १०८ ॥

मानसपूजा ।—

अभिषिच्य जगद्धात्रीं प्रत्यक्षपरदेवताम् ।
मूलाम्भोजात् सहस्रारे पूजयेद्बिन्दुधारया ॥ १०९ ॥
गलच्चन्द्रामृतोल्लास-धारयाऽऽसिच्य पार्वतीम् ।
पूजयेत् परया भक्त्या मूलमन्त्रं स्मरन् सुधीः ॥ ११० ॥

अर्चयन् विषयैः पुष्पैस्तत्क्षणात्तन्मयो भवेत् ।
तन्मनस्कतया बुद्ध्या सोऽहंभावेन पूजयेत् ॥ १११ ॥
मन्त्राक्षराणि चिच्छक्तौ प्रोतानि परिभावयेत् ।
विमले परमे व्योम्नि परमानन्दसंस्थितम् ॥ ११२ ॥
संपश्येदात्मसद्भावैः पूजाहोमादिभिर्विना ।
तदन्तर्यजनं ज्ञेयं योगिनां शङ्कर ! प्रभो ! ॥ ११३ ॥
अन्तरात्मा महात्मा च परमात्मा स उच्यते ।
तस्य स्मरणमात्रेण साधु योगी भवेन्नरः ॥ ११४ ॥
अमायमनहङ्कारमरागममदं तथा ।
अमोहकमदम्भञ्च अनिन्दाक्षोभकौ तथा ॥ ११५ ॥
अमात्सर्य्यमलोभञ्च दशपुष्पाणि योगिनाम् ।
अहिंसा परमं पुष्पं पुष्पमिन्द्रियनिग्रहः ॥ ११६ ॥
दयापुष्पं क्षमापुष्पं ज्ञानपुष्पञ्च पञ्चमम् ।
इति पञ्चदशपुष्पैः पूजयेत् परदेवताम् ॥ ११७ ॥

मानसहोमः ।—

अथ होमविधिं वक्ष्ये पुरश्चरणसिद्धये ।
सङ्केतभाषया नाथ ! कथयामि शृणुष्व तत् ॥ ११८ ॥
आत्मानमपरिच्छिन्नं विभाव्य सूक्ष्मवत् स्थितम् ।
आत्मत्रयस्वरूपन्तु चित्कुण्डं चतुरस्रकम् ॥ ११९ ॥
आनन्दमेखलायुक्तं नाभिस्थज्ञानवह्निषु ।
अर्द्धमात्राकृतिं योनि-भूषितं जुहुयात् सुधीः ॥१२०॥
इति मन्त्रेण तद्वह्नौ सोऽहंभावेन होमयेत् ।
बाह्यनाडीविधिं त्यक्त्वा मूलान्तेन स्वतेजसम् ॥ १२१ ॥
नाभिचैतन्यरूपाग्नौ हविषा मनसा स्रुचा ।
ज्ञानप्रदीपिते नित्यमक्षवृत्तिर्जुहोम्यहम् ॥ १२२ ॥
इति प्रथममाहुत्या मूलान्ते सञ्चरेत् क्रियाम् ।

द्वितीयाहुतिदानेन होमं कृत्वा भवेद्वशी ॥ १२३ ॥
धर्माधर्मप्रदीप्ते च आत्माग्नौ मनसा स्रुचा ।
सुषुम्नावर्त्मना नित्यमक्षवृत्तिर्जुहोम्यहम् ॥ १२४ ॥
स्वाहान्तं मन्त्रमुच्चार्य्य आद्ये मूलं नियोज्य च ।
जुहुयादेकभावेन मूलाम्भोरुहमण्डले ॥ १२५ ॥
चतुर्थं पूर्णहवने एतन्मन्त्रेण कारयेत् ।
एतन्मन्त्रचतुर्थन्तु पूर्णविद्याफलप्रदम् ॥ १२६ ॥

अन्तर्निरन्तरनिरिन्धनमेधमाने
मायान्धकारपरिपन्थिनि संविदग्नौ ।
कस्मिंश्चिदद्भुतमरीचिविकाशभूमौ
विश्वं जुहोमि वसुधादिशिवावसानम् ॥ १२७ ॥

इत्यन्तर्यजनं कृत्वा साक्षात् ब्रह्ममयो भवेत् ।
न तस्य पुण्यपापानि जीवन्मुक्तो भवेद् ध्रुवम् ॥
ज्ञानिनां योगिनामेव अन्तर्योगो हि सिद्धिदः ॥ १२८ ॥

पञ्चमकारपूजा ।—

अथान्तःपञ्चमकार-यजनं शृणु शङ्कर ! ॥ १२९ ॥
अन्तर्यजनकाले तु दृढभावेन भावयेत् ।
त्वां मां नाथैकतां ध्यात्वा दिवारात्रेकता यथा ॥१३०॥
सुरा शक्तिः शिवो मांसं तद्भक्तो भैरवः स्वयम् ।
तयोरैक्यसमुत्पन्नं आनन्दे मोक्षनिर्णयः ॥ १३१ ॥
आनन्दं ब्रह्मकिरणं देहमध्ये व्यवस्थितम् ।
तदभिव्यञ्जकैर्द्रव्यैः कुर्य्यात् ब्रह्मादितर्पणम् ॥ १३२ ॥
आनन्दं जगतां सारं ब्रह्मरूपं तनुस्थितम् ।
तदभिव्यञ्जकं द्रव्यं योगिभिस्तैः प्रपूज्यते ॥ १३३ ॥
लिङ्गत्रयञ्च षट्पद्माऽऽधारमध्येन्दुभेदके ।

पीठस्थानानि चागत्य महापद्मवनं व्रजेत् ॥ १३४ ॥
मूलाम्भोजो ब्रह्मरन्ध्रं चालयेदाशु चालयेत् ।
गत्वा पुनः पुनस्तत्र चिच्चन्द्रः परमोदयः ॥ १३५ ॥
चिच्चन्द्रः कुण्डलीशक्तिः सारमस्य महोदयः ।
व्योमपङ्कजनिस्यन्द-सुधापानरतो नरः ॥ १३६ ॥
मधुपानमिदं नाथ ! बाह्ये चाभ्यन्तरे सताम् ।
इतरन्मद्यपानन्तु योगिनां योगघातनम् ॥ १३७ ॥
इतरन्तु महापानं भ्रान्तिमिथ्याविवर्जितम् ।
महावीरः संकरोति योगाष्टाङ्गसमृद्धये ॥ १३८ ॥
पुण्यापुण्यपशुं हत्वा ज्ञानलभ्यो न योगवित् ।
परशिवे च यच्चित्तं नियोजयति साधकः ॥ १३९ ॥
मांसाशी स भवेदेव इतरे प्राणघातकाः ।
शरीरस्थे महावह्नौ दग्धमत्स्यानि पूजयेत् ॥ १४० ॥
शरीरस्थजलस्थानि इतराण्यशुभानि च ।
महीगर्तासुगन्धसौम्योद्भवमुद्रा महाफला ॥ १४१ ॥
तत्सर्वं ब्रह्मकिरणे आरोप्य तर्पयेत् सुधीः ।
तत्र मुद्राभोजनानि आनन्दवर्द्धकानि च ॥ १४२ ॥
इतराणि च भोगार्थं एतद्धि योगिनां परम् ।
परशक्त्या च मिथुन-संयोगानन्दनिर्भराः ॥ १४३ ॥
मुक्तास्ते मैथुनं तत् स्यादितरे स्त्रीनिषेवकाः ।
एतत्पञ्चमकारेण पूजयेत् परनायिकाम् ॥ १४४ ॥

पञ्चमकारमाहात्म्यम् ।—

पुरश्चरणगूढार्थ-सारमन्त्रप्रपूजनम् ।
एतद् योगं सदाऽभ्यासान्निद्रालस्यविवर्जितः ॥ १४५ ॥
प्राणवायुजयं कुर्यात् कालवारणकारणात् ।

एतत् क्रियां प्राणवशे यः करोति निरन्तरम् ॥
तस्य योगसमृद्धिः स्यात् कालसिद्धिमवाप्नुयात् ॥ १४६ ॥

इति श्रीरुद्रयामले उत्तरतन्त्रे महातन्त्रोद्दीपने भावनिर्णये सूक्ष्मयोगविद्यासिद्धिकरणे पाशवकल्पे षट्चक्रसारसङ्केते सिद्धमन्त्रप्रकरणे भैरवी-भैरवसंवादे षड्विंशः पटलः ॥ २६ ॥

अथ सप्तविंशः पटलः ।

आनन्दभैरवी उवाच ।—

विविधानि त्वयोक्तानि योगशास्त्राणि भैरव ! ।
सर्वरूपत्वमेवास्या वद कान्ते ! प्रियंवदे ! ॥ १ ॥
योगाष्टाङ्गफलान्येव सर्वतत्त्वफलानि च ।
इदानीं श्रोतुमिच्छामि शक्तितत्त्वक्रमेण तु ॥ २ ॥
पूर्वोक्तप्राणवायूनां हरणं वायुधारणम् ।
प्रत्याहारं धारणाख्यं ध्यानं समाधिमेव च ॥ ३ ॥

आनन्दभैरव्युवाच ।—

प्राणायामलक्षणम् ।—

शृणु लोकेश ! वक्ष्यामि प्राणायामफलाफलम् ।
न गृह्णीयाद्विस्तरन्तु स्वल्पं नैव तु कुम्भयेत् ॥ ४ ॥
शनैः शनैः प्रकर्त्तव्यं संघातञ्च विवर्जयेत् ।
पूरकाह्लादसिद्ध्यैव प्राणायामं शतं शतम् ॥ ५ ॥
वक्ष्ये प्राणलक्षणन्तु यस्मिन् यस्मिन् दिने गतिः ।
कृष्णपक्षे शुक्लपक्षे तिथित्रिंशत्फलोदयः ॥ ६ ॥
शुक्लपक्षे इडायान्तु कृष्णपक्षेऽन्यदेव हि ।
कुर्यात् सर्वत्र गमनं सुषुम्ना बहुरूपिणी ॥ ७ ॥
तिथित्रयं सितस्यापि प्रतिपदादिसम्भवम् ।

तदयं दक्षनासायां वायोर्च्चयं महाप्रभो ! ॥ ८ ॥
चतुर्थीं पञ्चमीं षष्ठीं व्याप्योदयति देवता।
वामनासापुटे ध्येया वायुधारणकर्मणि ॥ ९ ॥
सप्तमीमष्टमीञ्चैव नवमीं व्याप्य तिष्ठति।
वामनासापुटे ध्येया साधकैः कुलपण्डितैः ॥ १० ॥
दशम्येकादशीं चैव द्वादशीं व्याप्य तिष्ठति।
वायुर्दक्षिणनासाग्रे ध्येयो योगिशिरोमणिः ॥ ११ ॥
त्रयोदशीं व्याप्य वायुः पौर्णमासीं चतुर्दशीम्।
वामनासापुटे ध्येयः संहारहरणाय च ॥ १२ ॥
क्षणपक्षफलं वक्ष्ये यज्ज्ञात्वा अमरो भवेत्।
कालज्ञानी भवेत् शीघ्रं नात्र कार्या विचारणा ॥ १३ ॥
प्रतिपदं द्वितीयाञ्च तृतीयामपि तस्य च।
पिङ्गलायां समा व्याप्य वायुर्निःसरते सदा ॥ १४ ॥
चतुर्थीं पञ्चमीं षष्ठीं वामे व्याप्य प्रतिष्ठति।
सप्तमीमष्टमीं वायुर्नवमीं दक्षिणे ततः ॥ १५ ॥
दशम्येकादशीं वायुर्व्याप्य भ्रमति सर्वदा।
वामे च दक्षिणेऽन्यानि तिथ्यादीनि सदानिशम् ॥ १६ ॥
यदा एतद् व्यस्तभावं समाप्नोति नरोत्तमः।
तदैव मरणं रोगं बन्धुनाशं त्रिपक्षके ॥ १७ ॥
मित्रजन्मतिथिं ज्ञात्वा तस्मिन् काले विरोधयेत्।
आरभ्य जन्मनाशाय प्राणायामं समाचरेत् ॥ १८ ॥
यदा व्यत्ययभावेन देहं त्यक्त्वा प्रयच्छति।
तदा निरुध्य श्वसनं कालाग्नौ धारयेदधः ॥ १९ ॥
यावत् स्वस्थानमायाति तावत् कालं समभ्यसेत्।
यावन्न चलते देहं यावन्न चलते मनः ॥ २० ॥
क्रमादभ्यस्यतः पुंसो देहे स्वेदोद्गमोऽधमः।

मध्यमः कम्पसंयुक्तो भूमित्यागः परस्य तु ॥ २१ ॥
षण्मासाद्भुतदर्शी स्याद्दूरश्रवणमेव च।
संवत्सराभ्यासयोगात् योगविद्याप्रकाशकृत् ॥ २२ ॥
योगी जानाति सर्वाणि तन्त्राणि सकमाणि च।
यदि दर्शनदृष्टिः स्यात्तदा योगी न संशयः ॥ २३ ॥
प्रत्याहारफलं वक्ष्ये यत् कृत्वा खेचरो भवेत्।
ईश्वरे भक्तिमाप्नोति धर्मज्ञानी भवेन्नरः ॥ २४ ॥
तत्त्वमस्य गुणप्राप्तिर्यावत् शीलनमिष्यते।
तावज्जपेत् सूक्ष्मवायुप्रत्याहारप्रसिद्धये ॥ २५ ॥

प्रत्याहारः।—

इन्द्रियाणां विचरतां विषयेषु किल वर्द्धनम्।
बलादाहरणं तेभ्यः प्रत्याहारोऽभिधीयते ॥ २६ ॥
नान्यकर्मसु धर्मेषु शास्त्रधर्मेषु योगिराट्।
पतितं चित्तमानीय स्थापयेत् पादपङ्कजे ॥ २७ ॥
दुर्निवार्यं दृढं चित्तं दुरत्ययमसम्मतम्।
बलादाहरणं तस्य प्रत्याहारोऽभिधीयते ॥ २८ ॥

भावमाहात्म्यम्।—

एतत्प्रत्याहारबलाद् योगी स्वस्थो भवेत् ध्रुवम्।
अकस्माद्भावमाप्नोति भावराशिस्थिरो नरः ॥ २९ ॥
भावात् परतरं नास्ति भावाधीनमिदं जगत्।
भावेन लभ्यते योगस्तस्माद् भावं समाश्रयेत् ॥ ३० ॥

धारणा।—

अथ धारणमावक्ष्ये यत् कृत्वा धैर्यरूपभाक्।
त्रैलोक्यमुदरे कृत्वा पूर्णः सन्तिष्ठति योगिराट् ॥ ३१ ॥
अङ्गुष्ठ-गुल्फ-जानूरु-सीमनि लिङ्ग-नाभिषु।
हृद्ग्रीवाकण्ठदेशेषु लम्बिकायां तथा नसि ॥ ३२ ॥

भ्रूमध्ये मस्तके मूर्द्ध्नि द्वादशान्ते यथाविधि।
धारणं प्राणमरुतो धारणेति निगद्यते ॥ ३३ ॥
सर्वनाड़ीग्रन्थिदेशे षट्चक्रे देवताऽऽलये।
ब्रह्ममार्गे धारणं यद्धारणेति निगद्यते ॥ ३४ ॥
धारणं मूलदेशे तु कुण्डली नासिकातटे।
प्राणवायोः प्रशमनं धारणेति निगद्यते ॥ ३५ ॥
तव श्रीचरणाम्भोज-मङ्गले चारुतेजसि।
भावेन स्थापयेच्चित्तं धारणाशक्तिमाप्नुयात् ॥ ३६ ॥

ध्यानम्।—

अथ ध्यानं प्रवक्ष्यामि यत् कृत्वा सर्वगो भवेत्।
ध्यानयोगाद्भवेन्मोक्षो मत्कुलागमनिर्गमः ॥ ३७ ॥
समाहितेन मनसा चैतन्यान्तरवर्त्तिना।
आत्मन्यभीष्टदेवानां ध्यानं ध्यानमिहोच्यते ॥ ३८ ॥
श्रीपादाम्भोरुहद्वन्द्वे नखकिञ्जल्कचित्रिते।
स्थापयित्वा मनः पद्मं ध्यायेदिष्टगुणं महत् ॥ ३९ ॥

समाधिः।—

अथ समाधिमाहात्म्यं वदामि तत्त्वतः शृणु।
यस्यैव कारणादेव पूर्णयोगी भवेन्नरः ॥ ४० ॥
समत्वभावना नित्यं जीवात्मपरमात्मनोः।
समाधिना जयी भूयादानन्दभैरवेश्वर! ॥ ४१ ॥
संयोगसिद्धिमात्रेण समाधिस्थं महाजनम्।
प्रपश्यति महाज्ञानी समाध्यष्टाङ्गलक्षणैः ॥ ४२ ॥
एतत् समाधिमाकृत्य योगी योगान्वितो भवेत्।
अथ चन्द्रे मनः कुर्य्यात् समारोप्य विभावयेत् ॥ ४३ ॥
एतदष्टाङ्गसारेण योगयोग्यो भवेन्नरः।
योगयोगाद् भवेन्मोक्षो मन्त्रसिद्धिरखण्डिता ॥ ४४ ॥

योगशास्त्रप्रकारेण सर्वे वै भैरवाः स्मृताः।
योगशास्त्रात् परं शास्त्रं त्रैलोक्ये नापि वर्त्तते ॥ ४५ ॥
त्रैलोक्यातीतशास्त्राणि योगाङ्गविविधानि च।
ज्ञात्वा मां पश्यति क्षिप्रं नानाध्यायेन शङ्कर! ॥ ४६ ॥
कामादिदोषनाशाय कथितं ज्ञानमुत्तमम्।
इदानीं शृणु वक्ष्यामि मन्त्रयोगार्थनिर्णयम् ॥ ४७ ॥
विश्वं शरीरमाकाशं पञ्चभूताश्रयं प्रभो!।
चन्द्रसूर्य्याग्नितेजोभिर्जीवब्रह्मैकरूपकम् ॥ ४८ ॥
तिस्रः कोट्यो दक्षिणतः शरीरेण तयोर्मताः।
तेषु मुख्या दश प्रोक्तास्तासु तिस्रो व्यवस्थिताः ॥ ४९ ॥
प्रधाना मेरुदण्डेऽत्र सोमसूर्य्याग्निरूपिणी।
नाड़ीत्रयस्वरूपेण योगमाता प्रतिष्ठिता ॥ ५० ॥
इड़ा वामे स्थिता नाड़ी शुक्ला तु चन्द्ररूपिणी।
शक्तिरूपा च सा नाड़ी साक्षादमृतविग्रहा ॥ ५१ ॥
दाड़िमीकुसुमप्रख्या विषाख्या परिकीर्त्तिता।
मेरुमध्ये स्थिता या तु सुषुम्ना बहुरूपिणी ॥ ५२ ॥
विसर्गाद्बिन्दुपर्य्यन्तं व्याप्य तिष्ठति तत्त्वतः।
मूलाधारे त्रिकोणाख्ये इच्छाज्ञानक्रियात्मिके ॥ ५३ ॥
मध्ये स्वयम्भूलिङ्गं तं कोटिसूर्य्यसमप्रभम्।
तदूर्द्ध्वे कामबीजन्तु कलाशान्तीन्दुनायकम् ॥ ५४ ॥
तदूर्द्ध्वे तु शिखाकारा कुण्डली ब्रह्मविग्रहा।
तद्बाह्ये हेमवर्णाभं वसवर्णचतुर्दलम् ॥ ५५ ॥
द्रुतहेमसमप्रख्यं पद्मं तत्र विभावयेत्।
तदूर्द्ध्वेऽग्निसमप्रख्यं सद्गन्धं हीरकप्रभम् ॥ ५६ ॥
वादिलान्तार्णषड्वर्ण-सहितं वज्रपत्रकम्।
स्वाधिष्ठानाख्यसदनं योगिनां हृदयङ्गमम् ॥ ५७ ॥

मूलमाधारषट्कोणं मूलाधारं प्रकीर्त्तितम् ।
स्वशब्देन परं लिङ्गं स्वाधिष्ठानं स्वलिङ्गकम् ॥ ५८ ॥
तदूर्द्धे नाभिदेशे तु मणिपूरं महाप्रभम् ।
मेघाभं विद्युदाभञ्च बहुतेजोमयं ततः ॥ ५९ ॥
मणिमद् भिन्नं तत् पद्मं मणिपूरं शशिप्रभम् ।
कथितं सकलं नाथ ! हृदयाब्जं शृणु प्रिय ! ॥ ६० ॥
दशभिश्च दलैर्युक्तं डादिफान्ताक्षरान्वितम् ।
शिवेनाधिष्ठितं पद्मं विश्वालोकनकारकम् ॥ ६१ ॥
तदूर्द्धेऽनाहतं पद्मं हृदिस्थं विकलाकुलम् ।
उद्यदादित्यसङ्काशं कादिठान्ताक्षरान्वितम् ॥ ६२ ॥
दलद्वादशसंयुक्तमीश्वराद्यसमन्वितम् ।
तन्मध्ये बाणलिङ्गन्तु सूर्य्यायुतसमप्रभम् ॥ ६३ ॥
शब्दब्रह्ममयं वच्येऽनाहतस्तत्र दृश्यते ।
तेनाऽनाहतपद्माख्यं योगिनां योगसाधनम् ॥ ६४ ॥
आनन्दसदनं तत्तु सिद्धेनाधिष्ठितं परम् ।
तदूर्द्धन्तु विशुद्धाख्यं दलषोड़शपङ्कजम् ॥ ६५ ॥
वर्णैः षोड़शभिर्युक्तं धूम्रवर्णं महाप्रभम् ।
योगिनामद्भुतस्थानं सिद्धिवर्गं समभ्यसेत् ॥ ६६ ॥
विशुद्धं तनुते यस्मात् जीवस्य हंसलोकनात् ।
विशुद्धं पद्ममाख्यातमाकाशाख्यं महत्प्रभम् ॥ ६७ ॥
आज्ञाचक्रं तदूर्द्धे तु अर्थिनाऽधिष्ठितं परम् ।
आज्ञासंक्रमणं तत्र गुरोराज्ञेति कीर्त्तितम् ॥ ६८ ॥
कैलासाख्यं तदूर्द्धे तु तदूर्द्धे बोधनं ततः ।
एवंविधानि चक्राणि कथितानि तव प्रभो ! ॥ ६९ ॥
तदूर्द्धस्थानममलं सहस्राराम्बुजं परम् ।
बिन्दुस्थानं परं ज्ञेयं गणानां मतमाशृणु ॥ ७० ॥

गणमतकथनम् ।—

बौद्धा वदन्ति चात्मानं आत्मज्ञानी न ईश्वरः ।
सर्वं नास्तीति चार्वाका नानाकर्मविवर्जिताः ॥ ७१ ॥
वेदनिन्दापराः सर्वे बौद्धाः शून्याभिवादिनः ।
मम ज्ञानाश्रिताः कान्ताश्चीनभूमिनिवासिनः ॥ ७२ ॥
आत्मानमपरिच्छिन्नं विभाव्य भाव्यते मया ।
श्रीपादाब्जे बिन्दुयुग्मं नखेन्दुमण्डलं शुभम् ॥ ७३ ॥
शिवस्थानं प्रवदन्ति शैवाः शाक्ता महर्षयः ।
परमं पुरुषं नित्यं वैष्णवाः प्रीतिकारकाः ॥ ७४ ॥
हरिहरात्मकं रूपं संवदन्ति परे जनाः ।
देव्याः पदं नित्यरूपाश्चरणानन्दनिर्भराः ॥ ७५ ॥
वदन्ति मुनयो मुख्यं पुरुषं प्रकृतात्मकम् ।
पुंप्रकृत्याख्यभावेन मग्ना भान्ति महीतले ॥ ७६ ॥
इति ते कथितं नाथ ! मन्त्रयोगमनुत्तमम् ।
योगमार्गानुसारेण भावयेत् सुसमाहितः ॥ ७७ ॥
आदौ महाप्रकरणे मूले संयोजयेन्मनः ।
गुदमेढ्रान्तरे शक्तिं तामाकुञ्च्य प्रबुद्धयेत् ॥ ७८ ॥
लिङ्गभेदक्रमेणैव प्रापयेद्बिन्दुचक्रकम् ।
शम्भुभालां परां शक्तिमेकीभावैर्विचिन्तयेत् ॥ ७९ ॥
तत्रोत्थितामृतरसं द्रुतलाक्षारसोपमम् ।
पाययित्वा परां शक्तिं कृष्णाख्यां योगसिद्धिदाम् ॥८०॥
षट्चक्रभेदकस्तत्र सन्तर्प्याऽमृतधारया ।
आनयेत्तेन मार्गेण मूलाधारं ततः सुधीः ॥ ८१ ॥
एवमभ्यस्यमानस्य अहन्यहनि मारुतम् ।
जरामरणदुःखाद्यैर्मुच्यते भवबन्धनात् ॥ ८२ ॥
तन्त्रोक्तकथिता मन्त्राः सर्वे सिध्यन्ति नान्यथा ।

स्वयंसिद्धो भवेत् क्षिप्रं योगे हि योगवल्लभः ॥ ८३ ॥
ये गुणाः सन्ति देवस्य पञ्चकृत्यविधायिनः ।
ते गुणाः साधकवरे भवन्त्येव न चान्यथा ॥ ८४ ॥
इति ते कथितं नाथ ! मन्त्रयोगमनुत्तमम् ।
इदानीं धारणाख्यन्तु शृणुष्व परमाद्भुतम् ॥ ८५ ॥

ध्यानलक्ष्यविवरणम् ।—

दिक्कालाद्यनवच्छिन्ने त्वयि चित्तं निधाय च ।
मयि वा साधकवरो ध्यायन् तन्मयतामियात् ॥ ८६ ॥
तन्मयो भवति क्षिप्रं जीवब्रह्मैक्ययोजनात् ।
इष्टपादे मतिं दत्त्वा नखकिञ्जल्कचित्रिते ॥ ८७ ॥
अथवा मननं चित्तं यदा क्षिप्रं न सिध्यति ।
तदावयवयोगेन योगी योगं समभ्यसेत् ॥ ८८ ॥
पदाम्भोजे मनो दद्यात् नखकिञ्जल्कचित्रिते ।
जङ्घायुग्मे तथा राम-कदलीकाण्डमण्डिते ॥ ८९ ॥
ऊरुद्वये मत्तहस्ति-करदण्डसमप्रभे ।
गङ्गाऽऽवर्त्तगभीरे तु नाभौ सिद्धवनं ततः ॥ ९० ॥
उदरे वक्षसि तथा हरिश्रीवत्सकौस्तुभे ।
पूर्णचन्द्रायुतप्रख्ये ललाटे चारुकुण्डले ॥ ९१ ॥
शङ्खचक्रगदाम्भोज-दोर्दण्डपरिमण्डिते ।
सहस्रादित्यसङ्काशे किरीटकुण्डलद्वये ॥ ९२ ॥
स्थानेष्वेषु भजेन्मन्त्री विशुद्धः शुद्धचेतसा ।
मनो निवेश्य श्रीकृष्णे वैष्णवो भवति ध्रुवम् ॥ ९३ ॥
इति वैष्णवमाख्यातं ध्यानं सत्त्वसुनिर्मलम् ।
विष्णुभक्ताः प्रभजन्ति स्वाधिष्ठानमनःस्थिराः ॥ ९४ ॥
यावन्मनो लयं याति कृष्णे स्वात्मनि चिन्तयेत् ।
तावत् स्वाधिष्ठानसिद्धिरिति योगार्थनिर्णयः ॥ ९५ ॥

तावज्जपेन्मनुं मन्त्री जपहोमं समभ्यसेत् ।
अतःपरं न किञ्चिच्च कृत्यमस्ति महीतले ॥ ९६ ॥
विदिते परतत्त्वे तु समस्तैर्नियमैरलम् ।
अतएव सदा कुर्य्यात् ध्यानं योगं जपेन्मनुम् ॥ ९७ ॥
तमःपरिवृते गेहे घटो दीपेन दृश्यते ।
एवं यो संवृतो ह्यात्मा मनुना गोचरीकृतः ॥ ९८ ॥
इति ते कथितं नाथ ! मन्त्रयोगमनुत्तमम् ।
कृत्वा पापोद्भवैर्दुःखैर्मुच्यते नात्र संशयः ॥ ९९ ॥
दुर्लभं विषयासक्तैः सुलभं योगिनां किल ।
सुलभं न त्यजेत् विद्वान् यदि सिद्धिमिहेच्छति ॥ १०० ॥
ब्रह्मज्ञानं योगध्यानं मन्त्रजाप्यं क्रियादिकम् ।
यः करोति सदा भद्रो वीरभद्रो हि योगिराट् ॥ १०१ ॥
भक्तिर्या स्यात् सदा शम्भोः श्रीविद्या या परात्परा ।
योगसाधनकाले च केवलं भावनादिभिः ॥ १०२ ॥
मननं कीर्त्तनं ध्यानं स्मरणं पादसेवनम् ।
अर्च्चनं वन्दनं दास्यं सख्यमात्मनिवेदनम् ॥ १०३ ॥
एतद्भक्तिप्रसादेन जीवन्मुक्तस्तु साधकः ।
योगिनां वल्लभो भूत्वा समाधिस्थो भवेद् यतिः ॥ १०४ ॥

इति श्रीरुद्रयामले उत्तरतन्त्रे महातन्त्रोद्दीपने भावनिर्णये पाशवकल्पे षट्चक्रसारसङ्केते सिद्धमन्त्रप्रकरणे मन्त्रयोगाधिकरणे भैरवी-भैरवसंवादे सप्तविंशः पटलः ॥ २७ ॥

अथ अष्टाविंशः पटलः ।

आनन्दभैरव उवाच ।—

त्रैलोक्य-पूजिते ! कान्ते ! इदानीं सिद्धिहेतवे ।
मन्त्रसिद्धेर्लक्षणन्तु योगिनामतिदुर्लभम् ॥ १ ॥

त्वन्मुखाम्भोरुहोल्लास-निःसृतं परमामृतम्।
पीत्वा चकार तन्त्राणि यत्तत्र नास्ति तद्वद ॥ २ ॥

आनन्दभैरव्युवाच ।—

मन्त्रसिद्धिलक्षणम् ।—

निश्चयन्तु प्रवक्ष्यामि आनन्दभैरवेश्वर ! ।
मन्त्रसिद्धेर्लक्षणन्तु योगमार्गानुकूलतः ॥ ३ ॥

नित्यं चेतसि सुस्थिरो स्थितिपथक्लेशादिदोषक्षमं
सर्वद्योत्तममन्त्रसिद्धिकलितं संलक्षणं शोभनम्।
मृत्यूनां हरणं जगत्पतिमतिं सन्दर्शनश्चोत्तमं
योगाक्लेशविवर्द्धनं समुदयाक्लेशप्रयोगेष्वभाक् ॥ ४ ॥

नरेन्द्राणीकाये प्रविशति हठात् क्षोभरहितं
परत्रैषा मूर्द्धोत्क्रमणपरमुच्चैः परपुरे।
अधःस्थितं पश्येत् खचरवनितामिलनमलं
करोति प्रध्यानं जगति महतां कीर्त्तिरतुला ॥ ५ ॥

इतीह सिद्ध्यादिसुलक्षणेन प्रयाति वैकुण्ठपुरीं मनोरमाम्।
हिताहितं पश्यति सत्त्वभूभृतां जगद्विपक्षो निजपक्षमाश्रयेत् ॥ ६ ॥

कीर्त्तिर्भ्रंशादिभक्तिः सदसि च सफला मुक्तिक्रियासंयुता
देवानामतिभक्तियुक्तहृदयं सर्वक्रियादक्षता।
त्रैलोक्यं निजदास्यकर्माणि तथा जित्वा चिरं जीवति
ज्येष्ठाङ्गाभ्यसनं जगद्वशकरं चैतन्यतामुत्तमाम् ॥ ७ ॥

भोगेच्छारहितं जगज्जनचमत्कारानुकल्पान्वितं
रोगाणां हरणं विरक्तहृदयं वैराग्यमूर्त्तिप्रदम्।
त्यागं संस्मरणं तथा शमदया मायाविजालान्तरं
ऐश्वर्य्यं कवितारसं धनजनं लक्ष्मीगणं जापनम् ॥ ८ ॥

उल्लासं हृदयाम्बुजे सुतधनं सम्मानमं सत्पथं
वाञ्छासागररत्नपूर्णघटितं कान्तागणामोदितम्।

सङ्केतादिमनुप्रियं हरिहरब्रह्मैकभावान्वितं
लोकानां गुरुता निरन्तरशिवानन्दैकमुद्राधरम् ॥ ९ ॥

एतदुक्तं महादेवोत्तरतन्त्रनिरूपणम्।
मन्त्रसिद्धिलक्षणं तदुत्तमाधममध्यमम् ॥ १० ॥

मुनयो देवमुख्याश्च नित्यं जन्मनि जन्मनि।
दिव्यं रूपं नरकुले धृत्वा तृप्यन्ति चानिशम् ॥ ११ ॥

तवैवापि ममैवापि तर्पणं होमसाधनम्।
सर्वदा कुरुते साधुश्चैतन्यं भवति ध्रुवम ॥ १२ ॥

एतत् प्राणवायुपाने सूक्ष्मचन्द्रनियोजने।
कर्त्तव्यं प्रत्यहं कार्य्यं दिवारात्रौ मुहुर्मुहुः ॥ १३ ॥

अद्यैतत् कर्म संस्कुर्यात् योगसाधनमुत्तमम्।
स श्रीमान् साधु सद्भक्ता दुष्टशास्त्रोऽपि सिध्यति ॥ १४ ॥

एतद्दोषसमूहन्तु वदामि तत्त्वतः शृणु।
छिन्नादिदोषदुष्टानां योगतत्त्वेन सिध्यति ॥ १५ ॥

देवेन्द्रशापदुष्टा च भुवनेशी सुसिद्धिदा।
आराधिता महाविद्या वीर्य्यदर्पविवर्जिता ॥ १६ ॥

एकाक्षरी वीर्य्यहीना वाग्भवेन महोज्ज्वला।
तदभुवरसा देवी तारसंपुटहंसिनी ॥ १७ ॥

आविद्धा कामवीजेन विद्याकामेश्वरी परा।
शरेण पीड़िता पूर्वं भुवनेषु प्रतिष्ठिता ॥ १८ ॥

या कुमारी महाविद्या मायाभ्रमविरोधिका।
ताराचन्द्रस्वरूपाहं शिवशक्त्या च केवलम् ॥ १९ ॥

श्रीविद्यानां भैरवीणां दोषजालं शृणु प्रभो ! ।
एतान् दोषान् प्रणश्यन्ति योगमार्गानुसारिणः ॥ २० ॥

अतः कुण्डलिनी देवी योगेन चेतनामुखी।
अतो योगं सदा कुर्य्यात् सर्वमन्त्रप्रसिद्धये ॥ २१ ॥

भैरवीलक्षणम् ।—

भैरवी विधिजप्ता च दग्धा च कीलिता तथा ।
शैवसन्धानकरणी मोहिता चानुमोहिता ॥ २२ ॥
महामदोन्मत्तचित्ता मूर्च्छिता वीर्य्यवर्जिता ।
स्तम्भिता चाहता छिन्ना वृद्धा रुद्धा च त्रासिता ॥ २३ ॥
निर्वीजा शक्तिहीना च सुप्ता मत्ता च घूर्णिता ।
पराङ्मुखी नेत्रहीना सा भीता दुष्टसंस्कृता ॥ २४ ॥
सुषुप्ता भेदतः प्रौढ़ा बालिका कामिनी क्रिया ।
भयदा युवती क्रूरा दाम्भिका शोकसङ्कटा ॥ २५ ॥
निस्त्रिंशका सिद्धिहीना कूटस्था मन्दबुद्धिदा ।
हीनकर्णा हीननासा तथा क्रुद्धाङ्गभङ्गुरा ॥ २६ ॥
कलहाकलहप्रीता भ्रष्टस्थानच्युताकुला ।
धर्म्मभ्रष्टा नातिवृद्धाऽतिबाला सिद्धिनाशिनी ॥ २७ ॥
हतवीर्य्या महाभीमा क्रोधपुच्छा च ध्वंसिनी ।
कालविद्या सूक्ष्मधर्मा सूक्ष्मकर्मा च लोहिनी ॥ २८ ॥
दुर्गतिस्था विप्तचित्ता प्रचण्डाचण्डगामिनी ।
उल्कावच्चलति क्षीणा मन्दहासा निरंशका ॥ २९ ॥
सत्त्वहीना केकरा च धूपितालिङ्गिता जिता ।
अतिगुप्ता क्षुधार्त्ता च धूर्त्ता व्यालास्थिरास्थिरा ॥ ३० ॥
तत्त्वाविद्याः प्रसन्नाः स्युर्योगकालनिरोधनात् ।
वीरभावेन सिद्धिः स्यात् पुरश्चरणकर्मणा ॥ ३१ ॥

भैरवीचक्रम् ।—

अत्र वीरो यजेत् कान्तां परकीयामथापि वा ।
रम्यालङ्कारसंयुक्तां सुन्दरीं चारुहासिनीम् ॥ ३२ ॥
मदनानलतप्ताङ्गीमासवानन्दविग्रहाम् ।
योगिनीं कौलिनीं योग्यां धर्म्मशीलां कुलप्रियाम् ॥ ३३ ॥

दीक्षितां लोलवदनां वदनाम्भोजमोहिनीम् ।
नानादेशस्थितां कन्यां युवतीं परिपूजयेत् ॥ ३४ ॥
जापिकां मन्दहासाञ्च मन्दमन्दगतिप्रियाम् ।
कृशाङ्गीमतिचार्वङ्गीमलङ्कृतकलेवराम् ॥ ३५ ॥
कोटिकन्याप्रदानेन यत् फलं लभते नरः ।
तत् फलं लभते सद्यः कामिनीपरिपूजनात् ॥ ३६ ॥
ततः षोड़शकन्याश्च योगिन्यो योगसिद्धये ।
पूजयेत् परया भक्त्या वस्त्रालङ्कारभूषणैः ॥ ३७ ॥
नानाविधैः पिष्टकान्नैः पक्वान्नैः प्राणसम्भवैः ।
दधिदुग्धघृतैश्चापि नवनीतैः सशर्करैः ॥ ३८ ॥
उपलाखण्डमिश्रान्नैर्नानारसफलान्वितैः ।
गुड़ादिभिर्नारिकेलैः कपिलैर्नागरङ्गकैः ॥ ३९ ॥
नानावर्णफलैश्चैव नानागन्धसमन्वितैः ।
मृगनाभिचन्दनैश्च श्रीखण्डैर्नवपल्लवैः ॥ ४० ॥
पूजयित्वा प्रयत्नेन जलजैः स्थलजैस्तथा ।
नानासुगन्धिपुष्पैश्च रक्तचन्दनकुङ्कुमैः ॥ ४१ ॥
पूजयेत् शून्यगेहे च निर्जने विपिने तथा ।
कुलदेवीं समानीय स्वागतं प्रवदेदनु ॥ ४२ ॥
अर्घ्योदकेन संशोध्याऽमृतीकरणमाचरेत् ।
शक्तिञ्चाभिमुखीं नीत्वा वीरयोगी भवेद् ध्रुवम् ॥ ४३ ॥
शक्तिञ्च षोड़शीं देवीं कुलचक्रप्रियां शुभाम् ।
महाशक्तिं शृणु प्राण-वल्लभ ! स्तोकलावतीम् ॥ ४४ ॥
ब्राह्मणी क्षत्रिया वैश्या शूद्रा वेश्या च सुन्दरी ।
कुलभूषासमाक्रान्ता मानिनी नातिपिङ्गला ॥ ४५ ॥
रजकी नर्त्तकी कौला श्यामाङ्गी स्थूलविग्रहा ।
सङ्केतागमना भार्य्या विदग्धा वञ्चकी तथा ॥ ४६ ॥

खल्वकी लोलकन्या च कुलमार्गप्रवर्त्तिका।
सर्वाङ्गसुन्दरी भव्या चारुनेत्रा हसन्मुखी॥ ४७॥
यद्यदीचारतास्तास्तु देया दीक्षा तदा प्रभो!।
सूक्ष्मतन्त्रानुसारेण कथितं पूर्वसूचितम्॥ ४८॥
सर्वाङ्गसुन्दरी शुद्धा शुद्धलोककुलोद्भवा।
युवती योगनिरता सा देवी डाकिनी मता॥ ४९॥
तामानीय महामन्त्रं दापयेदिष्टसिद्धये।
ततस्ताः पूजनीयास्तु दीक्षाहीनाऽमुना चरेत्॥ ५०॥
श्रीकृष्णाराममन्त्रन्तु दापयेत् सत्त्वसिद्धये।
तान्य आदौ ततो मृत्युञ्जयमन्त्रं ततश्चरेत्॥ ५१॥
आनन्दभैरवीबीजं देवीं शक्तिं स्वबीजकम्।
अथवा सिद्धमन्त्रन्तु श्रीविद्यायाः प्रदापयेत्॥ ५२॥
किं वा केवलमायान्तु क्रोधारुणकराकृतिम्।
ज्वलन्तीं मूलपद्मे तु स्वयम्भूकुसुमाकराम्॥ ५३॥
एवम्भूतां महामायां तस्मै दत्त्वा जयी भवेत्।
आदौ वामकर्णपुटे अग्निवारं परित्रयम्॥ ५४॥
अतः शिक्षां सदानन्द! दीक्षान्ते कारयेद् बुधः।
दीक्षामूलं जपं सर्वं दीक्षामूलं गुरोः कृपा॥ ५५॥
दीक्षामाश्रित्य मायां या जपेत् सा खेचरी परा।
तस्याः पूजनमात्रेण प्रसन्नोऽहं न संशयः॥ ५६॥
जगतां जगदीशानां नारीरूपेण संस्थितिः।
अहं नारी न सन्देहः सुन्दरी कुत्सिता परा॥ ५७॥
सुन्दरीपालनार्थाय विनाशायाशु कुत्सिता।
साधकस्य भ्रान्तिरूपा सा ऽहं ताः परिभावयेत्॥ ५८॥
या परा साचदा विद्या सुन्दरी कामचारिणी।
भाविनी सा भवानी च तां विद्यां परिपूजयेत्॥ ५९॥

तस्या अङ्गे स्थिरा नित्यं देवताया अहं प्रभो!।
यस्य योगी सर्वसमः स सर्वात्मा नयेत् किल॥ ६०॥
अन्यथा सिद्धिहानिः स्याद्भावाभावविचारणात्।
विना भावं न सिध्येत्तु वीराणां भावराशिकम्॥ ६१॥
कुर्यात् कौलः पुरश्चर्यां कुलाकुलविमुक्तये।
योगी स्यादव्ययो धीरो विहन्मुक्तो हि जीवने॥ ६२॥

भैरवीपूजा।—

ब्राह्मणीं सुन्दरीञ्चैव संस्थाप्य क्रमतो यजेत्।
वामहस्ते महार्घ्यन्तु दक्षिणे आसनादिकम्॥ ६३॥
दद्यात् पाद्यमासनानि तत्तन्नाम्ना च स्वागतम्।
तत्तदा अर्घ्यपात्रस्थ-जलेन प्रोक्षयेच्च ताम्॥ ६४॥
धेनुमुद्रां समाकृत्य धर्मन्त्रेणाऽमृतीक्रियाम्।
अमृतीकरणान्ते च रूपभेदं समानयेत्॥
संज्ञाभिनामकरणं कृत्वा चासनमर्पयेत्॥ ६५॥
आदौ कुर्य्यात् परानन्दं रससागरसम्भवम्।
मान्यं मन्दगुणोपेतं शृणु तत् क्रमसुत्तमम्॥ ६६॥
स्तोत्रं कुर्य्यात् मूलपद्मे कुण्डलिन्याः पुरस्क्रियाम्।
पुरश्चरणकाले तु जपान्ते नित्यकर्मणि॥ ६७॥
काम्यकर्मणि धर्मेषु तथैव धर्मधर्मिषु।
गुर्वाद्यगुरुनित्येषु भक्तिमाकृत्य सम्पठेत्॥ ६८॥

कन्दवासिनीस्तोत्रम्।—

ॐ नमो गुरवे ॐ नमो गुर्वस्वपरदेवतायै। सर्वधर्मार्थस्वरूपायै सर्वज्ञानस्वरूपायै॥ ६९॥

ॐ भवविभवायै ॐ दक्षयज्ञविनाशिन्यै। ॐ भद्रकाल्यै ॐ कपालिन्यै ॐ उमायै ॐ माहेश्वर्य्यै ॐ सर्वसङ्कटतारिण्यै ॐ महादेव्यै नमो नमः॥ ७०॥

ओं या मायामयदानवक्षयकरी शक्तिः क्षमाकर्तृका
शुम्भाशी महिषासुरासुरबलप्राणेन चण्डापहा ।
भक्त्यार्द्रा रुधिरप्रिया प्रियकरी क्रोधाङ्करक्तोत्पला
चामुण्डा रणरक्तबीजरजनी ज्योत्स्नामुखेन्दीवरा ॥ ७१ ॥
या जाया जयदायिनी नृमुण्डहारिणी भीत्यापहा भैरवी
नित्या सा परिरक्षणं कुरु शिवा सारस्वतोत्पत्तये ।
सा मे पातु कलेवरस्थ विषयाह्लादेन्द्रियाणां बलं
रक्षःस्थायिनमुल्वणा ज्वलशिखाकारादिजीवांशका ॥७२॥
ज्ञात्वा योगकुलान्वितं स्वभवने नित्यं मनोरञ्जनं
नित्यं संयमतत्परं परतरे भक्तिक्रियानिर्मलम् ।
शम्भो रक्ष रजोऽपनीशचरणाम्भोजे सदा भावनं
विद्यार्थप्रियदर्शनं त्रिजगतां संयस्य योगी भवेत् ॥ ७३ ॥
आकाङ्क्षापरिवर्जितं निजगुरोः सेवापरं पावनं
प्रेमाह्लादकथाच्युतं कुटिलताहिंसापमानप्रियम् ।
कालक्षेपणदोषजालरहितं शक्तं सुभक्तं यतिं
श्रीशक्तिप्रियवल्लभं सुरुचिरज्ञानान्तरं मानिनम् ॥ ७४ ॥
मालासूत्रसुसूक्ष्मवर्द्धनिलयं सल्लक्षणं साक्षिणं
नानाकारणकारणं सशरणं साकारब्रह्मार्पणम् ।
नित्या सा जड़ितं महान्तमखिले योगासनज्ञानिनं
तं वन्दे पुरुषोत्तमं त्रिजगतामशार्कहंसं परम् ॥ ७५ ॥
मायाङ्के प्रतिभाति चारुनयनाह्लादैकबीजा सदा
कल्लोला विकुला चला समतुला कालाग्निहालाहला ।
हालाहेलनकीलकालकलिका केयूरहा वामना
सर्वाङ्गं परिपातु पीतवसना शोभासना वामना ॥ ७६ ॥
सा बालाबलवाहना नृगहना सम्मानना धारणा
खं खं खं खचराचरा कुलचरा वाचाचरा वंखरा ।

चं चं चं चमरीहरी भगवती गाथागतिः सङ्गतिः
बाहौ मे परिपातु पङ्कजमुखी या चण्डमुण्डापहा ॥ ७७ ॥
कं कं कं कमलाकलागतिफला फुत्कारफेत्कारला
पं पं पं परमा रमाजयगमा व्यासङ्गमा अङ्गमा ।
तं तं तं तिमिरारुणा सकरुणा मातावलातारिणी
भं भं भं भयहारिणी प्रियकरी सा मे भवत्वन्तरा ॥ ७८ ॥
झं झं झं झाझझरीगतिपथस्था तारमानन्दितं
मं मं मं मलिनं हि सा हृयगता हन्त्री रिपूणां हिता ।
भक्तानां भयहारिणी रणमुखे शत्रोः कुलाग्निस्थिता ।
सा सा सा भवतु प्रभावपटलादीप्ताङ्घ्रियुग्मोज्ज्वला ॥ ७९ ॥
गं गं गं गुरुरूपिणी गणपतेरानन्दपुञ्जोदया
तारासारसरोरुह रुणकला कोटिप्रभालोचना ।
नेत्रं पातु सदा शिवप्रियपथा कोट्यायुतार्कप्रभा
तुण्डं मुण्डविभूषणा नरशिरोमालाविलोला समा ॥ ८० ॥
योगेशी शशिशेखरप्रियकथालापोदया भामिनी
शीर्षं पत्रललाटकर्णयुगलानन्तं ततः सर्वदा ।
मूर्त्तं मेरुशिखास्थिता व्यवतु मे गण्डस्थलं मैथुनी
तुष्टं चाष्टमयष्टिकाधरतलं धात्रीधराधारिणी ॥ ८१ ॥
नासाग्रद्वयगह्वरं भृगुतरा नेत्रत्रयं तारिणी
केशे कुन्तलकालिका सुकपिला कैलासशैलासना ।
कङ्कालामलमालिका सुवसना दन्तावली दैत्यहा
वाक्यं मन्त्रमनन्तशास्त्रनरणी संज्ञावचःस्तम्भिनी ॥ ८२ ॥
हं हं हं नरहारघोररमणी सञ्चारिणी पातु मे
शत्रूणां दलनं करोतु नियतं मे चण्डमुण्डापहा ।
भीमा सन्दहतु प्रतापतपना संवर्द्धन वर्द्धिनी
मन्दारप्रियगन्धविभ्रममदा वैदग्ध्यमोहान्तरा ॥ ८३ ॥

सा सा सा तु पतङ्गकोटिनिलया वृङ्कारटङ्कारिणी
आनन्दोत्सवसर्वसारजयदा सर्वत्र सा रक्षका ।
चौं चौं चौं कठिनाचरा चयकरी सर्वाङ्गदोषं हना
देहारिः कचहा कराकचकुचाकोलालपूरश्रिता ॥ ८४ ॥
घं घं घं घटघर्घरा विघटिता जायापतिः पातु मे
कल्पेऽसौ कुलपालिका भययुतं सर्वत्र मे विग्रहम् ।
निद्राद्रावितकालिका मम कुलं लङ्कातटाच्छादिनी
लं लं लं नयनानना सुकमला सा लाकिनीलक्षणा ॥ ८५ ॥
कुक्षौ पृष्ठतरं मुदा समधनं सा पातु मुद्रामयी
मोक्षं पातु करमकालरजकी या रक्तकी धीतकी ।
कृत्या नापितपुत्रिका शशिमुखी सूक्ष्मा मम प्राणगम्
मन्दारप्रियमालया मणिमयग्रन्थ्या महन्मण्डिता ॥ ८६ ॥
पूज्या योगिभिरुत्सुकी भगवती मूलस्थिता सत्क्रिया
मत्ता पातु पतिव्रता मम गृहे धर्मं सदा श्रेयसे ।
धर्माम्भोरुहमध्यदेशनिकरे काली महायोगिनी
मत्तानामतिदर्पहा हरशिरोमालाकला केवला ॥ ८७ ॥
मे गुह्यं जयमेव लिङ्गमपि मे मूलाम्बुजं पातु सा
या कन्या हिमपर्वतस्य भयहा पायाच्चितस्वस्थलम् ।
सर्वेषां हृदयोदयानलशिखाशक्तिर्मनोरूपिणी
मे भक्तिं परिपातु कामकुशला लक्ष्मीप्रिया मे प्रभो ! ॥८८॥
गौरी गौरवकारिणी भुवि महामाया महामोहना

* * * * *

वं वं वं वकरारुणी सुमदिरा मे पातु नित्यं कटीं
कूटा सा रविचन्द्रवह्निरहिता स्वेच्छामयी मे सुखम् ॥८९॥
एतत् स्तोत्रं पठेद् यस्तु सर्वकाले च सर्वदा ।
स भवेत् कालयोगेन्द्रो महाविद्यानिधिर्भवेत् ॥ ९० ॥

मूलपद्मबोधने च मूलप्रकृतिसाधने ।
निजमन्त्रबोधने च घोरसङ्कटकालके ॥ ९१ ॥
आपदस्तस्य नश्यन्ति अन्धकारं यथा रविः ।
सर्वकाले सर्वदेशे महापातकघातकम् ॥
स भवेद्योगिनीपुत्रः कलिकाले न संशयः ॥ ९२ ॥

इति श्रीरुद्रयामले उत्तरतन्त्रे महातन्त्रोद्दीपने षट्चक्रप्रकाशे भैरव-भैरवी-संवादे
मन्त्रविनिर्णयं नाम अष्टाविंशः पटलः ॥ २८ ॥

अथ एकोनत्रिंशः पटलः ।

अतःपरं महावीरो विवेकी परमार्थवित् ।
पुनर्जिज्ञासयामास ज्ञानज्ञेयेन शङ्करः ॥ १ ॥

आनन्दभैरव उवाच ।—

षट्चक्रभेदनकथां कथयस्व वरानने ! ।
हिताय सर्वजन्तूनां हिरण्यवर्णमण्डितम् ॥ २ ॥
प्रकाशयस्व वरदे ! योगानामुदयं वद ।
येन योगेन धीराणां हितार्थं वाञ्छितं यथा ॥ ३ ॥
कालक्रमेण सिद्धिः स्यात् कालज्ञानविनाशनात् ।
कालचालनहेतोश्च पूर्वं नोदयापनं कृतम् ॥ ४ ॥

आनन्दभैरव्युवाच ।—

षट्चक्रभेदः ।—

शृणु कान्त ! प्रवक्ष्यामि षट्चक्रभेदनक्रियाम् ।
यत् कृत्वा अमरा लोके विचरन्ति चराचरे ॥ ५ ॥
अकालमृत्युहरणं सर्वव्याधिविनाशनम् ।
योगेन जीवगाश्चैव भवन्त्यमररूपिणः ॥ ६ ॥
षट्चक्रे च महापद्मे सर्वसत्त्वगुणान्विते ।
धर्माधर्मे मनोराज्ये सर्वविद्यानिधौ कृतौ ॥ ७ ॥

कलिकल्मषमुख्यानां सर्वपापप्रहारकं।
मनो दत्त्वा महाकाल ! जीवाः सर्वत्रगामिनः ॥ ८ ॥

षट्चक्रयोगः ।—

अथ षट्चक्रयोगस्य प्रवक्ष्यामीह तत्त्वतः।
कुण्डलीविधियोगञ्च कृत्वा योगी भवेन्नरः ॥ ९ ॥
मूलादिब्रह्मरन्ध्रान्तं षट्चक्रभेदनं मतम्।
षट्चक्रे योगशास्त्राणि विविधानि वसन्ति हि ॥ १० ॥
यो जानातीह षट्चक्रं सर्वशास्त्रार्थविद्भवेत्।
चतुर्दलं मूलपद्मं यादिसान्तार्णसम्भवम् ॥ ११ ॥
हिरण्यवर्णममलं ध्यायेद् योगी पुनः पुनः।
निर्ज्जने विपिने शून्ये पशुपक्षिगणान्विते ॥ १२ ॥
निर्भये सुन्दरे देशे दुर्भिक्षादिविवर्ज्जिते।
कृत्वा दृढ़ासनं मन्त्री योगमार्गपरो भवेत् ॥ १३ ॥
तदा योगी भवेत् क्षिप्रं मम शास्त्रानुसारतः।
पूर्वदले वकारञ्च ध्यायेद् योगी सदा सुखी ॥ १४ ॥
सुवर्णवर्णं हितकारिणं नृणां सत्त्वोद्भवं पूर्वदलस्थितं सुखम्।
मत्तप्रियं वारणमत्तमन्दिरं मन्त्रार्थकं शीतलरूपधारिणम् ॥१५॥
योगानुभावाश्रयकालमन्दिरं तेजोमयं सिद्धिसमृद्धिदं गुरुम्।
आद्याक्षरं वं वरभावसाधनं नारायणं भावनपद्ममच्युतम् ॥१६॥
ध्येयं शकारं कनकाचलप्रभं गौरीपतेः श्रीकरणं पुरातनम्।
लक्ष्मीमयं सर्वसुवर्णवेष्टितं सदा मुदा दक्षिणपत्रपावनम् ॥१७॥
समीश्वरी षष्ठगुणावतंसं षट्पद्मसम्भेदनकारकं परम्।
परापरस्थाननिवासिनं गुणं हिमावलाच्छन्दमहं भजामि ॥१८॥
सकारमानन्दरसं प्रियाप्रियं ध्याये महाहाटकपर्वताग्रकम्।
ध्याये सुदाहं धननाथमन्दिरे मायामहामोहविनाशनं जयम् ॥१९॥

चतुर्भुजं भुजयुगमष्टादशभुजं तथा।
षष्टहस्तं सदा ध्यायेन्मन्त्रभावविशुद्धये ॥ २० ॥
ततो ध्यायेत् कर्णिकायां मध्यदेशे मनोरमम्।
स्वयम्भूलिङ्गपरमं योगिनां योगसिद्धिदम् ॥ २१ ॥
प्रातःसूर्य्यसमप्रख्यं तड़िल्कोटिसमप्रभम्।
तं संवेष्ट्य महादेवी कुण्डलीयोगदायिनी ॥ २२ ॥
सार्द्धत्रिवेष्टनग्रन्थि-युक्ता सा मुक्तिदायिनी।
निद्रिता सापदा भद्र ! महापातकघातिनी ॥ २३ ॥
निरन्तरं तस्य शीर्षे विभाति शशिधारिणी।
तत् श्वासधारिणी नित्या जगतां प्राणधारिणी ॥ २४ ॥
सुप्तसर्पसमा भान्ति यथाऽर्कशतकोटयः।
यदा लिङ्गं सा विहाय प्रगच्छति महापथे ॥ २५ ॥
तदा सिद्धो भवेद् योगी ध्यानधारणकृत् शुचिः।
सदानन्दमयो नित्यश्चैतन्यकुण्डली यदा ॥ २६ ॥
सुषुम्नानाड़िकामध्ये महासूक्ष्मा त्रिलोहिता।
मनो निधाय यो योगी श्वासमार्गपरो भवेत् ॥ २७ ॥
तदा सा द्रवति क्षिप्रं चैतन्यकुण्डली भवेत्।
दुष्टदेशे महाकुण्डे मेरुमूले महाप्रभे ॥ २८ ॥
मूलादिब्रह्मरन्ध्राधः सदाऽस्थिरूपधारकः।
कनकाचलनाम्ना च प्रतिभाति भुजद्वये ॥ २९ ॥
तन्मध्ये परमा सूक्ष्मा सुषुम्ना बहुरूपिणी।
मनो मुनिस्वरूपा च मनश्चैतन्यकारिणी ॥ ३० ॥
तन्मध्ये भाति वज्राख्या घोरपातकघातिनी।
सिद्धिदा भावविज्ञानां मोक्षदा कुलरूपिणाम् ॥ ३१ ॥
तन्मध्ये चित्रिणी देवी देवताप्रीतिवर्द्धिनी।
हितैषिणी महामाया कालजालविनाशिनी ॥ ३२ ॥

सा पाति सकलान् चक्रान् पद्मरूपधरान् परान् ।
त्रैलोक्यमण्डलगतान् साक्षादमृतविग्रहान् ॥
स्वयं दधार सा देवी चित्राख्या चारुतेजसी ॥ ३३ ॥
तले पृष्ठे मूर्द्धदेशे शीर्षे वक्षसि नाभिषु ।
कण्ठकूपे चक्रमध्ये ब्रह्माण्डं पाति सर्वदा ॥ ३४ ॥
शरीरात्मकमीशार्थं त्रैलोक्यं सचराचरम् ।
चित्राख्यनयनं पद्मं यो भावयति भावुकः ॥ ३५ ॥
भावेन लभ्यते योगी भावेन भाव्यते शिवः ।
भावेन शक्तिमाप्नोति तस्माद्भावं समाश्रयेत् ॥ ३६ ॥
षट्चक्रभावनां कृत्वा महायोगी भवेन्नरः ।
सर्वधर्म्मान्वितो भूत्वा राजते क्षितिमण्डले ॥ ३७ ॥
सर्वत्रगामी स भवेत् यदि पद्मे मनोलयम् ।
पद्मभावनमात्रेण आकाशसदृशो भवेत् ॥ ३८ ॥

मनोमहाप्रलयः ।—

महापद्मे मनो दत्त्वा महाभक्तो भवेद् ध्रुवम् ।
यदि भक्तो भवेन्नाथ ! तदा युक्तो न संशयः ॥ ३९ ॥
यदि मुक्तो महीमध्ये ध्यानयोगपरायणः ।
तदा कालवशं कृत्वा सर्वदर्शी च सर्ववित् ॥
सर्वज्ञः सर्वतोभद्रो भवतीति न संशयः ॥ ४० ॥
चित्रिणीमध्यदेशे च ब्रह्मनाडी महत्प्रभा ।
सर्वसिद्धिप्रदा नित्या सा देवी सकलाकला ॥
व्योमरूपा भगवती सर्वचैतन्यरूपिणी ॥ ४१ ॥
एकरूपं परं ब्रह्म ब्रह्मातीतं जगत्त्रयम् ।
यदा जगत्त्रयं ब्रह्म तदा महालयं प्रभो ! ॥ ४२ ॥
महालये मनो दत्त्वा सर्वकालजयी भवेत् ॥ ४३ ॥
मृत्युञ्जयी महावीरो महावेत्ता महापतिः ।

सर्वव्यापकरूपेण ईश्वरत्वेन भासते ॥ ४४ ॥
सर्वदा ज्ञानसम्भूतो विशालाक्षः प्रसन्नधीः ।
एकस्थानस्थितो याति नक्षत्रं स हि शङ्कर ! ॥ ४५ ॥
एकदृष्टिः क्षुधातृष्णा-रहितो वाक्यवर्जितः ।
निराकारे मनो दद्यात्तदा महालये प्रभो ! ॥ ४६ ॥
किन्तु नाथ ! प्राणिनां हि नापि क्वापि महात्ययः ॥
महाप्रलय एवं हि योगिनां नात्र संशयः ॥ ४७ ॥
यदा मनोयोगविशुद्धये मनो लयं सदा यः कुरुतेऽप्यहर्निशम् ।
स एव मुक्तो गुणसिन्धुरूपकः कालाग्निरूपेण तदैव दैवतम् ॥ ४८ ॥
महामना योगविकारवर्जितः कामक्रियाकाण्डविशुद्धिमण्डितः ।
स्थितो गतीनां मतिमान्निरस्तो महालयस्थोऽमर एव भक्तः ॥ ४९ ॥
मानी विचारार्थविवेकचित्ते चातुर्य्यचित्तोल्वणताविवर्जितः ।
योगी भवेत् साधकचक्रवर्त्ती व्योमाम्बुजे चित्तविसर्जनं सदा ॥ ५० ॥

इति श्रीरुद्रयामले उत्तरतन्त्रे महातन्त्रोद्दीपने षट्चक्रप्रकाशे भैरवीभैरवसंवादे
महाप्रलयो नाम एकोनविंशः पटलः ॥ २९ ॥

अथ त्रिंशः पटलः ।

आनन्दभैरव्युवाच ।—

मूलपद्मभेदनम् ।—

अथ वक्ष्ये महाकाल ! मूलपद्मविवेचनम् ।
यत् कृत्वा अमरो भूत्वा वसेत् कालचतुष्टयम् ॥ १ ॥
अत्र षट्चक्रभेदार्थं भेदिनीशक्तिमाश्रयेत ।
छेदिनीं सर्वग्रन्थीनां योगिनां समुपाश्रयेत् ॥ २ ॥
तस्या मन्त्रान् प्रवक्ष्यामि येन सिद्धो भवेन्नरः ।
आदौ शृणु महामन्त्रं भेदिन्याः प्रबलं मनुम् ॥ ३ ॥

आकालीं समुद्धृत्य ब्रह्ममन्त्रं ततःपरम् ।
देव्याः प्रणवमुद्धृत्य भेदिनी तदनन्तरम् ॥ ४ ॥
ततो हि मम गृह्णीयात् प्रापय्य द्वयमेव च ।
चित्तचञ्चलशब्दान्ते मां रक्ष युग्ममेव च ॥ ५ ॥
भेदिनि मम शब्दान्ते अकालमरणं हर ।
हरस्व स्वं महापापं नमो नमोऽग्निजायया ॥ ६ ॥
एतन्मन्त्रं जपेत्तत्र डाकिनी रक्षति प्रभो ! ।
आदौ प्रणवमुद्धृत्य ब्रह्ममन्त्रं ततःपरम् ॥ ७ ॥
शाम्भवीति ततश्चोक्त्वा ब्रह्माणीति पदं ततः ।
मनोनिवेशं कुरुते तारयेति द्विधा पदम् ॥ ८ ॥
छेदिनि पदमुद्धृत्य मम मानसशब्दतः ।
महान्धकारमुद्धृत्य छेदयेति द्विधा पदम् ॥ ९ ॥
स्वाहान्तं मनुमुद्धृत्य जपेन्मूलाम्बुजे सुधीः ।
एतन्मन्त्रप्रसादेन जीवन्मुक्तो भवेन्नरः ॥ १० ॥
तथा श्रीयोगिनीमन्त्रं जपेत्तत्रैव शङ्कर ! ।
ओं घोररूपिणी-पदं सर्वव्यापिनि शङ्कर ! ॥ ११ ॥
महायोगिनि पापं मे शोकं रोगं हरेति च ।
विपक्षं छेदयेत्युक्त्वा योगं मय्यर्पय द्वयम् ॥ १२ ॥
स्वाहान्तं मनुमुद्धृत्य जपाद् योगी भवेन्नरः ।
खेचरत्वं समाप्नोति योगाभ्यासेन योगिराट् ॥ १३ ॥

डाकिनीसाधनम् ।—

डाकिनीं ब्रह्मणा युक्तां मूले ध्यात्वा पुनः पुनः ।
जपेन्मन्त्रं सदा योगी ब्रह्ममन्त्रेण योगवित् ॥ १४ ॥
ब्रह्ममन्त्रं प्रवक्ष्यामि तज्जापेनापि योगिराट् ।
ब्रह्ममन्त्रप्रसादेन जड़ो योगी न संशयः ॥ १५ ॥
प्रणवत्रयमुद्धृत्य दीर्घप्रणवयुग्मकम् ।

तदन्ते प्रणवतीति ब्रह्म ब्रह्म त्रयं त्रयम् ॥ १६ ॥
सर्वसिद्धिपदस्यान्ते पालिकेति च सां पदम् ।
सत्त्वगुणे रक्ष रक्ष माया स्वाहापदं जपेत् ॥ १७ ॥
डाकिनीमन्त्रराजञ्च शृणुष्व परमेश्वर ! ।
यज्जप्त्वा डाकिनी वश्या त्रैलोक्यस्थितिपालकः ॥ १८ ॥
यो जपेत् डाकिनीमन्त्रं चैतन्यकुण्डलीं तथा ।
अनायासेन सिद्धिः स्यात् परमात्मप्रदर्शनात् ॥ १९ ॥
मायात्रयं समुद्धृत्य प्रणवैकं ततःपरम् ।
डाकिन्यन्ते महाशब्दं डाकिन्यष्टपदं ततः ॥ २० ॥
पुनः प्रणवमुद्धृत्य मायात्रयं ततःपरम् ।
मम योगसिद्धिमन्ते साधयेति द्विधा पदम् ॥ २१ ॥
मनुमुद्धृत्य देवेश ! जपाद् योगी भवेज्जड़ः ।
जप्त्वा संपूजयेत्यान्ती पुरश्चरणसिद्धये ॥ २२ ॥
सर्वत्र चित्तमाल्येन द्रव्यादिविविधानि च ।
पूजयित्वा मूलपद्मे चित्तोपकरणेन च ॥ २३ ॥
ततो मानसजापञ्च स्तोत्रञ्च कालिपारणम् ।
पठित्वा योगिराड् भूत्वा वसेत् षट्चक्रवेश्मनि ॥ २४ ॥
शक्तियुक्तं विधिं यस्तु स्तौति नित्यं महेश्वर ! ।
तस्यैव पालनार्थाय मम जन्म महीतले ॥ २५ ॥
तत् स्तोत्रं शृणु योगार्थं सावधानावधारय ।
एतत् स्तोत्रप्रसादेन महाकालवशो भवेत् ॥ २६ ॥

डाकिनीस्तोत्रम् ।—

नित्यां ब्रह्मपरायणां त्रिनयनां ध्यायेत्सुदा डाकिनीं
रक्ताङ्गच्छविमोहिनीं कुलपथज्ञानाकुलज्ञानिनीम् ।
मूलाम्भोरुहमध्यदेशनिकटे भूबिम्बमध्ये प्रभां
हेतुस्थां गतिमोहिनीं श्रुतिभुजां विद्यां भवाह्लादिनीम् ॥ २७ ॥

विद्या वास्तवमालया गलतलप्रालम्बशोभाकरां
ध्यात्वा मूलनिकेतने निजकुले यः स्तौति भक्त्या सुधीः ।
नानाकारविकारसारकरणां कर्त्रीं विधोर्भागिनीं
मुख्यां मुख्यजनस्थितां स्थितिमतीं सत्त्वाश्रितामाश्रये ॥२८॥
या देवी नवडाकिनी सुरमणी विज्ञानिनी मोहिनी
मां पातु प्रियकामिनी भवविधेरानन्दसिन्धूद्भवा ।
मे मूलं गुणभासिनी प्रचयतु श्रीकीर्त्तिचक्रं हि मां
नित्या सिद्धिगुणोदया सुरदया श्रीसंज्ञया मोहिता ॥२९॥
तन्मध्ये परमाफला कुलफला रत्नप्रकान्ताकरा
राका राशिषसा दशा शशिघटा लीलाऽमला कामना ।
सा माता नवमालिनी मम कुलं मूलाम्बुजं सर्वदा
सा देवी लयकारिणी कलिफलोल्लासैकबीजान्तरा ॥३०॥
धात्री धैर्यवती सती मधुमती विद्यावती भारती
कल्याणी कुलकन्यकाधरनरारूपा हि सूक्ष्मास्पदा ।
मोक्षस्था स्थितिपूजिता स्थितिगता माता सुता योगिनां
नौमि श्रीभविकाशयां शमनगां गीतोद्गतां गोपनाम् ॥३१॥

* * * *

कुलक्षेशीं कुलपण्डितां कुलपथग्रन्थिक्रियाच्छेदिनीं
नित्यांशां गुणपण्डितां प्रचपलां मालाशताकारणाम् ॥३२॥
विद्यां चन्द्रगुणोदयां समुदयां त्रैलोक्यरक्षाचरां
ब्रह्मज्ञाननिवासिनीं सितशुभानन्दैकबीजागताम् ।
गीतार्थानुभवप्रियां सकलया सिद्धप्रभापाटलाम्
कामाख्यां प्रभजामि जन्मनिलयां हेतुप्रियां सत्क्रियाम् ॥३३॥

* * * *

सिद्धौ साध्यं प्रधानं परमपरतरं दिव्यरूपं मनोगम् ।
ब्रह्मज्ञानं निदानं गुणनिधिनयनं कारणानन्दयानं

ब्रह्माण्डं ब्रह्मबीजं रजनिजयपरं योगकाव्यानुरागम् ॥ ३४ ॥
शोकातीतं विनीतं नरकजयपरं सर्वविद्याविधिज्ञं
सारात्सारं तरुं तं सकलतिमिरहरं हंसगं पूजयामि ।
एतत्सम्बन्धमार्गे नवनवदलगं वेदवेदाङ्गविज्ञं
मूलाम्भोजप्रकाशं तरुणरविशशिप्रोन्नताकारसारम् ॥३५॥

* * * *

भावाख्यं भावसिद्धं जयजयदविधिध्यानगम्यं पुराणं
पाराख्यं पारणाख्यं परजनजनितं ब्रह्मरूपं भजामि ॥ ३६ ॥
डाकिनीसहितं ब्रह्म ध्यानं कृत्वा पठेत् स्तवम् ।
पठनाद्धारणान्मन्त्री योगिनीसङ्गतिर्भवेत् ॥ ३७ ॥
एतत् पठनमात्रेण महापातकनाशनम् ।
एकरूपं जगन्नाथं विशालनयनाम्बुजम् ॥
एवं ध्यात्वा पठेत् स्तोत्रं पठित्वा योगिराड् भवेत् ॥ ३८ ॥

इति श्रीरुद्रयामले उत्तरतन्त्रे महातन्त्रोद्दीपने सिद्धमन्त्रप्रकरणे षट्चक्रसिद्धि-साधने भैरवीभैरवसंवादे डाकिनीब्रह्मस्तोत्रं नाम त्रिंशः पटलः ॥ ३० ॥

अथ एकत्रिंशः पटलः ।

आनन्दभैरव्युवाच ।—

भेदिनीसाधनम् ।—

अथ नाथ ! प्रवक्ष्यामि भेदिन्याः साधनं परम् ।
येन साधनमात्रेण योगी स्यात् कालजालहः ॥ १ ॥
कलिकाले महायोग साधय त्वं महाप्रभो ! ।
यदि न साधितः कालः स कालो देहभक्षकः ॥ २ ॥
भेदिनीसाधनेनैव ग्रन्थीनां भेदनं भवेत् ।
डाकिनीं हृदये ध्यायेत् परमानन्दरूपिणीम् ॥ ३ ॥
अष्टहस्तां विशालाक्षीं शशाङ्कावयवाङ्किताम् ।

त्रैलोक्यमोहिनीं विद्यां भयघ्नां वरदां सताम् ॥ ४ ॥
शुक्लवर्णां त्रिनयनां चारुरूपमनोहराम् ।
ध्यात्वा मूलाम्बुजे योगी पाद्याद्यैः परिपूजयेत् ॥ ५ ॥
तत्र मनो लयं कृत्वा योगी भवति भूतले ।
यदा मनोलयं याति तदा तस्याः स्तवं पठेत् ॥ ६ ॥
स्तोत्रस्य पठनात् मर्त्यं स सर्वत्राश्रितो भवेत् ।
ध्यानमाकृत्य प्रपठेत् सर्वसिद्धिमयो भवेत् ॥ ७ ॥

भेदिनीस्तोत्रम् ।—

या भेदिनी सकलग्रन्थिविनाशनार्था
धर्मान्तरे सकलशत्रुविनाशनस्था ।
सा मे सदा प्रतिदिनं परिपातु देहं
कालार्थिका भगवती सुतकार्यकर्त्री ॥ ८ ॥
या कान्ता करुणामयी त्रिजगतामानन्दसिद्धिस्थिता
स्थित्या सा परिपालिका कुलकला लीलाकलाकोमला ।
वाणीसिद्धिकरी कृतार्थनिगडे श्रीभेदया शङ्करी
संज्ञाभेदनभेदिका सुवरदा वेदान्तसिद्धान्तदा ॥ ९ ॥
वाणी बाला कुलाला कलिकलितचरणा कोमला संख्यमाला
लीलाभालालराला कुलकमलदला चञ्चला देहकाला ।
भेदाख्या भेद्यभेदा वरनदनिनदा नादबिन्दुप्रकाशा
सा मे शीर्षं ललाटं मुखहृदयकटिं गुह्यगुह्यं प्रपायात् ॥ १० ॥
काञ्चीपीठप्रकाशा निजपदविलया योगिनीमिलवचा
नित्या योगप्रकाशा गुरुगतघटिता घोरसंहारकारा ।
ब्रह्मानन्दस्वरूपा विगतमतिहरा हीरकाभा लसिता
हारग्रैवेयादिभूषा शशिशतकिरणा पातु मां भेद्यदेहम् ॥ ११ ॥
या भेदिनी सकलपापनिपुणिपाणां
स्वर्गापवर्गावरदा वरदासुखी सा ।

मे पातु देहघटितं सकलेप्सितार्थं
भावप्रभावपटला मम गेहसंस्था ॥ १२ ॥
कामाश्रिता विविधदोषविनाशलेशा
सौन्दर्यविग्रकरणी क्रतुकर्मरचा ।
दीचा सतां मतिमतां निजयोगदात्री
सा मे सदा सकलदेहमिहाखभेद्या ॥ १३ ॥
कान्ताशान्तगुणोदया मम धनं देहस्य नित्याश्रया
पायात् श्रीकुलदैवतस्य जयदा सा योगसारं परम् ।
साक्षादीश्वरपूजिता समुचिता चित्तार्थिता चार्थिता
जन्मे घोरतरे जये निजकुले कालकुले व्याकुले ॥ १४ ॥
भेदाभेदविवर्जिता सुरवरश्रीहस्तपद्मार्चिते
भेदं मे खलु लिङ्गमूलकमलं कालप्रिया पातु सा ।
सप्तस्वर्गतलं ममैव वपुषो मिथ्यापमानापहा
हेतुं वाग्भवसुन्दरप्रियवती हैमावती भारती ॥ १५ ॥
एतत् स्तोत्रं पठित्वा यः स्तौति मूलाम्बुजे च माम् ।
स एव योगमाप्नोति स भवेद् योगवल्लभः ॥ १६ ॥
मनःस्थिरं भवेत् क्षिप्रं वाजलं लभते तदा ।
अनायासेन सिद्धिः स्यात् यस्य वायुर्वशे भवेत् ॥ १७ ॥
योगिनीनां दर्शनं हि अनायासेन लभ्यते ।
भावसिद्धियुतो भूत्वा विचरेदमरो यथा ॥ १८ ॥
मूलपद्मे वसेद्देवी मूलाम्भोजप्रकाशिनी ।
मालती मालवी मीना मालिनी च मनोहरा ॥ १९ ॥
मानसी मदना मान्या मुद्रामैथुनतत्परा ।
मेरुस्था मादकुसुमा मण्डिता मण्डलस्थिता ॥ २० ॥
मनःस्थैर्यकरी देवी भाव्यते यैः कुमारकैः ।
अकस्मात् सिद्धिमाप्नोति कालेन परमाश्रय ! ॥ २१ ॥

छेदिनीसाधनम् ।—

अथ वक्ष्ये महादेव्याः छेदिन्याः सुरसत्तम !
छेत्ता त्वं सर्वग्रन्थीनां यत्प्रसादाद् यतीश्वर ! ॥ २२ ॥
यत् प्रसादादनन्तो हि योगी संसारमण्डले ॥ २३ ॥

देशानन्दा सकलगुणदा छेदिनी छेदनस्था
हृव्यस्था सा विभवनिरता या निरस्ता निशायाम् ।
सा मे नित्यं कुलकमलगा गोपनीया विधिज्ञा
श्रीपालेशी गगनवसना सर्वयोगं प्रपायात् ॥ २४ ॥

कामानन्दा मदननिरता भाविनी भावसिन्धोः
कामानन्दोद्भववसनरता योगियोगस्य धात्री ।
देहच्छेदे निरसनरता धर्मपुञ्जं प्रपायात्
कालाकाले कमलकलिकावासिनी कालिकाले ॥ २५ ॥

*　　*　　*　　*

ग्रन्थिच्छेदस्थिरगृहगता गात्रनाड़ीपथस्था ।
वक्त्राम्भोजे वचनमधुरं धारयन्ती जनानां
सा मे रन्ध्रं सुरुचिरतनोः पातु पञ्चानना सा ॥ २६ ॥

योगाङ्गस्था स्थितिलयविभवा लोमकूपाम्बुजस्था
माता गौरी गिरिपतिसुता भासुरास्त्रप्रदीप्ता ।
संपायान्मे हृदयविवरं छेदिनी मूलपूरे
कैलासस्थामृतकगिरिशं पातु रुद्रप्रसादात् ॥ २७ ॥

नान्दान्तःस्था मलगुणधरणासन्नसिद्धान्तपारा
भोगानन्दा भगनगविले काशयन्ती जनानाम् ।
विद्याविद्या विधिविधिकगणा छेदिनी छन्नरूपा
सा सर्वान्तःकरणनिलया लाकिनी प्रेमभावा ॥ २८ ॥

योगं स्वर्गेऽर्पयसि मनसि प्रेमभावं परेशे
या या यात्रा त्रिविधकरणा कारणा सर्वजन्तोः

माता धात्री सेवकसदया सर्वकर्त्री मनो मे
रक्षां रक्षाचरगतकमला केवला निष्कला या ॥ २९ ॥

सा योगेन्द्रा समवतु मुदा मे गुदं कुण्डलिन्यां
भक्तः कन्या कमलनिलया राकिणी प्रेमभावान् ।
मोक्षप्राणान् तपनरहिता पातु मे वेदवक्त्रा
सिद्धा मूलाम्बुजदलगता पावनी पातु तुण्डम् ॥ ३० ॥

*　　*　　*　　*

हेरम्बाज्ञाप्रलयघटिता काकिनी क्रोधरूपा ॥ ३१ ॥

यदि भजति कुलीनः कामिनीं क्रोधविद्यां
स भवति परयोगी छेदिनीस्तोत्रपाठात् ।
सकलदुरितनाशः चालनादिप्रसिद्धिः
सकलजनहितं स्यात् तस्य नित्यं सुराज्यम् ॥ ३२ ॥

एतत् स्तोत्रं पठेद्विद्वान् महासंयमतत्परः ।
मूले मनःस्थिरं याति सर्वानिष्टविनाशने ॥ ३३ ॥
सर्वसिद्धिः करे तस्य यो भावं समुपाश्रयेत् ॥ ३४ ॥
शृणुष्व परमानन्द ! रससागरसम्भव ! ।
योगिनीस्तोत्रसारञ्च श्रवणाद्धारणाद् यतिः ॥ ३५ ॥
अप्रकाश्यमिदं रत्नं नृणामिष्टफलप्रदम् ।
यस्य विज्ञानमात्रेण शिवो भवति साधकः ॥ ३६ ॥

योगिनीस्तोत्रम् ।—

कङ्काली कुलपण्डिता कुलकला कालानना श्यामला
योगीन्द्रेन्द्रसुराज्य नाथ-यजिताऽन्या योगिनी मोक्षदा ।
मासिकं कुजड़ सुखास्तमधनं हीनञ्च दीनं खलं
ह्यद्यैवं परिपालनं प्रकुरुते त्वं त्राहि तामाश्रये ॥ ३७ ॥

यज्ञेशी शशिशेखरा शमपरा हेरम्बयोगास्पदा
पात्री दानपरा हरा हरिहराऽघोरामराशङ्करा ।

भद्रे बुद्धिविहीनदेहजडितं पूजाजपावर्जितं
मामिकार्थमकिञ्चनं यदि किल त्वं योगिनी रक्षसि ॥ ३८ ॥
भाव्या भावनतत्परस्य करुणा सा चारुणा भोगिनी
चन्द्रस्था निजनाथदेहसुगता मन्दारमालाच्युता ।
योगीशी कुलयोगिनी त्वममरा धाराधराच्छादिनी
योगीन्द्रोत्सवरागयागजडिता या मोक्षसिद्धिस्थिता ॥ ३९ ॥
हंसं पाति परेश्वरी सुरतरी वाराहिका भास्करी
योगं पार्श्वविबन्धनं तव कथाऽऽलापामृतावर्जितम् ।
नानाधर्मविवर्जिते कलिकुले संव्याकुलं मां क्षणं
प्रत्येके यदि दृष्टिपातकमला तत् केवलं सेवनम् ॥ ४० ॥

मायामयी हृदि यदा मम चित्तमग्नं
राज्यं तदा किमु फलं फलसाधनं वा ।
सत्याशया बलवती मम शक्तिदेवी
भाति प्रिये श्रुतिदले मुखरार्पणं ते ॥ ४१ ॥
या योगिनी सकलयोगसुमन्त्रणाढ्या
रुच्या महङ्गणमयी करुणानिधाना ।
सा मे भयं हरतु वारणमत्तचित्ता
संहारिणी भवतु सोदररत्नहारा ॥ ४२ ॥
यदि पठति मनोगा गोरसानी सुरङ्गी
वशयति रिपुवर्गं क्रोधपुञ्जं निहन्ति ।
भुवनपवनभक्षो भावुकः स्यात् सुसङ्गी
रतिपतिगुणतुल्यो रामचन्द्रो यथेशः ॥ ४३ ॥

एतत् स्तोत्रं पठेद् यस्तु स भक्तो भवति प्रियः ।
मूलपद्मे स्थिरो भूत्वा षट्चक्रे राज्यमाप्नुयात् ॥ ४४ ॥

इति श्रीरुद्रयामले उत्तरतन्त्रे महातन्त्रोद्दीपने षट्चक्रप्रकाशे सिद्धमन्त्र-
प्रकरणे भैरवभैरवीसंवादे भैरव्यादिस्तोत्रं नाम
एकत्रिंशः पटलः ॥ ३१ ॥

अथ द्वात्रिंशः पटलः ।

आनन्दभैरव्युवाच ।—

अथ कान्त ! प्रवक्ष्यामि शृणुष्व मम तत्त्वतः ।
शक्तिः कुण्डलिनी देवी सर्वभेदनभेदिनी ॥ १ ॥
कलिकल्मषहन्त्री च जगतां मोक्षदायिनी ।
तस्याः स्तोत्रं तथा ध्यानं न्यासं मन्त्रं शृणु प्रभो ! ॥ २ ॥
यस्य विज्ञानमात्रेण मूलपद्मे मनोलयः ।
चैतन्यानन्दनिरतो भवेत् कुण्डलिसङ्गमात् ॥ ३ ॥
आकाशगामिनीं सिद्धिं ददाति कुण्डलिन्यहम् ।
अमृतानन्दरूपाभ्यां करोमि पालनं नृणाम् ॥ ४ ॥
श्वासोच्छ्वासकलाभ्याञ्च शरीरं त्रिगुणात्मकम् ।
पञ्चभूता च ता नित्यं नानाशक्तिर्भवेद् ध्रुवम् ॥ ५ ॥

कान्दवासिनीध्यानम् ।—

कोटिसूर्यप्रतीकाशां निरालम्बां विभावयेत् ।
सर्वस्थितां ज्ञानरूपां श्वासोच्छ्वासनिवासिनीम् ॥ ६ ॥
स्वयम्भूकुसुमोत्पन्नां ध्यानज्ञानप्रकाशिनीम् ।
मोक्षदां शक्तिदां नित्यां नित्यज्ञानस्वरूपिणीम् ॥ ७ ॥
लोलां लीलां धरां सर्वां शुद्धज्ञानप्रकाशिनीम् ।
कोटिकालानलसमां विद्युत्कोटिमहौजसाम् ॥ ८ ॥
तेजसा व्याप्तकिरणां मूलादूर्द्ध्वप्रकाशिनीम् ।
अष्टलोकप्रकाशाढ्यां फुल्लेन्दीवरलोचनाम् ॥ ९ ॥
सर्वमुखीं सर्वहस्तां सर्वपादाम्बुजस्थिताम् ।
मूलादिब्रह्मरन्ध्रान्त-स्थानालोकप्रकाशिनीम् ॥ १० ॥
त्रिभाषां सर्वभक्ष्याञ्च श्वासनिर्गमपालिनीम् ।
ललितां सुन्दरीं नित्यां कुण्डलीं कुण्डलाकृतिम् ॥ ११ ॥
सभूमण्डलबाह्यस्थां बाह्यज्ञानप्रकाशिनीम् ।

नागिनीं नागभूषाढ्यां भयानककलेवराम् ॥ १२ ॥
योगिज्ञेयां शुद्धरूपां विरलामूर्द्ध्वगामिनीम् ।
एवं ध्यात्वा मूलपद्मे कुण्डलीं परदेवताम् ॥ १३ ॥
भावसिद्धिर्भवेत् क्षिप्रं कुण्डलीभावनादिह ।
ततो मानसजापं हि मानसं होमतर्पणम् ॥ १४ ॥
अभिषेकं मुदा कृत्वा प्रातःकाले पुनः पुनः ।
प्राणायामं ततः कृत्वा स्तोत्रञ्च कवचं पठेत् ॥ १५ ॥
एतत्स्तोत्रप्रपाठेन स्वयं सिद्धान्तविद्भवेत् ।
कुण्डली-सुकृपा तस्या मासाद्भवति निश्चितम् ॥ १६ ॥
निद्रादशादिकं त्यक्त्वा प्रकाश्याहं शरीरके ।
अहं दात्री सुयोगानामधिपाहं जगत्त्रये ॥ १७ ॥
अहं कर्म्म अहं धर्मः अहं देवी च कुण्डली ।
यो जानाति महावीर ! कुण्डलीरूपसेवनात् ॥ १८ ॥
जगत्पालनकर्त्री तु ह्यवतीर्णा हि सर्वदा ।
अत एव परं मन्त्रं कुण्डलिन्याः स्तवं शुभम् ॥ १९ ॥
प्रपठेत् सर्वदा गेहे यावद्वश्या न कुण्डली ।
तावत्कालं जपं कुर्य्यात् यावत् सिद्धिर्न जायते ॥ २० ॥

कन्दवासिनीस्तवः ।—

आधारे परदेवता भवनता धीकुण्डली देवता
देवानामधिदेवता त्रिजगतामानन्दपुञ्जस्थिता ।
मूलाधारनिवासिनी त्रिरमणी या ज्ञानिनी मालिनी
सा मे मात्रमनुस्थिता कुलपथानन्दैकबीजानना ॥ २१ ॥
सर्वाङ्गस्थितिकारिणी सुरगणानन्दैकचिह्ना शिवा
वीरेन्द्रा नवकामिनी वचनदा सा सर्वदा ज्ञानदा ।
आनन्दा घननन्दिनी घनगणा छिन्नाभवा योगिनी
धीरा धैर्य्यवती समाप्तविषया श्रीमङ्गली कुण्डली ॥२२॥

सर्वाकारनिवासिनी जयधरा धाराधरस्था गया
गीता गोधनवर्द्धिनी गुरुमयी गानप्रिया गोधना ।
गौर्दीर्घस्थितिचन्द्रिकाभूलतिका जाड्यापहा रागदा
दारा गोधनकारिणी मृगमना ब्रह्माण्डमार्गोज्ज्वला ॥२३॥
माता मानमगोचरा हरिचरा सिंहासनाकारणा
खाशाटासगणेश्वरी गुणवती गाथागणस्थायिनी ।
निद्राक्षुब्धजनप्रिया वरगणा भाषाविशेषस्थिता
स्थित्यन्तप्रलयापहा रणशिरोमालाधरा कुण्डली ॥ २४ ॥
गाङ्गेशी भुवनेश्वरी गुरुतरी गोदावरी भास्करी
भक्तार्त्तित्रयकारिणी मम शिवं यद्येकभावान्विता ।
त्वं शीघ्रं कुरु कौलिकि ! मम शिवे ! वीरेन्द्रि ! ह्यज्ञं मुदा
तत्पत्रस्थितदैवतं कुलवति ! मात्रस्थले पाहि माम् ॥२५॥
भालोर्द्ध्वं धवला कलारसकला कृष्णानिभा चोज्ज्वला
फेरुप्राणनिकेतने गुरुतरा गुर्वी सुगुर्वी सुरा ।
हालोल्लाससमोदया यतिदया माया जगत्तारिणी
निद्रामैथुननाशिनी मम महामोहापहा पातु कम् ? ॥२६॥
भाले नीलतनुस्थिता मतिमतामर्थाप्रिया मैथुनी
भालामन्दकरा महाप्रियजना पद्मानना कोमला ।
नानारङ्गसुपीठदेशदशना सिद्धासना घोषणा
प्राणस्था वररूपिणी कलिहली श्रीकुण्डली पातु कम् ? ॥२७॥
भ्रूमध्ये वगलामुखी शशिमुखी विद्यामुखी सम्मुखी
नागाख्या नगवाहिनी महिषहा पञ्चाननस्थायिनी ।
पारावारविहारहेतुशफरी सेतुप्रकारा परा
काशीवासिनमीश्वरं प्रतिदिनं श्रीकुण्डली पातु कम् ? ॥२८॥
या कुण्डोद्भवसारपाननिरता मोहादिदोषापहा
सा नेत्रत्रयमण्डिता सुवलिका श्रीकालिका कौलिका ।

काकस्था दिकचक्षुपारणकरी संज्ञाकारी सुन्दरी
मे पातु प्रियया तया विशदया सच्छायया छादिता ॥ २८ ॥
श्रीकुण्डे रणचण्डिका सुरतिका कङ्कालिका बालिका
साकाशा परिवर्जिता सुगतिका ज्ञानोर्मिका चोत्सुका ।
सौक्ष्मा सूक्ष्मसुखप्रिया गुणनिका दीक्षा च सूक्ष्मास्यका
आनन्दं मम कन्दवासिनि शिवे! संत्राहि संत्राहि माम् ? ॥ ३० ॥
एतत् स्तोत्रं पठित्वा त्रिभुवनपवनं पावनं लौकिकानां
राजा स्यात् किल्बिषाग्निः क्रतुपतिरिह यः चेमदं योगिनां वा ।
सर्वेशः सर्वकर्त्ता भवति निजगृहे योगयोगाङ्गवक्ता
शाक्तः शैवः स एकः परमपुरुषगो निर्मलात्मा महात्मा ॥ ३१ ॥
प्रणवे पुटितं कृत्वा यः स्तौति नियतः शुचिः ।
स भवेत् कुण्डलीपुत्रो भूतले नात्र संशयः ॥ ३२ ॥

इति श्रीरुद्रयामले उत्तरतन्त्रे महातन्त्रोद्दीपने मूलकवचसारसङ्केते भैरवी-भैरवसंवादे कन्दवासिनीस्तोत्रं नाम द्वात्रिंशः पटलः ॥ ३२ ॥

अथ त्रयस्त्रिंशः पटलः ।

अथ वक्ष्ये महादेव ! कुण्डलीकवचं शुभम् ।
परमानन्ददं सिद्धौ सिद्धवृन्दनिषेवितम् ॥ १ ॥
यत् कृत्वा योगिनः सर्वे धर्माधर्मप्रदर्शकाः !
ज्ञानिनो मानिनो धर्मा विचरन्ति यथामराः ॥ २ ॥
सिद्धयोऽप्यणिमाद्याश्च करस्थाः सर्वदेवताः ।
एतत्कवचपाठेन देवेन्द्रो योगिराडभूत् ॥ ३ ॥
ऋषयो योगिनः सर्वे जटिलाकुलभैरवाः ।
प्रातःकाले त्रिवारञ्च मध्याह्ने वारयुग्मकम् ॥ ४ ॥
सायाह्ने वारमेकन्तु पठेत् कवचमेव च ।
पठेदेवं महायोगी कुण्डलीदर्शनं भवेत् ॥ ५ ॥

कन्दवासिनीकवचम् ।—

अस्य श्रीकुलकुण्डलीकवचस्य ब्रह्मेन्द्रऋषिर्गायत्रीच्छन्दः कुल-कुण्डलीदेवता सर्वाभीष्टसिद्ध्यर्थे विनियोगः ॥ ६ ॥

ओं ईश्वरी जगतां धात्री ललिता सुन्दरी परा ।
कुण्डलीकुलरूपा च पातु मां कुलचण्डिका ॥ ७ ॥
शिरो मे ललितादेवी पातूग्राख्या कपोलकम् ।
ब्रह्ममन्त्रेण पुटिता भ्रूमध्यं पातु मे सदा ॥ ८ ॥
नेत्रत्रयं महाकाली कालाग्निभक्षिका शिखाम् ।
दन्तावलीं विशालाक्षी ओष्ठमिष्टानुवासिनी ॥ ९ ॥
कामबीजात्मिका विद्या अधरं पातु मे सदा ।
त्वयुगस्था गण्डयुग्मं मायाविश्वरसप्रिया ॥ १० ॥
भुवनेशी कर्णयुग्मं चिबुकं क्रोधकालिका ।
कपिला मे गलं पातु सर्वबीजस्वरूपिणी ॥ ११ ॥
मातृकावर्णपुटिता कुण्डलीकण्ठमेव च ।
हृदयं कालपृथ्वी च कङ्काली पातु मे मुखम् ॥ १२ ॥
भुजयुग्मं चतुर्वर्गा चण्डदोर्दण्डखण्डिनी ।
स्कन्धयुग्मं स्कन्दमाता हालाहलगता मम ॥ १३ ॥
अङ्गुल्यग्रं कुलानन्दा श्रीविद्या नखमण्डलम् ।
कालिका भुवनेशानी पृष्ठदेशं सदाऽवतु ॥ १४ ॥
पार्श्वयुग्मं महावीरा वीरासनधराऽभया ।
पातु मां कुलदर्भस्था नाभिमुदरमम्बिका ॥ १५ ॥
कटिदेशं पीठसंस्था महामहिषघातिनी ।
लिङ्गस्थानं महामुद्रा भगमाला मनुप्रिया ॥ १६ ॥
भगीरथप्रिया धूम्रा मूलाधारं गणेश्वरी ।
चतुर्दलं कश्यपूज्या दलाग्रं मे वसुन्धरा ॥ १७ ॥
शीर्षं राधा रणाख्या च ब्राह्मणं पातु मे सदा ।

मेदिनी पातु कमला वाग्देवी पूर्वगं दलम् ॥ १८ ॥
छेदिनी दक्षिणे पातु पातु चण्डा महातपाः ।
चण्डघण्टा सदा पातु योगिनी वारुणं दलम् ॥ १९ ॥
उत्तरस्थं दलं पातु पृथिवीमिन्द्रपालिताम् ।
चतुष्कोणं कामविद्या ब्रह्मविद्याब्जकोणकम् ॥ २० ॥
अष्टशूलं सदा पातु सर्ववाहनवाहना ।
चतुर्भुजा सदा पातु डाकिनी कुलचञ्चला ॥ २१ ॥
मेढ्रस्था मदनाधारा पातु मे चारुपङ्कजा ।
स्वयम्भूलिङ्गं चार्वाका कोटराक्षी ममासनम् ॥ २२ ॥
कदम्बवनमापातु कदम्बवनवासिनी ।
वैष्णवी परमा माया पातु मे वैष्णवं पदम् ॥ २३ ॥
षड्वर्गं राकिणी पातु राकिणी कामवासिनी ।
कामेश्वरा कामरूपा श्रीकृष्णं पीतवाससम् ॥ २४ ॥
वनमाल्यं वनदुर्गा शङ्खं शङ्खीक्षणी शिवा ।
चक्रं चक्रेश्वरी पातु कमलाक्षी गदां मम ॥ २५ ॥
पद्मं मे पद्मगन्धा च पद्ममाला मनोहरा ।
वादिलान्ताक्षरं पातु लाकिनी लोकपालिनी ॥ २६ ॥
षड्वर्गस्थितदेवी च पातु कैलासवासिनी ।
अग्निवर्णा सदा पातु जलं मे परमेश्वरी ॥ २७ ॥
मणिपूरं सदा पातु मणिमालाविभूषणा ।
दशपात्रं दशवर्णं डादिफान्तं त्रिविक्रमा ॥ २८ ॥
पातु नीला महाकाली भद्रा भीमा सरस्वती ।
अयोध्यावासिनी देवी महापीठनिवासिनी ॥ २९ ॥
वाग्भवाद्या महाविद्या कुण्डली कालकुण्डली ।
दशच्छदगतं पातु रुद्रं रुद्रात्मकं मम ॥ ३० ॥
सूक्ष्मात् सूक्ष्मतरा पातु सूक्ष्मस्थाननिवासिनी ।

राकिणी लोकजननी पातु कूटाक्षरस्थिता ॥ ३१ ॥
तैजसं पातु नियतं रजकी राजपूजिता ।
विजया कुलबीजस्था तवर्गं तिमिरापहा ॥ ३२ ॥
मन्त्रात्मिका मणिग्रन्थिं भेदिनी पातु सर्वदा ।
गर्भदाता भृगुसुता पातु मां नाभिवासिनी ॥ ३३ ॥
नन्दिनी पातु सकलं कुण्डलीकालकम्पिता ।
हृत्पद्मं पातु कालाख्या धूम्रवर्णा मनोहरा ॥ ३४ ॥
दलद्वादशवर्णञ्च भास्करी भावसिद्धिदा ।
पातु मे परमा विद्या कवर्णं कामचारिणी ॥ ३५ ॥
चवर्गं चारुवसना व्याघ्रास्या टङ्कधारिणी ।
चकारं पातु क्षणाख्या काकिनी पातु कालिका ॥ ३६ ॥
टक्कुराङ्गी टकारं मे जीवभावा महोदया ।
ईश्वरी पातु विमला मम हृत्पद्मवासिनी ॥ ३७ ॥
कर्णिकां कालसन्दर्भा योगिनी योगमातरम् ।
इन्द्राणी वारुणी पातु कुलमाला कुलान्तरम् ॥ ३८ ॥
तारिणी शक्तिमाता च कण्ठवाक्यं सदाऽवतु ।
विप्रचित्ता महोग्रोग्रा प्रभा दीप्ता घनासना ॥ ३९ ॥
वाक्स्तम्भिनी वज्रदेहा वैदेही वृषवाहिनी ।
उन्मत्तानन्दचित्ता च घनकेशा भगान्तरा ॥ ४० ॥
मम षोडशपत्राणि पातु मङ्गलसंस्थिता ।
सुरान् रक्षतु वेदज्ञा सर्वभाषा च कर्णिकाम् ॥ ४१ ॥
ईश्वरार्द्धासनगता प्रपायान्मे सदाशिवम् ।
शाकम्भरी महामाया शाकिनी पातु सर्वदा ॥ ४२ ॥
भवानी भगमाला च पायाद् भ्रूमध्यपङ्कजम् ।
द्विदलं व्रतकामाख्या अष्टाङ्गसिद्धिदायिनी ॥ ४३ ॥
पातु नासा सदानन्दा मनोरूपा जगत्प्रिया ।

लकारं लक्षणाक्रान्तां सर्वलक्षणलक्षणा ॥ ४४ ॥
कृष्णाजिनधरा देवी क्षकारं पातु सर्वदा ।
द्विदलस्थं सर्वदेवं सदा पातु वरानना ॥ ४५ ॥
बहुरूपा विश्वरूपा हाकिनी पातु संस्थिता ।
हरा परशिवं पातु मानसं पातु पञ्चमा ॥ ४६ ॥
षट्चक्रस्था सदा पातु षट्चक्रकुलवासिनी ।
अकारादिक्षकारान्ता बिन्दुसर्गसमन्विता ॥ ४७ ॥
मातृकार्णा सदा पातु कुण्डली ज्ञानकुण्डली ।
दैवकालगतिः प्रेमा पूर्णा गिरितटं शिवा ॥ ४८ ॥
ऊर्द्ध्वयानेश्वरी देवी सकलं पातु सर्वदा ।
कैलासपर्वतं पातु कैलासगिरिवासिनी ॥ ४९ ॥
पातु मे डाकिनीशक्तिर्लाकिनी राकिणी कला ।
साकिनी हाकिनी देवी षट्चक्रादीन् प्रपातु मे ॥ ५० ॥
कैलासाख्यं सदा पातु मानं मम तनूद्भवा ।
हिरण्यवर्णा रजनी चन्द्रसूर्य्याग्निभक्षिणी ॥ ५१ ॥
सहस्रदलपद्मं मे सदा पातु कुलाकुला ।
सहस्रदलपद्मस्था दैवतं पातु भैरवी ॥ ५२ ॥
काली तारा षोड़शाख्या मातङ्गी पद्मवासिनी ।
शशिकोटिगलद्रूपा पातु मे सकलं तमः ॥ ५३ ॥
वने घोरे जले दोषे युद्धे वा देशनाशके ।
अर्वतगमने स्नाने सदा मां पातु शैलजा ॥ ५४ ॥
पर्वते विविधायासे विनाशे पातु कुण्डली ।
पादादिब्रह्मरन्ध्रान्तं सर्वाकाशं सुरेश्वरी ॥ ५५ ॥
सदा पातु सर्वविद्या सर्वज्ञानं सदा मम ।
नवलक्षमहाविद्या दशदिक्षु प्रपातु माम् ॥ ५६ ॥
इत्येतत् कवचं देवि! कुण्डलिन्याः प्रसिद्धिदम् ।

ये पठन्ति ध्यानयोगे योगमार्गव्यवस्थिताः ॥
ते यान्ति मुक्तिपदवीमैहिके नात्र संशयः ॥ ५७ ॥
मूलपद्मे मनोयोगं कृत्वा दृढ़ासनस्थितः ।
मन्त्रं ध्यायेत् कुण्डलिनीं मूलपद्मप्रकाशिनीम् ॥ ५८ ॥
धर्मोदयां दयारूढ़ामाकाशस्थानवाहिनीम् ।
अमृतानन्दरसिकां विकलां सुकलां सिताम् ॥ ५९ ॥
असितां रक्तरहितां विरक्तां रक्तविग्रहाम् ।
रक्तनेत्रां कुलक्षिप्तां ज्ञानाञ्जनजयोज्ज्वलाम् ॥
शिखाकारां मनोरूपां मूले ध्यात्वा प्रपूजयेत् ॥ ६० ॥
एवं यः कुरुते योगी स सिद्धो नात्र संशयः ॥ ६१ ॥
रोगी रोगात् प्रमुच्येत बद्धो मुच्येत बन्धनात् ॥ ६२ ॥
राज्यं श्रियमवाप्नोति राज्यहीनः पठेद् यदि ।
पुत्रहीनो लभेत् पुत्रं योगहीनो भवेद्वशी ॥ ६३ ॥
कवचं धारयेद् यस्तु शिखायां दक्षिणे भुजे ।
वामा वामकरे धृत्वा सर्वाभीष्टमवाप्नुयात ॥ ६४ ॥
स्वर्णे रौप्ये तथा ताम्रे स्थापयित्वा प्रपूजयेत् ।
सर्वदेशे सर्वकाले पठित्वा सिद्धिमाप्नुयात् ॥
स भूयात् कुण्डलीपुत्रो नात्र कार्य्या विचारणा ॥ ६५ ॥

इति श्रीरुद्रयामले उत्तरतन्त्रे महातन्त्रोद्दीपने सिद्धविद्याप्रकरणे षट्चक्रप्रकाशे भैरव-भैरवी-संवादे आनन्दत्रिलोकवर्णनं नाम त्रयस्त्रिंशः पटलः ॥ ३३ ॥

अथ चतुस्त्रिंशः पटलः ।

आनन्दभैरव्युवाच ।—

अथ भेदान् प्रवक्ष्यामि हिताय जगतां प्रभो ! ।
निर्म्मलात्मा शुचिः श्रीमान् ध्यानाचारः सदाशिवः ॥ १
स मोक्षगो ज्ञानरूपो षट्चक्रार्थविभेदकः ।

त्रिगुणो दिकालो देवोऽनुपश्यति दिवानिशम् ॥ २ ॥
दिवारात्रावज्ञानहेतोर्न पश्यति कलेवरम् ।
इति कृत्वा हि मरणं नृणां जन्मनि जन्मनि ॥
तज्जन्मक्षयहेतोश्च मम योगं समभ्यसेत् ॥ ३ ॥

पञ्चस्वरादियोगाः ।—

पञ्चस्वरं महायोगं कृत्वा स्यादमरो नरः ॥ ४ ॥
तत् प्रकारं शृणु प्राण-वल्लभ ! प्रियदर्शन ! ।
तदभावेन कायेन कुत्रापि वद शङ्कर ! ॥ ५ ॥
यदि लोकस्य निकटे कथ्यते योगसाधनम् ।
विघ्ना घोरा वसन्त्येव गात्रे योगादिकं कथम् ? ॥ ६ ॥
योगयोगाङ्गविन्मोक्षस्तत्प्रकाशाद्विनाशनम् ।
अतो न दर्शयेद् योगं यदीच्छेदात्मनः शुभम् ॥ ७ ॥
कृत्वा पञ्चस्वरं योगं प्रत्यहं भक्तिसंयुतः ।
पठेत् श्रीकुण्डलीदेवी-सहस्रनाम चाष्टकम् ॥ ८ ॥
महायोगी भवेन्नाथ ! षण्मासे नात्र संशयः ।
पञ्चस्वरा योगविद्या सर्वविद्याप्रकाशिनी ॥ ९ ॥
कृत्वा पञ्चस्वरां सिद्धिं ततोऽष्टाङ्गादिधारणा ।
आदौ पञ्चस्वरासिद्धिस्ततोऽन्या योगधारणा ॥ १० ॥
तत्प्रकारं प्रवक्ष्यामि सावधानावधारय ।
अहं जानामि संसारे केवलं योगपण्डिता ॥ ११ ॥
तत्साक्षिणी ह्यहं नाथ ! भक्तानामुदयाय च ।
इदानीं कथये तेऽहं मम वा योगसाधनम् ॥ १२ ॥
एवं कृत्वा नित्यरूपो योगानामष्टधा यतः ।
ततः कालेन पुरुषः सिद्धिमाप्नोति निश्चितम् ॥ १३ ॥
पश्चाच्छुद्धा विधानानि क्रमेण शृणु शङ्कर ! ।
नेतीयोगं हि सिद्धानां महाकफविनाशनम् ॥ १४ ॥

दन्तीयोगं ततः पश्चात् हृदयग्रन्थिभेदनम् ।
धौतीयोगं ततः पश्चात् सर्वमलविनाशनम् ॥ १५ ॥
नेउलीयोगपरमं सर्वाङ्गोदरचालनात् ।
चालनं परमं योगं नाडीनां चालनं स्मृतम् ॥ १६ ॥
एतत् पञ्चस्वरायोगं यमिनामतिगोचरम् ।
यमनियमकाले तु पञ्चस्वरक्रियाचरेत् ॥ १७ ॥
अमरः साधनादेव ह्यमरत्वं लभेद् ध्रुवम् ।
एतत्करणकाले च तथा पञ्चस्वरासनम् ॥ १८ ॥
पञ्चधा भक्षणेनैव अमरो योगसिद्धिभाक् ।
तानि द्रव्याणि वक्ष्यामि तवाग्रे परमेश्वर ! ॥
येन हीना न सिध्यन्ति कल्पकोटिशतेन च ॥ १९ ॥
एका तु अमरा दूर्वा तस्या ग्रन्थिं समानयेत् ॥ २० ॥
अन्या तु विजया देवी सिद्धिरूपा सरस्वती ।
अन्या तु बिल्वपत्राख्या शिवसन्तोषकारिणी ॥ २१ ॥
अन्या तु योगसिद्ध्यर्थं निर्गुण्डी चामरा मता ।
अन्या तु कृष्णातुलसी श्री विष्णोः परितोषणी ॥ २२ ॥
एता पञ्चस्वरा ज्ञेया योगसाधनकर्मणि ।
एतासां द्विगुणं ग्राह्यं विजयापत्रमुत्तमम् ॥ २३ ॥
ब्राह्मणी क्षत्रिया वैश्या शूद्रा सर्वत्र पूजिता ।
एतद् द्रव्याणि संगृह्य भक्षयेद्वर्गमुत्तमम् ॥ २४ ॥
तच्चूर्णभक्षणक्षणे एतन्मन्त्रादिपञ्चकम् ।
पठित्वा भक्षणं कृत्वा नरो मुच्येत सङ्कटात् ॥ २५ ॥

विजयासेवनमन्त्राः ।—

ॐ त्वं दूर्वेऽमरपूज्ये त्वं अमृतोद्भवसम्भवे ।
अमरं मां सदा भद्रे ! कुरुष्व नृहरिप्रिये ! ॥ २६ ॥

ओं दूर्वायै नमः स्वाहा। इति दूर्वायाः।
पुनर्विजयामन्त्रेण शोधयेत् सर्वकन्यकाः॥ २७॥
ओं संविदे ब्रह्मसम्भूते ब्रह्मपुत्रि! सदाऽनघे!।
भैरवाणाञ्च तृप्त्यर्थं पवित्रा भव सर्वदा॥ २८॥
ओं ब्राह्मण्यै नमः स्वाहा।
ओं सिद्धिमूलकरे देवि! हीनबोधप्रबोधिनि!।
राजपुत्रीवशङ्करि! शत्रुकण्ठत्रिशूलिनि!॥ २९॥
ऐं क्षत्रियायै नमः स्वाहा।
ओं अज्ञानेन्धनदीप्ताग्ने! ज्ञानाग्निज्वलरूपिणि!।
आनन्दज्ञानकारणे! सम्यक् ज्ञानं प्रयच्छ मे॥ ३०॥
क्लीं वैश्यायै नमः स्वाहा।
ओं नमस्यामि नमस्यामि योगमार्गप्रदर्शिनि!।
त्रैलोक्यविजये! मातः! समाधिफलदा भव॥ ३१॥
ओं शूद्रायै नमः स्वाहा।
ओं कार्य्यसिद्धिकरि! देवि! विल्वपत्रनिवासिनि!।
अमरत्वं सदा देहि शिवतुल्यं कुरुष्व माम्॥ ३२॥
ओं शिवदायै नमः स्वाहा।
ओं निर्गुणपरमानन्दे! योगानामधिदेवते!।
मां मां रक्ष तु अमरि! भावसिद्धिप्रदे! नमः॥ ३३॥
ओं शोकापहायै नमः स्वाहा।
ओं विष्णोः प्रिये महामाये! कालजालविधारिणि!।
तुलसि! मां सदा रक्ष मामेकममरं कुरु॥ ३४॥
ओं ह्रीं श्रीं ऐं क्लीं अमरायै नमः स्वाहा।
पुनरेव समाकृत्य सर्वासां शोधनञ्चरेत्॥ ३५॥
ओं अमृतोद्भवेऽमृतवर्षिणि! अमृतमाकर्षय आकर्षय सिद्धिं
देहि स्वाहा॥ ३६॥

धेनुमुद्रां योनिमुद्रां मत्स्यमुद्रां प्रदर्शयेत्।
तत्त्वमुद्राक्रमेणैव तर्पणं कारयेद् बुधः॥ ३७॥
अमन्त्रकं सप्तवारं गुरोर्नाम्ना शिवेऽर्पयेत्।
सप्तवारमिष्टदेव्या नाम्ना सिद्धिप्रदा भवेत्॥ ३८॥
ततस्तर्पणमाकुर्य्यात्तर्पयामि नमो नमः।
एतद्वाक्यस्य पूर्वं च इष्टमन्त्रं समुच्चरेत्॥ ३९॥
परदेवतेति उद्धृत्य सर्वाद्यप्रणवं स्मृतम्।
ततो मुखे प्रजुहुयात् कुण्डलीनामपूर्वकम्॥ ४०॥
"ओं ऐं वद वद वाग्वादिनि! मम जिह्वाग्रे स्थिरीभव सर्व-
सत्त्ववशङ्करि! शत्रुकण्ठत्रिशूलिनि! स्वाहा।"
एतज्जप्त्वा यशस्वी च वशी साधकसत्तमः।
पञ्चस्वरासाधनज्ञः कुलाचारविधिप्रियः॥
स्थिरचेता भवेद् योगी यद्येतत्पञ्चधागतः॥ ४१॥
नेतीयोगविधानानि शृणु कैलासपूजिते॥
येन सर्वमस्तकस्थ-कफानां दहनं भवेत्॥ ४२॥

नेतीयोगः।—

सूक्ष्मसूत्रं दृढतरं प्रदद्यान्नासिकाविले॥ ४३॥
मुखरन्ध्रे समानीय सन्धानेन समानयेत्।
पुनः पुनः सदा योगी यातायातेन घर्षयेत्॥ ४४॥
क्रमेण वर्द्धनं कुर्य्यात् सूत्रस्य परमेश्वरि!।
नेतीयोगेन नासाया रन्ध्रं निर्मलकं भवेत्॥
वायोर्गमनकाले तु महासुखमिति प्रभो!॥ ४५॥
दन्तीयोगं ततः पश्चात् कुर्य्यात् साधकसत्तमः॥ ४६॥

दन्तीयोगः।—

दन्तधावनकाले तु योगमेतत् प्रकाशयेत्।
दन्तधावनकाष्ठञ्च सार्द्धहस्तैकसम्भवम्॥ ४७॥

नातिस्थूलं नातिसूक्ष्मं नवीनं नम्रमुत्तमम् ।
अपक्वं यत्नतो ग्राह्यं मृणालसदृशं तरुम् ॥ ४८ ॥
गृहीत्वा दन्तकाष्ठं तत् क्रमेण तु प्रभक्षयेत् ।
दन्तकाष्ठाग्रभागञ्च कनिष्ठाङ्गुलिपर्वतः ॥ ४९ ॥
एवं दन्तावलिभ्याञ्च चर्वणं सुन्दरं चरेत् ।
ततः प्रक्षाल्य तोयेन शनैर्गिलनमाचरेत् ॥ ५० ॥
शनैः शनैः प्रकर्त्तव्यं कायवाक्चित्तशोधनम् ।
यावदभिन्नकाष्ठाग्रं नाभिमूले तु नाक्षतम् ॥ ५१ ॥
तावत् सूक्ष्मतरं ग्राह्यं अवश्यं प्रत्यहं चरेत् ।
हृदये जलचक्रञ्च यावत् खण्डं न जायते ॥ ५२ ॥
तावत् कालं सर्वदिने प्रभाते वरधावनम् ।
हृदये कफभाण्डस्य खण्डनं जायते ध्रुवम् ॥ ५३ ॥
पवनागमने सौख्यं प्रयाति योगनिर्भरम् ।
खेचरत्वं स लभतां अम्लान्नञ्च कटूद्भवम् ॥ ५४ ॥
मिष्टान्नं शाकदध्यन्नं द्विवारं रात्रिभोजनम् ।
अवश्यं सन्त्यजेद् योगी यदि योगमिहेच्छति ॥ ५५ ॥
एकभागं मुद्गबीजं द्विभागं तण्डुलं मतम् ।
उत्तमं पाकमाकृत्य घृतदुग्धेन भक्षयेत् ॥ ५६ ॥
अथवा केवलं दुग्ध-तर्पणं कारयेद् बुधः ।
कुण्डलीं कुलरूपाञ्च दुग्धेन परितर्पयेत् ॥ ५७ ॥
कुण्डलीतर्पणं योगी यदि जानाति शङ्कर ! ।
अनायासेन योगी स्यात् स ज्ञानीन्द्रो भवेद् ध्रुवम् ॥ ५८ ॥
यमनियमपरो यः कुण्डलीसेवनस्थो
विभवविरहितो वा भूतिभाराश्रितो वा ।
स भवति परयोगी सर्वविद्यार्थवेद्यो
गुणिगणगगनस्थो मुक्तरूपी गणेशः ॥ ५९ ॥

इति श्रीरुद्रयामले उत्तरतन्त्रे महातन्त्रोद्दीपने षट्चक्रप्रकाशे भैरव-भैरवीसंवादे
पञ्चस्वरायोगसाधनं नाम चतुस्त्रिंशः पटलः ॥ ३४ ॥

अथ पञ्चत्रिंशः पटलः ।

आनन्दभैरव्युवाच ।—

अथ वक्ष्ये महाकाल ! रहस्यं चातिदुर्लभम् ।
यस्य विज्ञानमात्रेण नरो ब्रह्मपदं लभेत् ॥ १ ॥
आकाशे तस्य राज्यञ्च खेचरेशो भवेद् ध्रुवम् ।
धनेशो भवति क्षिप्रं ब्रह्मज्ञानी भवेन्नरः ॥ २ ॥
योगानामधिपो राजा वीरभद्रो यथा कविः ।
विरिञ्चिगणनाथस्य कृपा भवति सर्वदा ॥ ३ ॥
यः करोति पञ्चयोगं स स्यादमरविग्रहः ।
धौतीयोगं प्रवक्ष्यामि यत्कृत्वा निर्मलो भवेत् ॥ ४ ॥
अत्यन्तगुह्ययोगस्य समाप्तिकरणं नृणाम् ।
यदि न कुरुते योगं तदा मरणमाप्नुयात् ॥
धौतीयोगं विना नाथ ! कः सिध्यति महीतले ॥ ५ ॥

धौतीयोगः ।—

सूक्ष्मात् सूक्ष्मतरं वस्त्रं द्वात्रिंशत्कुम्भमानकम् ॥ ६ ॥
एकहस्तक्रमेणैव यः करोति शनैः शनैः ।
यावत् धत्ते कुम्भकञ्च तावत् कालं क्रियां चरेत् ॥ ७ ॥
एतत्क्रियाप्रयोगेण योगी भवति तत्क्षणात् ।
क्रमेण मन्त्रसिद्धिः स्यात् कालजालवशं नयेत् ॥ ८ ॥
एतन्मध्ये आसनानि शरीरस्थानि चाचरेत् ।
दृढासने योगसिद्धिरिति मन्त्रार्थनिर्णयः ॥ ९ ॥
सिद्धे मनो पराऽवाप्तिः पद्मयोगासनेन च ।
पार्श्वे चाष्टाङ्गुलं वस्त्रं दीर्घं द्वात्रिंशदीश्वर ! ॥ १० ॥
एतत् सूक्ष्मं सुवसनं गृहीत्वा कारयेद् यतिः ।
जितेन्द्रियः सदा कुर्यात् ज्ञानध्याननिषेवणः ॥ ११ ॥
कुलीनः पण्डितो मानी विवेकी सुस्थिराशयः ।

धौतीयोगं यदा कुर्य्यात्तदैव शुचिगो भवेत् ॥ १२ ॥
अनाचारेण हानिः स्यादिन्द्रियाणां बलेन च ।
महापातकमुख्यानां सङ्गदोषेण हानयः ॥ १३ ॥
सम्भवन्ति महादेव ! तव योगं सुकर्म्म च ।
वृद्धो वा यौवनस्थो वा बालो वा जड़ एव वा ।
करणात् दीर्घजीवी स्यादमरो लोकवल्लभः ॥ १४ ॥
मन्त्रसिद्धिरष्टसिद्धिः स सिद्धीनामधीश्वरः ॥ १५ ॥
शनैः शनैः सदा कुर्य्यात् कालदोषविनाशनात् ।
हृदयग्रन्थिभेदेन सर्वावयववर्द्धनम् ॥ १६ ॥
तदा महाबली ज्ञानी चारुवर्णो महाशयः ।
धौतीयोगोद्भवं कामं महामरणकारणम् ॥ १७ ॥
तस्य त्यागं यः करोति स नरो देवविक्रमः ।
श्वासं त्यक्त्वा स्तम्भनञ्च मनो दद्यान्महाऽनिले ॥ १८ ॥
श्वासादीनाञ्च गणनं अवश्यं भावयेद् गृहे ।
प्राणायामविधानेन सर्वकालं सुखीभवेत् ॥ १९ ॥
वायुपानं सदा कुर्य्यात् ध्यानं कुर्य्यात् सदैव हि ।
प्रत्याहारं सदा कुर्य्यात् मनोनिवेशनं सदा ॥ २० ॥
मानसादि प्रजाप्यञ्च सदा कुर्य्यान्मनोलयम् ।
धौतीयोगानन्तरं हि नेउलीकर्म्म चाचरेत् ॥ २१ ॥

नेउलीयोगः ।—

नेउलीकर्म्मयोगेन आसने नेउलोपमः ।
नेउलीसाधनादेव चिरजीवी निरामयः ॥ २२ ॥
अन्तरात्मा सदा मौनी निर्म्मलात्मा सदा सुखी ।
सर्वदा मम चानन्दैः कारणानन्दविग्रहः ॥ २३ ॥
योगाभ्यासं सदा कुर्य्यात् कुण्डलीसाधनादिकम् ।
कृत्वा मन्त्री खेचरत्वं प्राप्नोति नात्र संशयः ॥ २४ ॥

तत्प्रकारं प्रवक्ष्यामि सावधानावधारय ।
भुक्त्वा मुद्रामपक्वञ्च वारैकं प्रतिपालयेत् ॥ २५ ॥
प्रचालयेत् स्वोदरञ्च कठिनासाविवर्जितम् ।
पुनः पुनश्चालनञ्च कुर्य्यात् स्वोदरमध्यकम् ॥ २६ ॥
कुलालचक्रवत् कुर्य्यात् भ्रमणञ्चोदरस्य च ।
सर्वाङ्गचालनादेव कुण्डलीचालनं भवेत् ॥ २७ ॥
चालनात् कुण्डलीदेव्याश्चैतन्या सा भवेत् प्रभो ! ।
एतस्यानन्तरं नाथ ! चालनं परिकीर्त्तितम् ॥ २८ ॥
नाड़ीनां चालनादेव सर्वविद्यानिधिर्भवेत् ।
सर्वत्र जयमाप्नोति कालिकादर्शनं भवेत् ॥ २९ ॥
वायुसिद्धिर्भवेत्तस्य पञ्चभूतस्य सिद्धिभाक् ।
तस्य कीर्त्तिस्त्रिभुवने कामदेवबलोपमः ॥ ३० ॥
सर्वत्र गामी स भवेदिन्द्रियाणां पतिर्भवेत् ।
मुण्डासनं हि सर्वत्र सर्वदा कारयेद् बुधः ॥ ३१ ॥
ऊर्द्ध्वं पद्मासनं कृत्वा अधो हस्ते जपञ्चरेत् ।
यदि त्रिदिनमाकर्षं समर्थो मुण्डकासनम् ॥ ३२ ॥
तदा हि सर्वनाड्यश्च वशीभूता न संशयः ।
नाड़ीचालनयोगेन मोक्षदाता स्वयं भवेत् ॥ ३३ ॥
नाड़ीयोगेन सर्वार्थ-सिद्धिः स्यान्मुण्डकासनात् ।
मुण्डासनं यः करोति नेउलीसिद्धिगो यदि ॥ ३४ ॥
नेउलीसाधनगतो नेउलीसाधनोत्तमः ।
तदा चालनयोगेन सिद्धिमाप्नोति साधकः ॥ ३५ ॥
नेउलीं यो न जानाति स कथं कर्त्तुमुत्तमः ।
स धीरो मानसचरो मतिमान् स जितेन्द्रियः ॥ ३६ ॥
यो नेउलीयोगसारं कर्त्तुमुत्तमपारगः ।
स चावश्यं चालनञ्च कुर्य्यात् नाड्यादिधारणम् ॥ ३७ ॥

नेउलीयोगमार्गेण नाड़ीचालनपारगः ।
भवत्येव महाकाल ! राजराजेश्वरो यथा ॥ ३८ ॥
पृथिवीपालनरतो विग्रहार्थे प्रपालनम् ।
केवलं प्राणवायोश्च धारणात् चालनं भवेत् ॥ ३९ ॥
विना चालनयोगेन देहशुद्धिर्न जायते ।
चालनं नाड़िकादीनां कफपित्तमलादिकम् ॥ ४० ॥
करोति यत्नतो योगी सुखासनाऽऽदिकासनम् ।
वायुग्रहणमेवं हि नेउलीवशकालके ॥ ४१ ॥
न कुर्य्यात् केवलं नाथ ! अन्यकाले सदा चरेत् ।
अज्ञात्वा नेउलीयोगं योगी वायुं न संपिवेत् ॥ ४२ ॥
बहुतरं न संग्राह्यं वायोरागमनादिकम् ।
केवलं श्वासगमनं यावन्नेउली सिध्यति ॥ ४३ ॥
पञ्चस्वरा प्रकथिता योगिनीसिद्धिदायिका ।
पञ्चानां साधनादेव पञ्चवायुर्वशो भवेत् ॥ ४४ ॥
प्रतापे सूर्य्यतुल्यः स्यात् शोकदोषापहारकः ।
सर्वयोगस्थिरतरः संप्राप्य योगिराड् भवेत् ॥ ४५ ॥

इति श्रीरुद्रयामले उत्तरतन्त्रे महातन्त्रोद्दीपने षट्चक्रप्रकाशे भैरव-भैरवीसंवादे
पञ्चस्वरायोगसाधनं नाम पञ्चत्रिंशः पटलः ॥ ३५ ॥

अथ षट्त्रिंशः पटलः ।

आनन्दभैरव्युवाच ।—

अथ कान्त ! प्रवक्ष्यामि कुण्डलीचेतनादिकम् ।
सहस्रनाम सफलं कुण्डलिन्याः प्रियं सुखम् ॥ १ ॥
अष्टोत्तरं महापुण्यं विधानात् सिद्धिदायकम् ।
तव प्रेमवशेनैव कथयामि शृणुष्व तत् ॥ २ ॥

विना यजनयोगेन विना ध्यानेन यत् फलम् ।
तत्फलं लभते सद्यो विद्यायाः सुकृपा भवेत् ॥ ३ ॥
या विद्या भुवनेशानी त्रैलोक्यपरिपूजिता ।
सा देवी कुण्डली माता त्रैलोक्यं पाति सर्वदा ॥ ४ ॥
तस्य नामसहस्राणि पुण्यान्यष्टोत्तराणि च ।
श्रवणात् पठनान्मन्त्री महाभक्तो भवेदिह ॥
ऐहिके स भवेन्नाथ जीवन्मुक्तो महाबली ॥ ५ ॥

कुण्डलिन्याः अष्टोत्तरसहस्रनामानि ।—

अस्य श्रीमन्महाकुण्डलीसाष्टोत्तर-सहस्रनामस्तोत्रस्य ब्रह्मर्षिर्जगतीच्छन्दो भगवती श्रीमन्महाकुण्डली देवता सर्वयोगसमृद्धिसिद्ध्यर्थे विनियोगः ।

श्रीमन्महाकुण्डली च कुलकन्या कुलप्रिया ।
कुलेश्वरी कुलानन्दा कुलीना कुलकुण्डली ॥ ६ ॥
कुलचैवस्थिता कौली कुलीनार्थप्रकाशिनी ।
कुलाख्या कुलमार्गस्था कुलशास्त्रार्थपालिनी ॥ ७ ॥
कुलज्ञा कुलयोग्या च कुलपुष्पप्रकाशिनी ।
कुलीना च कुलाध्यक्षा कुलचन्दनलेपिता ॥ ८ ॥
कुलरूपा कुलोद्भूता कुलकुण्डलिवासिनी ।
कुलाभिन्ना कुलोत्पन्ना कुलाचारविनोदिनी ॥ ९ ॥
कुलवृक्षसमुद्भूता कुलमाला कुलप्रभा ।
कुलस्था कुलमध्यस्था कुलकङ्कणशोभिता ॥ १० ॥
कुलोत्तरा कौलपूज्या कुलालापा कुलप्रिया ।
कुलाभेदा कुलप्राणा कुलदेवी कुलस्तुतिः ॥ ११ ॥
कौलिका कालिका काल्या कालिभिन्ना कलाकुला ।
कालिकल्मषहन्त्री च कालिदोषविनाशिनी ॥ १२ ॥
कङ्काली केवलानन्दा कालज्ञा कालधारिणी ।

कौतुकी कौमुदी केका काला कालालयान्तिका ॥ १३ ॥
कोमलाङ्गी करालाख्या कन्दपूज्या च कोमला ।
कैशोरी काकपुच्छस्था कम्बलासनवासिनी ॥ १४ ॥
कैकेयीपूजिता कोला कोलपुत्री कपिध्वजा ।
कमला कमलाक्षी च कम्बलाश्वतरप्रिया ॥ १५ ॥
कलिकाभङ्गदोषस्था कालजा कालकुण्डली ।
काव्यदा कविताबाणी कालसन्दर्भभेदिनी ॥ १६ ॥
कुमारी करुणाकारा कुरुसैन्यविनाशिनी ।
कान्ता कुम्भगता कामा कामिनी कामनाशिनी ॥ १७ ॥
कामोद्भवा कामकुल्या केवला कालघातिनी ।
कैलासशिखरारूढा कैलासपतिसेविता ॥ १८ ॥
कैलासनाथनमिता केयूर-हारमण्डिता ।
कन्दर्पा कठिनानन्दा कुचगा कोटगापहा ॥ २० ॥
कमलास्या कठोरा च कीटरूपा कटिस्थिता ।
कन्देश्वरी कन्दरूपा कोलिका कन्दवासिनी ॥ २१ ॥
कूटस्था कूटभक्षा च कालकूटविनाशिनी ।
कामाख्या कमला काम्या कामराजतनूद्भवा ॥ २२ ॥
कामरूपधरा कम्रा कमनीया कलिप्रिया ।
कञ्जानना कञ्जहस्ता कञ्जपत्रायतेक्षणा ॥ २३ ॥
काकिनी कामरूपस्था कामरूपप्रकाशिनी ।
कोलविध्वंसिनी कङ्का कलङ्कार्ककलङ्किनी ॥ २४ ॥
कुल्या कुलनदी कर्णा कर्मकाण्डविमोहिनी ।
काण्डस्था काण्डकरुणा कर्मस्था च कुटुम्बिनी ॥ २५ ॥
कमलाभभवा कल्मा करुणा करुणामयी ।
करुणेशी करा कर्त्री कर्त्तृहस्ता कलोदरा ॥ २६ ॥
कारुण्यसागरोद्भूता कारुण्यसिन्धुवासिनी ।

कार्त्तिकेशी कार्त्तिकस्था कार्त्तिकप्राणपालनी ॥ २७ ॥
करुणानिधिपूज्या च करणीया क्रियाकला ।
कल्पस्था कल्पनिलया कल्पातीता च कल्पिता ॥
कुलपा कुलविज्ञाना कर्षिणी कालरात्रिका ॥ २९ ॥
कैवल्यदा कोकरस्था कलमञ्जीररञ्जिनी ।
कलयन्ती कालजिह्वा किङ्करासनकारिणी ॥
कुमुदा कुशलानन्दा कौशल्याकाशवासिनी ॥ ३० ॥
कंसोपहासहन्त्री च कैवल्यगुणसम्भवा ।
काकाकिनी काकरूपा कवला कर्कटस्थिता ॥ ३१ ॥
कर्कोटकपृष्ठरूपा कूटवह्निकरास्थिता ।
कूजन्ती मधुरध्वानं कामयन्ती सुलक्षणम् ॥
केतकीकुसुमानन्दा केतकीपुष्पमण्डिता ॥ ३२ ॥
कर्पूरपूररुचिरा कर्पूरभक्षणप्रिया ।
कपालपात्रहस्ता च कपालचन्द्रधारिणी ॥ ३३ ॥
कामधेनुस्वरूपा च कामधेनुक्रियाऽन्विता ।
कश्यपी काश्यपा कुन्ती केशान्ता केशमोहिनी ॥ ३४ ॥
कालकर्त्री कूपकर्त्री कुलपा कामचारिणी ।
कज्जलाभा कज्जलस्था कमिता कोपघातिनी ॥ ३५ ॥
केलिस्था केलिकलिता कोपना कर्कटस्थिता ।
कलातीता कालविद्या कालात्मपुरुषोद्भवा ॥ ३६ ॥
कष्टहा कष्टकुष्ठस्था कुष्ठहा कूटहा कुशा ।
कलिकास्फुटकर्त्री च काम्बोजा कामनाऽऽकुला ॥ ३७ ॥
कुशलाख्या काककुम्भा कर्मस्था कुम्भमध्यगा ।
कुण्डलाकारचक्रस्था कुण्डगोलोद्भवा कफा ॥ ३८ ॥
कपित्थाग्रवसाकाशा कपित्थरोधकारिणी ।
काहोडी काहडा काडा कङ्कलाभाषकारिणी ॥ ३९ ॥

कनका कनकाभा च कनकाद्रिनिवासिनी ।
करञ्जा कर्पटी कर्पा कृपा कार्पासवासिनी ॥ ४० ॥
कार्पासयज्ञसूत्रस्था कूटब्रह्मार्थसाधिनी ।
कलञ्जभक्षणी क्रूरा क्रोधपुञ्जा कपिस्थिता ॥ ४१ ॥
कपालीसाधनरता कनिष्ठाकाशवासिनी ।
कुञ्जरेशी कुञ्जरस्था कुञ्जरागतिगामिनी ॥ ४२ ॥
कुञ्जस्था कुञ्जरमणी कुञ्जमन्दिरवासिनी ।
कुपिता कोपशून्या च कोपा कोपविवर्जिता ॥ ४३ ॥
कपिञ्जलस्था कापिञ्जा कपिञ्जलतरूद्भवा ।
कुन्तीप्रेमकथाऽऽविष्टा कुन्तीमानसपूजिता ॥ ४४ ॥
कुन्तला कुन्तहस्ता च कुलकुन्तलमोहिनी ।
कान्ताङ्घ्रिसेविका कान्त-कुशला कोशलावती ॥ ४५ ॥
केलिहन्त्री ककुत्स्था च ककुत्स्थवनवासिनी ।
कैलासशिखरानन्दा कैलासगिरिपूजिता ॥ ४६ ॥
कीलालनिर्मलाकारा कीलालस्निग्धकारिणी ।
कुतुका कुट्टनी कुट्टा कुट्टलामोदकारिणी ॥ ४७ ॥
कौंकारी कौंकरी काशी कशवस्था किरातिनी ।
कूजन्ती सर्ववचनं कारयन्ती कृताकृतम् ॥ ४८ ॥
कृपानिधिस्वरूपा च कृपासागरवासिनी ।
केवलाऽऽनन्दनिरता केवलाऽऽनन्दकारिणी ॥ ४९ ॥
कृमिजा कृमिदोषघ्नी कृपाकपटकुट्टिता ।
कृशाङ्गी क्रमभङ्गस्था किङ्करस्था कटस्थिता ॥ ५० ॥
कामरूपा कान्तरता कामरूपस्य सिद्धिदा ।
कामरूपपीठदेवी कामरूपाङ्गना कुजा ॥ ५१ ॥
कामरूपा कामविद्या कामरूपादिकालिका ।
कामरूपकला काम्या कामरूपकुलेश्वरी ॥ ५२ ॥

कामरूपजनानन्दा कामरूपकुशाग्रधीः ।
कामरूपकराकाशा कामरूपतरुस्थिता ॥ ५३ ॥
कामात्मजा कामकला कामरूपविहारिणी ।
कामशास्त्रार्थमध्यस्था कामरूपक्रियाकला ॥ ५४ ॥
कामरूपमहाकाली कामरूपयशोमयी ।
कामरूपपरानन्दा कामरूपादिकामिनी ॥ ५५ ॥
कुलमूला कामरूप-पद्ममध्यनिवासिनी ।
कृताञ्जलिप्रिया कृत्या कृत्यादेवीस्थिता कटा ॥ ५६ ॥
कटका काटका कोटा कोटिमुण्डविनोदिनी ।
कटिस्थलकरा काष्ठा कात्यायनसुसिद्धिदा ॥ ५७ ॥
कात्यायनी काचलस्था कामचन्द्रानना तथा ।
काश्मीरदेशनिरता काश्मीरी कृषिकर्मजा ॥ ५८ ॥
कृषिकर्मस्थिता कौर्मा कूर्मपृष्ठनिवासिनी ।
कालघण्टानादरता कलमञ्जीरमोहिनी ॥ ५९ ॥
कलयन्ती शत्रुवर्गान् क्रोधयन्ती गुणागुणम् ।
कामयन्ती सर्वकामं काशयन्ती जगत्त्रयम् ॥ ६० ॥
कौलकन्या कालकन्या कौलकालकुलेश्वरी ।
कौलमन्दिरसंस्था च कुलधर्मविडम्बिनी ॥ ६१ ॥
कुलधर्मरताकारा कुलधर्मविनाशिनी ।
कुलधर्मपण्डिता च कुलधर्मसमृद्धिदा ॥ ६२ ॥
कौलभोगमोक्षदा च कौलभोगेन्द्रयोगिनी ।
कौलकर्मानवकुला केतकीपुष्पमालिनी ॥ ६३ ॥
कुलपुष्पकान्तकुला कुलपुष्पभवोद्भवा ।
कौलकोलाहलकरा कौलकर्मक्रिया परा ॥ ६४ ॥
काशीस्थिता काशकन्या काशीचक्षुःप्रिया कुथा ।
काष्ठासनप्रिया काका काकपक्षकपालिका ॥ ६५ ॥

कपालरसभोज्या च कपालवनमालिनी ।
कपालस्था च कापाली कपालसिद्धिदायिनी ॥ ६६ ॥
कपाला कुलकर्त्री च कपाललिखनस्थिता ।
कथना क्षपणश्रोदा क्षपी क्षपणसेविता ॥ ६७ ॥
कर्महन्त्री कर्मगता कर्माकर्मविवर्जिता ।
कर्मसिद्धिरता कामी कर्मज्ञाननिवासिनी ॥ ६८ ॥
कर्मधर्मसुशीला च कर्मधर्मवशङ्करी ।
कनकाब्जसुनिर्माण-महासिंहासनस्थिता ॥ ६९ ॥
कनकग्रन्थिमालाढ्या कनकग्रन्थिभेदिनी ।
कनकोद्भवकन्या च कनकाम्भोजवासिनी ॥ ७० ॥
कालकूटादिकूटस्था किटिशब्दान्तरस्थिता ।
कङ्कपक्षनादमुखा कामधेनूद्भवा कला ॥ ७१ ॥
कङ्कणाभाधरा कर्दा कर्दमा कर्दमस्थिता ।
कर्दमस्थजलाच्छन्ना कर्दमस्थजलप्रिया ॥ ७२ ॥
कमठस्था कामठस्था कन्नस्था कंसवासिनी ।
कंसप्रिया कंसहन्त्री कंसाज्ञानकरालिनी ॥ ७३ ॥
काञ्चीनाभा काञ्चीनस्था कामदा क्रमदामदा ।
कान्तभिन्ना कान्तचिन्ता कमलासनवासिनी ॥ ७४ ॥
कमलासनसिद्धिस्था कमलासनदेवता ।
कुत्सिता कुत्सिततरा कुत्सापापविवर्जिता ॥ ७५ ॥
कुपुत्ररक्षका कुल्या कुपुत्रमानसापहा ।
कुजरत्नकरी कौजी कुजाख्या कुजविग्रहा ॥ ७६ ॥
कुनखी कुपदीत्तुस्था कुकरी कुध्नी कुदा ।
कुप्रिया कोकिलानन्दा कोकिला कामदायिनी ॥ ७७ ॥
कुकामिनी कुबुद्धिस्था कूर्पवासनमोहिनी ।
कुश्लोका कललोकस्था कुशासनसुसिद्धिदा ॥ ७८ ॥

कौशिकोदेवता कन्या कुनदीवारिसुप्रिया ।
कुसौष्ठवा कुमित्रस्था कुमित्रशत्रुघातिनी ॥ ७९ ॥
कुज्ञाननिकरा कुस्था कुजिस्था कजदायिनी ।
कुकर्जा कर्जकरणी कर्जबद्धविमोहिनी ॥ ८० ॥
कर्जशोधनकर्त्री च कालास्त्रधारिणी सदा ।
कुगतिः कालसुगतिः कलिबुद्धिविनाशिनी ॥
कलिकालफलोत्पन्ना कलिपावनकारिणी ॥ ८१ ॥
कलिपापहरा काली कलिसिद्धिसुमोक्षदा ।
कालिदासवाक्यगता कालिदासमुसिद्धिदा ॥ ८२ ॥
कलिशिक्षा कालशिक्षा कन्दशिक्षापरायणा ।
कमनीयभावरता कमनीयसुभक्तिदा ॥ ८३ ॥
करकाजनरूपा च कचावादकरा करा ।
कञ्चुवर्णा काकवर्णा क्रोष्टुरूपा कषायणा ॥ ८४ ॥
कोष्टनादरता क्रीता कातरा कातरप्रिया ।
कातरस्था कातरज्ञा कातरानन्दकारिणी ॥ ८५ ॥
काशमर्दतरूद्भूता काशमर्दविभञ्जिणी ।
कष्टहानिः कष्टदात्री कष्टलोकविरक्तिदा ॥ ८६ ॥
कायगीता कायसिद्धिः कायानन्दप्रकाशिनी ।
कायगन्धहरा कुम्भा कारकुम्भकठोरिणी ॥ ८७ ॥
कठोरतरुसंस्था च कठोरलोकनाशिनी ।
कुमार्गस्थापिता कुम्रा कार्पासतरुसम्भवा ॥ ८८ ॥
कार्पासवृक्षसूत्रस्था कुवर्गस्था करोत्सवा ।
कर्णाटी कर्णसम्भूता काण्डाटी कर्णपूजिता ॥ ८९ ॥
कर्णाक्षरचिका कर्णा कर्णहा कर्णकुण्डला ।
कर्णाटदेशनमिता कुटुम्बा कुम्भकारिका ॥ ९० ॥
कर्णासवासना कृष्णा कृष्णहस्ताम्बुजार्चिता ।

कृष्णाङ्गी कृष्णदेहस्था कुदेशस्था कुमङ्गला ॥ ९१ ॥
क्रूरकर्मस्थिता कोरा किराता कनकामिनी ।
कालरात्रिप्रिया कामा काव्यवाक्यप्रिया क्रुधा ॥ ९२ ॥
कज्जलावर्णकौमुदी कुज्योत्स्ना च कलप्रिया ।
कलना सर्वभूतानां कापित्थवनवासिनी ॥ ९३ ॥
कटुनिम्बस्थिता काव्या कवर्गाख्या कवर्गिका ।
किरातच्छेदिनी कार्य्या कार्य्याकार्य्यविवर्जिता ॥ ९४ ॥
कात्यायनादिकल्पस्था कात्यायनसुखोदया ।
कुचितस्था कुलाविघ्ना करणादिप्रवेशिनी ॥ ९५ ॥
क्रां काली क्रीं कला काला कीलिता सर्वकामिनी ।
कीलिताधिचिता कूटा कूटकुङ्कुमचर्चिता ॥ ९६ ॥
कुङ्कुमागन्धनिलया कुटुम्बभरणस्थिता ।
क्लीं क्षपा कारणानन्दा कविता रसमोहिनी ॥ ९७ ॥
काव्यशास्त्रानन्दरता काव्यपूज्या कवीश्वरी ।
कटकादिहस्तिरथ-हयदुर्लभशब्दिनी ॥ ९८ ॥
कितवा क्रूरधूर्त्तस्था केकाशब्दनिवासिनी ।
कें केवलान्विता केता केतकीपुष्पमोहिनी ॥ ९९ ॥
कैं कैवल्यगुणोपास्या कैवल्यधनदायिनी ।
करीश्वरेन्द्रजननी कादराख्या कलङ्किनी ॥ १०० ॥
कुडुम्बान्ता कान्तिशान्ता काङ्क्षापरमहंसगा ।
कावेरीचित्ता कान्तावृत्ता कृपणा कपिभोजिनी ॥ १०१ ॥
कुङ्कुमासक्तहृदया केयूरहारमालिनी ।
कोश्वरी केशबन्धस्था कैशोरजनमण्डिता ॥ १०२ ॥
कालिकासध्यानरता कोकिलस्वरगामिनी ।
कूटदेहहरा कुम्बा कुडुम्बा कुरभेदिनी ॥ १०३ ॥
कुण्डलीश्वरसंवादा कुण्डलीश्वरमध्यगा ।

कालसूक्ष्मा काशयज्ञा कलाहारकरी कुहा ॥ १०४ ॥
कपिलस्था कलहहा कामहा कविकोकिटा ।
कुरङ्गेशी कुरङ्गस्था कौरङ्गी कुण्डलापला ॥ १०५ ॥
कुललक्ष्मीः कृष्णबुद्धिः कृष्णध्याननिवासिनी ।
कुतरा कातरमता कृतार्थकरणी कुसी ॥
कलाकस्था कासुरस्था कलिकाभङ्गदोषजा ॥ १०६ ॥
कुसुमाकारकमला कुसुमस्रग्विभूषणा ।
किञ्जल्का कैतवा केशा कमनीयजलोदया ॥ १०७ ॥
ककारकूटसर्वाङ्गी ककाराम्बरमालिनी ।
कालमेदकराकाटा कर्पवासा ककुत्स्थगा ॥ १०८ ॥
कुवासा कवरी कर्वा कुसर्वा कुरुपालिनी ।
कुरुपृष्ठा कुरुश्रेष्ठा कुरूणां ज्ञाननाशिनी ॥ १०९ ॥
कुतूहलरता कान्ता कुव्याप्ता कष्टबन्धना ।
कषायणतरुस्था च कषायणरसोद्भवा ॥ ११० ॥
कविविद्या कुष्ठदात्री कुष्ठशोकविसर्जनी ।
काष्ठासनगता कार्य्याश्रया काश्यकीलिका ॥ १११ ॥
कलसा कलसवस्ता कौलिकध्यानवासिनी ।
कृतस्था कृतजननी कृतच्छिन्ना कलिध्वजा ॥ ११२ ॥
केशवा केशवानन्दा केश्यादिदानवापहा ।
केशवाङ्गजकन्या च केशवाङ्गजमोहिनी ॥ ११३ ॥
केशवार्चनयोग्या च केशवार्चनदेवता ।
कान्तशोककरणी कुल्या कपाटप्रियघातिनी ॥ ११४ ॥
कुकामजनिता कोचा कोचस्था कोचवासिनी ।
कुपथस्था कुबुद्धिस्था कुलमालामनोरमा ॥ ११५ ॥
कुलपुष्पाश्रया कान्तिः क्रमदा क्रमदक्रमा ।
कुविक्रमा कुक्रमस्था कुण्डली कुलदेवता ॥ ११६ ॥

कौण्डिन्यनगरोद्भूता कौण्डिन्यगोत्रपूजिता ।
कपिराजस्थिता कापी कपिबुद्धिविनोदिनी ॥ ११७ ॥
कपिध्यानपरमाख्या कुव्यवस्था कुशाचिदा ।
कुमध्यस्था कुकल्पा च कुलपङ्क्तिप्रकाशिनी ॥ ११८ ॥
कुलभ्रमरदेहस्था कुलभ्रमरनादिनी ।
कुलासङ्गा कुलाची च कुलमत्ता कुलाविला ॥ ११९ ॥
कलिचिह्ना कालचिह्ना कण्ठचिह्ना कवीन्द्रजा ।
कवीन्द्रा कमलेशश्रीः कोटिकन्दर्पदर्पहा ॥ १२० ॥
कोटितेजोमयी काव्या कोटीरपद्ममालिनी ।
कोटीरमोहिनी कोटिः कोटि-कोटि-विधूद्भवा ॥ १२१ ॥
कोटिसूर्य्यसमानास्या कोटिकालानलोपमा ।
कोटीरहारनमिता कोटिपर्वतधारिणी ॥ १२२ ॥
कुचयुग्मधरादेवी कुचकामप्रकाशिनी ।
कुचानन्दा कुचाच्छन्ना कुचकाठिन्यकारिणी ॥ १२३ ॥
कुचयुग्ममोहनस्था कुचमायातुरा कुचा ।
कुचयौवनसम्मोहा कुचमर्द्दनसौख्यदा ॥ १२४ ॥
काचस्था काचदेहा च काचपूरनिवासिनी ।
काचाग्रस्था काचवर्णा कीचकप्राणनाशिनी ॥ १२५ ॥
कमलालोचनप्रेमा कोमलाक्षी मनुप्रिया ।
कमलाक्षी कमलजा कमलास्या करालजा ॥ १२६ ॥
कमलाङ्घ्रिद्वया काम्या कराख्या करमालिनी ।
करपद्मधरा कन्दा कन्दबुद्धिप्रदायिनी ॥ १२६ ॥
कमलोद्भवपुत्री च कमलापुत्रकामिनी ।
किरन्ती किरणाच्छन्ना किरणप्राणवासिनी ॥ १२७ ॥
काव्यप्रदा काव्यचित्ता काव्यभावप्रकाशिनी ।
कल्पा च कल्पजननी कल्पभेदासनस्थिता ॥ १२८ ॥

कालेच्छा कालसारस्था कालमारणघातिनी ।
किरणक्रमदीपस्था कर्मस्था क्रमदीपिका ॥ १२९ ॥
काललक्ष्मीः कालचण्डा कुलचण्डेश्वरप्रिया ।
काकिनीशक्तिदेहस्था कितवा कुलकारिणी ॥ १३० ॥
कारस्था कञ्चुका क्रौञ्चा काकचञ्चुपुटस्थिता ।
काकाख्या काकशब्दस्था कालाग्निदहनार्थिका ॥ १३१ ॥
कुचक्षनिलया कुत्रा कुपुत्रा क्रतुरक्षका ।
कनकप्रतिभाकारा करबन्धाकृतिस्थिता ॥ १३२ ॥
कृतिरूपा कृतिप्राणा कृतिचक्रनिवारिणी ।
कुचिरचाकरा कुचा कुचिब्रह्माण्डधारिणी ॥ १३३ ॥
कुचिदेवस्थिता कुचिः क्रियादक्षा क्रियातुरा ।
क्रियानिष्ठा क्रियानन्दा क्रतुकर्म्मा क्रियाप्रिया ॥ १३४ ॥
कुशलासवसंसक्ता कुशारिप्राणवल्लभा ।
कुशारिहृत्समन्दिरा काशीराजवधोद्यमा ॥ १३५ ॥
काशीराजगृहस्था च कर्णभ्रातृगृहस्थिता ।
कर्णाभरणभूषाढ्या कण्ठभूषा च कण्ठिका ॥ १३६ ॥
कण्ठस्थानगता कण्ठा कण्ठपद्मनिवासिनी ।
कण्ठप्रकाशकरणी कण्ठमाणिक्यमालिनी ॥ १३७ ॥
कण्ठपद्मसिद्धिकरी कण्ठाकाशनिवासिनी ।
कण्ठपद्मशालिनीस्था कण्ठषोडशपत्रिका ॥ १३८ ॥
कृष्णाजिनधरा विद्या कृष्णाजिनसुवाससी ।
कुतुकस्था कुखेलस्था कुगुणालङ्कृताकृता ॥ १३९ ॥
कलगीता कलघना कलभङ्गपरायणा ।
कालीचन्द्रा कला काव्या कुचेलस्था कुचेलता ॥ १४० ॥
कुचीरघातिनी कच्छा कच्छुदस्था च कुचान्तता ।
कर्णाहतमुखी कञ्जा कञ्जतुण्डा कुजीपनी ॥ १४१ ॥

कामराजीववाद्यस्था प्रियङ्कारनादिनी ।
कलायैयज्ञसूत्रस्था कौलालानन्दसंज्ञका ॥ १४२ ॥
कटिहासा कपाटस्था कटधूमनिवासिनी ।
कटिनादघोरतरा कुञ्जला पाटलिप्रिया ॥ १४३ ॥
कामठा कज्जनेत्रा च कामठहारसंक्रमा ।
काष्ठपर्वतसन्दाहा कुष्ठा कष्टनिवारणी ॥ १४४ ॥
कहोड़मन्त्रसिद्धिस्था कहनाड़ीस्थिय: प्रिया ।
कुलडिण्डिमवाद्यस्था कामडामरसिद्धिदा ॥ १४५ ॥
कुलडामरमध्यस्था कुलढक्कानिनादिनी ।
कोजागरतूर्य्यनादा कांस्यवीररणास्थिता ॥ १४६ ॥
कालादिकरणाच्छिद्रा करुणानिधिवत्सला ।
क्रतुश्रीदा क्रतार्थश्री: कालतारा कुलोत्तरा ॥ १४७ ॥
कथापूज्या कथानन्दा कथनाकथनप्रिया ।
कार्य्यचिन्ता कार्य्यविद्या कार्य्यमिथ्याऽपवादिनी ॥ १४८ ॥
कदम्बपुष्पसङ्काशा कदम्बपुष्पमालिनी ।
कादम्बरीपानतुष्टा कायदम्भा क्रतीदमा ॥ १४९ ॥
कुशानपवमध्यस्था कुलधाराधरप्रिया ।
कुलदेवशरीरार्द्धा कुलधामा कलाधरा ॥ १५० ॥
कामनागभूषणाढ्या काम नीरगुणप्रिया ।
कुलीननागहस्ता च कुलीननागवाहिनी ॥ १५१ ॥
कामपूरस्थिता कोपा कपालीवन्दनोद्भवा ।
कौरागा कुजलापाना कारागारप्रपालिनी ॥ १५२ ॥
क्रियापङ्क्ति: कर्णपङ्क्ति: कर्णमूला कफोदया ।
कामफुल्लारविन्दस्था कामरूपफलाफला ॥ १५३ ॥
कायफला कायफेना कान्तनाड़ी कलेश्वरा ।
कामफेरुगता गौरी कामवाणी कुवीरगा ॥ १५४ ॥

कवरीमणिबन्धस्था कावेरीतीर्थसङ्गमा ।
कामभीतिहरा कान्दा कवाचकभ्रमातुरा ॥ १५५ ॥
कविभावहरा कम्रा कमनीयभयापहा ।
कामभर्गदेवमाता कामकल्पलतामरा ॥ १५६ ॥
कमठप्रियमांसादा कमठा कामठप्रिया ।
किमाकारा किमाधारा कुम्भकारमन:स्थिता ॥ १५७ ॥
काम्ययज्ञस्थिता काम्या काम्ययज्ञोपवीतिका ।
कामयागसिद्धिकारी काममैथुनयामिनी ॥ १५८ ॥
कामाख्यायमनाशस्था कालशामा कयागिनी ।
कुरुयागाहुतियोग्या कुरुमांसविभक्षिणी ॥ १५९ ॥
कुररक्तप्रिया काली-किङ्करप्रियकारिणी ।
कवीश्वरी कारणात्मा कविभच्या कविप्रिया ॥ १६० ॥
कविशत्रुपृष्ठलग्ना कैलासोपवनस्थिता ।
कलिक्रियादिसिद्धिस्था कलिनिदिनसिद्धिदा ॥ १६१ ॥
कलङ्करहिता काली कलिकल्मषकालदा ।
कुलपुष्परङ्गसूत्र-मणिग्रन्थिसुशोभना ॥ १६२ ॥
काम्बोजवङ्गदेशस्था कुलवासुकिरञ्चका ।
कुलशास्त्रक्रियाशान्ति: कुलशान्ति: कुलेश्वरी ॥ १६३ ॥
कुशलप्रतिमा काशी कुलषट्चक्रभेदिनी ।
कुलषट्पद्ममध्यस्था कुलषट्पद्मदीपनी ॥ १६४ ॥
कृष्णमार्जारकोलस्था कृष्णमार्जारषष्ठिका ।
कुलमार्जारकुपिता कुलमार्जारषोडशी ॥ १६५ ॥
कालान्तकवलात्पन्ना कपिलान्तकघातिनी ।
कलहंसा कलहंसी कङ्कालार्था कलामला ॥ १६६ ॥
कच्चापद्मरचा च कुतेन्नपद्मसंचया ।
कैवल्याचारचारिणी च कैवल्ये संप्रतिष्ठिता ॥ १६७ ॥

कोटिसूर्य्यशतच्छाया कुप्रभाऽङ्कुरचर्चिता ।
कावेरीतीरभूमिस्था कालाग्निस्तोकधारिणी ॥ १६८ ॥
किं ई श्रीं कामकमला पातु कैलासरक्षिणी ।
मम श्रीं ईं बीजरूपा पातु काली शिरःस्थलम् ॥ १६९ ॥
ऊरुस्थलाब्जं सकलं तमोल्का पातु कालिका ।
षड्मूलार्करमणी ऊर्द्ध्वांशा कुलमातृका ॥ १७० ॥
कृतापेक्षा द्युतिमती कङ्काली कुलपण्डिता ।
कुलदीर्घस्वना लूता कैलासपर्वतार्चिका ॥ १७१ ॥
कैशोरी कैं करा कैं कैं बीजाख्या नेत्रयुग्मकम् ।
कामामतङ्गवर्जिता कौशल्यादिक्षयात्मिका ॥ १७२ ॥
पातु मे कर्णयुग्मन्तु कौं कौं जीवकरालिनी ।
गण्डयुग्मं सदा पातु कुण्डल्यङ्गनिवासिनी ॥ १७३ ॥
कोटिसूर्य्यशताभासा काचराचरमालिनी ।
आशुतोषकरीहस्ता कुलदेवी निरञ्जना ॥ १७४ ॥
पातु मे कुलपुष्पाढ्या पृष्ठदेशं कुलोत्तमा ।
कुमारी कामनापूर्णा पार्श्वदेशं सदाऽवतु ॥ १७५ ॥
देवी कामाख्यका पूज्या पातु प्रत्यङ्गकं कटिम् ।
कटिस्थदेवता पातु लिङ्गमूलं सदा मम ॥ १७६ ॥
गुह्यदेशं काकिनी मे लिङ्गाधः कुलसंहिका ।
कुलनागेश्वरी पातु नितम्बदेशमुत्तमम् ॥ १७७ ॥
कङ्कालमालिनी देवी पातु मे चोरुमूलकम् ।
जङ्घायुगं सदा पातु कीर्त्तिचक्रापहारिणी ॥ १७८ ॥
पादयुग्मं पाकसंस्था पाकशासनरक्षिका ।
कुलालचक्रभ्रमरा पातु पादाङ्गुलीर्मम ॥ १७९ ॥
नखाग्राणि दशविधान्येवं हस्तद्वयस्य च ।
विंशरूपा कालनाम्ना सर्वदा परिरक्षतु ॥ १८० ॥

कुलच्छत्राधाररूपा कुलमण्डलगोपिता ।
कुलकुण्डलिनी माता कुलपण्डितमण्डिता ॥ १८१ ॥
काकाननी काकतुण्डी काकायुःप्रखरार्कजा ।
काकज्वरा काकजिह्वा काकविघ्ना कपिप्रिया ॥
कालकाञ्चीविंशतिस्था सदा विंशनखाग्रकम् ॥ १८२ ॥
पातु देवी कालरूपा कलिकालफलालया ।
क्षेत्रे वा पर्वते वाऽपि शून्यागारे चतुष्पथे ॥ १८३ ॥
कुलेन्द्रसमयाचारा कुलाचारजनप्रिया ।
कुलपर्वतसंस्था च कुलकैलासवासिनी ॥ १८४ ॥
महादावानले पातु कुमार्गे कुत्सितग्रहे ।
राज्ञोऽप्रिये राजवश्ये महाशत्रुविनाशने ॥ १८५ ॥
कलिकालमहालक्ष्मीः क्रियालक्ष्मीः कुलाम्बरा ।
कलीन्द्रकीलिता कीला कीलालस्वर्गवासिनी ॥ १८६ ॥
दशदिक्षु सदा पातु इन्द्रादिदशलोकपा ।
नवच्छिन्ने सदा पातु सूर्य्यादिकनवग्रहा ॥ १८७ ॥
पातु मां कुलमांसाढ्या कुलपद्मनिवासिनी ।
कुलद्रव्यप्रिया काली षोड़शी भुवनेश्वरी ॥ १८८ ॥
विद्यावादे विवादे च मत्तकाले महाभये ।
दुर्भिक्षादिभये चैव व्याधिसङ्करपीड़िते ॥ १८९ ॥
काली कुल्वा कपाली च कामाख्या कामचारिणी ।
सदा मां कुलसंसर्गे पातु कौले सुसङ्गता ॥ १९० ॥
सर्वत्र सर्वदेशे च कुलरूपा सदाऽवतु ।
इत्येतत्कथितं नाथ ! तव प्रसादहेतुना ॥ १९१ ॥
कुण्डलीन्याः प्रियं नाम अष्टोत्तरसहस्रकम् ।
कुलकुण्डलिनीदेव्याः सर्वमन्त्रसुसिद्धये ॥ १९२ ॥
सर्वदेवमनूनाञ्च चैतन्याय सुसिद्धये ।

अणिमाद्यष्टसिद्ध्यर्थं साधकानां हिताय च ॥ १९३ ॥

अकुलीनेऽब्राह्मणे च न देयः कुण्डलीस्तवः ।

प्रवृत्ते कुण्डलीचक्रे सर्वे वर्णा द्विजातयः ॥

निवृत्ते भैरवीचक्रे सर्वे वर्णाः पृथक् पृथक् ॥ १९४ ॥

कुलीनाय प्रदातव्यं साधकाय विशेषतः ॥ १९५ ॥

दानादेव हि सिद्धिः स्यान्ममाज्ञाबलहेतुना ।

मम क्रियायां यस्तिष्ठेत् स मे पुत्रो न संशयः ॥

समायाति मम पदं जीवन्मुक्तः स मानवः ॥ १९६ ॥

आसवैर्नरमांसैर्न कुलवह्नौ महानिशि ।

नाम प्रत्येकमुच्चार्य जुहुयात् कार्यसिद्धये ॥ १९७ ॥

पश्चाचाररतो भूत्वा ऊर्द्धरेता भवेद् यतिः ।

संवत्सरान्मम स्थाने ह्यायाति नात्र संशयः ॥ १९८ ॥

ऐहिके कार्यसिद्धिः स्यादैहिके सर्वसिद्धिदः ।

वशीभूतास्त्रिमार्गस्थाः स्वर्गभूतलवासिनः ॥ १९९ ॥

तस्य भृत्याः प्रभवन्ति इन्द्रादिलोकपालकाः ॥ २०० ॥

स एव योगी परमो यस्यार्थोऽयं सुनिश्चलः ।

स एव खेचरो भक्तो नारदादिशुकोपमः ॥ २०१ ॥

यो लोकः प्रजपत्येवं स शिवो न च मानुषः ।

स समाधिगतो नित्यो ध्यानस्थो योगिवल्लभः ॥ २०२ ॥

चतुर्व्यूहगतो देवः सहसा नात्र संशयः ।

यो धारयेदिदं भक्त्या कण्ठे वा मस्तके भुजे ॥ २०३ ॥

स भवेत् कालिकापुत्रो विद्यानाथः स्वयं भुवि ।

धनेशः पुत्रवान् योगी यतीशः सर्वगो भवेत् ।

वामा वामकरे धृत्वा सर्वसिद्धीश्वरी भवेत् ॥ २०४ ॥

यदि पठति मनुष्यो मानुषी वा महत्या

सकलधनजनेशा पुत्रिणी जीववत्सा ।

कुलपतिरिह लोके स्वर्गमोक्षैकहेतुः

स भवति भवनाथो योगिनीवल्लभेशः ॥ २१५ ॥

पठति य इह नित्यं भक्तिभावेन मर्त्यो

स्मरणमपि करोति प्रातरुत्थानकाले ।

स्तवनपठनपुण्यं कोटिजन्माघनाशं

कथितुमपि न शक्ता तस्य पुण्यात्मकस्य ॥ २०६ ॥

इति श्रीरुद्रयामले उत्तरतन्त्रे महातन्त्रोद्दीपने सिद्धमन्त्रप्रकरणे षट्चक्रप्रकाशे भैरवीभैरवसंवादे महाकुलकुण्डलिन्याः स्तोत्ररहस्यनाम-स्तुतिर्नाम षट्त्रिंशः पटलः ॥ ३६ ॥

अथ सप्तत्रिंशः पटलः ।

श्रीआनन्दभैरव उवाच ।—

श्रुतञ्च परमं ज्ञानं धर्माधर्मविवेचनम् ।

सर्ववेदान्तसारञ्च सारात्सारं परात्परम् ॥ १ ॥

कुण्डलीस्तवनं श्रुत्वा पुण्योऽहं जगदीश्वरि !

इदानीं श्रोतुमिच्छामि स्वाधिष्ठानप्रकाशकम् ॥ २ ॥

यदि मे सुकृपादृष्टिरानन्दघनसञ्चये ।

वद श्रीकुण्डलीयोगं स्वाधिष्ठानविभेदनम् ॥

येन क्रमेण भेदः स्यात्तत्प्रकारविनिर्णयम् ॥ ३ ॥

आनन्दभैरव्युवाच ।—

महाकाल ! महावीर ! आनन्दसागराश्रय !

योग्योऽसि योगमार्गाणामत एव प्रकथ्यते ॥ ४ ॥

येन क्रमेण चक्रस्य भेदः स्यादमरस्तथा ।

अमरो जितचित्तारिः क्रोधजित् प्रबलो बली ॥ ५ ॥

स्वाधिष्ठाने श्रीकृष्णसाधनम् ।—

धर्माधर्मज्ञानवांश्च योगी भवति सज्जनः ।

विप्रः परकालदर्शी क्रतुश्रद्धापरायणः ॥ ६ ॥

अहङ्कारविहीनो यः स योगी भवति ध्रुवम् ॥ ७ ॥
महावीरकषङ्गी च सङ्गदोषविवर्जितः ।
महात्मा परमब्रह्म-ज्ञानी भवति योगिराट् ॥ ८ ॥
विख्यातः सर्वदेशे च किन्तु स्वाश्रयवर्जितः ।
ज्ञालको विज्ञानी धन्वी धनुर्बाणधरोऽव्ययः ॥
स भवेत् योगमार्गज्ञो विवेकी पाकवर्जितः ॥ ९ ॥
अविद्याग्रन्थिनिर्भेष्टो विवेकधर्मचातकः ।
चतुरो विषमज्ञान-वर्जितो यज्ञकृत् शुचिः ॥
स भवेद्योगिनीपुत्रो योगानामधिपो ध्रुवम् ॥ १० ॥
यदि योगस्थितो मन्त्री वायवीशक्तिनिर्भरः ।
स एव योगी प्रसादादिति मे तन्त्रनिर्णयः ॥ ११ ॥
यो मे तन्त्राणि जानाति सदर्थज्ञानजानि च ।
स एव चतुरो योगी मम भक्तो न संशयः ॥ १२ ॥
यदि वायुपानरतो मन्त्री भवति साधकः ॥ १३ ॥
अथ स्वाधिष्ठान कुलवरगतं कामनिलयं
महायोगीन्द्राणां मनसि निचयं चारुकिरणम् ।
शरच्चन्द्रज्योत्स्नायुतशतघनं भव्यविषयं
यदा भावयेत् सकलसुधियां वेदपरमम् ॥ १४ ॥
जना ये ध्यायन्ति क्षितिगतवतः श्रीपदयुगं
महाविष्णोः पीताम्बरयुगयुजः श्यामलतनोः ।
प्रकाशन्ते तेषां हृदयजलये सर्गनिचयाः
सदा स्वान्तस्थान्तर्गतितिमिरराशिः चयमियात् ॥ १५ ॥
वटच्छायामध्ये निवसति यदा गोकुलकुले
हरिध्यानं कुर्य्यान्निरवधिमहाऽऽनन्दरसिकः ।
स एवात्मा साक्षादिह नववयः षोडशयुवा
चतुर्वर्गस्याप्तिर्भवति नियतं तस्य भवने ॥ १६ ॥

महासर्पारिस्थं त्रिभुवनपतिं श्रीपतिमहो
सदा वंशीध्वानध्वनितभुवनं भावयति यः ।
स एवात्मा नित्यो यतिरिह भवेत् कामदलनः
कुलागारे सारे प्रभवति सदाऽव्याहतगतिः ॥ १७ ॥
सुरानन्दश्रीदं दितिजवनदावानलमजं
गुणातीतं व्याप्तं सकलभुवने रासरसिकम् ।
सुधाकान्तं कृष्णं परमपुरुषं भावयति यो
महाविद्यासिद्धश्चरति भुवने सोऽन्तकजयी ॥ १८ ॥
मुकुन्दं श्रीकृष्णं नवदलगतं स्वागममतं
मुरारिं पापारिं नवयुवतिहृत्पद्मसु गतम् ।
हृषीकेशं विष्णुं विषयकरणं भावयति यः
स योगीन्द्रो ज्ञानी जयति सुकृती कौतुकवताम् ॥ १९ ॥
रमेशं श्रीकृष्णं भवविषहरं मानसचरं
सरस्वत्या युक्तं कुलरसमयं मुक्तिजड़ितम् ।
जपेच्चैतन्यान्तं सुरतरुवरं मोक्षमतये
यतीन्द्रः सश्रीकः प्रचयति निजं भव्यविषयम् ॥ २० ॥
पुराणं योगीन्द्रं हरिमखिलपं कामनिलयं
महासूक्ष्मोदारं कुलजनरतं कामविजयम् ।
विशालाक्षं कृष्णं निजहृदयके कान्तिसहितं
कृपापारावारं गुणगणितदेहं नरहरिम् ॥ २१ ॥
महाधूर्त्तं सत्यं शमन-शमनं ज्ञाननिलयं
सुराधीशं श्रीशं शशिमुखकराम्भोजजड़ितम् ।
तमात्मानं कृष्णं निजहृदयके यो हि जपति
स लोकेऽस्मिन् पूज्यो भवति मनुजानां सुरपतिः ॥ २२ ॥
महाशब्दोल्लासं प्रकृतिविकृतिं कारणकृतिं
कृपासिन्धुं कृष्णं कुलवधूशतामोदमिलितम् ।

* * * *

भवेल्लोके वश्यो नृपतिनिकरस्तस्य सततम् ॥ २३ ॥
जगन्नाथं स्तौति क्षितिपतिवशायोपकरणैः
विराटब्रह्माण्डत्रयसृजनरचासु कुशलम् ।
प्रचण्डे संसारे क्षतवसतिकं भावमदने
महामेघश्यामं त्रिपथकरुणासागरजले ॥ २४ ॥
अमूल्ये संसारे विषयरसनातच्चयविषं
स कृष्णः श्रीविष्णुः प्रकृतिगदया हन्ति सततम् ।
अतः कृष्णो ध्येयः सुरनरगणैर्योगिभिरलं
कुलाम्भोजे षट्के रसरसदले ध्यानफलितः ॥ २५ ॥
धराधारं पूर्णं गगननिलयं कालपुरुषं
मनोगम्यं रम्यं नवनयनलक्ष्मीवक्षरसिकम् ।
सदा ध्यायेत् कृष्णं कुरुगणरिपुं तं कुलपति-
निरालम्बं श्यामं प्रकृतियमुनातीरतरुगम् ॥ २६ ॥
कुलीनं गोपीभिः परिमिलितपार्श्वस्थलसुखं
प्रधानं क्षेत्रज्ञं क्षितिपतिकराम्भोजमहितम् ।
दयागारं नाथं प्रचयकरुणं ध्येयचरणं
मणीवर्णच्छत्रं विविधगुणगानाञ्चितकरम् ॥ २७ ॥
त्रिकालस्थं स्वर्णाङ्गवनवरस्रं प्राणरसिकं
जनः स्तौति प्रातर्भवभयहरं नित्यवरदम् ।
महामोचचेलं कुलवधुयुतं कृष्णपरमं
गुणेशं व्याधीशं व्रजनिधियुजं वेदनिलयम् ॥ २८ ॥
क्रियादक्षं सूक्ष्मं समयगुणगं योगजडितं
त्रिकोणस्थं गङ्गाजलगलितरसं तारकवरम् ।
महाकालानन्दं गगनघनवद्वर्णसहितं
प्रभावारं तारं तरुणवपुषं श्रीधरमजम् ॥ २९ ॥

किरातीकामिन्या नयनकमलापानमधुरं
रसोत्फुल्लाम्भोजामलविवरवासार्थकलयम् ।
महाशोभारूपं कुलपुरुषभूपं जपति यः
स योगी संसारे भवति रसनायोगनिरतः ॥ ३० ॥
मनोऽन्तर्व्याधाय प्रचुरफलदं कृष्णमखिलं
महाज्ञानोत्साहं निखिलजगतां प्राणनिलयम् ।
जगत्तारं ब्राह्मं निरवधि महाघोरकिरणं
यदा लोकः स्तौति प्रतिदिनमिहानन्दघटितम् ॥ ३१ ॥
विकारं सर्वेषां ग्रहणनिलयं भास्करविधो-
र्महाराहुग्रासं शतशतमहापुण्यनिलयम् ।
कुलानन्दं विष्णुं शशिशतघटाधामकिरणं
मनोगम्यं सूक्ष्मं त्रिगुणजडितं भावयति सः ॥ ३२ ॥
कृष्णभक्तो सदा कृष्णं ध्यात्वा ध्यात्वा यतिर्भवेत् ।
श्रीकृष्णचरणाम्भोजे तस्य भक्तिर्न संशयः ॥ ३३ ॥
कृष्णो ब्रह्म परं ज्योतिरिति ध्यानपरायणः ।
स कृष्णस्तं जनं नीत्वा ददाति मयि शङ्कर ! ॥ ३४ ॥
विना कृष्णपदाम्भोजं स्वाधिष्ठानं कुतो जयेत् ।
कृष्णध्यानान्महापद्मे भेदं प्राप्नोति शङ्कर ! ॥ ३५ ॥

इति श्रीरुद्रयामले उत्तरतन्त्रे महातन्त्रोद्दीपने षट्चक्रप्रकाशे भैरव-भैरवीसंवादे स्वाधिष्ठाने श्रीकृष्णराकिणीसाधनं नाम सप्तत्रिंशः पटलः ॥ ३७ ॥

अष्टत्रिंशः पटलः ।

आनन्दभैरव्युवाच ।—

शृणु नाथ ! प्रवक्ष्यामि श्रीकृष्णसाधनोत्तमम् ।
येन क्रमेण भक्तिः स्यात् कालजालवशंकरी ॥ १ ॥

मम पादाम्बुजे भक्तिर्भवत्येव न संशयः।
भक्तिमान् हि साधकेन्द्रो महाविष्णुं भजेद्यदि॥
शिवतुल्यो भवेन्नाथ! मम भक्तो महीतले॥ २॥
श्रीकृष्णं जगदीश्वरं त्रिजगतामानन्दमोक्षात्मकं
सम्पूर्णं त्रिगुणावृतं गुणधरं सत्त्वाधिदेवं परम्।
लिङ्गाधःस्थितराज्यपालपुरुषं पञ्चाननस्थायिनं
श्रीविष्णुं शुभदं जनो यदि भजेल्लोकः सशक्तिः सुखी॥३॥

श्रीकृष्णमन्त्रः।—

आदौ कामं त्रिसर्गं कुलवधुनियुतं कामबीजं त्रिसर्गं
श्रीकृष्णं वारयुग्मं प्रणययुगलकं चन्द्रिकाकाशयुक्तम्।
ब्रह्मद्वन्द्वं भजामि प्रकृतिपुरुषिकां कामिनीं तत्परे च
भूयो भूयो भजामि श्रवणगनयनं वह्निजायाविलग्नम्॥४॥
एतन्मन्त्रं जपित्वा प्रणवमिति नमोऽन्तं तथाद्ये मिलित्वा
भूयो भूयो मनःस्थस्त्रिभुवनसहितं क्षोभयेत्तत्क्षणेन।
राजश्रीस्तस्य शीर्षे निरवधिवसुधामन्दिरे संस्थिता स्यात्
कालच्छेदं प्रकृत्या प्रवसति सुमुखो ब्रह्मदण्डे च काले॥५॥
ततः प्राण! देव! नाथ! मम सन्तोषवर्द्धन!।
इदानीं नरसिंहस्य मन्त्रं शृणु महाप्रभो!॥ ६॥

नरसिंहमन्त्रः।—

कान्तबीजं समुद्धृत्य युगलं युगलं स्मृतम्।
महानृसिंहमन्त्रेण पूजयामि नमोनमः॥ ७॥
स्वाधिष्ठाने महापद्मे जनो निष्पापहेतुना।
मनो निधाय यो योगी जपेन्मन्त्रं पुनः पुनः॥ ८॥
एतन्मन्त्रजपेनापि सिद्धो भवति साधकः।
एतन्मन्त्रप्रभावेण भावसिद्धिं क्षणाल्लभेत्॥ ९॥
साधको यदि भूमिस्थः साधयेद्दूयो हरेर्मनुम्।

एवमेव क्रमेणैव सिद्धिं प्राप्नोति धैर्य्यतः॥ १०॥
अथ वक्ष्ये महादेव! सर्ववर्णसुसारकम्।
वर्णमालास्वसंसक्तो जप्त्वा सिद्धिमवाप्नुयात्॥ ११॥
सिद्धमन्त्रं प्रार्थयते यदि मर्त्यो निराश्रयः।
निर्ज्जने सुस्थिरो भूत्वा एकाकी लोभवर्जितः॥ १२॥
निःशङ्कः प्रजपेन्मन्त्रं स्वाधिष्ठानाब्जसङ्गगः।
वशीभूतं जगत् सर्वं येन तत्क्रममाशृणु॥ १३॥
प्रणवं पूर्वमुच्चार्य्य नान्तबीजं तथोद्धरेत्।
वह्निबीजसमालग्नमधोदन्त्यस्वरान्वितम्॥ १४॥
नादबिन्दुसमायुक्तं पुनर्वारद्वयं वदेत्।
नरसिंहेतिशब्दान्ते पुनर्वारत्रयं वदेत्॥ १५॥
देवीबीजं शक्तिबीजं स्वाहान्तं मनुमुद्धरेत्।
एतन्मन्त्रप्रयोगेण कुण्डलीवशमानयेत्॥ १६॥
स्वाधिष्ठाने स्थिरो भावं प्राप्नोति साधकाग्रणीः।
सर्वेषां प्राणगो भूत्वा प्रबलोऽसौ महीतले॥ १७॥
शीतं रौद्रं समं तस्य पापापापं जयाजयम्।
धर्म्माधर्म्मौ समं ज्ञानं नित्यज्ञानं समाप्नुयात्॥ १८॥

श्रीकृष्णस्य मन्त्रान्तरम्।—

पुनः श्रीकृष्णमन्त्रास्य सर्वदेवनिषेवकाः।
यज्ज्ञात्वा देवताः सर्वाः सर्वदिङ्मुखपालकाः॥ १९॥
तत्प्रयोगं महादेव! शृणु सिद्धेश लक्षणम्।
विना कृष्णाश्रयेणापि ब्रह्मा तुष्टो न कुत्रचित्॥ २०॥
न तुष्टा कुण्डली देवी पशुभावं विना प्रभो!।
पशुभावे ज्ञानसिद्धिर्वीरभावे हि मोक्षभाक्॥
दिव्यभावे समाधिस्थो जीवन्मुक्तः स उच्यते॥ २१॥
कान्तबीजं समुद्धृत्य शक्रवामस्वरान्वितम्।

नादबिन्दुसमाक्रान्तं कृष्णसम्बोधनं पदम् ॥ २२ ॥
पुनः पूर्वमनुं जप्त्वा त्र्यक्षरात्ममहामनुम् ।
एतन्मन्त्रजपं कृत्वा योगी भवति योगिराट् ॥ २३ ॥
योगोऽयं परमाह्लाद-कारकोऽनन्तरूपकः ॥ २४ ॥
बहुभिः कथनीयं किं यः करोति फलं लभेत् ।
ध्यायेत् श्रीगोपिकानाथं राकिणीमण्डलेश्वरम् ॥ २५ ॥

श्रीकृष्णध्यानम् ।—

जगतां सत्त्वनिलयं श्रीकृष्णं गोकुलेश्वरम् ।
स्वाधिष्ठानस्थितं श्यामं भजेद्भुजचतुष्टयम् ॥ २६ ॥
शङ्खचक्रगदापद्म-महाशोभामनोहरम् ।
सर्वविद्यागतं काम्यं श्रीगोविन्दं सुशीतलम् ॥ २७ ॥
महामोहहरं नाथं वनमालाविभूषितम् ।
कोटिकन्याकराम्भोज-जितं सर्वज्ञसङ्गतम् ॥ २८ ॥
किरीटिनं महावीरं बालेन्दुकलयान्वितम् ।
गुञ्जामालाशोभिताङ्गं श्रीनाथं परमेश्वरम् ॥ २९ ॥
पीताम्बरं मन्दहास्यं षट्पद्मदलमध्यगम् ।
कामिनीप्राणनिलयं वसुदेवसुतं हरिम् ॥ ३० ॥
एवं ध्यात्वा षड्दले च सदा वक्षःस्थकौस्तुभम् ।
राजराजेश्वरं शौरिं भाव्यं श्रीवत्सलाञ्छनम् ॥ ३१ ॥
स्वाधिष्ठानगतं ध्यायेन्मुरारिं सिद्धिगो नरः ।
एवं ध्यात्वा पुरा ब्रह्म नारायणगुणोदयम् ॥ ३२ ॥

श्रीकृष्णपूजा ।—

मनःकल्पितद्रव्यैश्च पूजयेत् परमेश्वरम् ।
षड्दले च महापद्मे संध्यात्वा हरिमाजपेत् ॥ ३३ ॥
षोड़शोपचारयुक्तैर्मानसचैत्रसम्भवैः ।
मनःकल्पितपीठे च स्थापयित्वा हरिं गुरुम् ॥ ३४ ॥

योगेश्वरं कृष्णमीशं राधिकाराकिणीश्वरम् ।
एकान्तचित्ते चारोप्य कृष्णं पीठे प्रपूजयेत् ॥ ३५ ॥
तत्र दलाष्टकं पद्मं तत्र षट्कोणकर्णिकम् ।
वेदद्वारोपशोभञ्च संनिर्माय मनोहरम् ॥ ३६ ॥
पुनः पुनर्मुदा ध्यायेत षड्दलेषु दलेऽष्टकम् ।
पञ्चोपचारैर्दशकैः श्रीविष्णुं परिपूजयेत् ॥ ३७ ॥
गन्धादयो नैवेद्यान्ता पूजा पञ्चोपचारिका ।
आसनं स्वागतं पाद्यमर्घ्यमाचमनीयकम् ॥ ३८ ॥
मधुपर्काचमस्नान-वसनाभरणानि च ।
सुगन्धि सुमनोधूप-दीपनैवेद्यवन्दनम् ॥ ३९ ॥
प्रयोजयेत् महेशाय उपचारांस्तु षोड़श ।
विष्णोराराधने कार्य्यः सर्वत्र विधिरेष हि ॥ ४० ॥
विधिः स्यात् कृष्णविश्वेश-समुद्भूतस्य सत्पतेः ।
दशोपचारकथनं श्रूयतां वल्लभ ! प्रभो ! ॥+४१ ॥
पाद्यमर्घ्यं तथाचामं मधुपर्काचमं तथा ।
गन्धादयो नैवेद्यान्ता उपचारा दश क्रमात् ॥ ४२ ॥
विष्णुं सम्पूज्य शुद्धः स्याद्धविष्याशी जितेन्द्रियः ।
सर्वदा परमानन्दः कालिकावशसेवकः ॥ ४३ ॥
सर्वज्ञानधरो वीरो विवेकी सर्वदर्शकः ।
संभावयेत् स्वाधिष्ठाने निरन्तरं महाशुचिः ॥ ४४ ॥
बालकक्रियया व्यक्त-भावज्ञानी निरामयः ।
स भवेत् कालिकापुत्रो यः कृष्णभावतत्परः ॥ ४५ ॥
कृष्णं संचिन्तयेत् मूल-कमलोर्द्ध्वे कुलात्मकम् ।
स भवेत् कालिकापुत्रोऽष्टाङ्गसिद्धिगुणान्वितः ॥ ४६ ॥
मानसैः पूजनं कृत्वा शङ्खस्थापनमाचरेत् ।
यत् कृत्वा मानसं योगं न कुर्य्याद्बहिरर्चनम् ॥ ४७ ॥

मूलमन्त्रदेवतायाः साधने दैवतं यजेत्।
देवस्य दक्षिणस्यांश पूर्वपार्श्वसुसंस्थितान् ॥
पूजयेद्गन्धपुष्पाद्यैस्तुल्यमन्त्रेण मन्त्रवित् ॥ ४८ ॥
ततः श्रीकृष्णपादाब्ज-ध्यानं कुर्यात् मनोमयम् ॥ ४९ ॥
एवं क्रमेण तत् पद्मे स्थिरो भवति योगिराट्।
यः स्मरेत् शुद्धभावं तं महामोहहरं हरिम् ॥ ५० ॥
स्थापयित्वा च षट्पद्मे स महामोक्षमाप्नुयात्।
यः प्रधानगुणत्रय स मे शास्त्रार्थमाश्रयेत् ॥ ५१ ॥
इह शक्रतुल्यलोके निवसत्येव योगिराट् ॥ ५२ ॥
पादाम्भोजे मनो दद्यादथ किञ्जल्कचिविते।
जङ्घायुगे चारू राम-कदलीकाण्डमण्डिते ॥
ऊरुद्वये मत्तगज-करदण्डसमप्रभे ॥ ५३ ॥
गङ्गावर्त्तगभीरे तु नाभौ शुद्धविलेऽमले।
उदरे वक्षसि तथा हरौ श्रीवत्सकौस्तुभे ॥ ५४ ॥
पूर्णचन्द्रायुतनिभे ललाटे चारुकुन्तले।
शङ्खचक्रगदाम्भोज-दोर्दण्डाञ्चितविग्रहे ॥ ५५ ॥
सहस्रादित्यसङ्काशं किरीटकुण्डलद्वयम्।
स्थानेष्वेषु जपेन्मन्त्री विशुद्धः शुद्धचेतसा ॥ ५६ ॥
मनो निवेश्य कृष्णे वै तन्मयो भवति ध्रुवम्।
यावन्मनो लयं याति कृष्णे स्वात्मनि चिन्मये ॥ ५७ ॥

इति श्रीरुद्रयामले उत्तरतन्त्रे महातन्त्रोद्दीपने सिद्धमन्त्रप्रकरणे षट्चक्रप्रकाशे भैरवीभैरवसंवादे श्रीकृष्णस्वाधिष्ठानप्रवेशो नाम अष्टत्रिंशः पटलः ॥ ३८ ॥

अथ एकोनचत्वारिंशः पटलः।

आनन्दभैरव्युवाच।—

अथ नाथ! प्रवक्ष्येऽहं संसारसाधनोत्तमम्।

येन साधनमात्रेण योगी भवति तत्क्षणात् ॥ १ ॥
अनायासेन सिद्धिः स्यादुदयदुदयन्मनसि वर्त्तते।
त्रैलोक्यं मोहयेत् क्षिप्रं त्रैलोक्यं वशमानयेत् ॥ २ ॥
रामेण सहितं नित्यं जगतां साक्षिणं वरम्।
जामदग्न्यकराम्भोज-सेवितं सर्वसेवितम् ॥ ३ ॥
अनन्तसत्त्वनिलयं वासुकिसङ्कुलेक्षणम्।
अष्टहस्तयुतं श्रीदं नानाऽलङ्कारशोभितम् ॥ ४ ॥
स्वाधिष्ठानगतं ध्यात्वा शीतलो जायते वशी।
तत् स्तोत्रं शृणु मे नाथ! यत्पाठात् सिद्धिमाप्नुयात् ॥ ५ ॥
ब्रह्मादयः सुराधीशा मुनयः क्रतुरक्षकाः।
एतत् स्तोत्रं पुरा कृत्वा जीवन्मुक्ता महीतले ॥
अतः श्रीकालिकानाथ! स्तोत्रं शृणु महत्फलम् ॥ ६ ॥

श्रीकृष्णस्तोत्रम्।—

श्रीविष्णोरद्भुतकर्मणो ब्रह्मर्षिस्त्रिष्टुप्छन्दः श्रीविष्णुः श्रीकृष्णः श्रीनारायणो देवता सर्वस्तोत्रसारकवचमन्त्रसिद्ध्यर्थे विनियोगः।

श्रीकृष्णं जगतामधीशमनघं ध्यानादिसिद्धिप्रदं
गोविन्दं भवसिन्धुपारकरणं मायापहारात्मकम्।
श्रीविष्णुं वनमालिनं नरहरिं नारायणं गोकुलं
योगीन्द्रं नरनाथमादिपुरुषं वृन्दावने भावयेत् ॥ ७ ॥
मोक्षश्रीसहितं कृतान्तविकृतिं धर्मार्णवं सुन्दरं
श्रीरामं बलरामभावविमलं नित्याकुलं सङ्कुलम्।
श्रीश्यामं ककुदादिहारविगलल्लम्बोदरं श्रीधरं
तं वन्दे हरिमीश्वरं गुणयुतं मायाश्रयं स्वाश्रयम् ॥ ८ ॥
वैकुण्ठेशमशेषदोषरहितं सायुज्यमोक्षात्मकं
नानारत्नविनिर्मितं मम जपे राजेन्द्रचूडामणिम्।

शोभामण्डलमण्डितं सुरतरुच्छायाश्रयं योगिनं
विद्यागोपसुतारतं गुणमयं वाक्सिद्धये भावये ॥ ९ ॥
स्वाधिष्ठाननिकेतनं परजनं विद्याधनं मायिनं
श्रीनाथं कुलयोगिनं त्रिभुवनोल्लासैकबीजं प्रभुम् ।
संसारोत्सवभावनादिनिरतं सर्वादिदेवं सुखं
वन्देऽहं वरसर्वशत्रुसकले पृष्ठे स्थिरानन्दनम् ॥ १० ॥
भावान्तं भवभावयोगजड़ितं जाड्यापहं भासुरं
नित्यं शुद्धगुणं गभीरधिषणामोदैकहेतुं परम् ।
कीर्त्तिक्षेमकरं महाभयहरं कामाधिदेवं शिवं
तत्तत् षड्दलमध्यगेहरुचिरानन्दैकदेशास्पदम् ॥ ११ ॥
वन्दे श्रीपतिमच्युतं नरहरिं दैत्यारिशिक्षाकुलं
गन्धर्वप्रवरैः सुगायनरतं वंशीधरं भावदम् ।
रत्नानामधिपं गतिस्थमचलं गोवर्द्धनोद्धारकं
विश्वामित्रतपोधनादिमुनिभिः संसेवितं मुक्तये ॥ १२ ॥
वन्दे गोविन्दपादाम्बुजयुगममलं भक्तिमार्गे प्रसन्नं
भक्तोत्पन्नं प्रभुत्वं परगुणनमितं चारुमञ्जीरहारम् ।
हंसाकारं प्रगल्भं बलधरगरुड़ानन्दपृष्ठे निषण्णं
बन्धूकारक्तसारान्वितचरणतलं सर्वदा शान्तभावम् ॥ १३ ॥
राधिकायाः प्रेमसिद्धं नववयसि गतं गीतवाद्यानुरक्तं
रागोत्पन्नं जनानां सुसकलगुणदं गोकुलानन्दचन्द्रम् ।
वाणीलक्ष्मीप्रियं तं त्रिभुवनसुजनाह्लादकर्त्तारमाद्यं
वन्दे सिद्धान्तसारं गतिनतिरहितं शारसङ्केतितान्तम् ॥ १४ ॥
कामं कामात्मकं तं विधुगतशिरसं कृष्णसम्बोधनान्तं
बीजं कामं पुनस्तत्पृथुलसुरतरुं भावयित्वा भवेऽहम् ।
श्रीकृष्णं कृष्णकृष्णं निरवधिसुखदं सुप्रकाशं प्रपन्नं
स्वाधिष्ठानाख्यपद्मे मनसि गतभये सिद्धसिद्धिप्रकाशम् ॥ १५ ॥

पाकाशि चारुपद्मे सरभसदलगं रक्तवर्णं प्रकाण्डम्
पाकाराम्ं नरेन्द्रं सकलरतिकरं कंसहन्तारमादिम् ।
पाद्यन्तस्थानुहीनं विधिहरगमनं सेन्द्रनीलाभनीलं
भावोल्लासहत्रिवर्गस्थितिपरमपरं भावये भावसिद्धैः ॥ १६ ॥
सर्वेषां ज्ञानदानं रसदलकमले सर्वदा त्वं करोषि
क्षेमानन्दं सुधादिप्रियधनगुणिलासिकयोगप्रधानम् ।
मायापूर्णो ह्यमायो प्रचयनपरमः प्रातिदेशः प्रवेशः
श्रीवर्ज्यं क्षेमहीने मयि धनरहिते दृष्टिमात्रं ददस्व ॥ १७ ॥
कालीश्रीकण्ठनाख्याः परमहविगतं तारकब्रह्मरूपं
मुक्तिच्छत्रे वसन्तं कटिधृतवसनं भार्यया क्रीड़यन्तम् ।
संसत्क्षेत्रप्रदेशे लयवधकरकं दूरसंस्थाभिषेकम्
ध्यात्वाहं स्तौमि भावैः स्थिरदलकमले संस्थितं निश्चलं तम् ॥ १
वैकुण्ठं कृष्णमीड़े गुरुभयहरणं व्याधिहन्तारकं तं
शान्तानां ज्ञानगम्यं स्तनयनकमले पालयन्तं विसर्गम् ।
पापारिं पूतनारिं दशकनरकशान्तसंहारशूरं
शान्तं लोकेषु सर्वेष्वतिमधसकलं केवलं निर्मलञ्च ॥ १८ ॥
ओङ्कारं कारणाख्यं सुगतमतिमतां मातृकायन्त्रसिद्धं
सिद्धानामादिसिद्धं सुररिपुशमनं कालरूपं रिपूणाम् ।
मूलोर्द्ध्वे षड्दलान्ते मनसि सुविमले पूजयित्वा मुकुन्दं
नित्यं सम्भावयेऽहं निजतनुदलके सिद्धये लोकमध्ये ॥ २० ॥

* * *

त्वां साक्षादखिलेश्वरं प्रियकरं श्रीलोकहस्तार्चितम् ॥ २१ ॥
क्षोणीशः प्रलयात्मकः प्रतिगुणी ज्ञानी त्वमेको महान्
यद्येवं मम पामरस्य कलुषं श्रीधर्महीनान्वितम् ।
हत्वा तत् सकलं कृपागुणतया मुक्तिं विदेहि प्रभो !
कृत्वा पादतले मदीयनियतिं व्याचक्ष रक्षात्मक ! ॥ २२ ॥

राधाकृष्णपदासनाम्बुजदलं चैतन्यसूत्त्वाकुलं
सर्वत्रादिगमागमं त्रिगमनं निर्वाणमोचाश्रयम् ।
बालं वैरिविनाशनं सुखमयं कैवल्यमोचास्पदं
देवं देवगणार्चितं रसदले चारोपयामि प्रभो ! ॥ २३ ॥
निर्दिष्टं भुवनाश्रयं यदुपतिं निर्वाणमोचास्पदं
निर्वाणादिकदानकातरतरं श्रीवत्सलासङ्कुलम् ।
हंसारूढनिरीक्षणं क्षणगतं वाणीपतिं भूपतिं
वाञ्छाकल्पलतापतिं कुलपतिं दीक्षापतिं गोपतिम् ॥ २४ ॥
प्रभो ! निःसङ्केतं गुणमणियुतं श्रेयसि गतं
मतान्तस्थं सुस्थं विगलितमहाप्रेमसुरसम् ।
सदानन्दं कृष्णं हरकरतलाम्भोजमहितं
प्रभापुञ्जं साराश्रयपदकटं कामकुशलम् ॥ २५
महामन्त्रच्छायं रजनिमिलितं ध्वान्तजडिलं
त्रिकोणस्थं कुस्थं कुगतिसुगतिं कारणगतिम् ।
जीवानां संस्थानं जगति जगतां धर्ममुदयं
रमेशं वाणीशं विधिगतपदं शम्भुनिलयम् ॥ २६ ॥
त्रिकालं योगानां नयनकमलं शब्दनिरतं
कुलानन्दं गोपीजनहृदयरागं गोप्रमहितम् ।
निधानं त्वामिन्द्रं गुरुतरसुरेन्द्रं सुररिपुं
मुदा त्वां वन्देऽहं नियतचपलं भावगदितम् ॥ २७ ॥
कुलानां हि श्रद्धामयमखिलसिद्धिप्रदमजं
मनोऽतीतं गीतं सुरनरवरैः शास्त्रभवनम् ।
विनोदं नारीणां हृदयरसिकं शोकरहितं
निधानं यज्ञानां हितशतगुणं यामि शरणम् ॥ २८ ॥
एतत् सम्बन्धसानो मयकुलशिरसि स्थायिनां गोष्पते हि
गोपीनां प्राणनाथः प्रतिदिनमनिशं भालदेशं प्रपायात् ।

भालाधोदेशसंस्थः समवतु सहसा राजराजः सुरेशः
स्थित्यन्तेशस्त्रिनेत्रः सुखमखिलभवं कण्ठदेशादिसर्वम् ॥२९॥
पृष्ठस्थं पातु शौरिः प्रतिदिनममरो लिङ्गवाह्यं कटिस्थं
शम्भुप्रेमाभिलाषी मम तु कुलपदं गुह्यदेशं प्रपायात् ।
आनन्दोद्रेककारी सकलतनुगतं पातु नित्यं सुरारि-
र्दैत्यारिर्योरुमूलं न्टहरिरवतु मे जङ्घया पादपद्मम् ॥ ३० ॥
एतत् स्तोत्रं पठेद्विद्वान् नियतो भक्तिमान् शुचिः ।
स्थिरो भवति मासेन षड्दले सर्वसिद्धिभाक् ॥ ३१ ॥

इति श्रीरुद्रयामले उत्तरतन्त्रे महातन्त्रोद्दीपने सिद्धमन्त्रप्रकरणे षट्चक्रप्रकाशे भैरव-भैरवीसंवादे श्रीकृष्णस्तवकवचं नाम एकोनचत्वारिंशः पटलः ॥ ३९ ॥

चत्वारिंशः पटलः ।

श्रीआनन्दभैरव उवाच ।—

अथ नाथ ! प्रवक्ष्यामि शृणुष्वावहितो मम ।
येन क्रमेण लोकानां योगकार्य्यं दृढं भवेत् ॥ १ ॥
सर्वत्र भावनाग्रस्तः सिद्धो भवति भैरव ! ।
यो भजेद्भैरवं देव भुवने सर्वगो हि सः ॥ २ ॥
क्रियादक्षो महावीरो वीरवल्लभभावकः ।
भावयित्वा वर्णमाला-मध्ये जप्त्वा दिवानिशम् ॥ ३ ॥
हविष्याशी प्राणवायु-रतो वेदान्तपारगः ।
सिद्धान्तवेत्ता सर्वेषां शास्त्राणां निर्णये पटुः ॥ ४ ॥
गाथाज्ञानी परानन्दो विवेकी स भवेत् परः ।
भाववेत्ता रहस्यार्थ-ज्ञानी कोविदवेदवित् ॥ ५ ॥
वाक्सिद्धश्च ज्ञानपरः सत्यवादी दृढासनः ।
भावयेत् षड्गतं वर्ण-ध्यानं कुर्य्यात् पृथक् पृथक् ॥ ६ ॥

षट्पद्मस्थो भावयेद्दै षड्वर्णध्यानपूर्वकम् ।
वादिनां व्रात्तरं ध्यायेन्मद्दाविद्यानिषेवकः ॥ ७ ॥
विकारं सौन्दर्यं स्वकिरणमयं भाव्यमतुलं
मुकुन्दं श्रीभक्तिप्रियरमणकं पूर्वदलगम् ।
विशिष्टज्ञानान्तं सुरवरनतं कार्त्तिकिरणं
विभाव्य श्रीलक्ष्मीं गमयति परं कालपुरुषम् ॥ ८ ॥
हिरण्यश्रीनाथं सुखयति भकारं रसदले
त्रिकोणं पार्श्वस्थात् चपलशतकं शम्भुनिलयम् ।
महारक्ताकारं तरुणविगतं भौममतुलं
कुलागारस्थानं कुलरमणिवज्रायुतमिति ॥ ९ ॥
यदा ध्यायेत् ज्ञानी निरवधि सुदा शोकविरहं
त्रिलोकानां स्थानं भुवनशरणं ध्येयपरमम् ।
महामोहद्वारे भवति स महान् सर्वजडितो
विलासी सर्वेशां नवनववधूनां प्रियपतिः ॥ १० ॥
महाकालस्थानं भुवनशरणं भावयति यः

* * * *

मकारं व्याहृत्य क्षितिलयकरं कोटिगुणितम् ॥ ११ ॥
त्रिकोणादच्चाङ्के निगमनमनोयोगजडितो
विनोदी सौख्यानां सुरतरुसमानो भुवि भवेत् ।
मकारं यो ध्यायेदमरपदवी तस्य नियतं
महावाणीनाथः प्रणयजडितस्तस्य निलये ॥ १२ ॥
मुकुन्दानन्दाख्यं पवनमिलितं कामकरणं
सदा ध्यात्वाऽकामी भवति नितरां कामविषयी ।
महाग्नेः संस्थानं परजननिधनं सूर्यशतकं
सदानन्दं ध्यायेत् परमधनदं यत्नसुधया ॥ १३ ॥
सुधापानज्ञानी हवनकरणं काम्यफलदं

प्रियं तद्देवत्याः कमलभुजगेन्द्रार्चितपदम् ।
त्रिकोणाम्भोजस्थं विधिहरिहरस्य श्रियमितो
विधानं वह्नीनां कुलविमलबीजं सकरुणम् ॥ १४ ॥
असंख्यानाखण्डं खगगणमनोरञ्जनपरं
यदि ध्यायेदेको विविधविभवं याति सहसा ।
महेन्द्रं स्थानाङ्गं कमलसुखदं क्षणनिलयं
प्रियं सिद्धिचिन्तं परसुखमयं भावयति यः ॥ १५ ॥
नकारं चन्द्रस्थं विधुशतकरं बिन्दुनिलयं
विशालाक्षीयोगधामधुरवचनालापकलितम् ।
महादेवीतुष्टं सकलकरणं शापहरणं
विभाव्य श्रीनाथं भजति स नरो ध्याननिपुणः ॥ १६ ॥
ततो ध्येया महाविद्या राकिणी शक्तिरुत्तमा ।
श्रीविष्णुसहिता नित्यं योगैर्भोगविवर्जितैः ॥ १७ ॥
अकलङ्की कुलानन्दो मन्दहास्यावृतो महान् ।
स योगी परमं राज्यं प्राप्नोति नात्र संशयः ॥ १८ ॥
यावत् मूलाधारयोगं तावदुद्यमादिकं प्रभो ! ।
यमनियामने काले जपं पद्मासनान्वितम् ॥ १९ ॥
तावत् कुर्य्यात् महादेव ! यावत्तत्सिद्धिमाप्नुयात् ।
यदि पद्मासने सिद्धिस्तदा मायादिसिद्धिभाक् ॥ २० ॥
पद्मासनैः सिद्धिकाले प्राणादिवायुपञ्चकम् ।
धृत्वा धृत्वा पुनर्धृत्वा कुम्भयेदनिशं शनैः ॥ २१ ॥
शरीरे निर्मले याते वायोर्निर्मलता भवेत् ।
सर्वरूपो महावायुर्निर्मलात्मानमात्मनि ॥
सिद्धिं ददाति योगेश ! यदि स्वं कार्य्यमाश्रयेत् ॥ २२ ॥

इति श्रीरुद्रयामले उत्तरतन्त्रे महातन्त्रोद्दीपने सिद्धमन्त्रप्रकरणे
भैरव-भैरवीसंवादे षड्दलवर्णप्रकाशो नाम
चत्वारिंशः पटलः ॥ ४० ॥

एकचत्वारिंशः पटलः ।

आनन्दभैरव्युवाच ।—

कृतान्तसंहारविहारभोग-रसाप्लुतं श्रीकर ! शङ्कर ! प्रभो ! ।
तवाज्ञयाहं कथयामि सिद्धये ममागमानन्दवशादि तन्त्रम् ॥१॥
प्रेमाभिलाषी सुजनो मुनीन्द्रो जानाति तन्त्रार्थमनन्तसाधनम् ।
महाप्रभावस्मरणात्सुभक्तो गोविन्दशम्भोर्यदि भक्तिमान् जनः ॥२॥
षट्चक्रभेदार्थविशेषसाधनं जानाति यो वै स जनोऽतिदुर्लभः ।
स एव संसारनिषेधसाधकः सदा विचिन्त्याचलभक्तिमाप्नुयात् ॥३॥

आनन्दभैरव उवाच ।—

यदि मे कथिता कान्ते ! षड्दलप्रक्रिया शुभा ।
राकिण्या मिलनं देव्याः कुण्डलिन्याः पराक्रमम् ॥ ४ ॥
सार्द्धं श्रीविष्णुना काल-रूपिणा बहुरूपिणा ।
शुद्धनिर्मलसत्त्वेन परिवारगणैः सह ॥ ५ ॥
न तद्धि कथितं सर्वं श्रीकृष्णस्य प्रकाशकम् ।
स्तवनं किल राकिण्या सहितं कृष्णसाधनम् ॥ ६ ॥
मङ्गलं परमं ब्रह्म-साधनं ज्ञानवर्द्धनम् ।
कृष्णप्रकाशस्तवनं राकिणीशक्तिसंयुतम् ॥ ७ ॥
कथयस्व महाकालि ! यदि स्नेहोऽस्ति मां प्रति ।
अत्यन्तगुह्यकथनं सहस्रनाममङ्गलम् ॥ ८ ॥
अष्टोत्तरं महाविष्णो राकिण्या सहितं प्रिये ! ।
इदानीं राकिणीस्तोत्रं वद भाविनि कामदे ! ॥ ९ ॥

श्रीआनन्दभैरव्युवाच ।—

योगीन्द्र ! परमानन्द सिद्ध ! श्रीचन्द्रशेखर ! ।
शृणुष्व राकिणीस्तोत्रं परमानन्दवर्द्धनम् ॥ १० ॥
सर्वत्र सुखदं प्रोक्तं सिद्धानामपि साधनम् ।

एतत्स्तोत्रस्य पाठेन योगी योगीन्द्रभाग् भवेत् ॥ ११ ॥
वैष्णवीसाधने यस्तु पश्चाचारं करोति वा ।
सर्वेषां साधनोत्कृष्टं जातिभ्रष्टोऽपि नो भवेत् ॥ १२ ॥
समता शत्रुमित्रेषु कर्माकर्मसु तत्त्ववित् ।
वैष्णवावेशवे नाथ ! समभावः प्रजायते ॥ १३ ॥
पश्चाचारक्रमेणैव सिद्धो भवति नान्यथा ।
राधादिगोपीवृन्दैश्च गोपिकाभिः समन्वितः ॥ १४ ॥
पश्चाचारं मुदा कृत्वा सर्वदां परिपालनम् ।
चकार कमलानाथोऽतः पश्चाचारमाश्रयेत् ॥ १५ ॥
पश्चाचारक्रमेणैव चैतन्यकुण्डली भवेत् ।
कृष्णचैतन्यहेतोश्च राकिण्याश्च तथा प्रभो ! ॥ १६ ॥
चैतन्याय षड्दलस्थ-देवचैतन्यहेतुना ।
कुण्डलीमधुराकिण्याः स्तोत्रं शृणु कुलार्णव ! ॥ १७ ॥

राकिणीस्तोत्रम् ।—

आन्दोलिता रसनिधौ कुलचञ्चला या
माया महोरुकलदुःखविनाशशोभा ।
सम्यग्विलासउगता सुलभा मुनीनां
भव्या प्रपातु भविका कुलराकिणी माम् ॥ १८ ॥
आनन्दसिन्धुजडिताखिलसारपारा
बाला कुचाग्रनमिता दलषट्कुलस्था ।
काली कलानलगुणा धनदा धनस्था
कृष्णेश्वरी समुदयं कुरु राकिणि मे ॥ १९ ॥
या राकिणी त्रिजगतामुदयाय चेष्टा
संज्ञामयी कुलपरा कुलवक्त्रभस्था ।
विश्वेश्वरी स्मरहराप्रियकर्मनिष्ठा
कृष्णप्रिया मम सुखं परिपातु देवी ॥ २० ॥

षड्वर्गनाथकरपद्मनिषेविता या
राधेश्वरी प्रियकरी सुरसुन्दरी या ।
माता कुलेशजननी जगतां सदैव
विद्या परादिसुखदावतु मे शरीरम् ॥ २१ ॥
गोविन्दरामरमणी वनमालिनी या
वाक्येश्वरी स्मरहरा नवकामिनी या ।
मे षड्दलाश्रितगुरुं परिपातु नित्यं
श्रीकुण्डली कुलपरा कुलवृन्दवन्द्या ॥ २२ ॥
श्रीहासिनी सुविमला कुलराकिणी या
श्रीसुन्दरी कुलपरा रतिकामतीर्था ।
श्रीदामिनी कुलगणामलभावदात्री
नित्यं प्रपातु विषयं कुलषड्दलानाम् ॥ २३ ॥
चैतन्यदाननिरतां त्रिगुणाभिरामां
नीलाचलस्थितिकरां वरदानहस्ताम् ।
श्रीकृष्णरामकमलोपरि पूजयामि
तां राकिणीं विरमणीं शमनापहन्त्रीम् ॥ २४ ॥
पद्मासनां श्रुतिभुजां गुरुजामनन्तां
शान्तां षडम्बुजदलोपरि पूजयामि ।
शान्तिस्थितां कपटकोपविनाशमुक्तां
रम्यां शिवां परमवैष्णवपूजिताङ्घ्रिम् ॥ २५ ॥
राकासुधां वरमयीं जगतां गुणस्थां
धर्मार्णवां रसदले परिपूजयामि ।
कर्त्रीं परां सकरुणां रमणीं विसर्गा-
माह्लादिनीमतिदयामममलार्धविन्त्राम् ॥ २६ ॥
भ्रान्तिं भ्रमाद्यपहरां स्मृतिमूलपूज्यां
भार्य्यां हरेरतिसुखां परिपूजयामि ।

या कातरं निरवधि प्रलयेऽपि रक्षेत्
वागीश्वरी भगवती नतिकोटिनम्रम् ॥ २७ ॥
सा राकिणी प्रकृतितेजसि रक्तवर्णा
मायामयी सुरकला किल पातु मेऽङ्गम् ।
कल्पद्रुमाश्रयलता फलरूपिणी या
भर्गस्थिता निखिलसिद्धगणैर्नमस्या ॥ २८ ॥
सा मे कुलेश्वररसं हरिहस्तपूज्या
क्षान्तिः सदा मम धनं परिपातु राधा ।
क्षेमङ्करी वरकरी सुकरी हरिस्था
या शोकरी भयकरी त्रिपुरा महेशी ॥ २९ ॥
वायुस्थिता लयमयी स्थितिमार्गसङ्गा
भङ्गप्रिया सुवसना परिपातु राधा ।
श्रीकृष्णचित्तहरणे कुशला रसज्ञा
रासेश्वरी शुभकरी जगदम्बिका सा ॥ ३० ॥
मन्त्रस्था जयदा सुदा कुमुदिनी भालं भ्रुवोरन्तरं
विद्यावाग्भवकुण्डलीफणबला बाला च नेत्रत्रयम् ।
गण्डं चण्डसरस्वती श्रुतियुगं कैलासशृङ्गस्थिता
घ्राणं मे घटवासिनी शशिमुखी सूक्ष्मातिसूक्ष्माशया ॥ ३१ ॥
जिह्वाग्रं चिबुकं रदानधिमहाकण्ठं गलं स्कन्धकं
स्कन्देशी दशनप्रभामलमतिर्वैकुण्ठधामेश्वरी ।
नानावर्णविलासिनी मदुरसं शम्भोर्भवानी शिवा
पृष्ठं कूर्मसुपृष्ठका गतिकरी नित्यां नृणां भास्वती ॥ ३२ ॥
सर्वं मे कुलमालिनी मम कटिं लिङ्गं नितम्बाम्बरं
कामाख्या धनदायिनी सकरुणा पादद्वयं पातु सा ।
मातृक्रोधनिवारिणी मम शिवं षट्पत्रशोभाकरं
पातु श्रीमृदुहासिनी कुलतरुं गौरी परानन्ददा ॥ ३३ ॥

चैतन्यस्थलवासिनी हृदि गता गोविन्दसुप्तिस्थला
चैतन्यं सततं प्रपातु तरुणी धात्री परचैत्रगा।
मध्या पिङ्गललोचनाम्बुजमुखी चैतन्यकर्मप्रिया
मां सर्वत्र शुभङ्करी सुनियतं शक्तिः क्षमाकर्त्तृका ॥ ३४ ॥

* * * *

कीर्त्तिस्था मम कीर्त्तिचक्रनिलयं लाक्षारुणा वल्लरी
लीलाङ्कनिवासिनी मम सदा जीवं मुदा पातु सा ॥ ३५ ॥

एतत् स्तोत्रं पठेन्नित्यं प्राणवायुधरः शुचिः।
षट्चक्रभेदसमये सदा पाठ्यं सुयोगिभिः ॥ ३६ ॥
कुलविन्यासरूमये कुलचक्रप्रवेशने।
अवश्यं प्रपठेद्विद्वान् राकिणीराधिकास्तवम् ॥ ३७ ॥
त्रिसन्ध्यं श्रद्धया जप्त्वा पठित्वा च पुनः पुनः।
ततो भावपरो भूत्वा मुच्यते भवबन्धनात् ॥ ३८ ॥
अचलां भक्तिमाप्नोति विश्वासित्वो यथा वशी।
पठनात् पामरो याति ब्रह्मलोकं कुलाधिप ! ॥ ३९ ॥
एतत् पठनमात्रेण शीतलो गुणवान् भवेत्।
अप्रकाश्यमिदं स्तोत्रं सर्वानृतविनाशनम् ॥ ४० ॥
समभावं समाश्रित्य जीवन्मुक्तो भवेद्वशी।
पश्चाचाररतो भूत्वा साधयेद् यदि साधनम् ॥ ४१ ॥
कुण्डलीयोगकाले च कुलाचारं न वर्जयेत्।
कुलाचारवर्जनेन महाहानिः प्रजायते ॥ ४२ ॥
ब्राह्मणः क्षत्रियो वापि वैश्यो वा शूद्र एव च।
समभावं मुदा कृत्वा कुलाचारं समाश्रयेत् ॥ ४३ ॥
कुण्डली पृथिवी देवी राकिणी स्वाधिदेवता।
तद्देहगामिनी देवी राधिका चाद्यकामिनी ॥ ४४ ॥
अस्याः साधनकाले च समयाचारमाश्रयेत्।

समभावे महामोक्ष इति तन्त्रार्थनिर्णयः ॥
समभावार्थकथनं त्यक्त्वा योगी भवेत् कुतः ॥ ४५ ॥

इति श्रीरुद्रयामले उत्तरतन्त्रे महातन्त्रोद्दीपने सिद्धमन्त्रप्रकरणे षट्चक्रप्रकाशे भैरव-भैरवीसंवादे स्वाधिष्ठानराकिणीस्तोत्रं नाम एकचत्वारिंशः पटलः ॥ ४१ ॥

द्विचत्वारिंशः पटलः।

श्रीआनन्दभैरव्युवाच।—

राकिणीसाधनम्।—

कथयामि महाकाल ! परमाद्भुतसाधनम्।
कुण्डलीरूपिणीदेव्या राकिण्याः कुलवल्लभ ! ॥ १ ॥
मानसं द्रव्यमानीय चाथवा बाह्यद्रव्यकम्।
अनन्तेष्टदेवं चित्तस्थं पूजयेत् सावधानतः ॥ २ ॥
भक्त्या जपेन्मूलमन्त्रं मानसं सर्वमेव च।
पूजयित्वा ततो जप्त्वा होमं कुर्यात् परामृते ॥ ३ ॥
समांसैः पक्वनैवेद्यैः सुगन्धिकुसुमैस्तथा।
स्वयम्भूकुसुमैर्नित्यमर्घ्यं कृत्वा निवेदयेत् ॥ ४ ॥
सुमुखं पूजयेन्नित्यं मधुमांसेन शङ्कर !।
एवं श्रुत्वा पुनर्ध्यात्वा प्राणवायुर्ग्निसङ्गमैः ॥ ५ ॥
भ्रामयित्वा मनोराज्ये स्थापयित्वा पुनः पुनः।
पुनरागम्यगमनं कारयित्वा सुमेलनम् ॥ ६ ॥
वाचयित्वा सुवाणीभिर्याचयित्वाऽऽसवादिकम्।
तर्पणञ्चाभिषेकञ्च केवलासवमिश्रितैः ॥
मांसैर्मुद्रादिभिर्मत्स्यैः सारद्रव्यैः सपिष्टकैः ॥ ७ ॥
घृतादिसुफलैर्वापि यद्यदायाति कौलिके।
तत्तद्द्रव्यैः साधकेन्द्रो नित्यं सन्तर्प्य संजपेत् ॥ ८ ॥

राकिणीमन्त्राः ।—

ओं महाकालकृष्णेन्द्रनीलमणिनिभ राकिणीवल्लभ कुण्डली महावीर-राकिणीकेशवस्य मां रक्ष रक्ष दात्रे नमः ।

क्रां क्रीं क्रं क्रं क्लीं श्रीं रां रीं रूं रें रैं रों रौं रं रः स्वाहा ।

परमवैष्णवो महाभैरवो महाविष्णुः कुलदेवता परजन-निष्फल पुरुषोत्तम वासुदेव हृषीकेश केशव नारायण दामोदर पद्मचूड़ चतुर्भुज शङ्खचक्रगदाधर राकिणी सूक्ष्मा कुलकुण्डली राधिका वाञ्छादेवता श्रीश्रीविद्याचैतन्यानन्दमयी विश्वव्यापिका जगन्मोहिनी मूलात् प्रभृति षड़ाधारभेदिनी बन्धनाकारप्रका-शिनी मनोभवा मां मां मांसरुधिरादिशरीरपरिवारादिकं पालय गोपय गोपय स्थापय स्थापय शत्रून् घातय श्रीं ह्रौं ह्रौं स्त्रौं स्त्रौं घं सकल क्रौं सकल क्रीं श्रीं जुहोमि नमोनमः स्वाहा ।

एतन्मन्त्रं पठित्वा च तर्पणञ्च समाचरेत् ।
तर्पणान्ते चाभिषेकं सदा कुर्य्याच्च तान्त्रिकात् ॥ ९ ॥
मूलान्ते चाभिषिञ्चामि नमः स्वाहा पदं ततः ।
ततो हि प्रणमेद्भक्त्या अष्टाङ्गनतिभिः प्रभो ! ॥ १० ॥
सहस्रनाम्ना स्तवनं पुण्येनाष्टोत्तरेण च ।
अङ्गाङ्गं राकिणीयुक्तं राकिणीकेशवस्तवम् ॥ ११ ॥
शृणु तत् सकलं नाथ ! यत्र श्रद्धा सदा तव ।
श्रवणार्थं बहुक्तं तत् कृपया ते वदाम्यहम् ॥ १२ ॥
एतत् श्रवणमात्रेण सर्वपापक्षयो भवेत् ।
राकिणीमङ्गलं नाथ ! स्तवनं नाम पावनम् ॥ १३ ॥
ये पठन्ति धियाचारश्रद्धया वा पुनः पुनः ।
तस्य सर्वपापराशिः क्षयं याति कुलादिह ॥ १४ ॥
काले काले महावीरो भवत्येव हि योगिराट् ।
संसारोत्तारणे युक्तो महाबलपराक्रमः ॥ १५ ॥

श्रीकृष्ण-राकिणी-सहस्रनामानि ।—

अस्य श्रीमदानन्दकुलमङ्गल कालकाल सुन्दर कृष्णमुकुन्द नारायण राकिणी कुलकुण्डलिनी मिलन सर्वसाधननिष्पत्तये परममोक्षाय नित्यसुखाय योगसिद्धये अष्टोत्तरसहस्रनाम्नः स्तोत्रस्य गणेशकुलगणाधिपतिर्ऋषिर्बृहतीच्छन्दः श्रीमत्कृष्ण-महाकालपुरुषोत्तम कुलकुण्डलिनी राधा राकिणी देवता षड्दलाधारादि प्रकाश षट्पद्मसिद्ध्यर्थे विनियोगः ।

ओं श्रीकृष्णो महामाया यादवी देवराकिणी ।
गोविन्दो विश्वजननी महाविष्णुर्महेश्वरी ॥ १६ ॥
मुकुन्दो मालतीमाला विमलो विमलाकृतिः ।
रमानाथो महादेवी महायोगी प्रभावती ॥ १७ ॥
वैकुण्ठो देवजननी दहनो दहनप्रिया ।
दैत्यारिर्दैत्यमथनी मुनीशो मौनभाविता ॥ १८ ॥
नारायणो जलाच्छन्ना वरुणो वरुणामयी ।
हृषीकेशः कौशिकी च केशवः केशिघातिनी ॥ १९ ॥
किशोरस्यापि कैशोरो महाकालो महाकला ।
महायज्ञो यज्ञहन्त्री दक्षेशो दक्षकन्यका ॥ २० ॥
महाबली महाबाला बालको देवबालिका ।
चक्रधारी चक्रकरा चक्रकृच्चक्रमर्दका ॥ २१ ॥
अमरो युवती भीमोऽभया देवी दिविस्थिता ।
श्रीकरो हि देवेशदा वैद्यो योगिकुलस्थिता ॥ २२ ॥
समयज्ञो मानसज्ञा क्रियाविज्ञः क्रियाऽन्विता ।
अक्षरो वनमाला च कालरूपी कुलाक्षरा ॥ २३ ॥
विशालाक्षो दीर्घनेत्रा जयदो जयवाहना ।
शान्तः शान्तिकरी श्यामो विमलश्यामविग्रहा ॥ २४ ॥
कमलेशो महालक्ष्मीः सत्यः साध्वी शिशुः प्रभा ।

विद्युन्नाकारवदनो विद्युत्पुञ्जनिभोदरा ॥ २५ ॥
नाथेश्वरो राकिणी च कुलदेवः कुलामरा ।
दक्षिणो दक्षिणश्रीदा क्रियादक्षो महालया ॥
विशिष्टगमनो विद्या विद्येशो वाक् सरस्वती ॥ २६ ॥
अतीन्द्रियो योगमाता रणेशो रणपण्डिता ।
कृतात्मको बालकृष्णा कामनीयः सुकामना ।
अनन्तोऽनन्तगुणदा वाणीनाथो विलक्षणा ॥ २७ ॥
गोपालो गोपवनिता गोपो गोपकुलात्मजा ।
मानी मानकरोल्लासा मानवो मानवात्मजा ॥
सर्वहन्तो मोहिनी च मायी मायाशरीरजा ॥ २८ ॥
अरूपो रजोदेहस्था गरुडस्थो हि गारुडी ।
सत्यप्रियो रुक्मिणी च सत्यगाणोऽनृतापहा ॥ २९ ॥
सत्यकर्मा सत्यभामा सत्यरूपो विसत्यदा ।
शशीशो विधुवदना कृष्णवर्णो विशालधीः ॥ ३० ॥
त्रिविक्रमो विक्रमस्था क्षितिमार्गो क्षितिप्रिया ।
श्रीमाधवो माधवी च मधुहा मधुसूदनी ॥ ३१ ॥
वैकुण्ठनाथो विकला विवेकस्थो विवेकिनी ।
विवादस्थो विवादेशा कुम्भकः कुम्भकारिका ॥ ३२ ॥
सुधापानः सुधारूपा सुधेशो देवमोहिनी ।
प्रक्रियाधारको धन्या धन्यार्थो धन्यविग्रहा ॥ ३३ ॥
धरणीशो महाऽनन्ता सानन्दो नन्दनप्रिया ।
अप्रियो विप्रियहरा विप्रपूज्यो द्विजप्रिया ॥ ३४ ॥
कान्तो विधुमुखी वेद्यो विद्या वागीश्वरोऽरुणा ।
अकामी कामरहिता कामी विलक्षणप्रिया ॥ ३५ ॥
पुण्डरीको विकुण्ठस्था वैकुण्ठो बालभाविनी ।
पद्मनेत्रः पद्ममाला पद्महस्तोऽम्बुजानना ॥ ३६ ॥

पद्मनाभः पद्मनेत्रा पद्मस्थः पद्मवाहना ।
वासुदेवो हृदगर्भा महामानी महाञ्जना ॥ ३७ ॥
कारुण्यगर्भः करुणात्माऽऽकाशाख्यो विभातिजा ।
तेजोराशिस्तैजसी च भयाच्छन्नो भयप्रदा ॥ ३८ ॥
उपेन्द्रो वर्णजालस्था देवरूपो विमानगा ।
नगेन्द्रस्थो नागिनी च नगेशो नागनन्दिनी ॥ ३९ ॥
सार्वभौमोऽमला कालो नगेन्द्रो नन्दिनी शुभा ।
कामदेवाश्रयो माया मित्रस्थो मित्रवासना ॥ ४० ॥
मानभङ्गकरो राका रावणारिः प्रियाप्रिया ।
रिपुहा राकिणी माता सुमित्रा मित्ररक्षका ॥ ४१ ॥
कालान्तः काहला देवः पीतवासाम्बरप्रिया ।
पापहर्ता पापहन्त्री निष्पापः पावनाशिनी ॥ ४२ ॥
परमानन्दजो मीना मीनरूपी मलापहा ।
इन्द्रनीलमणिश्यामो महेन्द्रनीलरूपिणी ॥ ४३ ॥
नीलकण्ठप्रियो दुर्गा दुष्टदुर्गतिनाशिनी ।
त्रिकोणमन्दिरः श्रीदा विमायो मन्दिरस्थिता ॥ ४४ ॥
मकरन्दरसोल्लासो मकरन्दरसप्रिया ।
दारुणाधिनिहन्ता च दारुणारिविनाशिनी ॥ ४५ ॥
कालः कालफलार्थी च काली कालफलावहा ।
कालसेवस्थितो रौद्री व्रतस्थो व्रतधारिणी ॥ ४६ ॥
विशालाक्षो विशालाक्षी चमत्कारो वरोत्तमा ।
लकारस्थो लाकिनी च लाङ्गली लोलकान्विता ॥ ४७ ॥
नाकस्थो नाकपदका नाकाक्षी नाकरक्षका ।
कामगो कामसम्बन्धा विशोधको विशोधिका ॥ ४८ ॥
सामवेदो सामसन्ध्या सामगो मांसभक्षिणी ।
सर्वभक्षो सर्वभक्षा वेदस्थो वेदपालनी ॥ ४९ ॥

रात्रिकारी महारात्रिः कालरात्री महानिशा ।
नानादोषहरो माता मारहन्ता स्मरापहा ॥ ५० ॥
चन्दनाङ्गी नन्दपुत्री नन्दपालो विलोपिनी ।
मुद्राकारी महामुद्रा मुद्रितो मुद्रिकारतिः ॥ ५१ ॥
शाक्तो लाक्षा वेदलाक्षी लोपामुद्रा मनोहरा ।
महाज्ञानधरी ज्ञानधीरा मानहरोऽमरा ॥ ५२ ॥
सत्कीर्त्तिस्थो महाकीर्त्तिः कुलाढ्यः कुलकीर्त्तिका ।
आशावासी वासना च कुलवेत्ता सुगोपिता ॥ ५३ ॥
अश्वत्थवृक्षनिलयो वृक्षमारनिवासिनी ।
नित्यवृक्षो नित्यलता कृतः कृतपदाश्रिता ॥ ५४ ॥
कल्पवृक्षः कल्पलता सुकालः कालभक्षिका ।
सर्वालङ्कारभूषाढ्यः सर्वालङ्कारभूषिता ॥ ५५ ॥
अकलङ्की निराहारा दुर्निरीक्षो निरापदा ।
कामकर्त्ता कामकान्ता कामरूपो महाजवा ॥ ५६ ॥
जयन्ती जयजयन्ती जयाख्यो जयदायिनी ।
त्रिजीवनी जीवमाता कुशलाख्यो त्रिसुन्दरा ॥ ५७ ॥
केशधारी केशिनी च कालजः कामजाश्रदा ।
किङ्करस्थो विकारस्था मानसज्ञो मनोक्षिणी ॥ ५८ ॥
मिथ्याहरो महामिथ्या मिथ्यासर्गी निराकृतिः ।
नागयज्ञोपवीती च नागमालाविभूषिता ॥ ५९ ॥
नागाख्यो नागकुलपा नायको नायिकावधूः ।
नायकक्षेमदो नारी नारी नारायणप्रिया ॥ ६० ॥
किरातवर्णी रासज्ञा तारको गुणतारिका ।
शङ्कराख्यो रुजाक्रूरा कृपणः कृपणावती ॥ ६१ ॥
देशगो देशसन्तोषा दर्शी दर्शनवासिनी ।
दर्शनज्ञो दर्शनस्था दृगादिदष्टाऽसुरोऽसुरा ॥ ६२ ॥

सुरपालो देवरक्षा विरक्षी रक्षदेवता ।
श्रीरामः सेवासुखदा सुखदो व्योमवासिनी ॥ ६३ ॥
वृन्दावनस्थो वृन्दा च वृन्दावन्द्यो वृहत्तनुः ।
ब्रह्मरूपी त्रितारी च तारकाख्यो हि तारिणी ॥ ६४ ॥
तन्त्रज्ञस्तन्त्रविद्या च सुतन्त्रज्ञः सुतन्त्रिका ।
वृषः सुदृप्ता लोकानां तर्पणस्थो विलासिनी ॥ ६५ ॥
मथुरामन्दिररतो मथुरामन्दिरासना ।
मन्दिरो मन्दिरा देवी निर्मायी सा मायापहा ॥ ६६ ॥
श्रीवत्सहृदयो वत्सा वत्सलो भक्तवत्सला ।
भक्तप्रियो भक्तगम्या भक्तो भक्तिः प्रभुः प्रभा ॥ ६७ ॥
जरी जरा रवी रावा हविर्हेमा क्षमः क्षितिः ।
क्षोणीपो विजयोल्लासा विजयो जयरूपिणी ॥ ६८ ॥
जयदो जयदात्री च बलिपो बलिपालिका ।
कृष्णमार्जाररूपी च कृष्णमार्जाररूपिणी ॥ ६९ ॥
घोटकस्थो हयस्था च गजगो गजवाहना ।
गजेश्वरो गजाधारा गजो गर्जनतत्परा ॥ ७० ॥
गयासुरो गयादेवी गयदर्पी गयार्पिता ।
कामनाफलसिद्धार्थी कामनाफलसिद्धिदा ॥ ७१ ॥
धर्मदाता धर्मविद्या धर्मदो मोक्षदायिनी ।
मोक्षाश्रयो मोक्षकर्त्री नन्दगोपाल ईश्वरी ॥ ७२ ॥
श्रीपतिः श्रीमहाकाली किरणी वायुरूपिणी ।
वाय्वाहारी वायुमिष्टा वायुवीजो यशस्विनी ॥ ७३ ॥
जेता जयन्ती यागस्थो यागविद्या शिवः शिवा ।
वासवो वासवस्त्री च वासाख्यो वंशनिग्रहा ॥ ७४ ॥
आखण्डलो विखण्डा च खण्डस्थः खण्डमालिनी ।
खड्गहस्तो बाणहस्ता बाणगो बाणवाहना ॥ ७५ ॥

मिहान्तघ्नो सिद्धिदात्री धनस्थो धान्यवर्द्धिनी ।
लोकानुरागो रागस्था स्थितिस्थापकभावना ॥ ७६ ॥
स्थानभ्रष्टोऽपदस्था च शरच्चन्द्रनिभानना ।
चन्द्रोदयश्चन्द्रवर्णा चारुचन्द्रो रुचिस्थिता ॥ ७७ ॥
रुचिकारी रुचिप्रीता रुचिरा रुधिरप्रभा ।
राजराजो राजकन्या भुवनो भुवनाश्रया ॥ ७८ ॥
सर्वज्ञः सर्वतोभद्रा वाचालो लयघातिनी ।
लिङ्गरूपधरो लिङ्गा कलिङ्गः कनकेश्वरी ॥ ७९ ॥
केवलानन्दरूपाख्यो निर्वाणमोक्षदायिनी ।
महामेघो गाढमला नन्दरूपी महामला ॥
घोररूपो महामेघ-मालाश्यामलविग्रहा ॥ ८० ॥
वियद्व्यापको व्यापिका सर्वदेहे
महाशूरवीरो महाधर्मनीरा ।
महाकालरूपी महाचण्डरूपा
विवेकी विचिन्त्या कुलेशः कुलेशा ॥ ८१ ॥
सुमार्गी सुगीता शुचिः श्रीविनीता
महार्की वितर्का सुतर्कोऽतितर्का ।
क्षतीन्द्रो महेन्द्रा भगो भाग्यचन्द्रा
चतुर्थी महार्थी नगः कीर्त्तिचन्द्रा ॥ ८२ ॥
विशिष्टो महेष्टिर्मनस्वी सुतुष्टि-
र्महाषड्दलस्थो महासुप्रकाशा ।
गलच्चन्द्रधारोऽमृताक्लिन्नदेहा
गलत्कोटिसूर्यः प्रकाशाभिलाषा ॥ ८३ ॥
महाचण्डवेगी महाकुण्डधारा
महारुण्डखण्डो महामुण्डखण्डा ।
कुलाब्भ्रमचक्रसारः प्रकारा

कुलालो मलाकारचक्रप्रकारा ॥ ८४ ॥
कुलालक्रियावान् महाघोरखण्डा
कुलालक्रमज्ञो भ्रमज्ज्ञानखण्डा ।
प्रतिष्ठः प्रतिष्ठा प्रतीक्षः प्रतीक्षा
महाक्षो महाक्षा सुकालोऽतिदीक्षा ॥ ८५ ॥
महापद्ममाचारतुष्टप्रविष्टो
महापद्ममा प्रेमहाकान्तचेष्टा ।
महामत्तवेशो महासङ्गलेशा
सुरेशः क्षपेशा वरो दीर्घवेशा ॥ ८६ ॥
चरो वाक्यनिष्ठा चरश्चारुवर्णा
कुलाद्यः कुलाद्या यतिर्योगवाद्या ।
कुलोकापहन्ता महामानहन्त्री
महाविष्णुयोगी महाविष्णुयोगा ॥ ८७ ॥
क्षितिक्षोभहन्ता क्षितिक्षुब्धराद्या
महार्घ्यो महार्घ्या धनी चौर्य्यकार्य्या ।
महारात्रिशास्तान्धकारप्रकाशो
महारात्रिशास्तान्धकारप्रवेशा ॥ ८८ ॥
महाभीमगम्भीरशब्दः प्रशब्दो
महाभीमगम्भीरशब्दान्तशब्दा ।
गुणी ज्ञानदात्री मयो यामयात्रा
वशी सूक्ष्मवेशा खगो नागमाता ॥ ८९ ॥
हिरण्याख्यहन्ता महाशत्रुहन्त्री
विनाशप्रियो बाणनाशप्रिया च ।
महाडाकिनीपो महाराकिणीशा
महाडाकिनीपा महाराकिणीशः ॥ ९० ॥
मुकुन्दो महेन्द्रा महाभद्रचन्द्रा

चितित्यागकर्त्ता महायोगकर्त्री।
हितो मारहन्त्री महेशेश इन्द्रा
गतिक्षोभभावाऽपहो भावगम्या ॥ ९१ ॥
शशीनां समूहो शशी कोटिवक्त्रा
कदम्बाश्रितो वारमुख्या सतीनाम्।
महोल्लासदाता महाकालमाता
स्वयं सर्वपुत्रः स्वयं लोकपुत्री ॥ ९२ ॥
महापापहन्ता महाभावहार्य्या
हरिः कार्त्तिकी कार्त्तिको देवसेना।
जयाशो विलिप्ता कुलाशो गणाशा
सुधीर्व्यासभाषा चितीशोऽतिमाया ॥ ९३ ॥
भवो भावलक्ष्मीः प्रियः प्रेमसूक्ष्मा
जनेशो धनेशी कृपो मानभङ्गा।
कठोरोत्कटानां महाबुद्धिदाता
कृतिस्था गुणज्ञो गुणानन्दविज्ञा ॥ ९४ ॥
महाकालपूज्यो महाकालपूज्या
खगाख्यः खगाख्या खरो खड्गहस्ता।
अथर्वोऽथर्वान्दोलितस्था प्रहासा
खगः क्षोभनाशा हविः कूटहाला ॥ ९५ ॥
महापद्ममालाधृतो गाणपत्या
गणस्थो गभीरा गुरुज्ञानगम्या।
घटप्राणदाता निराकाररूपा
भयार्थो ङबीजा ङमारी ङकर्णा ॥ ९६ ॥
भवो भावमाता नरो यामघाता
चलान्तोऽचलाख्या चलच्चञ्चलीका।
छलच्छ्छलाख्या छकारच्छकारा

जयो जीवनस्था जलेशो जलेशा ॥ ९७ ॥
जगज्ज्ञापकारी जगज्जीवनीशा
जगत्त्राणनाथो जगत्त्राणनाथा।
झरो झर्झरीशा झनत्कारशब्दो
झनञ्झाननादी झनत्काररावा ॥ ९८ ॥
ञचैतन्यकारी ञकैवल्यनारी
टनत् टङ्कहस्ता सुघोरा प्रचण्डा।
ठरीशोपविष्टठकारादिकोटी-
डरो डामरा डाकिनी डोड़सारा ॥ ९९ ॥
ढमेशो हि ढक्का वरस्थानबीजो-
णवर्णा तमालस्तनुस्थानतिष्ठा।
थकारार्णमाला स्थलिस्थानसंस्था
दमो दानदाया धनेशो धनाढ्या ॥ १०० ॥
नगाभो नगाभा गभीरोऽग्रहारा
नगेशः परः पारलोलादिपाला।
फलात्मा फला फाल्गुनी फेननाशा
फणाभूषणाढ्यो वशी व्यालरम्या ॥ १०१ ॥
भगात्मा भवस्थो महाबीजमालो
महाबीजमाला मुकुन्दः सुसूक्ष्मा।
यतिस्थो यशःस्था रतानन्दकर्त्ता
रतिर्नायिकिनीशो लयार्थप्रचण्डा॥ १०२ ॥
प्रवालाब्धिधारी प्रवालाङ्गमाला
हलो हालहेलापहः पालताला।
वशीन्द्रप्रकाशो वरस्थानवासा
शिवश्रीधराङ्गः शलाका शिला च ॥ १०३ ॥
षड़ाधारराशिः षड़ाधारविद्या

षड्भोजसंस्थः षडब्जोपविष्टा ।
सदा शैलशृङ्गोपविष्टोऽपि सुस्थो
ह्ययस्थो ह्ययस्था हरो हारिणी च ॥ १०४ ॥
लयस्थो लिपिस्था क्षयी कुलसंख्या
अनन्तो निवर्णा हराकारबीजा ।
उरःस्थोऽप्युरस्था उर ऊर्द्ध्वरूपा
ऋचस्थो हि ऋगा लृगो दीर्घलृस्था ॥ १०५ ॥
सदौङ्कारवर्णः कलौङ्कारबीजा
सदा चन्द्रहासः सदा चन्द्रहासा ।
हरीन्द्रो हरीशा हरिः कृष्णरूपा
शिवो वेदभाषा च शौरिः प्रसन्ना ॥ १०६ ॥
गणाध्यक्षरूपी परानन्दहार्य्या
परेशा गणेशो रसो रासपूज्या ।
चकोरीगणस्थः स्वबुद्धिस्थितिस्था
स्वयं कामधेनुस्वरूपी विरूपा ॥ १०७ ॥
हिरण्यप्रभः श्रीहिरण्यप्रभाङ्गी
प्रभातार्कवर्णोऽरुणाकारकाङ्गी ।
प्रभाषादिकूटी धरासद्मसंस्था
धराधारणेशः क्षमासौख्यसद्मा ॥ १०८ ॥
महायज्ञसंस्थो महायज्ञनिष्ठा
सदा कर्मरङ्गः सदा कर्मरङ्गी ।
किरातीपती राकिणी कोलपुत्री
किशोरः किशोरी कुरुक्षेत्रकन्या ॥ १०९ ॥
महालाङ्गलिः श्रीबलो रामकृष्णः
कुलालादिविद्या भवो भावपूर्णा ।
महालाकिनी काकिनी शाकिनीशो

महासुप्रकाशा परो हाकिनीशा ॥ ११० ॥
कुरुक्षेत्रवासी कुरुप्रेमहन्त्री
महाभूतिभोगी महायोगिनी च ।
कुलाङ्गारकारी कुलाङ्गीशकन्या
तृतीयस्तृतीयाऽद्वितीयोऽद्वितीया ॥ १११ ॥
महाकन्दवासी महानन्दवासा
पुरग्रामवासी महापीठदेशा ।
जगन्नाथवक्षःस्थलस्थो वरेण्या
शिवानन्दकर्त्ता शिवानन्दकर्त्री ॥ ११२ ॥
जगद्दीपकाशो जगद्दीपनी मा
महाकामरूपी महाकामपीठा ।
महाकामपीठस्थिरो भूतशुद्धि-
र्महाभूतशुद्धिर्महाभूतसिद्धिः ॥ ११३ ॥
प्रभान्तःप्रवीणा गुरुस्थो गिरिस्था
गलद्धारधारी महाभक्तवेशा ।
क्षणक्षुन्निवृत्तिर्निवृत्तान्तरात्मा
सदन्तर्गतस्था लयस्थानगामी ॥ ११४ ॥
लयानन्दकाम्यो विसर्गापवर्गी
विशालाक्षमर्गा कुलार्णः कुलार्णा ।
सदा श्यामलश्रीर्भयानन्ददाता
तथा वाणगीता सदज्ञानदाता ॥ ११५ ॥
तरोर्मूलवासी तरुस्थापदेशा
सुरेशः सुरेशा सुखी खड्गिनीशा ।
भयत्राणकर्त्री भयज्ञानदात्री
जनानां मखस्थो मखानन्दभङ्गा ॥ ११६ ॥
महासत्पथस्थो महासत्पथज्ञा

महाबिन्दुमानो महाबिन्दुमाना।
खगेन्द्रोपविष्टो विसर्गान्तरस्था
विसर्गप्रविष्टो महाबिन्दुनादा ॥ ११७ ॥
सुधानन्दभक्तः सुधानन्दभक्तिः
शिवानन्दसंस्थः शिवानन्दधात्री।
महावाहनाह्लादकारी सुवाहा
गिरानन्दकारी हृदानन्दकान्तिः ॥ ११८ ॥
मतङ्गस्थदेवी मतङ्गाधिदेवी
महासत्त्वरूपः प्रचण्डातिभीमा।
तदेको महाचक्रपाणिः प्रचण्डा-
खिलोपस्थलस्थोऽविहन्त्रीशपत्नी ॥ ११९ ॥
शिखानन्दकर्त्ता शिखादेशवासा
सुशाकम्भरी वेदयोगी युगस्था।
युगो योगकन्या शरण्यः शरण्या
मुनिर्ज्ञानमान्या सुधन्यः सुधन्या ॥ १२० ॥
शशी वेदजन्या यशो कालवासा
सकामः सकामा ह्यकामी ह्यकामा।
हृतीशो हृतीशा हटी हाटकस्था
धनेशो धनेशा भकारोऽतितीक्ष्मा ॥ १२१ ॥
चलत्खञ्जनस्थः चलत्खञ्जनस्था
किरातः किराती सिताङ्गः सिताङ्गी।
हृहत्खेचरस्थो हृहत्खेचरी च
महानागराजो महानागमाला ॥ १२२ ॥
हकारार्द्धसञ्जावृतो हारमाला
महाकालनेमिर्महापार्वती च।
विपद्भङ्गकारी विपन्नाशनी च

सुखानन्ददाता महादुःखहन्त्री ॥ १२३ ॥
सदा दुःखहन्ता सदा दुःखहन्त्री
प्रभातार्कवर्णा प्रभातारुणश्रीः।
महापर्वतप्रेमभारोपपन्नो
महादेवपत्नीशभावोपपन्ना ॥ १२४ ॥
इत्येतत् कथितं नाथ ! महास्तोत्रं मनोरमम्।
सहस्रनाम योगाङ्गैरष्टोत्तरसमन्वितम् ॥ १२५ ॥
यः पठेत् प्रातरुत्थाय शुचिर्वा शुचिमानसः।
भक्त्या शान्तिमवाप्नोति अनायासेन योगिराट् ॥ १२६ ॥
प्रत्यहं ध्यानमाकृत्य त्रिसन्ध्यं यः पठेत् शुचिः।
षण्मासात् परमो योगी सत्यं सत्यं सुरेश्वर ! ॥ १२७ ॥
अकालमृत्युहरणं सर्वव्याधिविनाशनम्।
अपमृत्य्वादिहरणं वारमेकं पठेत् यदि ॥ १२८ ॥
पठित्वा ये हि गच्छन्ति विपत्काले महानिशि।
अनायासेन ते यान्ति महाघोरे भयार्णवे ॥ १२९ ॥
अकाले यः पठेन्नित्यं सुकालस्तत्क्षणाद्भवेत् ॥ १३० ॥
राजत्वहरणे चैव सुहृत्तिहरणादिके।
मासैकपठनादेव राजत्वं स लभेत् ध्रुवम् ॥ १३१ ॥
विचरन्ति महावीराः स्वर्गे मर्त्ये रसातले।
गणेशतुल्यबलिनो महाक्रोधाः शरीरिणः ॥ १३२ ॥
एतत् स्तोत्रप्रसादेन जीवन्मुक्ता महीतले।
महानामस्तोत्रसारं धर्माधर्मनिरूपणम् ॥ १३३ ॥
अकस्मात् सिद्धिदं कास्यं तथा परमर्थिद्धिदम्।
महाकुलकुण्डलिन्या भवान्याः साधने शुभे ॥ १३४ ॥
अभेद्यभेदने चैव महापातकनाशने।
महाघोरतराकारे पठित्वा सिद्धिमाप्नुयात् ॥ १३५ ॥

षट्चक्रस्तम्भनं नाथ ! प्रत्यहं यः करोति हि ।
मनोगतिस्तस्य हस्ते स शिवो न तु मानुषः ॥ १२६ ॥
योगाभ्यासं यः करोति न स्तवः पठ्यते यदि ।
योगभ्रष्टो भवेत् क्षिप्रं कुलाचारविलङ्घनात् ॥ १२७ ॥
कुलीनाय प्रदातव्यः स्तव एष कुलेश्वर ! ।
कुलाचारं समाकृत्य ब्राह्मणाः क्षत्रियादयः ॥
योगिनः प्रभवन्त्येव स्तोत्रपाठात् सदाऽमराः ॥ १२८ ॥

इति श्रीरुद्रयामले उत्तरतन्त्रे महातन्त्रोद्दीपने सिद्धमन्त्रप्रकरणे षट्चक्रप्रकाशे कृष्ण-राधिकोल्लासे भैरव-भैरवीसंवादे अष्टोत्तरसहस्रनामस्तोत्रं नाम द्विचत्वारिंशः पटलः ॥ ४२ ॥

त्रिचत्वारिंशः पटलः ।

आनन्दभैरव उवाच ।—

वद कान्ते ! रहस्यं मे मया सर्वञ्च विस्मृतम् ।
महाविषं कालकूटं पीत्वा देवादिरक्षणात् ॥ १ ॥
कण्ठस्था देवताः सर्वा भस्मीभूताः सुसम्भृताः ।
महाविषज्वालया च मम देहस्थदेवताः ॥ २ ॥
कैवल्यनिरताः सर्वे प्रार्थयन्ते निरन्तरम् ।
षट्चक्रभेदकथनममृतश्रवणादिकम् ॥ ३ ॥
कथित्वा मम सन्तोषं कुरु कल्याणि ! वल्लभे ! ।
अमृतानन्दजलधौ सुधाभिषिक्तविग्रहम् ॥
कृत्वा कथय शीघ्रं मे चायुषं परिवर्द्धय ॥ ४ ॥

आनन्दभैरव्युवाच ।—

निगूढार्थं महाकाल ! कालेश ! जगदीश्वर ! ।
भैरवानन्दनिलय ! कालकूटनिषेवण ! ॥ ५ ॥

इदानीं शृणु योगार्थं मयि संयोगमेव च ।
श्रुत्वा वै तत्क्रियाकार्य्यं नरो योगीश्वरो भवेत् ॥ ६ ॥

योगरहस्यम् ।—

ममोद्भवः स्वचित्ते च सर्वाकारविवर्जिते ।
भ्रूमध्ये सर्वदेहे च स्थापयित्वा च मां नरः ॥ ७ ॥
भाव्यते चापरिच्छिन्नं ब्रह्मविष्णुशिवात्मकम् ।
मम रूपं महाकाल ! सत्त्वरजस्तमोवृतम् ॥ ८ ॥
रजः केवलयोगेन शरीरं नापि तिष्ठति ।
तथा केवलयोगेन तमसा नापि तिष्ठति ॥ ९ ॥
तथा केवलसत्त्वेन कुतो देही प्रतिष्ठति ।
अतस्त्रिगुणयोगेन धारयामि नवाङ्कक्रम् ॥ १० ॥
शनैःशनैर्विजेतव्याः सत्त्वरजस्तमोगुणाः ।
आदौ जित्वा रजोधर्मं पश्चात्तामसमेव च ॥ ११ ॥
सर्वशेषे सत्त्वगुणं नरो योगीश्वरो भवेत ।
गुणवान् ज्ञानवान् वाग्मी सुखी धर्मी जितेन्द्रियः ॥१२॥
शुद्धनिर्मलसत्त्वन्तु गुणमाश्रित्य मोक्षभाक् ।
सदाऽऽवृतं सत्त्वगुणैः पुरुषं काल एव च ॥ १३ ॥
पश्यतीह न कदाचित जरामृत्युविवर्जितम् ।
तं जन परमं शान्तं निर्मलं द्वैतवर्जितम् ॥ १४ ॥
सर्वत्यागिनमात्मानं कालः सर्वत्र रक्षति ।
जले वा पर्वते वाऽपि महारण्ये रणस्थले ॥ १५ ॥
भूगर्त्तनिलये भीते संहारे दुष्टविग्रहे ।
स तिष्ठति महायोगी सत्यं सत्यं कुलेश्वर ! ॥ १६ ॥
महायोगं शृणु प्राण-वल्लभ ! श्रीनिकेतन ! ।
योगार्थं परमं ब्रह्म योगार्थं परमं तपः ॥ १७ ॥
ये जानन्ति महायोगं म्रियन्ते न च ते नराः ।

कृत्वा कृत्वा षड्दलस्य-साधनं कृष्णसाधनम् ॥ १८ ॥
ततः कुर्य्यान्मूलपद्म-कुण्डलीपरिचालनम् ।
मुहुर्मुहुश्चालनेन नरो योगीश्वरो भवेत् ॥ १९ ॥
एकान्तनिर्मले देशे दुर्भिक्षादिविवर्जिते ।
बद्धैकमासनं योगी योगमार्गपरो भवेत् ॥ २० ॥
पद्मासनं सदा कुर्य्यात् बद्धपद्मासनं तथा ।
महापद्मासनं कृत्वा तथा चालनभञ्जनम् ॥ २१ ॥
तत्पश्चात् स्वस्तिकाख्यञ्च बद्धस्वस्तिकमेव च ।
महास्वस्तिकमाकृत्य त्रिशूलं वशमानयेत् ॥ २२ ॥
भद्रासनं बद्धभद्रासनं कुर्य्यात् क्रमेण तु ।
महाभद्रासनं कृत्वा कार्मुकासनमाश्रयेत् ॥ २३ ॥
बद्धकार्मुकमेवं हि महाकार्मुकमेव च ।
योगाभ्यासे सदा कुर्य्यान्मन्त्रसिद्ध्यादिकर्मणि ॥ २४ ॥
चक्रासनं सदा योगी योगसाधनकर्मणि ।
बद्धचक्रासनं नाम महाचक्रासनं तथा ॥ २५ ॥
कृत्वा पुनः प्रकर्त्तव्यं बद्धयोगेश्वरासनम् ।
योगेश्वरासनं कृत्वा महायोगेश्वरासनम् ॥ २६ ॥
वीरासनं ततः कुर्य्यान्महावीरासनं तथा ।
बद्धवीरासनं कृत्वा नरो योगीश्वरो भवेत् ॥ २७ ॥
ततः कुर्य्यान्महाकाल ! बद्धकुक्कुटमासनम् ।
महाकुक्कुटमाकृत्य केवलं कुक्कुटासनम् ॥ २८ ॥
मयूरासनमेवं हि महामयूरमेव च ।
बद्धमायूरमाकृत्य नरो योगीश्वरो भवेत् ॥ २९ ॥
एतत्सर्वं प्रकर्त्तव्यं विचार्य्य सुमनःप्रिय ! ।
अभिषेकप्रकरणे आसनादिप्रकाशकम् ॥ ३० ॥
कथितव्यं विशेषेण इदानीं शृणु षट्क्रमम् ॥ ३१ ॥

ब्रह्मा विष्णुश्च रुद्रश्च ईश्वरश्च सदाशिवः ।
ततः परशिवः शम्भो ! षट्शिवाः षट्प्रकाशकाः ॥ ३३ ॥
एतेषां षड्गुणानन्द-शक्तयः परदेवताः ।
षट्चक्रभेदनरता महाविद्याऽधिदेवताः ॥ ३४ ॥
एतेषां स्तवनं कुर्य्यात् परदेवसमन्वितम् ।
एतत्प्रकारकरणे यस्य प्रत्यक्षमाशुगः ॥ ३५ ॥
क्रियानिविष्टः सर्वत्र भावनाग्रहरूपधृक् ।
स पश्यति जगन्नाथं कमलोदरगतं हरिम् ॥ ३६ ॥
धात्री हरेर्दर्शनञ्च कारयत्येव कुण्डली ।
ततो रुद्रस्य संज्ञाया लाकिन्याः शुभदर्शनम् ॥ ३७ ॥
सर्वेषां क्रमतो नाथ ! दर्शनं प्राप्यते नरैः ।
शनैःशनैर्महाकाल ! कैलासदर्शनं भवेत् ॥ ३८ ॥
क्रमेण सर्वसिद्धिः स्यादष्टाङ्गयोगसाधनात् ।
अष्टाङ्गसाधने काले यद्यत् कार्य्यं करोति हि ॥ ३९ ॥
तत्सर्वं परियत्नेन शृणु सादरपूर्वकम् ।
तत्क्रियादिकमाश्रित्य शीघ्रं योगी भविष्यसि ॥ ४० ॥

इति श्रीरुद्रयामले उत्तरतन्त्रे महातन्त्रोद्दीपने सिद्धमन्त्रप्रकरणे षट्चक्रप्रकाशे भैरव-भैरवीसंवादे त्रिचत्वारिंशः पटलः ॥ ४३ ॥

चतुश्चत्वारिंशः पटलः ।

आनन्दभैरव्युवाच ।—

अथ कामातुराणाञ्च कामनिर्म्माणहेतुना ।
कथयामि महाकाल ! यत् कृत्वा कामिनी वशे ॥ १ ॥
तत्प्रकारं प्रवक्ष्यामि योगसाधनहेतुना ।
सुखासनं समाकृत्य ऊर्द्ध्वं पद्मासनञ्चरेत् ॥ २ ॥

शिरोमूले करद्वन्द्वं नियोज्य जपमाचरेत्।
अल्पाल्पधारणं कुर्य्यात् श्वाससंख्यां समाचरेत्॥ ३॥
श्वाससंख्यां तदा कुर्य्यात् यदा कुम्भकसुस्थिरः।
विना श्वाससंख्यया च कुतो योगिवरो वशी॥ ४॥
विना संख्याप्रयोगेण विना कुयोगवारणात्।
कदाचिन्न प्रकर्त्तव्यं संख्याकुम्भकवर्जितः॥ ५॥
अल्पाल्पकुम्भकं कुर्य्यात् खेचरप्रियकर्मणि।
सर्वकाले प्रकर्त्तव्यं सर्वकाले सुखी भवेत्॥ ६॥
आनन्दकल्पमाकृत्य विजयाद्यासवादिभिः।
क्रमेण भेदनं कुर्य्यात् ततः साधकयोगिराट्॥ ७॥
योगिनामपरिच्छिन्नं भावं विद्युत्प्रभाकरम्।
विद्युत्कोटिसमाभासं वारिधारासमाकुलम्॥ ८॥
यद्येव सुतभावत्का विपाके न पतन्ति ते।
ते यान्ति परमं स्थानं भवन्ति कोटिराज्यपाः॥ ९॥
ते भोगिनो योगिनश्च ते लोकपालकाः स्मृताः।
ते महद्गुणसम्भोग्या म्रियन्ते न कदा कुतः॥ १०॥
ते भवन्ति महाश्रेष्ठाः ते भवन्ति सुधाकराः।
ये भेदकरणे युक्ताः ते मनुष्या न देवताः॥ ११॥
ते सर्वे यान्ति सर्वत्र ते शिवास्ते च किन्नराः।
ते मे भक्ता महाकाल! बुद्धिमेधागमोदयाः॥ १२॥
ये भवन्ति पदाम्भोजे तव भावपरायणाः।
ते भेदज्ञाः प्रभवन्ति तेषां कालो वशो भवेत्॥ १३॥
ये प्राणवायुसंयोगा ये प्राणपरिरक्षकाः।
आत्महत्यां परीहाय ब्रह्मलोकं मुदान्विताः॥ १४॥
यान्ति नाथ! ध्यानपराः संसारार्थविवर्जिताः।
अरण्यवासिनो ये च नारण्यवासिनो नराः॥ १५॥

एकान्तनिर्जने देशे सर्वविघ्नविवर्जिते।
षट्चक्रभेदमाकृत्य ते नराः फलभागिनः॥ १६॥
महाकालफलं यस्तु सदैवेति विशुद्धधीः।
स एव योगी भ्रूमध्ये स्थित्वा सर्वत्रगो भवेत्॥ १७॥
सर्वदेशे सदा पूज्यः सर्वेशो निर्मलोऽद्वयः।
अनाद्यनन्तविभवः कालात्मा स भवेत् क्षणात्॥ १८॥
एतेषां साधनं शीघ्रं सिद्धविद्यासु कल्पनम्।
एतद्रूपं निजं ज्ञात्वा भेदं कृत्वा निजस्थलम्॥ १९॥

षट्चक्ररहस्यम्।—

मूलाधारं स्वाधिष्ठानं भेदज्ञानी विभिद्य च।
कुर्य्यात् परमनन्दार्थं मणिपूरे विचक्षणः॥ २०॥
कृत्वा च दर्शनं विद्वान् श्रीकृष्णचरणाम्बुजम्।
स्वाधिष्ठानादिदेवेन्द्रं शक्तियुक्तं निरञ्जनम्॥ २१॥
राकिणीराधिकाव्याप्तं त्रिलोकरक्षणं परम्।
परमाकाशनिलयं त्रैगुण्यं वारिरूपिणम्॥ २२॥
वाञ्छाकल्पतरोर्मूल-वासिनं शिववैष्णवम्।
विलोक्यानन्दहृदयोऽशङ्कः सर्वत्र दर्शकः॥ २३॥
कृत्वा योगी सदाऽभ्यासी मणिपूरं विलोकयेत्।
मणिपूरं महाचिह्नं सिद्धचेतं सुधामयम्॥ २४॥
हिरण्यकोटिदानेन गोकोटिदानहेतुना।
कोटिब्राह्मणभोज्येन यत् फलं लभते नरः॥
तत् फलं लभते ध्यात्वा मणिपूरं मनोरमम्॥ २५॥
मणिपूरं महास्थानं योगिनामप्यदर्शनम्॥ २६॥
सूक्ष्मातिसूक्ष्मं परमं ज्ञानिनां ज्ञानगोचरम्।
अप्रकाश्यं महागुह्यं योगयोगेन लभ्यते॥ २७॥

आनन्दभैरव उवाच ।—

योगार्थं यत्र कमले कोटिविद्युत्समप्रभे ।
कोटिकालाग्निमिलिते कोटिचन्द्रविनिर्मिते ॥ २८ ॥
कोटिसूर्य्यादिकिरणे मनः केन विलीयते ।
सूचीविद्धं यथा सूत्रं तदेव फलदं सुखम् ॥ २९ ॥
मया दृष्टं श्रुतं नापि ज्ञानं न तत्र सुन्दरि ! ।
तत्र केन प्रकारेण मनोनिवेशनं भवेत् ॥ ३० ॥
यत्र न गमनं नृणां तस्य देवस्य यत् फलम् ।
तत्फलं किं प्रजानाति अदृष्टे गमनं कुतः ? ॥ ३१ ॥
कुतो राज्ञाञ्च सम्पत्तिः कुतो वा स्वार्थदर्शनम् ।
कुतो वा जायते सिद्धिर्भेदने किं फलं लभेत् ? ॥
तत्त्वं जानासि देवेशि ! तत्प्रकारं प्रकाशय ॥ ३२ ॥

आनन्दभैरव्युवाच ।—

यदुक्तं तद्धि सकलं सफलं परमेश्वर ! ।
तत्र पूर्वं योगधर्ममाश्रित्य शृणु तत्क्रमम् ॥ ३३ ॥
पूर्वस्मरणमात्रेण जीवन्मुक्तो हि योगिराट् ।
जीव एव महाकाल लोकानां मोक्षबन्धगः ॥ ३४ ॥
स जीवो वायुरूपेण महाबलपराक्रमः ।
गच्छति प्रत्यहं नित्यं सर्वदा च पुनःपुनः ॥ ३५ ॥
पुनरायाति धरणीं स्वभावेन निरन्तरम् ।
नानाभावप्रियः सोऽपि नानाऽऽकारनिरूपकः ॥ ३६ ॥
नानाधर्मप्रियः शुद्धोऽशुद्धवेशधरो महान् ।
कान्दर्पनिलयो योगी स योगी परमार्थवित् ॥ ३७ ॥
स ज्ञानी निरहङ्कारो सोऽहङ्कारो शरीरष्टक् ।
सर्वगन्धप्रियोऽदृश्यो भावयेत्तां रहस्यवित् ॥ ३८ ॥
स एव निष्कलः शुद्धः सदा ध्यानपरायणः ।

यदा चात्मनि ब्रह्माण्डे ब्रह्मखण्डयशङ्करे ॥ ३९ ॥
तन्मनो विलयं याति तदभावो महाऽऽस्मृतः ।
तद्भावः परमं ज्ञानं न कथ्यं विपरीतकम् ॥ ४० ॥
स्वाधीनं सुसुखं नित्य-स्वल्पकार्य्यविवर्जितम् ।
अत्यन्तधर्मसन्धानं प्राप्य योगी भवेन्नरः ॥ ४१ ॥
शनैःशनैः प्रगन्तव्यं तत्र तत्र सुदर्शनम् ।
तत्र तत्र महासिद्धो भूत्वा संसारयुक्तिमान् ॥ ४२ ॥
योगिनां बहुकालस्थं मृतानामल्पकालकम् ।
श्वासधारणमाकृत्य बहुकालं सुखी भवेत् ॥ ४३ ॥
यथा बृहस्पतिः श्रीमान् तथा सूर्य्यो दिवाकरः ।
यथा प्रकाशमाकुर्य्यात् कोटिभिः स्तोत्रनामभिः ॥४४॥
स्तुत्वा भूत्वा महाद्रव्यैस्तर्पयित्वा यथाक्रमम् ।
अभिषिक्तः पुनर्ध्यात्वा पूजयित्वा यथाविधि ॥ ४५ ॥
मानसोपचारद्रव्यैः स्वधायुक्तैरथापि वा ।
परमानन्दितो भूत्वा भावयेत् पीठदेवताः ॥ ४६ ॥
भावयित्वा ततो जप्त्वा धर्माधर्मौ विचिन्तयेत् ।
देवतायां मनो योज्यं स्थापयित्वा स्वपीठके ॥ ४७ ॥
पुनस्तत्फुल्लकमलं मुद्रितं परिकल्पयेत् ।
षड्दलं मूर्च्छितं कृत्वा दलाग्रे संविशेत् सुधीः ॥ ४८ ॥
सदानन्दः सर्वमयो वेदवेदान्तनामभिः ।
स्तवकोटिभिरेकत्र ध्यात्वा संहारमुद्रया ॥ ४९ ॥
अधोमुखे दशदल-कमलाग्रे नियोजयेत् ।
षड्दलाग्रं महाकाल ! नियोज्य गमनं चरेत् ॥ ५० ॥
ततो गच्छेत् प्रज्वलिते पद्मे दशदले पुरे ।
प्रविश्य कर्णिकामध्ये तन्मयस्तत्क्षणाद्भवेत् ॥ ५१ ॥
तत्क्षणात्तन्मयो भूत्वा कुण्डलीचक्रसंस्थितः ।

असाध्यसाधनं सर्वं मणिपूरस्थनिर्मलम् ॥ ५२ ॥
मणिपूरे महापीठे ध्यानगम्ये सति प्रभो ! ।
मनोनिवेशनं कृत्वा नरो मुच्येत सङ्कटात् ॥ ५३ ॥
मनोयोगी मनोभोगी मनोभक्तो मनोयुवा ।
मन एव मनुष्याणां कारणं गणमोक्षयोः ॥ ५४ ॥
कारणं सर्वकार्य्याणां तद्भावं सन्त्यजेद्बुधः ।
सर्वभावं विहायापि महाभावं समाश्रयेत् ॥ ५५ ॥
भावेन लभ्यते मोक्षो भावेन लभ्यते सुखम् ।
एतद्भावं सदा कुर्य्याद्भावाद्भवति योगिराट् ॥ ५६ ॥
भावेन भक्तिमाप्नोति विषयाद्भावमाश्रयेत् ।
विषयं विकृतिग्राह्यं सुकृतिज्ञानवर्जितम् ॥ ५७ ॥
अतो दिव्यं महापीठं मणिपूरं समाश्रयेत् ।
महायन्त्रे मनो दत्त्वा निर्माणं कारयेद्बुधः ॥ ५८ ॥
मणिभिर्ग्रन्थनं कृत्वा नानामणिविभूषितम् ।
सुपीठं परमं ध्यात्वा कुलपीठमथापि वा ॥ ५९ ॥
श्रीविद्यापीठमालिख्य विभाव्य च पुनःपुनः ।
ततः प्रस्फुटिते पद्म-दलाग्रे षड्दलस्य च ॥ ६० ॥
स्थापयित्वा महाविष्णुं पूजयित्वा सुसंयतः ।
जप्त्वा च तन्मयो भूत्वा निधाय मणिपूरके ॥ ६१ ॥
दृढाकारमूर्द्ध्वगतं षड्दलं परिचिन्तयेत् ।
ततश्चोर्द्ध्वतरे स्थाने महोत्साहोद्भवसुन्दरे ॥ ६२ ॥
मनोनिवेशनं कृत्वा शक्तिं रुद्रं समाश्रयेत् ।
चैतन्यरूपिणीं शक्तिं चैतन्यं रुद्ररूपिणम् ॥ ६३ ॥
भद्रं भद्रात्मकं रौद्रं रौद्रीं प्रकाशकारिणीम् ।
भक्तः पुनःपुनर्ध्यायेदूर्द्ध्वरेतसमीश्वरम् ॥ ६४ ॥
प्रगच्छन्ति चोर्द्ध्वमार्गं ध्येया योगिभिरेव च ।

स्वयं देवी परानन्दा मणिपूरनिवासिनी ॥ ६५ ॥
तथा श्रीलाकिनीशक्तिः श्रीरुद्रस्था न संशयः ।
रुद्ररूपी महादेवो रुद्ररूपा सरस्वती ।
सर्वदा ऊर्द्ध्वगामी च सा शक्तिरूर्द्ध्वगामिनी ॥ ६६ ॥
ऊर्द्ध्वमार्गं काशयन्तीं योगिनीं योगमातरम् ।
महारुद्रं तथा ध्यात्वा मणिपूरे सुनिर्मले ॥ ६७ ॥
ऊर्द्ध्वमुखं समाकुर्य्यात् महापद्मं मनोरमम् ॥ ६८ ॥
मणिपूरं महाकान्तं मणिकोटिसुनिर्मलम् ।
कोटिकोटिशरच्चन्द्र-चन्द्रज्योतिः-समाकरम् ॥ ६९ ॥
ऊर्द्ध्वमुखं समाकुर्य्यात् स्वयं भावेन जायते ।
यदि चोर्द्ध्वमुखं यन्त्र-चन्द्रमण्डलसंयुतम् ॥ ७० ॥
अतिकोमलपत्रेषु भाति चात्यद्भुतं करम् ।
लेपयित्वा च तत्सर्वं स्थापयित्वा पुनःपुनः ॥ ७१ ॥
प्रापयित्वा महारुद्रं त्रैलोक्यजननीं शिवाम् ।
रुद्राणीं रौद्रशक्तिश्च लाकिनीं लोक-रक्षिणीम् ॥ ७२ ॥
कुम्भकं प्राणवायोश्च तथा तस्य च योजनम् ।
एकत्र मिलनं कृत्वा भावनं परिकल्पयेत् ॥ ७३ ॥
भावने लभ्यते मोक्षो भाव एव निजप्रियः ।
मनो निवेश्य तत्रस्थो रुद्राराधनमाचरेत् ॥ ७४ ॥
तथा श्रीलाकिनीदेव्याः परमाद्भुतसाधनम् ।
शृणुष्व परमानन्द-भैरव ! प्रियवल्लभ ! ॥ ७५ ॥
ममोपदेशं सन्त्यज्य कोऽपि सिद्धो न सम्भवेत् ।
ममाज्ञावशयोगेन सिद्धो भवति मानवः ॥ ७६ ॥
मुक्तिमूलं महाभावं मुक्तिमूलं हि साधनम् ।
मुक्तिक्रमेण कालेन सिद्धो भवति साधकः ॥ ७७ ॥
मम योगक्रमेणैव मम मन्त्रविलोकनम् ।

कोऽपि नाथ ! ब्रह्मयोगी भवत्येव न चाखिले ॥ ७८ ॥
सर्वे च योगिनः शीघ्रं भवन्ति च न संशयः ।
स्फुटाकारदलं कृत्वा विन्यासं तत्र कारयेत् ॥ ७९ ॥
महायोगिकुलन्यासं विद्यान्यासं समाचरेत् ।
सर्वन्यासं निजन्यासं न्यासजालं समाचरेत् ॥ ८० ॥
मानसः क्रियया व्याप्तं देहं मधुरसंप्लुतम् ।
शिवरूपिणमात्मानं वैष्णवं ज्ञानचक्षुषम् ॥ ८१ ॥
एकाकारं मूलमन्त्रं ध्यानं तत्र समाचरेत् ।
ध्यात्वा चार्घ्यं समाकुर्य्यात् कुलचक्रक्रमेण तु ॥ ८२ ॥
आत्मानमपरिच्छिन्नं विचिन्त्य पुनरेव च ।
सन्ध्यादेन्द्रिजचैतन्य-देवतां कुलदेवताम् ॥ ८३ ॥
पाद्यार्घ्यादिक्रमेणैव पूजयित्वाप्यहर्निशम् ।
परिवारान् ततो ध्यात्वा तत् सर्वान् परिपूजयेत् ॥ ८४ ॥
धूपदीपौ ततो दद्यात् निजपूजाविधानतः ।
प्राणायामान् द्वादशादौ कुर्य्यात् साधक एव च ॥ ८५ ॥
भक्त्या ध्यात्वा मनुं जप्त्वा मणिपूरस्थदैवतं ।
जपं समाप्य विधिना प्राणायामद्वयं पुनः ॥
प्रणम्य स्तोत्रकवचैः स्वदेवीं हृदि चालयेत् ॥ ८६ ॥

इति श्रीरुद्रयामले उत्तरतन्त्रे महातन्त्रोद्दीपने सिद्धमन्त्रप्रकरणे भैरव-भैरवीसंवादे मणिपूरचक्रभेदप्रकारो नाम चतुश्चत्वारिंशः पटलः ॥ ४४ ॥

पञ्चचत्वारिंशः पटलः ।

आनन्दभैरव्युवाच ।—

मणिपूरविभेदार्थं शृणु वक्ष्यामि तत्त्वतः ।
यं ज्ञात्वा मूढलोकाश्च प्रविशन्ति महावटे ॥ १ ॥

अमूढत्वमवाप्नोति भवन्ति योगिनोऽमराः ।
खेचरत्वमवाप्नोति सांख्यंतत्त्वनिरूपिणः ॥ २ ॥
महापातकमुख्यानां नाशं शीघ्रं महारिपुम् ।
कियत्कालेऽनले दोषे जले पर्वतकानने ॥ ३ ॥
कुर्वन्ति च दिदृक्षूणां देवतावशमेव च ।
मणिपूरं महापीठं ध्यायेद् यः प्राणसंयमम् ॥ ४ ॥
तथा पश्चाऽऽसवासिद्धिं कृत्वा पुरं विभेदयेत् ।
त्रिलोकजननीं सत्यां शिवामाद्यां त्रियोगिनीम् ॥ ५ ॥

मणिपूरचक्रभेदनम् ।—

मूलाधारात् समुत्पत्य गच्छन्ती रसषड्दले ।
प्रकाशं षड्दलं कृत्वा प्रगच्छन्ती प्रभाऽन्विता ॥ ६ ॥
मणिपूरे महाचक्रे त्रैलोक्यजपसाधने ।
सिद्धीनां निलये काम्ये कामनीये मनः प्रिये ॥ ७ ॥
पुनः प्रिया महादेवी सर्वोल्लासनकारिणी ।
खेचरी महदानन्द-मण्डिता मन्त्रयोगिनी ॥ ८ ॥
अनुग्रहकरी सिद्धा विभाव्या तत एव हि ।
आनन्दघटसन्दोहमात्मज्ञानं सुनिर्मलम् ॥ ९ ॥
मनिपूरं संविभाव्य किन्न सिध्यति भूतले ? ।
अणिमा लघिमा व्याप्तिर्महाश्चेष्टादिसिद्धिभाक् ॥ १० ॥
कौलो वा नारकाख्यो वा ज्ञानी वा साधकोत्तमः ।
योगाभ्यासं यः करोति मणिपूरं समाश्रयेत् ॥ ११ ॥
मणिपूरस्थितं देवं यः स्तौति नियतः शुचिः ।
स्तवराजस्य पाठेन प्रबुद्धा कुण्डली भवेत् ॥ १२ ॥
सा देवी परमा माया मणिपूरे स्थिता शिवा ।
प्रबुद्धं कारयत्येव ततः सिद्धो भवेन्मनुः ॥ १३ ॥
सिद्धे मनौ परा प्राप्तिरिति मे तन्त्रनिर्णयः ।

यदि चैतन्यमिच्छन्ति कुण्डलिन्याः पराक्रमम् ॥ १४ ॥
जानाति निजदेहे च महोदयमनुत्तमम् ।
तेषां चैतन्यहेतोश्च देवतानां कुलेश्वर ! ॥ १५ ॥
महास्तोत्रं समाकुर्य्यात् प्रत्यहं सिद्धिहेतुना ।
सिद्धिकार्य्यं धर्मकार्य्यं मणिपूरे समाप्नुयात् ॥ १६ ॥
मणिपूरनिवासिन्या भेदनं ज्ञानसाधनम् ।
सहस्रनाममगलं सिद्धिद्रव्यनिरूपणम् ॥ १७ ॥
नित्यसिद्धिं काम्यसिद्धिं मणिपूरे समाश्रयेत् ।
प्राणवुद्ध्या स्वेष्टदेवीं पूजयेल्लाकिनीं पराम् ॥ १८ ॥
स्वदेवतां पूजयेद्धि मणिपूरे महालये ।
मणिपूरस्थितां रौद्रीं महाशक्तिं महोदयाम् ॥ १९ ॥
सर्वसञ्चारिणीं योग्यां महायोगप्रियां पराम् ।
निजदेवीपदाम्भोजं पूजावत् पूजनञ्चरेत् ॥ २० ॥
पूजां समाप्य विधिना स्तोत्रं देव्याः समाचरेत् ।
तत् प्राणवायुरूपेण सिद्धीनां नाशहेतवे ॥ २१ ॥
कृतं स्तोत्रं कोटिनाम ब्रह्मणा गुणकात्मना ।
तत्सर्वं प्रकरोष्येतत्प्रकारं ज्ञानशङ्कर ! ॥ २२ ॥
एतत्स्तोत्रप्रसादेन योगिनस्ते महौजसः ।
अहङ्कारघटोज्ज्ञानं महाव्याधिनिवारणम् ॥ २३ ॥
महास्तवनमेवं हि साक्षादानन्दवर्द्धनम् ।
नय भक्तिपदं गुह्यं गुह्यानामप्यगोचरम् ॥ २४ ॥

लाकिनीशक्ति-स्तोत्रम् ।—

शिवां शुद्धामाद्यां दशदलगतां रुद्रमहिषीं
विना लक्ष्मीं सूक्ष्मां शशिशतजटाजूटमुकुटाम् ।
महाविद्युत्कोटिप्रियजडितपीठे त्रिनयनां
महालाकिन्याख्यां दशदलगते भावयति कः ? ॥ २५ ॥

सदान्तर्दत्तध्यानविषयपरां हारसुभगां
कुलश्रेत्रोत्पन्नां चरमपददां दीपकलिकाम् ।
सदानन्दाकारां गतिगुणहरां चारुकिरणां
महारौप्यादिस्थां सकलकरुणां भावयति कः ? ॥ २६ ॥
प्रतीच्छानन्दां विप्रगतचरणां कोटिविधुगां
वियद्वर्णां स्वस्थां निखिलवसुपूजाविधिरताम् ।
महासूक्ष्मद्वारप्रचलनपरां भेदनकरीं
दिवायोगाह्लादप्रियजनशिवां भावयति कः ? ॥ २७ ॥
अयोध्यापीठस्थामरुणरमणीं प्रेमगलितां
महारौद्रीं भीमां शतशतरविप्रेमनिकराम् ।
महादुःखार्णान्तां नयनसुभगां भावविरहां
सतां शीतामिन्द्रोत्सवनवघटां भावयति कः ? ॥ २८ ॥
सुधाब्धेराह्लादप्रकरणसुरां सौरभकरां
क्रियारूपां योग्यां भुवनमणिपूरप्रकृतिगाम् ।
गुरोः स्थानोद्योगां शमनदमनां शीतलकरां
त्रितत्त्वां तत्त्वज्ञां समरहरशक्तिं भजति कः ? ॥ २९ ॥
विकाराधाराङ्गीं तरुणरविकोटिश्रियमितां
कुलाधारां सारां परमरसधारां जयधराम् ।
कृपाच्छन्नां मग्नां परमरसभाण्डेषु शुभदां
भवोद्भद्रामाद्यां शशिमुखकराह्लादनिकराम् ॥ ३० ॥
रसाब्धौ विश्रान्तिं कुपितजनशान्तिं सकरुणां
त्रिलोकज्ञानस्थां मदननिलयां योगनिकराम् ।
मणिद्वीपच्छायां दशदलकलां केवलभवां
भवानीं रुद्राणीं वरदमणिपूरे भजति कः ? ॥ ३१ ॥
कृपासारां दीर्घां मनुगतसुतां मौननमितां
शिवाङ्कां मूलस्थां सकलमणिपूरस्थलभवाम् ।

हिरण्याक्षीं सूक्ष्मां चयकरणराशौ स्थितिकरीं
विनोदीं पञ्चास्यप्रियगुणधरां भावयति कः ? ॥ २२ ॥
महापद्माटव्यां सकलधनदानाकुलचलां
चलानन्दोद्रेकप्रचयरससिन्धूद्भवहृदि ।
हृदानन्दो ध्यायेत् सकलगुणदात्रीं सुखमयीं
कलां सूक्ष्मात्यन्तां तिमिरदहनां कोटिधनदाम् ॥ २३ ॥

दशकं यः पठेन्नित्यं श्रीविद्यासुखदायिनीम् ।
ध्यात्वा हृदयपद्माधो निर्मलात्मा सदा भवेत् ॥ २४ ॥
मणिपुरस्थितं देवं रुद्रं पश्यति योगिराट् ।
रुद्राणीसहितं शम्भुं दृष्ट्वा मुक्तो भवेत् क्षणात् ॥ २५ ॥
जीवन्मुक्तः स एवात्मा योगिनीवल्लभो भवेत् ।
योगात्मा परमात्मा च स हि साक्षादनीश्वरः ॥ २६ ॥
स भित्त्वा मणिपुराब्जं निर्मलं ज्योतिरुज्ज्वलम् ।
शम्भोरीश्वरयोगज्ञ-क्रियानाथस्य श्रीपतेः ॥
निकटे याति देव्याश्च स्थाने योगी न संशयः ॥ २७ ॥

इति श्रीरुद्रयामले उत्तरतन्त्रे महातन्त्रोद्दीपने सिद्धमन्त्रप्रकरणे षट्चक्रप्रकाशे
मणिपूरभेदने भैरवी-भैरवसंवादे वितत्त्वालाविनीशक्तिस्तवनं
नाम पञ्चचत्वारिंशः पटलः ॥ ४५ ॥

षट्चत्वारिंशः पटलः ।

आनन्दभैरव्युवाच ।—

क्रियाकालादिकथनम् ।—

अथ कालक्रमं वक्ष्ये यत्काले योगिराड् भवेत् ।
तत्काले प्राणवायूनां निलयं सूक्ष्मसञ्चयम् ॥ १ ॥
पुनः पुनः सञ्चयेन दृढो भवति साधकः ।
क्रियायां सञ्चरत्येव योगिन्यो योगमातरः ॥ २ ॥

तत्काले तत्र कर्त्तव्य तन्निरूप्य कुलार्णव ! ।
काले काले राशयोऽति-परमार्था निराशयाः ॥ २ ॥
विना प्रयोगसारेण विना जाप्येन शङ्कर ! ।
कः सिद्धो जायते ज्ञानी योगी भवति कुत्र वा ? ॥ ४ ॥
अभ्यासमन्त्रयोगेन शनैर्योगी भवेन्नरः ।
प्रभाते स्नानशौचञ्च कुण्डलीभावनादिकम् ॥ ५ ॥
तन्मध्ये चापि सङ्कुर्य्यात् योगं पश्चाऽऽसनादिकम् ।
ततो मन्त्रस्नानकार्य्यं मस्तके जलसेचनम् ॥ ६ ॥
सन्ध्यावन्दनकार्य्यञ्च ततः कुर्य्यात् पृथक् पृथक् ।
तत उत्थाय सद्भूमौ ऊर्द्ध्वे कोमलजासने ॥ ७ ॥
उपविश्य सदाभ्यासी शुद्धकायासनं चरेत् ।
तत्कार्य्यसमये नाथ ! ध्यानं चैतन्यमेव च ॥ ८ ॥
कुण्डलिन्यां सदा कुर्य्यात्तन्मध्ये जपमेव च ।
आसनं सुन्दरं कुर्य्यात सव्यासव्यविभेदतः ॥ ९ ॥
आसनादिकमाक्रम्य चोर्द्ध्वं पद्मासनं चरेत् ।
मस्तकाधः केशमध्ये हस्तौ दत्त्वा मनुं जपेत् ॥ १० ॥
चतुरशीतित्रिगुणमासनं भञ्जनं तथा ।
प्रत्यासनं क्रमेणैव एतेषां द्विगुणं पुनः ॥ ११ ॥
एतेषामासनादीनां वक्तव्याः संख्यकाः पुनः ।
अष्टाङ्गसाधने नाथ ! कर्त्तव्यं सर्वमासनम् ॥ १२ ॥
प्राणायामं षोडशकं तथा वा द्वादशादिकम् ।
स्वकर्णगोचरं कृत्वा पिबेद्वायुं सदा बुधः ॥ १३ ॥
ततः समाप्य तत्कार्य्यं मन्त्रयोग समभ्यसेत् ।
समाप्य मन्त्रयोगञ्च प्राणायामत्रयं चरेत् ॥ १४ ॥
तत उत्थाय नद्यादिं विलोक्य चान्तरात्मनि ।
ध्यानं कृत्वा महायोगी मानसादिक्रमेण तु ॥ १५ ॥

तत्रैव मानसं जापं समाप्य जपमेव च ।
एवं प्राणायामकार्य्यं कृत्वा तीरे विशेत् सुधीः ॥ १६ ॥
विधाय पीतवसनं धर्माधर्मं विचिन्तयेत् ।
ततः सन्ध्यावन्दनञ्च कृत्वा पूजाविधिं चरेत् ॥ १७ ॥
सर्वत्र कुम्भकं कृत्वा भावयित्वा पुनः पुनः ।
मणिपूरे महापीठे ध्यात्वा देवीं कुलेश्वरीम् ॥ १८ ॥
पूजयित्वा विधानेन प्राणायामं पुनश्चरेत् ।
ततः कुर्य्यात् साधकेन्द्रो विधिना कवचं स्तवम् ॥ १९ ॥
सर्वत्र प्राणसंयोगात् योगी भवति निश्चितम् ।
अथवा कालजालानां वारणाय महाऋषिः ॥ २० ॥
एतत्कार्य्यं समाकुर्य्यात् योगनिर्णयसिद्धये ।
विना योगप्रसादेन स कालस्य वशो भवेत् ॥ २१ ॥
कालेन योगमाप्नोति योगाधीनं स्वकालकम् ।
योगाधीनं परं ब्रह्म योगाधीनं परं तपः ॥ २२ ॥
योगाधीना सर्वसिद्धिस्तस्मात् योगं समाश्रयेत् ।
योगेन ज्ञानमाप्नोति ज्ञानान्मोक्षमवाप्नुयात् ॥ २३ ॥
तत्क्रमं शृणु भूचक्रे सर्वसिद्ध्यादिसाधनम् ।
सिद्धिसाधनमात्रेण योगी भवति भूपतिः ॥ २४ ॥
शीघ्रं राजा भवेद्योगी शीघ्रं योगी भवेत् यतिः ।
शीघ्रं योगी भवेद् विप्रो यदि स्वधर्ममाश्रयेत् ॥ २५ ॥
स्वधर्मनिष्ठताज्ञानं स्वज्ञानं परमात्मनः ।
तज्ज्ञानेन लभेत् योगं योगाधीनाश्च सिद्धयः ॥ २६ ॥
सिद्ध्यधीनं परं ब्रह्म तस्मात् योगं समाश्रयेत् ।
स्वधर्मनिष्ठताज्ञानं सत्यज्ञानं समाश्रयेत् ॥ २७ ॥
योगयोगाद्भवेन्मोक्षो मम तन्त्रार्थनिर्णयः ।
योगी ब्रह्माद्यवादी च तथा योगी महेश्वरः ॥ २८ ॥

तथा योगी भवेत् कौलः कौलो योगी न संशयः ।
मणिपूरभेदने तु यत्नं कुर्य्यात् सदा बुधः ॥ २९ ॥
यदि चेन्मणिपूरस्थ-देवताभेदको भवेत् ।
सर्वज्ञः सुखी भूत्वा चिरं तिष्ठति निश्चितम् ॥ ३० ॥
महाप्रभं सुन्दरञ्च महामोहविघातनम् ।
मेघाभं विद्युदाभञ्च पूर्णतेजोमयं परम् ॥ ३१ ॥
मणिभिर्ग्रथितं पद्मं मणीनां चयमेव च ।
सूर्य्यकान्तैश्चन्द्रकान्तैर्महानीलैर्महोज्ज्वलैः ॥ ३२ ॥
इत्यादि मणिभिः सर्वं परं कान्तिगुणोदयम् ।
निविड़े जलदे मेघे कोटिविद्युत्प्रभा यथा ॥ ३३ ॥
तत्प्रकारं भावनीयं सिद्धानां ज्ञानगोचरम् ।
अत्यन्तसूक्ष्ममार्गस्थं नित्यस्थानं हि योगिनाम् ॥ ३४ ॥

मणिपूरचक्रसाधनम् ।—

मणिभिः शोभितं पद्मं मणिपूरं तथोच्यते ।
दशकोमलपत्रैश्च समायुक्तं मनोहरम् ॥ ३५ ॥
डादिफान्तवर्णयुक्तं स्थिरविद्युत्समाकुलम् ।
शिवेनाधिष्ठितं पद्मं विश्वालोकनकारकम् ॥ ३६ ॥
आदौ वर्णरूपकाणां ध्यानं कुर्य्यात् सुधामयः ।
महापद्मे मनो दत्त्वा निर्मलं परिभावयेत् ॥ ३७ ॥
डादिभान्ताक्षराणाञ्च ध्यानात् ज्ञानस्थिरो भवेत् ।
चित्तस्थैर्य्यमुपागम्य दिव्यभक्तिं समालभेत् ॥ ३८ ॥
वर्णध्यानं प्रवक्ष्यामि शृणुष्व परमेश्वर ! ।
यद्विभाव्याऽमरो भूत्वा चिरं तिष्ठति मानवः ॥ ३९ ॥
महाधैर्य्यक्रियां कुर्य्याद्वायुपानं शनैः शनैः
यत्र यत्र मनो याति तन्मयस्तत्क्षणाद्भवेत् ॥
पूर्वादिदलमारभ्य ध्यानं कुर्य्यात् पृथक् पृथक् ॥ ४० ॥

डां डां डां डाकिनीं तां डमरुवरकरां तारिणीं ताररूपां
डिं डिं डिं डामरस्थां डमरुडमरुटहे डङ्गडिङ्गीं मनुस्थाम् ।
डं डं डं डामरेशीं डिमि डिमि डिमगध्वाननिर्माणडोरां
डौं डौं डौं डाकडं डः प्रडुमडमुडां दाडिमामाश्रयामि ॥ ४१ ॥
ढां ढां ढां गाढ़ढक्का वरकरसुकराषाढ़माबाढ़मन्त्रां
चिं चिं चिं नागरूपां भज भज विमलानन्दचित्तप्रकाशाम् ।
श्रीं ढें ढें वज्रढां स्वाखवटखड़गणां स्वाहयार्चों च वीजाम्
ढौं ढौं ढौं ढक्कढाकां प्रियढक्करुणाकामिनीं लाकिनीं ताम् ॥ ४२ ॥

तारातारकमन्त्रजालविमलां तात्र दिसिद्धिप्रदां
तातङ्कानिभतेजसां सुनिमनोधीनं वहन्तीं पराम् ।
तार्त्तीयां तुलसीं तुलां तनुतटां तर्कोद्भवां तान्त्रिकां
श्रीसूर्य्यायुततेजसीं भज मनः श्रीमातरं तापसीम् ॥ ४३ ॥

व्यग्रस्थां स्थानसुस्थां स्थितिपथपथिकां थार्णकूटां थमानीं
गाथां गाथां विमोथां थमिति थमिति थं वह्निजायां स्थिराशाम् ।
चन्द्रज्योत्स्नास्थलस्थां स्थिरपदमयनामुज्ज्वलामासनस्थां
स्थेयां स्थैर्य्याभिरामां प्रणवनवसुधां चन्द्रवर्णां भजामि ॥ ४४ ॥
द्रां द्रीं द्रूं दीर्घदंष्ट्रां दशनभयकरां साट्टहासां कुलेशीं
दं दं दं वह्निकान्तां दरदलितकराह्लाददीर्वां दवाद्याम् ।
दोषैर्द्वावाप्रहन्त्रीं दिविदरणदशादायिनीमादरास्थां
शिष्टाह्लादप्रदीप्तामखिलधनमदां दीपनीं भावयामि ॥ ४५ ॥
धन्यां श्रीध्र नसिद्धां धरणिवरधरां धूमधूमावतीं तां
धुस्तूराकारवस्त्रां कुवलयधरणीं धारयन्तीं कराब्जम् ।
विद्युन्मध्यार्ककोटिज्ज्वलनधरसुधां कोकिलाचीं सुसूक्ष्मां
ध्यानाह्लादादिशुद्धिं धवनधननिधिं सिद्धिविद्यां भजामि ॥ ४६ ॥
नित्यां नित्यपरायणां त्रिनयनां बन्धूकपुष्पोज्ज्वलां
कोटिश्रकांयुतसंस्थिरां नवनवां हस्तद्वयाम्भोरुहाम् ।

नानालक्षणधारणामलविधु-श्रीकोटिरांश्मांस्थिताम्
सानन्दां नगनन्दिनीं त्रिगुणगां नं नं प्रभां भावयेत् ॥ ४७ ॥
प्रीतिं प्रेममयीं परात्परतरां प्रेष्ठप्रभापूरितां
पूर्णां पूर्णगुणोपरि प्रलपनां मांसप्रियां पञ्चमाम् ।
व्यापारोपनिपातकापलपनां पानाय पीयूषणां
चित्तप्रापकपीतकान्तवसनां पौराणिकीं पार्वतीम् ॥ ४८ ॥
स्फें स्फें स्फें फणिवाहनां फणफणां फुल्लारविन्दाननां
फेरूणां वरघोरनादविकटास्फालप्रफुल्लाननाम् ।
फं फं फं फणिकङ्कणं फडिति वा मन्त्रैकसिद्धेः फणां
भक्त्या ध्यानमहं करोमि नियतं वाञ्छाफलप्राप्तये ॥ ४९ ॥

विद्युताकारमध्ये तु विजुलीरक्तवर्णकान् ।
एवं ध्यायन् दश वर्णान् रक्तविद्युद्गणोद्यतान् ॥ ५० ॥
सदा ध्यायेत् कुण्डलिनीं कर्णिकामध्यकाशिनीम् ।
बहुहस्तां विशालाक्षीं चन्द्रावयवलक्षणाम् ॥ ५१ ॥
चारुचल(न्द)नदीवाङ्गीं फणिहारविभूषणाम् ।
द्विभुजां कोटिकिरणां भालसिन्दूरशोभिताम् ॥ ५२ ॥
त्रिनेत्रां कालरूपस्थां लाकिनीं लयकारिणीम् ।
सिद्धिमार्गसाधनाय ध्यायेद्वर्णान् दश क्रमात् ॥ ५३ ॥
चतुर्भुजां षड्भुजाञ्च अष्टहस्तां प्रभापराम् ।
दुर्गां दशभुजां देवीं निजवाहनसुस्थिताम् ॥ ५४ ॥
सर्वास्त्रधारिणीं सर्वां दशहस्तास्त्रशोभिताम् ।
चतुर्दशभुजां रौद्रीं तथा षोड़शश(पा)लिनीम् ॥ ५५ ॥
अष्टादशभुजां श्यामां हस्तविंशतिधारिणीम् ।
एवं ध्यात्वा पूजयित्वा रुद्राणीस्तोत्रमापठेत् ॥ ५६ ॥

इति श्रीरुद्रयामले उत्तरतन्त्रे महातन्त्रोद्दीपने सिद्धमन्त्रप्रकरणे षट्चक्रप्रकाशे भैरवी-भैरव-संवादे मणिपूरचक्रसाधनं नाम षट्चत्वारिंशः पटलः ॥ ४६ ॥

आनन्दभैरव्युवाच।—

शृणु भैरव! वक्ष्यामि रुद्राणीस्तोत्रमुत्तमम्।
श्रुत्वा पठित्वा देवेश! धारयित्वा स्वदेहके ॥ १ ॥
महासिद्धो भवेदेव महाकालात्मको भवेत्।
त्रैलोक्यरक्षणार्थाय ब्रह्मणा विष्णुना कृतम् ॥ २ ॥
रुद्रयुक्तां महारौद्रीं श्रुत्वा सर्वजयी भवेत्।
तत् श्रुत्वा मुनयः सर्वे योगिनो योगदर्शकाः ॥ ३ ॥
सर्वे देवाः सर्वलोकाऽधिपाः स्युः प्राणरक्षकाः।
एतत्स्तवनमात्रेण ब्रह्मा ब्रह्मत्वमाप्नुयात् ॥ ४ ॥
विष्णुर्विष्णुत्वमाप्नोति देवत्वं सर्वदेवताः।
इदानीं शृणु तत्स्तोत्रमष्टाङ्गयोगसाधनम् ॥ ५ ॥
एतत्स्तोत्रस्यपाठेन चाष्टाङ्गकुलदेवताः।
वशीभूता भवन्त्येव सप्तस्वर्गस्थदेवताः ॥ ६ ॥

रुद्राणीस्तोत्रम्।—

अस्य महारुद्रशक्तिस्तोत्रस्य महाकालभैरवऋषिरनुष्टुप् छन्दः श्रीरुद्ररूपिणी देवता वां बीजं द्रां शक्तिः स्फें स्फें कीलकं महोग्रा देवता सर्वाभीष्टसिद्ध्यर्थे जपे विनियोगः।

महारौद्री रुद्रारुणवरवरक्रोधनिकरा
विकारा धर्माणां हरतु विषयं देहि परमम्।
विवेकं सत्पुत्रं त्वमपि जगतामादिपुरुषा
विभाकोटिग्रामस्खलनमिचला चालनचला ॥ ७ ॥
त्वमेका त्रैलोक्यं चरसि सततं मे शुभभवा
अनन्ता सा चातीन्द्रियगणधना नागवसना।
श्रियं दातुं नित्यं विचलति रश्मिस्तव शिवे!
शिवाह्लादानन्दा जड़िततममङ्ग कुरु मुदा ॥ ८ ॥

महालोभं पापं हर हर हरे हीरकनिभे!
विषानन्दोद्दाता मम तनुरियं वेगवशिनि!।
सुधानन्दं देहि क्षयमपि हर क्रोधमतुलं
यदा कामं मोहं कुलजननि! दिव्यं वितर तत् ॥९॥
तपस्या सद्भावं त्वमपि च ददासीह यदि वा
प्रदीप्ता सद्व्याप्ता भवति तव दाने मम मनः।
प्रफुल्लातिश्रीदे जय मम नु भक्तिं निजशुभां
समीड़े त्वामेकां भुवनजनरक्षां कुरु सदा ॥ १० ॥
विचार्ये स्वे तन्त्रे रचयसि सुखं नित्यमिलितं
महाखड्गप्रख्या त्रिभुवनकरा रुद्रदयिता।
सुराणां संरक्षां यदि कुरु मुदा पीठनिकरे
मणिद्वीपे तेजोमयि हि मणिपूरेऽमलपदम् ॥ ११ ॥
महाक्षेत्रे युद्धोत्सवभयहरा त्वं कुलकला
किराती सर्वाणी मम कुलगतं पालय लये।
लयज्ञानानन्दं रचय हृदये योगजननि!
यतीनां रक्षायै कुलयुवति विद्ये! त्वमपि हि ॥ १२ ॥
प्रतिष्ठा कीर्त्तिस्ते त्वमवतमसि त्रासि तिमिरात्
न जाने त्वत्तत्त्वं तरुणि! महिमानं सुखमयम्।
महापारावारां निधिभवजलेशं कुरु जयं
हिरण्याह्लादस्था त्वमसि करुणासागरमयि! ॥ १३ ॥
विधातारं विष्णुं सुरचरणवन्दिन् परजनान्
प्रपासि त्वं सिद्धा सुखभुवनभङ्गक्षयकरी।
किरन्ती सानन्दा किरणशतकोटिं त्रिभुवने
त्वमेका कल्याणी गिरिशरमणि! पाहि सततम् ॥१४॥
त्वदीयं सुखान्तं समिच्छामि सत्यं
विसर्गेन्दुवर्णात्मकं कामनाख्यम्।

कृपादृष्टिपातासनं पाहि शुद्धा
त्वमेका परं ब्रह्मरूपेण सिद्धा ॥ १५ ॥
जगत्तारिणी त्वं जगद्व्यापिनी त्वं
जगज्जालरूपा जगद्धर्मरूपा ।
अनैकान्तिकत्वात्त्वमानन्दरूपा
त्वमेका परं ब्रह्मरूपेण सिद्धा ॥ १६ ॥
विधानं जनानां कुरु त्वं त्वमीशा
सपाद्यामचित्ता प्रियानन्ददात्री ।
त्वमाद्याम्बुजस्था त्वमार्या गुरूणां
त्वमेका परं ब्रह्मरूपेण सिद्धा ॥ १७ ॥
प्रभामण्डलस्था स्थितित्यागसंस्था
स्थलाम्भोजमानादया लग्नकण्ठा ।
शिवश्यामवर्णा महापिङ्गलार्णा
त्वमेका परं ब्रह्मरूपेण सिद्धा ॥ १८ ॥
चतुर्थश्रुतिस्था चलच्चन्द्रसंस्था
महावेदभाषा त्वमेका जगत्याम् ।
महाभक्तिभावाश्रितं मां पाहि
त्वमेका परं ब्रह्मरूपेण सिद्धा ॥ १९ ॥
जगद्धामचेष्टा जगद्बुद्धिनिष्ठा
जगद्यौवनस्था जगद्भावनस्था ।
समावर्त्तमध्ये महाघूर्णितं मां
त्वमेका परं ब्रह्मरूपेण सिद्धा ॥ २० ॥
महासृष्टिसंहारकालक्रमस्था
महामांसभक्षा सदानन्दरूपा ।
महाशाक्यमौनीन्द्रपूज्ये सुरेज्ये
त्वमेका परं ब्रह्मरूपेण सिद्धा ॥ २१ ॥

चतुःषष्टितन्त्रार्णवाह्लादकत्वात्
महाभौतिकत्वान्महासिद्धविद्या ।
छलच्छिन्नदेहा छलानन्दसंज्ञा
त्वमेका परं ब्रह्मरूपेण सिद्धा ॥ २२ ॥
शिवत्वं महत्त्वं मयत्वामयत्वात्
अनैकान्तिकत्वं ददासि त्वमाद्या ।
सुधासागरस्था महामोहनस्था
त्वमेका परं ब्रह्मरूपेण सिद्धा ॥ २३ ॥
महासिंहपृष्ठे पदाम्भोजलक्ष्मी-
र्मम श्रीशिरोमण्डलस्था प्रपातु ।
भवानन्दसन्तानकल्पे वदेऽहं
त्वमेका परं ब्रह्मरूपेण सिद्धा ॥ २४ ॥
स्थिरा सा महाविद्युदाकारहारा
महच्चञ्चला चाचला ज्ञानजन्या ।
सदा भावनत्वात् सदा ज्ञानसंस्था
त्वमेका परं ब्रह्मरूपेण सिद्धा ॥ २५ ॥
कुलानन्दमोहा महाकौलकन्या
कुलचेत्ररचा कुलच्छत्रकारा ।
महच्चञ्चलत्वान्महावायुपूर्णा
त्वमेका परं ब्रह्मरूपेण सिद्धा ॥ २६ ॥
चिरं जीविनो भामिनी भूमिवीजा-
ऽभयाऽभावहन्त्री शरत्कोटिचन्द्रा ।
विभूतिर्भवानन्दकर्त्री प्रकृष्टा
त्वमेका परं ब्रह्मरूपेण सिद्धा ॥ २७ ॥
महावीरभावाश्रया भावरूपा
विशेषाविशेषे महाशिववीरा ।

विसर्गापवर्गाश्रयाणोज्ज्वलत्वात्
त्वमेका परं ब्रह्मरूपेण सिद्धा ॥ २८ ॥
महापद्ममत्वान्महामोदकत्वात्
महाकौलिकत्वादसञ्चारणत्वात् ।
कुलप्रेमभावक्रियानिश्चलत्वात्
त्वमेका परं ब्रह्मरूपेण सिद्धा ॥ २९ ॥
रसा सिद्धिदात्री शिवानन्दकर्त्री
महामैथुनानन्दसम्भेदनत्वात् ।
सुखाश्वासतत्त्वात्तपःप्राणरत्ना
त्वमेका परं ब्रह्मरूपेण सिद्धा ॥ ३० ॥
गलत्प्रेमभावा कुलज्ञानतत्त्वात्
प्रिया श्रीः कृपा त्वं भवाधारमुक्तिः ।
महैश्वर्यहेतोर्महाराजकन्या
त्वमेका परं ब्रह्मरूपेण सिद्धा ॥ ३१ ॥
महामोक्षविद्या महानिर्मलत्वात्
प्रभा पञ्चभूतस्य सिद्धिप्रिया च ।
महानादबिन्दुप्रयाणाभिरामा
त्वमेका परं ब्रह्मरूपेण सिद्धा ॥ ३२ ॥
महाविद्रुमाकारवर्णाभिरामा
कुलाह्लादसूत्रादिसंसाधनत्वात् ।
महद्राज्यविद्याधनैः सञ्चितत्वात्
त्वमेका परं ब्रह्मरूपेण सिद्धा ॥ ३३ ॥
शिवत्वं शुभत्वं महाशैलकन्ये !
प्रियत्वं परत्वं महापावनत्वम् ।
समाधेर्हि तत्त्वादनेकान्तिकत्वात्
त्वमेका परं ब्रह्मरूपेण सिद्धा ॥ ३४ ॥

महच्चेतनादानकात् त्वमेका
ह्यसंख्या मतीनां मनोयोगमुख्या ।
विरोधापहन्त्री रिपुप्राणहन्त्री
त्वमेका परं ब्रह्मरूपेण सिद्धा ॥ ३५ ॥
चतुर्विंशतिक्रोधतत्त्वानुकूले !
वियत्खण्डचण्डाकुले कौलसंख्या ।
सदा मां प्रपातु प्रचण्डार्कवर्णा
त्वमेका परं ब्रह्मरूपेण सिद्धा ॥ ३६ ॥
शुभा कामधेनुस्वरूपा स्वदेहे
सदा नन्ददा श्रद्धया चारुवर्णा ।
हिमांशुप्रभाकोटिवर्णा ह्यपूर्णा
त्वमेका परं ब्रह्मरूपेण सिद्धा ॥ ३७ ॥
महाकामबीजान्वितं खण्डयन्ती
महादोषजालं शनैरावहन्ती ।
शिवा भद्रकाली स्थिरानन्दमाला
त्वमेका परं ब्रह्मरूपेण सिद्धा ॥ ३८ ॥
हरन्ती विषान्नं वहन्ती फलाढ्यं
रटन्ती विलोला भ्रमन्ती जपन्ती ।
श्रियः पालनी पालिका बालिकत्वात्
त्वमेका परं ब्रह्मरूपेण सिद्धा ॥ ३९ ॥
सदानन्दहेतोः सदानन्ददात्री
पदाम्भोजमध्ये मनोयोगकाले ।
परा सेव्यते कामसंचालनत्वात्
त्वमेका परं ब्रह्मरूपेण सिद्धा ॥ ४० ॥
क्षितिक्षोभनाशाय सिद्धादिविद्या
कुलाढ्याऽखिलाढ्याऽऽनना सूक्ष्ममध्या ।

प्रयत्नं करोषि च्चयानन्ददानात्
त्वमेका परं ब्रह्मरूपेण सिद्धा ॥ ४१ ॥
महाधैर्य्यमाहृत्य जंजप्यते यैः
तवाद्याभिधानानि कालि ! प्रभाते ।
तदैवापि काले ददासीह सिद्धिं
त्वमेका परं ब्रह्मरूपेण सिद्धा ॥ ४२ ॥
चिरं स्थापयन्ती चिरं भासयन्ती
त्वमाद्या गुरूणां कुलानन्दविद्ये ! ।
स्वधाकारतुष्टा कला वह्निजाया
त्वमेका परं ब्रह्मरूपेण सिद्धा ॥ ४३ ॥
सुरानन्दकाले फलोद्भूतचिह्ना
चितामध्यदेशे महासिद्धिदात्री ।
विभिन्नाविभिन्ना महारुद्रविद्ये !
त्वमेका परं ब्रह्मरूपेण सिद्धा ॥ ४४ ॥
महापूर्वि ! कात्यायनि ! क्रोधमूले !
विवेकादिकं धर्ममादौ ददासि ।
त्रयाणां सुराणां मुदा रक्षणाय
त्वमेका परं ब्रह्मरूपेण सिद्धा ॥ ४५ ॥
विशुद्धस्फुटत्वान्महाकौतुकत्वात्
तनुध्यानमोहादनन्ता कृतत्वात् ।
कुलारक्षणात्मा महालक्षणात्मा
त्वमेका परं ब्रह्मरूपेण सिद्धा ॥ ४६ ॥
दहन्ती रिपूणां कुलच्छत्रदेशं
सदा ज्ञानगम्याखिलानां जनानाम् ।
ममानन्ददेशं सदा पालय श्रीः
त्वमेका परं ब्रह्मरूपेण सिद्धा ॥ ४७ ॥

चतुर्थाश्रमस्था शिवे ! पाहि रुद्रे !
महोग्रप्रतापे ! महारौद्रि ! भद्रे ! ।
महापातकादिक्षयत्वामृतत्वात्
त्वमेका परं ब्रह्मरूपेण सिद्धा ॥ ४८ ॥
महावायुवश्ये ! महाज्ञानवश्ये !
महातन्त्रजाप्यादिसिद्धिप्रसिद्धे ! ।
लयं देहि वाह्याऽनिलाऽऽघातनत्वात्
त्वमेका परं ब्रह्मरूपेण सिद्धा ॥ ४९ ॥
न जानाति किंवाऽमरो वापि विष्णु-
र्महाकौलिको वा न जानाति पूजाम् ।
कुलं सेवनान्तस्तवेन्द्रादिपाठं
त्वमेका परं ब्रह्मरूपेण सिद्धा ॥ ५० ॥
मदीयं प्रलोभ्यं महाभद्रकालि !
प्रकाशेन कर्त्तुं समर्था भव त्वम् ।
पदाब्जे च हन्तुं महापापसर्गं !
त्वमेका परं ब्रह्मरूपेण सिद्धा ॥ ५१ ॥
वहन्ती कपालं स्खलन्ती महार्थं
महाडिम्भमालाऽमलाकाशपात्री ।
शिवा त्वरूपा च सुवेश्या नरेशे
त्वमेका परं ब्रह्मरूपेण सिद्धा ॥ ५२ ॥
प्रचण्डा प्रसन्ना भवक्षोभहेतो-
र्विवादादिघाताय शान्तिः प्रतुष्टिः ।
कियत्कालसंस्था प्रसन्नान्तरात्मा
त्वमेका परं ब्रह्मरूपेण सिद्धा ॥ ५३ ॥
महावायुपाना क्रियामोक्षकाले
कुलज्ञानदानार्थिनी रूपिणी त्वम् ।

प्रभुत्वं विधेहि चमे ! कामकर्त्री
त्वमेका परं ब्रह्मरूपेण सिद्धा ॥ ५४ ॥
यदि श्रीवराद्ये समाख्या समिद्धिं
विदेहीति चित्ते समाधाय भक्तः ।
समाप्नोति शीघ्रं सदा प्रार्थ्यते यैः
सदा पश्यते वा मुदा वारमेकम् ॥ ५५ ॥
महाकालशम्भो ! महाज्ञानसिद्धः
सदा कालवश्यः पठेदेकचित्तः ।
महाभक्तिभावं लभस्वाव्यभक्तिं
महादेवभक्तिं त्रिकालेन योगम् ॥ ५६ ॥
मणौ पीठमध्ये महाब्रह्मकान्ता
महालाकिनीकुण्डलं भावयन्ती ।
महापुण्यलाभं स्तवं ब्रह्मसारं
महाकान्तलाभाय पुण्याय सिद्धेः ॥ ५७ ॥
महाकालि ! रुद्राणि ! कृष्णे ! प्रपूज्ये !
तवानन्दमूर्त्तिप्रकाशाय कुर्य्यात् ।

* * *

किलानन्दमाकृत्य संपूज्यते यैः ॥ ५८ ॥
महादेवि ! चण्डे ! तव ध्याननिष्ठः
महामोक्षभावं समाप्नोति शीघ्रम् ।

* * *

स एको महाकालरूपी क्षितौ स्यात् ॥ ५९ ॥

इति श्रीरुद्रयामले उत्तरतन्त्रे महातन्त्रोद्दीपने सिद्धमन्त्रप्रकरणे षट्चक्रप्रकाशे भैरव-भैरवीसंवादे सप्तचत्वारिंशः पटलः ॥ ४७ ॥

अष्टचत्वारिंशः पटलः ।

श्रीआनन्दभैरव्युवाच ।—

शृणु कैलासनाथाद्य ! चक्रमण्डलसंस्थितिम् ।
षट्चक्रभेदमाहात्म्यं सावधानोऽवधारय ॥ १ ॥
अप्रकाश्यमिदं मन्त्रं मणिपूरविभेदनम् ।
अष्टैश्वर्य्यसाधनाय जीवन्मुक्तप्रदाय च ॥ २ ॥
कथयामि महाकाल ! यज्ज्ञात्वा योगिनोऽमराः ।
क्रियासाधनमात्रेण किं न योगिन एव हि ? ॥
साधनादेव सर्वज्ञः सर्वार्थज्ञानवान् भवेत् ॥ ३ ॥
रुद्राणीसहितं रुद्रं ध्यात्वा संपूज्य संजपेत् ॥ ४ ॥
अथ वक्ष्ये महामन्त्रं पूजाप्रकरणं तथा ।
मणिपूरे स्थितो मन्त्री रुद्राणीयजनं चरेत् ॥ ५ ॥

रुद्राण्या रुद्रस्य च मन्त्रोद्धारः ।—

सम्प्रति मन्त्रस्योद्धारं करोमि कालकूटप ! ।
प्रणवं पूर्वमुच्चार्य्य नमः शब्दं ततो वदेत् ॥ ६ ॥
ते शब्दान्ते समुद्धृत्य रुद्रशब्दं ततः परम् ।
रूपिणे पदमुच्चार्य्य रुद्राणीमन्त्रमीरितम् ॥ ७ ॥
ततो महारुद्रमन्त्रं वक्ष्यामि तत्त्वतः शृणु ।
प्रणवान्ते नमः शब्दं ते महाशब्दमुच्चरेत् ॥ ८ ॥
रुद्राय पदमुद्धृत्य महारुद्रमनुः स्मृतः ।
ततोऽन्यकालरूपेश ! रुद्राणीमन्त्रमाशृणु ॥ ९ ॥
डाःिफान्तैः सर्ववर्णैराद्यन्ते पुटितं मनोः ।
सर्वशेषे वह्निजाया महामन्त्रोत्तमोत्तमः ॥ १० ॥
अस्य जापनमात्रेण षट्पद्मसाधने जयी ।
एवंप्रकारं रुद्रस्य चाथवाऽन्यप्रकारकम ॥ ११ ॥
रुद्राणां त्रिविधं मन्त्रं कोटितन्त्रे विनिर्णयम् ।

मणिपूरे सदा ध्यायेद्योगसाधनहेतुना ॥ १२ ॥

रुद्राणीरुद्रयोः पूजाप्रकरणम् ।—

सर्वत्र मानसं कार्य्यं ध्यानपूजाविधानकम् ।
प्रासादाख्यादिमनुभिर्मृत्युञ्जयादिभिस्तथा ॥ १३ ॥
चैतन्यं कारयेत् शीघ्रं मणिपूरस्थदेवयोः ।
तत्त्वं वक्ष्ये महेशस्य परमात्मानमीश्वरम् ॥ १४ ॥
प्रासादाख्यं महामन्त्रं त्रैलोक्यफलसिद्धिदम् ।
सान्तमोङ्कारसंयुक्तं नादबिन्दुविभूषितम् ॥ १५ ॥
प्रासादाख्यो मनुः प्रोक्तो भजतां कामदो मणिः ।
प्रणवं पूर्वमुच्चार्य्य स्वाहान्तं जपते यदि ॥
स्तम्भनादीनि कर्म्माणि स करोति न संशयः ॥ १६ ॥
अथवा मृत्युजेतारं महामन्त्रं महामनुम् ।
जपेन्मानसजापेन तज्जाप्यं प्राणरक्षकम् ॥ १७ ॥
तारं स्थिरा सकर्णेन्दुर्भृगुः सर्गसमन्वितः ॥ १८ ॥
त्र्यक्षरात्मा निगदितो मन्त्रो मृत्युञ्जयात्मकः ।
अथवाऽन्यप्रकारेण जपेन्मृत्युञ्जयात्मकम् ॥ १९ ॥
मृत्युञ्जयं समुद्धृत्य पालय द्वितयं ततः ।
मृत्युञ्जयं समुद्धृत्य पुनरेव विलोमतः ॥ २० ॥
द्वादशाक्षरमन्त्रोऽयं मृत्युञ्जयाभिधोऽपरः ।
ध्यानं पूजा तथा न्यासं शृणु वक्ष्यामि शङ्कर ! ॥ २१ ॥
रुद्रमन्त्रेण पुटितं योजयेन्मृत्युहारणम् ।
तथापि रुद्रकान्ताया मन्त्रेण पुटितं शिवम् ॥ २२ ॥
जपित्वा पूजयित्वा च नरो योगी भवेद्वशी ।
प्रातःकृत्यादिकं कृत्वा हविष्याशी जितेन्द्रियः ॥ २३ ॥
प्रणिमावधानपरो विधिसेवापरायण ।
स्नानसन्ध्यादिकं कृत्वा आसनादिकमाश्रयेत् ॥ २४ ॥

समाप्य चासनं सर्वं पीतवस्त्रे विधाय च ।
अथवा शुक्लवस्त्रे द्वे परिधाय मनोहरे ॥ २५ ॥
कोमलाद्यासनं गत्वा प्रक्षाल्य पादयुग्मकम् ।
द्विराचम्य विधानेन पूजायां स्वस्तिकासने ॥ २६ ॥
वीरासने तथा पद्मासने योन्यासने तथा ।
उपविश्य निर्मलात्मा पूजामार्गपरो भवेत् ॥ २७ ॥
सर्वाणि भोज्यद्रव्याणि मनसा कल्पितानि च ।
तदलाभे मलाभे वा मनःकल्पितशोधनम् ॥ २८ ॥
करणीयं सर्वदैव निजवाञ्छोऽपि चालयेत् ।
यथालभ्यानि द्रव्याणि सन्तोष्य तत्र योजयेत् ॥२९॥
ततः कुर्य्याद्विशेषेण प्राणायामं मनोरमम् ।
चतुःषष्टिमात्रया वा तथा षोड़शमात्रया ॥ ३० ॥
तद्द्वादशमात्रया वा संख्यया वायुमाश्रयेत् ।
प्राणायामं समाप्याथ रुद्रन्यासं समाचरेत ॥ ३१ ॥
श्रीकण्ठादि महागौर-न्यासं कुर्य्यात् प्रयत्नतः ।
रुद्रन्यासं प्रवक्ष्यामि मनुयोगादिसिद्धये ॥ ३२ ॥
एतन्न्यासादिकरणे नरो रुद्रसमो भवेत् ।
सदा कुर्य्यान्महान्यासं सर्वसिद्धिप्रकाशनात् ॥ ३३ ॥
शक्तिहीनं शक्तियुक्तं महान्यासं प्रकीर्त्तितम् ।
शक्तियुक्तं समाकृत्य महाशक्तो भवेद्वली ॥ ३४ ॥
शक्तिहीनं तथा कार्य्यं सर्वविघ्नविनाशनात् ।
मातृकापद्मचक्रे तु मातृकावर्णसंयुतम ॥ ३५ ॥
मातृकापुटितं मन्त्रं किंवा मन्त्रेण संपुटम ।
कृत्वा मन्त्री न्यासजालं सावधानेन कारयेत् ॥ ३६ ॥
विक्रमी सिंहतुल्यः स्यात् तं दृष्ट्वा यान्ति शत्रवः ।
मौनी भूत्वा समाकृत्य कुलचक्रस्य भेदनम् ॥ ३७ ॥

मणिपूरे स्थितो भूत्वा महातेजोमयो भवेत् ।
तेषां नाम प्रवक्ष्यामि पञ्चाशदेकसंख्यया ॥ ३८ ॥

रुद्रस्य एकपञ्चाशन्नामानि ।—

पञ्चाशदेकशक्तीनां तथा नाम शृणु प्रभो ! ।
सर्वेषामभिधानार्थमीशाय नम उच्चरेत् ॥ ३९ ॥
एकैकं मातृकावर्णं नाम्न आद्ये नियोजयेत् ।
शक्तियुक्तं यदा नाम ईशान्तं सन्त्यजेत्तदा ॥ ४० ॥
भेदनशक्तियुक्तस्तु न्यासं कुर्य्यान्महामतिः ।
कुशासने सिद्धहेतोश्चैलाजिनकुशोत्तरम् ॥ ४१ ॥
बद्धैकमासनं योगी न्यासजालं समाचरेत् ।
अथवा द्वीपिचर्मादि-कोमलाद्यासनेऽपि वा ॥ ४२ ॥
योगाभ्यासी न्यासजालं कृत्वा सारमयो भवेत् ।
भद्रकालीगृहे स्थित्वा ये कुर्वन्ति निरन्तरम् ॥
महान्यासं महादेव ! तत्क्षणादमरो भवेत् ॥ ४३ ॥
आयुरारोग्यसम्पत्तिं सम्प्राप्नोति महत् श्रियम् ॥ ४४ ॥
समायाति मम स्थाने न्यासयोगप्रसादतः ।
न्यासधारणयोगेन मणिपूरेऽपि यो भवेत् ।
आदौ तत्त्वान्तरं पश्चात् यथाशक्त्याभिधानकम् ॥ ४५ ॥
श्रीकण्ठश्चाप्यनन्तश्च सूक्ष्मा त्रिमूर्त्तिरेव च ।
अमरेशोऽर्द्धनारीशो भावभूतिस्ततः परम् ॥ ४६ ॥
अतिथीशः स्थाणुकेशो हरो झिण्टीश एव च ।
भौतिकः सद्योजातश्चाप्यनुग्रहेश्वरस्तथा ॥ ४७ ॥
अक्रूरोऽपि महासेनो निर्जरादिश्च षोड़श ।
एते देवा महारुद्र ! षोड़शस्वरविग्रहाः ॥ ४८ ॥
क्रोधीशश्चापि चण्डेशः पञ्चान्तकः शिवोत्तमः ।
एकरुद्रस्तथा कूर्म्म एकनेत्रेश्वरस्ततः ॥ ४९ ॥

चतुराननोऽजेशश्च सर्वः सोमेश एव च ।
लाङ्गलीशो दारुकेशोऽर्द्धनारीश्वर एव च ।
वाणीशश्च भुजङ्गेशः पिनाकीशस्ततः परम् ॥ ५० ॥
खड्गेशः सुरकेशश्च श्वेतो भृग्वीश एव च ।
नकुलीशः शिवेशश्च सम्वर्त्तकेश एव च ॥ ५१ ॥
एते रुद्राः समाख्याताः सर्वकाले कुलेश्वर ! ।
यस्य नाम्नश्चान्तभागे ईशशब्दो न विद्यते ॥ ५२ ॥
यदा न्यासं प्रकुर्वीत तत्कालेऽपीशयोजनम् ।
अथवा रुद्रशक्त्या च तथा रुद्रेण संपुटम् ॥ ५३ ॥
निजमन्त्रेण वा नाथ ! पुटितं मातृकास्थले ।
शक्त्या च प्रथमं कृत्वा संसारं सन्तरेत् क्षणात् ॥ ५४ ॥

रुद्राणीनामानि ।—

तत्प्रकारं शृणु प्राण-नाथ ! शङ्कर ! वल्लभ ! ।
पूर्णोदरी च गिरिजा शाल्मली तदनन्तरम् ॥ ५५ ॥
लोलाक्षी वर्त्तुलाक्षी च दीर्घघोणा ततःपरम् ।
सुदीर्घमुखी गोमुखी दीर्घजिह्वा ततःपरम् ॥ ५६ ॥
कुण्डोदरी चोर्द्ध्वमुखी तथा विकृतमुख्यपि ।
ज्वालामुखी वह्निमुखी लोलजिह्वा ततःपरम् ॥ ५७ ॥
विद्यामुखी तथा चात्र एताश्च स्वरशक्तयः ।
काद्यार्णशक्तिविद्याश्च वक्ष्यामि पर्वतेश्वर ! ॥ ५८ ॥
महाकालीसरस्वत्यौ महालक्ष्मीस्ततः परम् ।
गौरी त्रैलोक्यविद्या च मन्त्रशक्तिस्ततः परम् ॥ ५९ ॥
आत्मशक्तिर्भूतमाता लम्बोदरी ततःपरम् ।
द्राविणी नागरी भूयः खेचरी चापि मञ्जरी ॥ ६० ॥
रूपिणी विविनी पश्चात् काकोदरी च पूतना ।
भद्रकाली योगिनी च शङ्खिनी गर्जिनी तथा ॥ ६१ ॥

कालरात्रि: कुब्जिका च कपर्दिनी तत:परम्।
वज्रा जया ततो नाथ ! सुमुखेश्वर्य्यपि प्रभो ! ॥ ६२ ॥
रेवती माधवी चैव वारुणी वायवी तथा।
रक्षोविदारिणी चैव सुमहालक्ष्मीरथ प्रभो ! ॥ ६३ ॥
व्यापिनी चैव माया च रुद्राङ्कपीठदेवता:।
सर्वाभरणसंयुक्ता: सिन्दूरारुणविग्रहा: ॥ ६४ ॥
धृतशूलकपालादि-बाणशक्तिप्रखेटका:।
महावराऽभयकरा नित्या: सर्वस्ववाहना: ॥ ६५ ॥
श्रीकण्ठाख्या महारुद्रा धृतशूलकपालका:।
खड्गखेटकशक्तिषु गदामुषलधारका: ॥ ६६ ॥
नानाऽस्त्रधारका नित्या बन्धूककोटिसुन्दरा:।
रक्तचन्दनदिग्धाङ्गा: पञ्चचूड़धरा: परा: ॥ ६७ ॥
रक्तोत्पलमहामालाऽलङ्कारकरपङ्कजा:।
पीठन्यासं तत: कुर्य्यात् मम तन्त्रानुसारत: ॥ ६८ ॥
सर्वत्र मूलपुटितमथवा वर्णसंपुटम्।
कृत्वा पीठन्यासकार्य्यं विधानेन वदामि तत् ॥ ६९ ॥
अं सं ह्यनन्ताय नमश्च नमो हृदि तत:परम्।
ओं पद्माय नम: शब्दं हृदये च तत:परम् ॥ ७० ॥
ओं अं सूर्य्यमण्डलाय द्वा-दशकलात्मने तत:।
नम: पदं समुच्चार्य्य चान्ते च हृदये प्रभो ॥ ७१ ॥
ओं उं सोममण्डलाय षो-ड़शकलात्मने नम:।
सर्वत्र हृदये कार्य्यं पीठन्यासं मनोलयम् ॥ ७२ ॥
ओं मं वह्निमण्डलाय दशकलात्मने नम:।
ओं सं सत्त्वाय नमश्च ओं रं रजसे नम: ॥ ७३ ॥
ओं तं तमसे नमश्च पूर्वादिकेशरेषु च।
ओं आं आत्मने नमश्च ओं सर्वव्यापिने नम: ॥ ७४ ॥

ओं अं अन्तरात्मने च ओं मनोन्मन्यै नमश्च।
तदुपरि ततो वदेत् नमोऽन्ते शून्यवासिने ॥ ७५ ॥
ओं पं परमात्मने च नमोऽन्ते कालरूपिणे।
ओं ह्रीं ज्ञानात्मने चान्ते नमोऽन्ते वर्णवासिने ॥ ७६ ॥
पीठशक्तेस्ततो न्यासं कुर्य्यात् साधकयोगिराट्।
हृत्पद्मस्यापि पूर्वादि-केशरेषु च संन्यसेत् ॥ ७७ ॥
ओं वामायै नमश्चान्ते नम: शब्दं पुनर्वदेत्।
ओं सर्वभूतदमन्यै नम: शब्दं समाचरेत् ॥ ७८ ॥
एता विन्यस्य देवेश ! मध्ये विन्यासमाचरेत्।
हृत्पद्मस्य कर्णिकायां कृत्वा भावनमाचरेत् ॥ ७९ ॥
ओं नमो भगवतेऽन्ते सकलपदमुच्चरेत्।
गुणाय शक्तियुक्ताय अनन्ताय पदं तत: ॥ ८० ॥
योगपीठाय नारद ऋषिरस्य प्रकीर्त्तित:।
महेश्वरमुखात् ज्ञात्वा य: साक्षात्तपसा मनुम् ॥ ८१ ॥
संसाधयति शुद्धात्मा स तस्य ऋषिरीरित:।
गुरुत्वान्मस्तके चास्य समस्त: परिकीर्त्तित: ॥ ८२ ॥
सर्वेषां मन्त्रतत्त्वानां छादनाच्छन्द इष्यते।
अक्षरत्वात् पदत्वाच्च मुखच्छन्द: समीरितम् ॥ ८३ ॥
सर्वेषामेव जन्तूनां भाषणात् प्रबलात्तथा।
हृदयाम्भोजमध्यस्था देवता तत्र तां न्यसेत् ॥ ८४ ॥
ऋषिच्छन्दोऽपरिज्ञानान्न मन्त्रफलभाग् भवेत्।
दौर्बल्यं याति मन्त्राणां विनियोगमजानताम् ॥ ८५ ॥
न्यसेन्मूर्ध्नि ऋषिन्यासं छन्दोन्यासं मुखाम्बुजे।
देवतान्यासमाकुर्य्यात् हृदयाम्भोरुहे सुधी: ॥ ८६ ॥
मूले गुह्ये बीजन्यासं शक्तिन्यासन्तु पादयो:।
सर्वाङ्गे कीलकन्यासमाचरेत् यत्नत: शुचि: ॥ ८७ ॥

शिवशक्त्यात्मकन्यासं शिरस्येव समाचरेत् ।
शिरसि प्राणरचाय विष्णवे ऋषये नम: ॥ ८८ ॥
मुखे पंक्तिच्छन्दसे वै वं नम: शब्दमुच्चरेत् ।
हृदि च महारुद्राय शक्तियुक्ताय संवदेत् ॥ ८९ ॥
देवतायै नम: शब्दं करन्यासं ततश्चरेत् ।
ततोऽङ्गन्यासमाकृत्य ध्यानं कुर्य्यात् प्रयत्नत: ॥ ९० ॥
वराभयकरं दिव्यं पद्ममेकं विकस्वरम ॥ ९१ ॥
एवं ध्यात्वा मानसैश्च संपूज्यार्घ्यविधिं चरेत् ।
कृत्वार्घ्यं रुद्रमन्त्रेण पीठपूजां समाचरेत ॥ ९२ ॥
वामा ज्येष्ठा तथा रौद्री काली कलपदादिका ।
विकरण्यचरा प्रोक्ता बलविकरण्यादि च ॥ ९३ ॥
बलप्रमथनी पश्चात् सर्वभूतदमन्यथ ।
मनोन्मनीति संप्रोक्ता: शिवस्य पीठशक्तय: ॥ ९४ ॥
पूजयेन्नन्दपुष्टाद्यै: पीठशक्ती: क्रमेण तु ।
प्रणवादि नमोऽन्तेन पूजा कार्य्या विधानत: ॥ ९५ ॥
पुनर्ध्यात्वा च पाद्यार्घ्यैरावाह्य परिपूजयेत् ।
पाद्यमर्घ्यमाचमनीयं स्नानीयं पुनराचमम् ॥ ९६ ॥
गन्धपुष्पविल्वदलै: पूर्वावरणमर्चयेत् ।
वं हृदयाय नम इत्यादि षड़ङ्गपूजनम् ॥ ९७ ॥
मध्यचतुर्दिक्षु चैवं शेषे वारद्वयं वदेत् ।
इन्द्रादीन् लोकपालांश्च पूजयित्वा ततोऽर्चयेत् ॥ ९८ ॥
वज्रादींश्च महाकाल ! धूपदीपैर्निवेदयेत् ।
नैवेद्यं वन्दनं कृत्वा पानार्थं जलदानकम् ॥ ९९ ॥
शरीरशोधनं कृत्वा प्राणायामं ततश्चरेत् ।
जपेत शतत्रयं मन्त्रं साधक: शुद्धमानस: ॥ १०० ॥
अष्टोत्तरं योजयित्वा गजान्तकसहस्रकम् ।

अथवाऽष्टोत्तरशतं जप्त्वा समर्पणं चरेत् ॥ १०१ ॥
प्राणायामत्रयं कुर्य्यान्निजमन्त्रस्य सिद्धये ।
तत: प्रणाममाकुर्य्यात् शक्तिचैतन्यहेतुना ॥ १०२ ॥
"नमो रुद्राय देवाय कोटिसूर्य्येन्दुमूर्त्तये ।
सर्वाय ज्ञानदात्रे च नमस्ते शूलधारिणे ॥ १०३ ॥
नमस्ते कालरुद्राय कालाय वेदरूपिणे ।
वेदमार्गदर्शकाय शत्रुसंचयकारिणे ॥ १०४ ॥
रुद्राय शक्तियुक्ताय शङ्कराय नमो नम: ।
चतुर्भुजाय देवाय महाकाशस्वरूपिणे ॥ १०५ ॥
वरपद्मशूलखड्ग-धारिणे च नमो नम: ।"
रुद्रशक्त्यर्चनं कृत्वा महारुद्रेण संयुतम् ॥
मणिपूरे दृढ़ो याति सत्यं सत्यं कुलेश्वर ! ॥ १०६ ॥
शक्त्यर्चनविधिं वक्ष्ये मूलमन्त्रेण पूजनम् ।
सर्वत्र कारयेन्मन्त्री अष्टैश्वर्य्यजयाय च ॥ १०७ ॥

ऋष्यादिन्यास: ।—

आदौ ऋषिन्यासकार्य्यं वक्ष्यामि शृणु तत्त्वत: ॥ १०८ ॥
शिरसोह रुद्रशक्तिर्महाविष्णुपदं तत: ।
ऋषये नम उच्चार्य्य मुखे हस्तं नियोजयेत् ॥ १०९ ॥
पंक्तिछन्दसे नमश्च हृदि हस्तं नियोजयेत् ।
महारुद्राणीति पदं लाकिनी-पदमेव च ॥ ११० ॥
विभक्त्यन्ते महाविद्या-देवतायै नमस्तत: ।
गुह्ये श्रीं पदमुच्चार्य्य निजवीजाय ते नम: ॥ १११ ॥
सर्वाङ्गे सकलायेव वज्राय कीलकाय च ।
नम: पदं समुच्चार्य्य ऋष्यादिन्यासमेव च ॥ ११२ ॥
रुद्रवत् सकलं कार्य्यं कराङ्गन्यासकर्मणि ।
आदावङ्गादिकान्यास: करशुद्धिस्तत: परम् ॥ ११३ ॥

अङ्गुलीव्यापकन्यासो हृदादिन्यास एव च।
रुद्रशक्तिमहाषोढा-न्यासश्च तदनन्तरम्॥ ११४॥
मन्त्रन्यासं ततः कृत्वा व्यापकन्यासमाचरेत्।
तालत्रयञ्च दिग्बन्धः प्राणायामस्ततः परम्॥
ध्यानं कुर्य्याद्विशेषेण रुद्रशक्त्या महाप्रभो!॥ ११५॥
रुद्राणीं रुद्रकान्तां नवरसजडितां कुङ्कुमासक्तगात्रां
लोकेशीं षड्भुजान्तां त्रिभुवनमहितां कोटिसौदामनीभाम्।
पद्मस्थां पद्महस्तामभयवरकरां खड्गशक्तिं दधानां
ध्यायेद्रौद्रीं त्रिनेत्रां शरदमलशशिश्रेणिभूषाऽमलाङ्गीम्॥ ११६॥
रुद्रवत् पूजनं कार्य्यं रुद्रशक्त्या च शङ्कर!।
दशोपचारैः पूजा वा तथा पञ्चोपचारकैः॥
अष्टादशोपचारैर्वा षोड़शाद्युपचारकैः॥ ११७॥
अलाभे तु प्रकर्त्तव्यं मानसेन निवेदयेत्।
सर्वत्र मानसं कार्य्यं कोटिकोटिगुणं भवेत॥ ११८॥
पूजां समाप्य विधिना जलं दत्त्वा जपादिके।
प्राणायामत्रयं कृत्वा जप्त्वाऽष्टोत्तरकं शतम्॥ ११९॥
सहस्रं वा मुहुर्जप्त्वा अष्टोत्तरसमन्वितम्।
जपं समापयेद्विद्वान् गुह्यातिगुह्यमन्त्रकैः॥
प्राणायामत्रयं पश्चात् कुर्य्यात् साधकसत्तमः॥ १२०॥
वन्दनं भक्तियुक्तेन कुर्य्याद्योगादिसिद्धये।
महारौद्रै नमस्तेऽस्तु लाकिन्यै च नमो नमः॥ १२१॥
शान्त्यै तुष्ट्यै नमो नित्यं श्रद्धायै ते नमो नमः।
रुद्रशक्त्यै नमो नित्यं मणिपूरनिवासिनि!॥ १२२॥
अष्टसिद्धिं योगसिद्धिं देहि तस्यै नमो नमः।
सर्वशान्त्यच्छेदिकायै परब्रह्मस्वरूपिणि!॥ १२३॥
मां रक्ष पालय त्वं हि मणिपूरे नमो नमः।

प्रणम्य विधिनानेन पूजासमापनं चरेत्॥ १२४॥
पुनस्तत्र पूजयेद्वै प्रासादाख्यं महाप्रभुम्।
तथा मृत्युञ्जयं देवं मणिपूरे प्रपूजयेत्॥ १२५॥

श्रीकण्ठन्यासः।—

प्राणायामादिकं कृत्वा श्रीकण्ठन्यासमाचरेत्।
पूर्णादिव्यादिसहितं कृत्वा पीठं न्यसेत् सुधीः॥ १२६॥
पीठमनुं प्रविन्यस्य ऋष्यादिन्यासमाचरेत्।
ऋषिरस्य वामदेवः पंक्तिश्छन्द उदीरितम्॥ १२७॥
सदाशिवो देवता च अङ्गुल्यासमाचरेत्।
(हां) अङ्गुष्ठाभ्यां नमः पश्चात् ह्रीं तर्जनीपदं ततः॥ १२८॥
भ्यां नमः पदमन्ते च षड्दीर्घभाग्भिरन्वितम्।
एवं करन्यासकार्य्यं विधानेन समाचरेत्॥ १२९॥
शूद्रस्तु एतत्पर्य्यन्तं कार्य्यं होमादिकञ्च यत्।
न कुर्य्यात् पार्वतीनाथ! तथा स्त्रीजन इत्यपि॥ १३०॥
यदि ज्ञानी भवेद्देव स देवो न तु मानुषः।
चण्डालादिनीचजातौ स्थिरो वा ब्राह्मणोत्तमः॥ १३१॥
ज्ञानवान् वादसंवाद-वर्जितो न्यासमाचरेत्।
न्यासस्तन्मयताबुद्धिः सोऽहं भावेन पूजयेत्॥ १३२॥
स एव ज्ञानी परमो वेदशास्त्रविशारदः।
न्यासपूजादिकं तस्य सर्वदा नात्र संशयः॥ १३३॥
यावद्देहे ह्यहं-बुद्धिस्तावन्मरणधारकः।
तद्वर्जितो मृत्युजेता न्यासपूजादिकं कृतम्॥ १३४॥
षड्दीर्घभाजा बीजेन हकारेण सबिन्दुना।
करयोरङ्गुलीदिक्षु विन्यसेत् संक्रमेण तु॥ १३५॥

पञ्चमूर्त्तिन्यासः।—

ईशाद्याः पञ्चमूर्त्तीश्च विन्यसेत् साधकोत्तमः।

षड्दीर्घभाजा बीजेन हकारेण सबिन्दुना ॥ १३६ ॥
तत्पुरुषमघोरञ्च वामदेवं ततः परम् ।
सद्योजातं क्रमेणैव अङ्गुली द्वे परस्परम् ॥ १३७ ॥
विन्यसेत् साधकश्रेष्ठो नमोऽन्तं परमेश्वर ! ।
शिरोवदनहृद्गुह्य-पादेषु विन्यसेत् सुधीः ॥ १३८ ॥
पञ्चमूर्त्तीर्न्यसेन्नाथ ! तत्प्रकारं प्रशस्य च ।
ईशानादिस्वबीजस्थ-प्रकारेण प्रविन्यसेत् ॥ १३९ ॥
शूद्रः कुर्य्यान्न्यासजालमेतत्पञ्चान्तमेव हि ।
तत ऊर्द्ध्वप्रदक्षिण्य-पश्चिमोत्तरसम्मुखे ॥ १४० ॥

कलान्यासः ।—

ईशानस्य पञ्चकला नित्यं ऋग्वेदसंयुताः ।
पञ्चपादादिका नाथ ! प्रणवादिनमोऽन्तिकाः ॥ १४१ ॥
ईशानः सर्वविद्यानां ओं शशिन्यै ततः परम् ।
कलायै नम एवापि सर्वत्रैवं क्रमेण तु ॥ १४२ ॥
ईश्वरः सर्वभूतानां ओं अङ्गपदकं ततः ।
दायै कलायै नमश्चापि ब्रह्माधिपतिस्ततः ॥ १४३ ॥
ओं नमो ब्रह्मणे स्वधायै चान्ते नम इत्यपि ।
ततः शिवो मेऽस्तु पदं नमो वीर्य्यै पदं वदेत् ॥ १४४ ॥
कालायै नम एवं हि सदाशिवपदं ततः ।
ओमन्ते चांशुमालिन्यै कलायै नम इत्यपि ॥
दिङ्मुखे संन्यसेन्मन्त्री पूर्वादिक्रमयोगतः ॥ १४५ ॥
तत्पुरुषस्य चतस्रः कला न्यसेत् सदा वशी ।
ओं तत्पुरुषाय पदं विद्महे तदनन्तरम् ॥ १४६ ॥
ओं शान्त्यै च पदस्यान्ते कलायै नम इत्यपि ।
महादेवाय शब्दान्ते धीमहीति पदं वदेत ॥
ओं विद्यायै पदस्यान्ते कलायै नम एव हि ॥ १४७ ॥

तन्नो रुद्रः पदं पश्चात् ओं प्रतिष्ठापदं लिखेत् ।
ओं कलायै नमः पश्चात् प्रचोदयात् पदं वदेत् ॥ १४८ ॥
ओं निवृत्यै कलायै च नमः शब्दं समुच्चरेत् ।
ततोऽष्टस्थानमध्ये तु अघोराष्टकला न्यसेत् ॥ १४९ ॥
हृद्ग्रीवायामंसयुग्मे नाभिकुक्षौ च पृष्ठके ।
तथा वक्षसि चाघोरा क्षमायै शब्दमुच्चरेत् ॥ १५० ॥
कलायै मनसा एवाघोरतरेभ्य एव च ।
ओं निद्रायै पदस्यान्ते कलायै नम इत्यपि ॥ १५१ ॥
सर्वतः सर्व ओं अन्ते वायव्यै शब्दमुच्चरेत् ।
कलायै नम एवाथ सर्वेभ्यः पदमुच्चरेत ॥ १५२ ॥
ओं मृत्यवे पदस्यान्ते कालायै नम इत्यपि ।
नमस्तेऽस्तु पदस्यान्ते ओं क्षुधायै पदं वदेत् ॥ १५३ ॥
कलायै मनसा एव रुद्ररूपेभ्य एव च ।
ओं क्षणायै पदस्यान्ते कलायै नम इत्यपि ॥ १५४ ॥
वामदेवस्य देवेश ! त्रयोदशकला न्यसेत् ।
एतेषु स्थानपञ्चेषु तत्प्रकारं शृणु प्रभो ! ॥ १५५ ॥
गुह्येऽण्डकोषमध्ये च ऊरुयुग्मे ततः परम् ।
जानुद्वये तथा जङ्घा-युगले स्फिक्द्वये तथा ॥ १५६ ॥
कट्यां पार्श्वयुगे चैव क्रमेण भावको न्यसेत् ।
ओं वामदेवाय नम ओं वज्रायै ततः परम् ॥ १५७ ॥
कलायै नमः एवाथ ज्येष्ठाय नम इत्यपि ।
ओं रक्षायै पदस्यान्ते कालायै नम इत्यपि ॥ १५८ ॥
रुद्राय नमो रत्यै च कालायै नम इत्यपि ।
ओं कालाय नम एवान्ते पालिन्यै शब्दमुच्चरेत् ॥ १५९ ॥
कलायै नम एवाथ कल ओं शब्दमुच्चरेत् ।
मायायै शब्दमुच्चार्य्य कलायै नम एव हि ॥ १६० ॥

विकरणा नमोऽन्ते च प्रणवं चोच्चरेद्बुधः ।
संयमिन्यै पदान्ते च कालायै नम इत्यपि ॥ १६१ ॥
बल श्रीं शब्दमुच्चार्य्य क्रोधायै पदमुच्चरेत् ।
कलायै नम एवाथ विकरणाय नमस्ततः ॥ १६२ ॥
श्रीं वृद्ध पदकस्यान्ते कलायै नम इत्यपि ।
बल श्रीं शब्दमुच्चार्य्य स्थिरायै शब्दमुच्चरेत् ॥ १६३ ॥
कलायै नम एवाथ प्रमथाय नमस्ततः ।
श्रीं रात्र्यै पदकस्यान्ते कलायै नम इत्यपि ॥ १६४ ॥
सर्वभूतदमनाय नम श्रीं पदमुच्चरेत् ।
भ्रामिण्यै पदकस्यान्ते कलायै नम इत्यपि ॥ १६५ ॥
नम श्रीं शब्दमुच्चार्य्य मोहिन्यै पदकं स्मरेत् ।
कलायै नम एवाथ उन्मनाय नमस्ततः ॥ १६६ ॥
श्रीं जरायै पदस्यान्ते कलायै नम उच्चरेत् ।
अथ न्यसेन्महाकाल ! सद्योजातस्य ताः कलाः ॥ १६७ ॥
अष्टस्थानेषु चैतेषु सर्वपापनिवृत्तये ।
पार्श्वयोः स्तनयोश्चैव नासिकायाश्च मस्तके ॥ १६८ ॥
बाहुयुग्मे महावीर ! मणिपूरविभेदकः ।
तत्प्रकारं प्रवक्ष्येऽहं सावधानोऽवधारय ॥ १६९ ॥
आदौ प्रणवमुच्चार्य्य ततो मन्त्रं स्मरेत् सुधीः ।
सद्योजातं प्रपद्यामि श्रीं वृद्ध्यै पदमुच्चरेत् ॥ १७० ॥
कलायै नम एवाथ सद्योजाताय वै नमः ।
श्रीं वृद्ध्यै पदकस्यान्ते कलायै नम इत्यपि ॥ १७१ ॥
भावपदं ततः पश्चात् श्रीं सत्यै पदमुच्चरेत् ।
कलायै नम एवाथ भावपदं ततः पुनः ॥ १७२ ॥
लक्ष्म्यै कलायै नमश्चाऽनादिभावपदं ततः ।
श्रीं मेधायै पदस्यान्ते कलायै नम उच्चरेत् ॥ १७३ ॥

ततो भजस्व मां शब्दं श्रीं प्रज्ञायै पदं वदेत् ।
कलायै नम एवाथ भवशब्दं समुच्चरेत् ॥ १७४ ॥
प्रभायै पदमुच्चार्य्य कलायै नम इत्यपि ।
उद्भवाय नमः पश्चात् श्रीं सुधायै नमस्ततः ॥ १७५ ॥
कलायै नम उच्चार्य्य न्यस्येदष्टकलाः प्रभाः ।
ईशानाद्यास्ततो नाथ ! भक्तः पञ्चऋचो न्यसेत् ॥ १७६ ॥

पञ्चमन्त्रन्यासः ।—

पञ्चाङ्गुलीषु योगीन क्रमशः कामनाशनात् ।
प्रणवं पूर्वमुच्चार्य्य ततो मन्त्रं स्मरेत् सुधीः ॥ १७७ ॥
ईशानः सर्वविद्यानामीश्वरस्तदनन्तरम् ।
उच्चरेत् सर्वभूतानां ब्रह्माधिपतिरित्यपि ॥ १७८ ॥
ब्रह्मणोऽधिपतिः पश्चात् शिवो मेऽस्तु सदाशिवोम् ।
प्रणवं पूर्वमुच्चार्य्य ततस्तत्पुरुषाय च ॥ १७९ ॥
विद्महे पदतः पश्चान्महादेवाय धीमहि ।
तन्नो रुद्रपदस्यान्ते प्रचोदयात् पुनर्वदेत् ॥ १८० ॥
प्रणवं पूर्वमुच्चार्य्य ततो मन्त्रं स्मरेत् सुधीः ।
अघोरेभ्योऽथ घोरेभ्यो घोरशब्दं समुच्चरेत् ॥ १८१ ॥
घोरतरेभ्य एवान्ते सर्वतः सर्वशब्दकम् ।
सर्वेभ्योऽन्ते नमोऽन्तेऽस्तु रुद्ररूपेभ्य एव च ॥ १८२ ॥
ततः प्रणवमुच्चार्य्य मन्त्रं पश्चात् स्मरेद्बुधः ।
वामदेवाय शब्दान्ते नमो ज्येष्ठाय शब्दतः ॥ १८३ ॥
नमो रुद्राय शब्दान्ते नमः शब्दं समुच्चरेत् ।
कालाय नम एवान्ते बलविकरणाय च ॥ १८४ ॥
नमो बलविकरणाय नमो बलपदं ततः ।
प्रमथनाय नमोऽन्ते सर्वभूतपदं वदेत् ॥ १८५ ॥
दमनाय नमोऽन्ते तु नमः शब्दं समुच्चरेत् ।

उन्मनाय नमश्चाथ पुन: प्रणवमुद्धरेत् ॥ १८६ ॥
सद्योजातं प्रपद्यामि सद्योजाताय वै नम: ।
भवे भवेऽनादिभवे भजस्व मां तत: परम् ॥ १८७ ॥
भवोद्भवाय शब्दान्ते नमो मन्त्रं सदा न्यसेत् ।
अङ्गुलीन्यासमाकृत्य पञ्चऋचानया प्रभो ! ॥
एवं क्रमेण संन्यासं कुर्य्यादेषु स्थलेषु च ॥ १८८ ॥
मूर्द्धि हृद्गुह्यपादेषु न्यसेदेता ऋचो मुदा ।
तत: कुर्य्यात महाकाल ! चाङ्गन्यासान्तरं शुभम् ॥१८९॥
तत्प्रकारं प्रवक्ष्यामि सावधानोऽवधारय ।
वान्तरं पूर्वमुच्चार्य्य कामवीजं तत: परम् ॥ १९० ॥
वकारं शक्रसंयुक्तं दक्षकर्णेन्दुसंयुतम् ।
चन्द्रवीजं वामनेत्र-ग्वान्तवह्निविधून्नतम् ॥ १९१ ॥
केवलं चन्द्रवीजन्तु सविसर्गमनु तत: ।
सर्वज्ञाय पदस्यान्ते हृदयाय नम: पदम् ॥ १९२ ॥
अमृते पदमुच्चार्य्य तेजोज्वालापदं तत: ।
मालिनेऽन्ते च तृप्ताय ब्रह्मण: शिरसे तत: ॥ १९३ ॥
स्वाहान्तं तत एवाथ जनितशिखिशब्दकम् ।
शिखायानादिबोधाय शिखायैव षड़ित्यथ ॥ १९४ ॥
वज्रिणे वज्रहस्ताय स्वतन्त्राय पदं वदेत् ।
कवचाय तारशब्दं ततोऽन्यद्दीजमुच्चरेत् ॥ १९५ ॥
शकारं बिन्दुसंयुक्तमधोदन्तसमन्वितम् ।
चकारञ्च हकारञ्च दीर्घप्रणवसंयुतम् ॥ १९६ ॥
परतो लुप्तशब्दान्ते शक्तये पदमुच्चरेत् ।
नेत्रत्रयाय शब्दान्ते वौषट्पदमुदीरयेत् ॥ १९७ ॥
शकारं शक्रसंयुक्तं वामनेत्रं सबिन्दुकम् ।
पशुशब्दं तारशब्दं अनन्तशक्तु मे पदम् ॥ १९८ ॥

अस्त्राय फाड़िति प्रोच्य एवं विन्यस्य योगिराट् ।
मणिपूरे मनोयोज्य ध्यायेच्चैतन्यरूपकम ॥ १९९ ॥
"मुक्तापीतपयोदमौक्तिकजवावर्णैर्मुखै: पञ्चभि-
स्त्र्यक्षैरञ्चितमीशमिन्दुमुकुटं पूर्णेन्दुकोटिप्रभम् ।
शूलं टङ्कृपाणवज्रदहनान्नागेन्द्रघण्टाङ्कुशान्
पाशं भीतिहरं दधानममिताकल्पोज्ज्वलाङ्गं भजे" ॥२००॥
एवं ध्यात्वा मानसोप-चारै: संपूज्य पूजक: ।
अर्घ्यस्थापनमाकुर्य्याद्दीजमन्त्राभिशोधकम् ॥ २०१ ॥
शैवोक्तपीठमन्त्रेण पीठपूजां ततश्चरेत् ॥ २०२ ॥
पुनर्ध्यात्वा समावाह्य चावाहनादिमुद्रया ।
पञ्चपुष्पाञ्जलिदान-पर्य्यन्तं परिपूजयेत ॥ २०३ ॥
पञ्चपुष्पाञ्जलीन् दत्वाऽऽवरणार्चनमाचरेत् ॥ २०४ ॥
शिवावरणदेवांश्च पूजयेत्तत्क्रमान् शृणु ।
ऐशान्यां पूजयेद्विद्वान् ईशानाय नमस्तत: ॥ २०५ ॥
पूर्वे ओं तत्पुरुषाय नम: शब्दं समुच्चरेत् ।
दक्षिणे ओं अघोराय नम: शब्दं समुच्चरेत् ॥ २०६ ॥
उत्तरे ओं वामशब्दं देवाय नम उच्चरेत् ।
पश्चिमे प्रणवं पश्चात् सद्योजाताय एव हि ॥ २०७ ॥
नमोऽन्तं पूजनं कृत्वा सर्वसिद्धीश्वरो भवेत् ।
ईशानादिचतुष्केषु निवृत्त्यादीन् समुच्चरेत् ॥ २०८ ॥
प्रणवान्ते निवृत्तौ च नमश्चान्ते ततोऽर्चयेत् ।
एवं प्रतिष्ठां विद्याञ्च शान्तिं संपूज्य यत्नत: ॥ २०९ ॥
प्रणवादि नमोऽन्तेन चतुर्थ्यन्तपदेन च ।
योजयित्वा महापूजा-विधौ कुर्य्यात् समर्चनम् ॥ २१० ॥
दशदलस्य मध्ये तु विभाव्य द्विदलं सुधी: ।
तत्रैवं पूजनं कुर्य्यादष्टाङ्गयोगसिद्धये ॥ २११ ॥

प्रणवादि नमोऽन्तेन चतुर्थ्यन्तपदेन च ।
पूजयेद्देवदेवेशं गन्धपुष्पाऽक्षतादिभिः ॥ २१२ ॥
अनन्तेशं पूजयेद्वै तथा शम्भुं विलिङ्गकम् ।
शिवोत्तमेशं संपूज्य एकनेत्रेशमेव च ॥ २१३ ॥
एकरुद्रेशमेवं हि त्रिमूर्त्तीशं ततोऽर्चयेत् ।
भक्त्या समर्चयेत्तत्र श्रीकण्ठेशं शिखण्डिनम् ॥ २१४ ॥
तद्वाह्यपत्रिकाग्रेषु उत्तरादिक्रमेण तु ।
उमाद्या देवताः पूज्याः प्रणवादिनमोऽन्तिकाः ॥ २१५ ॥
उमादेवीं समभ्यर्च्य तथा चण्डेश्वरं ततः ।
नन्दिनञ्च महाकालं गणेशं वृषभं तथा ॥ २१६ ॥
भृङ्गिरीटस्कन्दपुत्रौ तद्वाह्ये क्रमतोऽर्चयेत् ।
इन्द्रादींश्च लोकपालांश्च गन्धदीपैः समर्चयेत् ॥ २१७ ॥
वज्रादींश्च क्रमेणैव पूजयेत् साधकोत्तमः ।
धूपदीपादिनैवेद्य-पानार्थपुनराचमम् ॥
संहारमुद्रया चोर्द्ध्वे स्थापयेद्रुद्ररूपिणम् ॥ २१८ ॥
विसर्जनान्तं तत्कर्म्म तच्छिष्टपूजनादिकम् ।
समाप्य तु विधानेन पूजाकर्म्म समापयेत् ॥
प्रत्यहं मानसं जापं होममर्च्चनतर्पणे ॥ २१९ ॥
वर्द्धयेत् साधकश्रेष्ठो भक्तिभावपरायणः ।
पञ्चलक्षजपेनास्य पुरश्चरणमिष्यते ॥ २२० ॥
सम्पूज्यैवं जपेन्मन्त्रं पञ्चलक्षं मधुप्लुतैः ।
प्रसूनैः करवीरोत्थैरथवा जुहुयात् सुधीः ॥ २२१ ॥
सर्वदा मानसं कार्य्यं द्रव्यालाभेऽपि सञ्चरेत् ।
तद्दशांशं चाभिषेकं दशांशं विप्रभोजनम् ॥ २२२ ॥
एवं जपं साधनञ्च पुरा नारायणो मुनिः ।
कृत्वा सर्वमन्त्रमयः श्रीतत्त्वो योगिराड्भूत् ॥ २२३ ॥

यः करोति साधनानि सोऽचिरादमरो भवेत् ।
पूजादौ चैव शेषे च पूजामध्ये क्रमेण तु ॥ २२४ ॥
प्रणमेत् साधकश्रेष्ठो वारणात् पापभूपतेः ।
"नमः परमकल्याण ! नमस्ते विश्वभावन ! ॥ २२५ ॥
नमस्ते पार्वतीनाथ ! उमानाथ ! नमोऽस्तु ते ।
विश्वात्मने विचिन्त्याय गुणाय निर्गुणाय च ॥ २२६ ॥
धर्म्माय ज्ञानमोक्षाय नमस्ते सर्वयोगिने ।
नमस्ते कालरूपाय त्रैलोक्यरक्षणाय च ॥ २२७ ॥
त्रैलोक्यघातकायैव चण्डेशाय नमोऽस्तु ते ।
सद्योजाताय देवाय नमस्ते शूलधारिणे ॥ २२८ ॥
कालान्ताय च कान्ताय चैतन्याय नमो नमः ।
कुलात्मकाय कौलाय चन्द्रशेखर ! ते नमः ॥ २२९ ॥
उमाकान्त ! नमस्तुभ्यं योगीन्द्राय नमो नमः ।
सर्वाय सर्वपूज्याय ध्यानस्थाय गुणात्मने ॥ २३० ॥
पार्वतीप्राणनाथाय नमस्ते परमात्मने ।"
एतत्स्तोत्रं पठित्वा तु स्तौति यः परमेश्वरम् ॥ २३१ ॥
याति रुद्रकुलस्थाने मणिपूरं विभिद्यते ।
एतत्स्तोत्रप्रपाठेन तुष्टो भवति शङ्करः ॥ २३२ ॥
खेचरत्वपदं नित्यं ददाति परमेश्वरः ।
ततो वक्ष्ये महादेव ! मृत्युञ्जयविधानकम् ॥ २३३ ॥
यत् कृत्वा परमब्रह्म-मयो भवति साधकः ।
मृत्युञ्जयस्य मन्त्रं वै जपते यदि मानुषः ॥
कोटिवर्षशतं स्थित्वा लीनो भवति ब्रह्मणि ॥ २३४ ॥
सर्वव्यापकरूपेण स तिष्ठति सदाशिव ! ॥ २३५ ॥

मृत्युञ्जयविधिः ।—

तत्प्रकारं प्रवक्ष्यामि सावधानोऽवधारय ।

आदौ पूजाविधानञ्च वच्मि सारनिर्णीतम् ॥ २२६॥

श्रीकण्ठपूर्णोदरेश-न्यासञ्चाद्ये समाचरेत् ।

ततो हृदयमध्ये तु हस्ताङ्गलीसमुद्रया ॥ २३७ ॥

तत्त्वन्यान्यस्य देवेश ! तत्प्रकारं प्रचक्षते ।

प्रणवादि नमोऽन्तेन चतुर्थ्यन्तपदेन च ॥

योजयित्वा न्यसेन्मन्त्री मन्त्रभावपरायणः ॥ २३८ ॥

पीठन्यासः ।—

आधारशक्तिमेवं हि प्रकृतिं तदनन्तरम् ।

कूर्ममनन्तं तत्पश्चात् पृथिवीं क्षीरसागरम् ॥ २३९ ॥

श्वेतद्वीपं ततः पश्चान्मणिमण्डपमेव च ॥ २४० ॥

कल्पवृक्षे ततो नाथ ! विन्यसेन्मणिवेदिकाम् ।

रत्नसिंहासनं तत्र हृदयाम्भोजमण्डले ॥ २४१ ॥

दक्षवामस्कन्धभागे वामोरौ दक्षिणे तथा ।

मुखे वामपार्श्वभागे नाभौ च दक्षपार्श्वके ॥ २४२ ॥

प्रणवादि नमोऽन्तेन चतुर्थ्यन्तपदेन च ।

सर्वत्र न्यासमाकुर्यात्तेषां नाम शृणु प्रभो ! ॥ २४३ ॥

क्रमेण सर्वं कर्त्तव्यं क्रमभङ्गं न चाचरेत् ।

धर्मं ज्ञानञ्च वैराग्यमैश्वर्य्यं तदनन्तरम् ॥ २४४ ॥

अधर्म्ममपि चाज्ञानमवैराग्यं ततः परम् ।

अनैश्वर्य्यं क्रमेणापि विन्यसेत् साधकोत्तमः ॥ २४५ ॥

पुनर्वात्र हृदम्भोजे न्यसेदेकमनाः सुधीः ।

अनन्तं पद्ममेवन्तु अं सूर्य्यमण्डलं तथा ॥ २४६ ॥

द्वादशकात्मना सार्द्धं उं सोममण्डलं तथा ।

षोड़शकलात्मानञ्च मं वह्निमण्डलं तथा ॥ २४७ ॥

दशकलात्मना सार्द्धं सं सत्त्वं तदनन्तरम् ।

रं वीजं राजसं तत्र तं तमसमेव च ॥ २४८ ॥

आं आत्मानं न्यसेन्मन्त्री अं अन्तरात्मने नमः ।

प्रं वीजं परमात्मानं मायाज्ञानात्मने नमः ॥ २४९ ॥

इत्यन्तं न्यस्य देवेश ! मन्त्रसिद्धिमवाप्नुयात् ।

मणिपूरे मन्त्रसिद्धिं सर्वसिद्धिमवाप्नुयात् ॥ २५० ॥

यः करोति सदा न्यासं ध्यानपूजापरायणः ।

वामां ज्येष्ठां तथा रौद्रीं कालीं कलपदादिकाम् ॥२५१॥

विकरण्याह्वया युक्तां बलविकरणीं तथा ।

बलप्रमथिनीं चैव न्यसेत साधकसत्तमः ॥ २५२ ॥

तत्सर्वभूतदमनीं मनोन्मनीं ततो न्यसेत् ।

तदुपरि न्यसेन्नाथ ! ओं नमो भगवते पदम् ॥ २५३ ॥

सकलगुणात्मशक्ति-युक्तायान्ते पदं न्यसेत् ।

अनन्ताय पदस्यान्ते योगपीठात्मने पदम् ॥ २५४ ॥

नमोऽन्तोऽयं महामन्त्रः सर्वोपरि न्यसेत् सुधीः ।

ततो नाथ ! समाकुर्य्यात् साधको गतभीः स्वयम् ॥२५५॥

मृत्युञ्जय-ऋष्यादिन्यासः ।—

ऋष्यादिन्यासमाकुर्य्यात् तत्प्रकारं शृणु प्रभो ! ।

शिरसि पदमुच्चार्य्य कहोड़ ऋषये नमः ॥ २५६ ॥

तदुपरि ततो नाथ ! महाविष्णुपदं वदेत् ।

ऋषये नम इत्युक्त्वा मुखे देवीपदं वदेत् ॥ २५७ ॥

गायत्रीच्छन्दसे पश्चात् नमः शब्दं समुच्चरेत् ।

हृदि मृत्युञ्जयायेवं देवतायै नमः पदम् ॥ २५८ ॥

ऋषिः कहोड़ो देव्याश्च गायत्रीच्छन्द ईरितम् ।

मृत्युञ्जयो महादेवो देवताऽस्य प्रकीर्त्तिता ॥ २५९ ॥

कराङ्गन्यासः ।—

कराङ्गन्यासकौ कुर्य्यात् षड्दीर्घभाग्भिरेव च ।

मकारेण महाकाल ! तत्प्रकारं शृणु प्रभो ! ॥ २६० ॥

सां अङ्गुष्ठाभ्यां चान्ते च नमः शब्दं क्रमेण तु ।
एवं कराङ्गुलीन्यासं कुर्य्यादेव महाप्रभो ! ॥ २६१ ॥
षड्दीर्घभाजा बीजेन सकारेण सबिन्दुना ।
कराङ्गन्यासमाकुर्य्यात् कुलतन्त्रक्रमेण तु ॥
ततो ध्यानं समाकुर्य्यात् शुभभावपरायणः ॥ २६२ ॥

मृत्युञ्जयध्यानम् ।—

चन्द्रार्कानललोचनं स्मितमुखं पद्मद्वयान्तःस्थितं
मुद्रापाशमृगाक्षसूत्रविलसत्पाणिं हिमांशुप्रभम् ।
कोटीन्दुविगलत्सुधाप्लुततनुं हारादिभूषाकुलम्
कान्त्या विश्वविमोहनं पशुपतिं मृत्युञ्जयं भावये ॥२६३॥

मृत्युञ्जयपूजा ।—

एवं ध्यात्वा समावाह्य मूलमन्त्रेण मन्त्रवित् !
पाद्यादिभिः पूजयेद्दै गन्धपुष्पादिशोभितैः ॥ २६४ ॥
पञ्चपुष्पाञ्जलीं दत्त्वा परिवारान् प्रपूजयेत् ।
केशरेष्वग्निं निर्ऋतिमीशाने च प्रपूजयेत् ॥ २६५ ॥
मध्ये दिक्षु च तन्मन्त्रैः सां बीजं तत्र चोच्चरेत् ।
हृदयाय नमश्चान्ते सां बीजं तदनन्तरम् ॥ २६६ ॥
शिरसे स्वाहया सार्द्धं सूं बीजं तदनन्तरम् ।
शिखायै वषडित्यादि सैं बीजं तदनन्तरम ॥२६७॥
कवचाय पदस्यान्ते तारबीजं समुच्चरेत् ।
सौं बीजं पूर्वमुच्चार्य्य नेत्रत्रयाय इत्यपि ॥ २६८ ॥
वौषट् चाद्ये मध्यपदं चतुर्दिक्षु ततः पदम् ।
सश्चान्तेऽस्त्राय शब्दान्ते फडित्येव समर्चयेत् ॥ २६९ ॥
षडङ्गानि पूजयित्वा तद्बहिः परिपूजयेत् ।
इन्द्रादीन् लोकपालांश्च पूजयेत् तु तथा प्रभो ! ॥ २७० ॥
धूपदीपादिनैवेद्य-पानादीनि प्रदापयेत् ।

विधिना वन्दनं कुर्य्यान्मृत्युञ्जयस्य भूषणात् ॥ २७१ ॥
विसर्जनान्तं तत्कर्म्म समाप्य विधिनाऽमुना ।
संहारमुद्रया देवं हृदये चालयेद्बुधः ॥ २७२ ॥
प्रसन्नहृदयो भूत्वा चरणोदकमापिबेत् ।
एतन्मन्त्रेण देवेश ! सर्वसिद्धिमवाप्नुयात् ॥ २७३ ॥
पिबामि चरणद्वन्द्वाम्भोजनिःसृतकं भजे ।
अमरत्वं सदा देहि मृत्युञ्जय ! नमोऽस्तु ते ॥ २७४ ॥

इति श्रीरुद्रयामले उत्तरतन्त्रे महातन्त्रोद्दीपने सिद्धमन्त्रप्रकरणे षट्चक्रप्रकाशे भैरव-भैरवीसंवादे मृत्युञ्जयपूजनं नाम षट्चत्वारिंशः पटलः ॥ ४८ ॥

एकोनपञ्चाशः पटलः ।

श्रीआनन्दभैरव उवाच ।—

श्रुतञ्च साधनं पुण्यं महारुद्रस्य सुन्दरि ! ।
मणिपूरे प्रकाशञ्च कथितं ध्याननिर्णयम् ॥ १ ॥
अकस्मात् सिद्धिसम्पत्तिर्येन स्यात् तद् वद प्रिये ! ।
यस्य श्रवणमात्रेण पाठेन योगिनो वशा ॥ २ ॥

आनन्दभैरव्युवाच ।—

परमानन्ददेवेश ! योगानामधिप ! प्रभो ! ।
स्तोत्रं रुद्रस्य वक्ष्यामि सारात्सारं परात्परम् ॥ ३ ॥
यज्ज्ञात्वा योगिनः सर्वे षट्चक्रपरिभेदकाः ।
आकाशगामिनः सर्वे स्वर्गमोक्षाभिलाषुकाः ॥ ४ ॥
महादेवसमाः सर्वे देवाश्च सर्गभागिनः ।
सर्वरक्षाकरं स्तोत्रं ये पठन्ति निरन्तरम् ॥
ते यान्ति ब्रह्मसदनं सिद्धमुख्या महीतले ॥ ५ ॥

मृत्युञ्जयस्तोत्रम् ।—

भजामि शम्भुं सुखमोक्षहेतुं रुद्रं महाशक्तिसमाकुलाङ्गम् ।

रौद्रात्मकं रुद्रहिमांशुशेखरं कालं कुलेशं शिवशङ्करञ्च ॥ ६ ॥
मृत्युञ्जयं जीवनरक्षकं परं शिवं परं ब्रह्मशरीरमङ्गलम् ।
हिमांशुकोटिच्छविमादधानं भजामि पद्मद्वयमध्यसंस्थितम् ॥७॥
सर्वार्थकं कामविनाशमूलं चन्द्रावतंसं मणिपूरवासिनम् ।
चतुर्भुजं ज्ञानसमुद्रयाढ्यं पाशं मृगाक्षं गुणसूत्रयाप्तम् ॥ ८ ॥

* * * *

धरामयं तेजसमिन्दुकोटिं वायुं जलेशं गगनात्मकं परम् ॥ ९ ॥
भजामि रुद्रं कुललाकिनीगतं सर्वाङ्गयोगं जयदं सुरेश्वरम् ।
शुक्रं महाभीमलयं पुराणं प्राणार्थकं व्याधिविनाशमूलम् ॥१०॥
यज्ञार्थकं कामनिवारणं गुणं भजामि विश्वेश्वरशङ्करं शिवम् ।
वेदागमानामतिमूलदेशं तदुद्भवं तद्रहितं परात्परम् ॥ ११ ॥
कालान्तकं ब्रह्मनिरूपणं प्रियं भजामि शम्भुं गगनाधिरूढम् ।
शिवागमं शब्दमयं विभाकरं भास्वत्प्रचण्डानलविग्रहं विभुम्॥१२॥
गृहस्थितं ज्ञानकरं करालं भजामि शम्भुं प्रकृतीश्वरं हरम् ।
छायाकरं योगकरं सुखेन्द्रं मत्तं महामत्तकुलोत्सवाढ्यम् ॥ १३ ॥
योगेश्वरं योगकलानिधिं विधिं विधानवक्तारमहं भजामि ।
हेमाचलालङ्कृतशुद्धवेशं वराभयादाननिदानमूलम् ॥ १४ ॥
भजामि कान्तं वनमालशोभितं चाम्लानपद्मासनमानिनं कुलम् ।
स्वयं प्रधानं पुरुषेश्वरं सुरं सिद्धाभवाह्लादिविभाविनं भजे ॥१५॥
भावप्रियं प्रेमकलाधरं शिवं गिरीश्वरं चारुपदारविन्दम् ।
ध्यानप्रियं ज्ञानगभीरयोगं भाग्यास्पदं भाग्यमयं सुलक्षणम्॥१६॥
शूलायुधं शूलविभूषिताङ्गं श्रीशङ्करं मोक्षफलक्रियं भजे ।
नमो नमो रुद्रगणेभ्य एवं मृत्युञ्जयेभ्यः कुलचञ्चलेभ्यः ॥ १७ ॥
शक्तिप्रियेभ्यो विजयादिभूतये शिवाय धन्याय नमो नमस्ते ।
भाव्यं त्रिशूलं वरसूक्ष्मभावं विशालनेत्रं तनुमध्यगामिनम् ॥१८॥
महाविपक्षस्वविलासवीजं शुभोदयं शान्तिकरं भजामि ।

पुरान्तकं पूर्णशरीरिणं गुरुं स्मरारिमाद्यं निजतर्कमार्गम् ॥१९॥
अनादिदेवं दिविदोषघातिनं भजामि पञ्चाक्षरपुण्यसाधनम् ।
दिगम्बरं पद्मसुखं करस्थितं स्थितिक्रियायोगनियोजनं भवम्॥२०॥
भवात्मकं भद्रशरीरिणं शिवं भजामि पञ्चाननमर्कवर्णम् ।
मायामयं पङ्कजदामकोमलं दिग्व्यापिनं दण्डधरं सुरेश्वरम् ॥२१॥
त्रिपक्षकं अक्षरवीजभावं त्रिपक्षमूलं त्रिगुणं भजामि ।
विद्याधरं देवविधानकार्य्यं कल्पागतं पीतनिनादतोषम् ॥ २२ ॥
नित्यं चतुर्वर्गफलादिमूलं वेदादिसूत्रं प्रणमामि योगम् ।
वेदान्तवेद्यं कुलशास्त्रविज्ञं क्रियामयं योगसुधर्मदानम् ॥ २३ ॥
भक्तेश्वरं भक्तिपरायणं वरं भक्तं महामुक्तिकरं भजाम्यहम् ।
गतागतं गम्यमगम्यभावं शरद्विधोः काटिकलावतंसम् ॥ २४ ॥
भावार्थकं भावमयं सुखासुखं भजामि भर्गं प्रथमारुणप्रभम् ।
विन्दुस्वरूपं परिवादवादिनं मध्याह्नसूर्य्यायुतसन्निभं नवम् ॥२५॥
विभूतिदानं निजयोगदानं दानात्मकं तं प्रणमामि देवम् ।
कुष्मापहं शत्रुनिकुम्भघातिनं दैत्यारिमीशं कुलकामिनीपतिम्॥२६॥
प्रीत्यान्वितं चिन्त्यमचिन्त्यभाव प्रभाकराह्लादमहं भजामि ।
त्रिमूर्त्तिमूलाय जयाय शम्भवे हिताय लोकस्य सुधायुषे मुदा॥२७॥
नमो भवाच्छन्ननिघातिने ते नमो नमो विश्वशरीरधारिणे ।
तपःफलाय प्रकृतिग्रहाय गुणार्थिने सिद्धिकराय योगिने ॥ २८ ॥

* * * *

नमः प्रसिद्धाय दयाऽर्णवाय वाञ्छाफलोत्साहविवर्द्धनाय ॥ २९ ॥
शिव इति वरहस्तं पूर्णयोगाश्रयन्तं
धरणिधरकराजैरस्यमाणं त्रिसर्गम् ।
विषमचरणघातं मृत्युघातं नरेशं
विधिगणपतिसेव्यं पूजये भावयामि ॥ ३० ॥

एतत् स्तोत्रं पठेद्विद्वान् मणियोगपरायणः
नित्यं जगन्नाथगुरुं भावयित्वा पुनःपुनः ॥ ३१ ॥
मणिपूरे योगनिष्ठो नित्यं स्तोत्रं पठेत् यदि ।
जीवन्मुक्तश्च देहान्ते परं निर्वाणमाप्नुयात् ॥ ३२ ॥

इति श्रीरुद्रयामले उत्तरतन्त्रे महातन्त्रोद्दीपने षट्चक्रप्रकाशे भैरवी-भैरव-संवादे रुद्रमृत्युञ्जयस्तवनं नाम एकोनपञ्चाशः पटलः ॥ ४९ ॥

पञ्चाशः पटलः ॥

आनन्दभैरव्युवाच ।—

षट्चक्रभेदनार्थाय सर्वसिद्धिसुसिद्धये ।
वक्ष्यामि लाकिनीदेवीस्तोत्रं परमदुर्लभम् ॥ १ ॥
यत् पाठादतिसन्तोषं प्राप्नोति यतिरीश्वर ! ।
तत्क्रिया सारसम्पन्नं स्तवनं लाकिनीप्रियम् ॥ २ ॥

लाकिनीस्तोत्रम् ।—

अस्य श्रीलाकिनीस्तोत्रस्य महाविष्णुकहोड़ऋषिर्गायत्री-च्छन्दो महासिद्धिदमृत्युञ्जयमहारुद्रडाकिनीसरस्वतीदेवता मणिपूरभेदग्रन्थिभेदनजपे विनियोगः ।

ओं वीजाक्षरमुक्तिमार्त्तिहरणीमार्य्यां जयां हृद्धिदां
दीनानामपराधकोटिहननीं संग्रामगां योगिनीम् ।
त्वामाद्यामनुरागिणीं गुणिगुणामोदैकहेतुस्थलां
स्थित्यन्तःकृतकौतुकीं शुभकरीं वन्दे मुदा लाकिनीम् ॥ ३ ॥
हेरम्बार्चनसिद्धिदाहयगताकोटिप्रभाभास्वरा
साकारा किरणोज्ज्वला सुखमयी वेदध्वनिप्राणिनी ।
कोपा कापिललक्षणा तरुभवा कल्पाश्रया संश्रया
त्वञ्चैका वरवर्णिनी समवतु श्रीलाकिनी किङ्किणी ॥ ४ ॥

केयूरामलहारमालसुभगा वीरासनस्थायिनी
भार्य्या रुद्रपतेः प्रवालविमला रक्तोत्पला सुन्दरी ।
माता योगवतां सती परपदां माध्वी रसाच्छादिता
त्वं मां पाहि कृपामयि ! यमगतं मृत्युञ्जयश्रीधरे ॥ ५ ॥
आकाङ्क्षाकुलसंख्यकाक्षयकरी शतप्रभानाशिनी
भक्तानामतिदुःखहा शशिमुखी योन्यानना कामुकी ।
कामस्था मम कामदोषशतकं शीघ्रं हन क्षेमदा
जीवन्मुक्तिपदं विधेहि समरे सर्गद्रुहस्य प्रियम् ॥ ६ ॥
त्वं पञ्चाननपूजिता त्वमसिता त्वं कालविद्यागतिः
त्वं सत्या सुखसत्यवाक्यकलिता त्वं केवलानन्ददा ।
त्वं लाक्षारुणकायिका विषधरा त्वं लिङ्गसंहारिणी
त्वं साक्षादमृतप्रदा त्वमजरा त्वं लाकिनी पाहि माम् ॥७॥
नानामङ्गलधर्म्मराज्यजड़िता संस्कारबाधाश्रया
लिङ्गस्था चलपुत्रिका नवग्रहे संकाशयन्ती शिवा ।
मे लिङ्गोपरि रुद्रनाथ विपथव्याभेदनं सङ्गमं
शीघ्रं कारय देवि ! भेदभविकं कोट्यर्कचन्द्रोज्ज्वला ॥८॥
चन्द्राभाकरणाश्रया श्रयति या शब्दच्छटा या उमा
मायामोहमहोदयोदयति या कृष्णाक्रियामोहिनी ।
लक्ष्मीर्नीलकलेवरा मम मणेः पूरं सदा रक्षतु
श्रीविद्याऽभयदायिनी त्वमपि सा मे नाभिमूलोदया ॥ ९ ॥
मालामुद्रामथननिलया मालिनी मन्त्रविद्या
विश्वेशानी शयनरहिता शीतवातातपस्था ।
सत्या सत्या वचनसुभगा गौरि ! माता त्वमेव
प्राणान् रक्ष प्रथमकिरणामाश्रये त्वामनन्ताम् ॥ १० ॥
सिद्धासिद्धा शशिरविकला केवलाम्भोजसंस्था
नन्दाऽनन्दा सकलहृदयाम्भोजमध्यप्रकाशा ।

नित्यश्रद्धा गतिपथकरा दत्तकामानवद्या

नाभ्यम्भोजं भज भज जनानामखण्डप्रतापे ॥ ११ ॥

पीताऽपीता पवनगमना धारणा ध्यानयोगा

कालाकाला कलिकुलकला निष्कलाज्ञा कपाला ।

कृष्णानन्दा मदनकुहरा केकरा शङ्खिनी या

त्वं श्रीधात्री धवलकमलं नाभिमूले प्ररक्ष ॥ १२ ॥

श्वेताश्वेतारुणशतकरा भावनाज्ञानसिद्धिः

प्रीताऽप्रीता पवनगठना तारणा मारणा या ।

हंसाविद्या विधिबुधधरा धारणा ज्ञानगम्या

रम्यारम्या वसनिरता नीरदा पातु नाभिम् ॥ १३ ॥

सिन्दोर्गन्धप्रियविधुनिता नीरवा वा वहन्ती

चैत्राऽचैत्रा परचरगता भुक्तिमुक्तिप्रकाशा ।

कौलाऽकौला च्युतपतकलुषा ज्ञानगम्या चिराय

शुद्धाऽशुद्धा मतिधनमता नाभिसंस्थावनाभिम् ॥ १४ ॥

हंसो सिंहासनगतपदा चक्रविद्या सुसूक्ष्मा

श्रीविद्या त्वं नवविलचरा सुन्दरी रक्तवर्णा ।

स्वर्णाम्भोजोपरि शुभमहाचक्रमध्ये प्रतिष्ठा

सर्वच्छन्ना परिजनदयाज्ञानपद्मं प्ररक्ष ॥ १५ ॥

ब्रह्मानन्दा नृपगणमहापूजया शोभिताङ्गी

श्रीश्रीविद्या सकलविभवा भावनीया महेन्द्रैः ।

सिद्धस्थाने मणिमयगृहे मूलसिंहासनस्थे

पद्मे चाष्टान्वितयुगदले रुद्ररूपा त्वमेव ॥ १६ ॥

योगज्ञानं विविधविभवं वेदविद्याप्रकाशं

चाष्टाङ्गैर्मां प्रणतशिरसं षोडशी भैरवस्था ।

चन्द्राङ्का त्वं भव भयहरा शोकतापापहन्त्री

नाभिरत्ने उदयति सुरी यस्तमोशि प्ररक्ष ॥ १७ ॥

सुश्लिष्टा त्वं विभवकिरणे शीतले शीतशैले

साक्षादर्थप्रचयचयना पार्वणा पर्वपूरा ।

विद्युत्पूरं मम सुखमयं पाहि पञ्चानना या ।

त्वं सा देवी शुभमणिगृहे शीतला त्वं विधेहि ॥ १८ ॥

छन्दोगानां सकलविषयच्छेदनी चार्णमाता

मालालाक्षाऽरुणकिरणगा गोपपूज्यादिविद्या ।

मातस्त्वं मे सुमणिभवनं पाहि सूक्ष्मा भवानि !

बालस्थाना प्रचुरप्रखरा चाङ्गिरा चान्नपूर्णा ॥ १९ ॥

चन्द्रोल्लासावयवसुखदा दीर्घकेशी विशाला

त्वं मातङ्गी गजमुनिमता मालिका त्वं प्रचण्डा ।

ज्योत्स्नाजाले उदयति सदा रक्तभासा प्रकाशा

त्वं मे रुद्रं हरिहरतनुं नाभिमूले प्ररक्ष ॥ २० ॥

वाणी नाम्ना रचयति वचः सुन्दरी वर्णनस्था

स्थित्यन्तस्था चलतनुधरा फुल्लमन्दारवासा ।

बोधानन्दाकृतितनुमभिव्यापिनी ज्ञानशुद्धा

मातस्त्व मे मणिकुलगृहं पाहि सर्वाङ्गविद्ये ! ॥ २१ ॥

वेद्यावर्णा मनसिजरुहा चन्दनालिप्तदेहा

विश्वेशानि ! भगवति ! शिवे ! त्वं चपा घोररूपा ।

ज्ञेये शम्भोर्जटिलशिवगा मोक्षदा मानसस्था

चित्तं शुभ्रं प्रकुरु विषयच्छेदनात् छेदिनी त्वम् ॥ २२ ॥

मणिमयकुलगेहे कोटिविद्युत्प्रकाशा-

ऽभयवरमपि देहि क्रोधविद्ये ! मयि त्वम् ।

सकलसुखविभोगं पालय प्राणरूपं

चरणतलविलग्नं मामनाथं परेशि ! ॥ २३ ॥

भुवनगठनहेतोः कायशङ्काविनाशात्

विधिमुखसुरनाथं मानुषादित्यसर्गम् ।

मम मणिकुलपद्मे नित्यरूपाभिधानं
जयति खलु तदा मे स्तोत्रसारप्रकारम् ॥ २४ ॥
तव तु चरणपद्मे लाकिनि ! देवकन्ये !
विरचय मनुशास्त्रं सिद्धमन्त्रप्रकारम् ।
भुवननिखिलतापात् त्राहि मां चन्द्रगेहे
कठिनहृदयनाशं शङ्करि ! त्वं कुरुष्व ॥ २५ ॥
कमलवनसमीपेऽरण्यमध्येऽतिगुह्ये
विषयविषविनाशं कौलिके त्वं विकल्प्य ।
हर निजमणिपीठे स्थापयित्वा निदानं
हर हरदयिते त्वं दोषषट्कं विवादम् ॥ २६ ॥
घोरे सान्द्रान्धकारेऽखिलनिजकुलमुद्धारकर्त्री प्रसन्ने
वाञ्छाकल्पद्रुमस्था त्वमिह कुशलदा दायभागातिभागा ।
त्वं काली लाङ्गलीस्था लयकरणघटा मध्यगा मातृका त्वं
भीमा भीत्यापहन्त्री हरपदविलया लाकिनी नाभिसारा ॥२७॥
एतत् स्तोत्रं पठेद्विद्वान् योगज्ञानी निराश्रयः ।
महापुण्यगतो धीरो विभवेनाऽमृतेन च ॥ २८ ॥
भोगमोक्षौ करे तस्य चैहिके योगिराड् भवेत् ।
परं याति महादेवी-पादपद्मे न संशयः ॥ २९ ॥
ऐहिके चिरजीवित्वं ददाति कामदायिनी ।
मणिपूरे स्थिरो याति कुलमार्गे प्रसादतः ॥ ३० ॥
कुलमार्गे लयस्थानं लयं विश्वेश्वरीपदम् ।
लक्षयान्मणिपूरस्था देवताः पश्यति ध्रुवम् ॥ ३१ ॥
पूजान्ते प्रपठेत् स्तोत्रं भक्तिभावपरायणः ।
शीघ्रमेव हि योगी स्यात् कुलमार्गप्रसादतः ॥ ३२ ॥

इति श्रीरुद्रयामले उत्तरतन्त्रे महातन्त्रोद्दीपने सिद्धमन्त्रप्रकरणे भैरव-भैरवी संवादे लाकिनीस्तवनं नाम पञ्चाशः पटलः ॥ ५० ॥

एकपञ्चाशः पटलः ।

आनन्दभैरव्युवाच ।—

विविधसिद्धिलाभ-प्रसङ्गः ।—

अथ कान्त ! प्रवक्ष्यामि सिद्धिसाधनमुत्तमम् ।
येन साधनमात्रेण नरो योगी भवेद्ध्रुवम् ॥ १ ॥
शरीरं त्रिविधं प्रोक्तं सत्त्वादिगुणभेदतः ।
तत्रैव त्रिविधं प्रोक्तमुत्तमाधममध्यमम् ॥ २ ॥
दिवि तिष्ठन्ति देवाश्च वीरास्तिष्ठन्ति भूतले ।
पशवः सन्ति पाताले क्रमशः क्रमशः प्रभो ! ॥ ३ ॥
सर्वत्र त्रिगुणाऽऽच्छन्नं सत्त्वं रजस्तमोऽभिधम् ।
सत्त्वगुणं स्वर्गमध्ये विष्णुसेवापरायणे ॥ ४ ॥
सदा सर्वे दृढाः स्वर्गे भूतले च रजोगुणम् ।
ब्रह्मसेवापराः सर्वे ब्रह्मज्ञानिन एव च ॥ ५ ॥
पाताले शिवसेवी च शिवरूपो स एव च ।
तमोगुणात् पशोर्भावमधोदृष्टिं समाप्य च ॥ ६ ॥
ततो विहाय तज्ज्ञानं वीरो भवति साधकः ।
वीरभावे ज्ञानदृष्टिं ब्रह्मसिद्धिं समाप्य च ॥
देवता भवति क्षिप्रं सत्त्वे निर्मलभावके ॥ ७ ॥
स्थिरो भूत्वा महादेव ! भवत्येव क्रमेण तु ।
आकाशगामिनी सिद्धिः क्रमशो भवति ध्रुवम् ॥ ८ ॥
मूलाधारस्य चाधो वै पातालतलवासिनः ।
तदूर्द्ध्वे ब्रह्मलोके तु भूतलादिनिवासिनः ॥ ९ ॥
तदूर्द्ध्वे सत्त्वनिलयं स्वाधिष्ठानन्तु दैवतम् ॥ १० ॥
विधिविद्याप्रकाशञ्च परदेवस्य सम्पदम् ।
तदूर्द्ध्वे सर्वरूपञ्च सर्वज्ञानाश्रयं परम् ॥ ११ ॥
परस्थानं महादेव ! मणिपूरं मनोहरम् ।
रुद्रशक्त्यात्मकं चक्रं श्रीविद्याचक्रमण्डलम् ॥ १२ ॥

लाकिनी परमा माया महारुद्रेण सेविता ।
मणिपूरप्रकाशाय रुद्रशक्तिर्विभाति च ॥ १३ ॥
सर्वज्ञानानन्दमयं सर्वसिद्धिप्रकाशकम् ।
महासूक्ष्मशब्दलयं कुण्डलीज्ञानसाधनम् ॥ १४ ॥
यस्याः साधनमात्रेण योगी भवति भैरव ! ।
प्रकारत्रयसेवायां महासिद्धीश्वरो भवेत् ॥ १५ ॥
सर्वे च पशवः सन्ति तलवद्भूतले नराः ।
तेषां ज्ञानप्रकाशाय वीरभावः प्रकाशितः ॥ १६ ॥
वीरभावं सदा प्राप्य क्रमेण देवता भवेत् ।
यत्काले वीरभावादि-सिद्धिं प्राप्नोति मानवः ॥ १७ ॥
तत्कालनिर्णयं वक्ष्ये वीराद्देवत्वमाप्नुयात् ।
मासेनाकर्षिणीसिद्धिर्मासे च वाक्पतिर्भवेत् ॥ १८ ॥
मासत्रयेण संयोगाज्जायते सुरवल्लभः ।
एवं चतुष्टये मासि भवेद्दिक्पालगोचरः ॥ १९ ॥
पञ्चमे पञ्चबाणः स्यात् षष्ठे रुद्रो न संशयः ।
वीरभावं समाश्रित्य सर्वदा योगमाश्रयेत् ॥ २० ॥
पशोरधीनं देवेश ! वीरभावं मनोहरम ।
वीराधीनं दिव्यभावं वीरो योगी भवेद्ध्रुवम् ॥ २१ ॥
योगाधीनं दिव्यभावं दिव्येन रुद्रदर्शनम् ।
रुद्रदर्शनमात्रेण जीवन्मुक्तो भवेद्ध्रुवम् ॥ २२ ॥
जीवन्मुक्तिपदं प्राप्य किं न सिध्यति भूतले ? ।
मनोनिवेशमाकृत्य पशुभावाश्रितो नरः ॥
वीरभावं समाश्रित्य चादौ योगं समाश्रयेत् ॥ २३ ॥
सर्वदा चाभ्यसेत् योगं मन्त्रन्यासपरायणम् ॥ २४ ॥
मन्त्रसिद्धिं योगसिद्धिं मोक्षसिद्धिं ततःपरम् ।
यदि मोक्षमिहेच्छन्ति पशवः शास्त्रमोहिताः ॥ २५ ॥

मम ज्ञानं वीरभावं चाश्रित्य योगमाप्नुयात् ।
योगाभ्यासस्य चाद्ये वै शरीरं परिशोधयेत् ॥ २६ ॥

योगाङ्गशुद्धौ पञ्चासवविधानम् ।—

आदौ पञ्चाऽऽसवाः कार्य्याः सर्वकार्य्यनिराश्रयाः ।
केवलं योगमाश्रित्य सदा पञ्चाऽऽसवो भवेत् ॥ २७ ॥
द्विप्रकारं महाकाल ! पञ्चाऽऽसवाभिधानकम् ।
नेती दन्ती तथा धौती नेडली चालनं तथा ॥ २८ ॥
एकप्रकारमेवं हि कथितं परमेश्वर ! ।
दन्ती नेती तथा धौती नेडली चालनं क्रमात् ॥ २९ ॥
एवं वा नित्यमाकुर्य्याद् योगसिद्धिसमृद्धये ।
पञ्चाऽऽसवसाधनादि-काले कुर्यान्निजाक्रियाम् ॥ ३० ॥
औषधीपञ्चकं ग्राह्यं पञ्चयोगसुसिद्धये ।
विल्वपत्रं जयापत्रं तुलसीश्यामपत्रकम् ॥
निर्गुण्डीपत्रमेवन्तु ग्रन्थिदूर्व्वारसेन च ॥ ३१ ॥
एषां प्रकृतनामानि वक्ष्यामि शृणु शङ्कर ! ॥ ३२ ॥
अमरी विल्वपत्रन्तु चामरा विजयादलम् ।
लतामराग्रन्थिदूर्वा निर्गुण्डी वासवेश्वरी ॥ ३३ ॥
अमरा श्यामतुलसी पञ्चामरास्तदुद्भवाः ।
कथिता योगसिद्ध्यर्थं तत्प्रमाणं क्रमात् शृणु ॥ ३४ ॥
पञ्चतोलकमानन्तु विजयापत्रमेव च ।
अन्येषां तोलकञ्चैकं संशोध्य भक्षणं चरेत् ॥
एतद्भक्षणमात्रेण पञ्चयोगे जयी भवेत् ॥ ३५ ॥
पुनस्तेषां महाकाल ! मनुं वक्ष्यामि तत्त्वतः ॥ ३६ ॥

पञ्चासवशोधनम् ।—

सकलं चामरायोग-मन्त्रेणानेन भक्षयेत् ।
तारद्वयं समुद्धृत्य कूर्चयुग्मं तदनन्तरम् ॥ ३७ ॥

विसर्गबिन्दुसंयुक्तां तत्पश्चादमृतामुखी।
अमृतं स्रावय द्वन्द्वं योगसिद्धिं ततःपरम् ॥ ३८ ॥
देहि देहि पदस्यान्ते स्वाहान्तं मन्त्रमुत्तमम्।
एतन्मन्त्रेण चोत्पाट्य मन्त्रयित्वा प्रवन्दयेत् ॥ ३९ ॥
एतत् काण्डस्य मन्त्राणां तत्रैव परियोजयेत्।
निर्गुण्डीमन्त्रराजन्तु शृणु वक्ष्यामि भैरव! ॥ ४० ॥
कामबीजत्रयं पश्चात् कालीबीजत्रयं तथा।
सर्वं योगं ततः पश्चात् साधय द्वयमेव च ॥ ४१ ॥
अमृतत्वे मयि शब्दं समर्पय द्वयं तथा।
स्वाहान्त मनुना नाथ! चोत्पाट्य भक्षणं चरेत् ॥ ४२ ॥
बिल्वपत्रं प्रगृह्णीयात्तन्मन्त्रं शृणु कौलिक!।
लज्जाबीजं कामबीजं शक्तिबीजं ततःपरम् ॥ ४३ ॥
ब्रह्मबीजं ततः पश्चात् गौरसुन्दरि चावदेत्।
मां स्थापय महायोगे पालय द्वयमेव च ॥ ४४ ॥
शङ्करप्रेमगलितः स्वाहान्तं मन्त्रमुच्चरेत्।
संशोध्य तुलसीपत्रं चोत्पाट्य मनुनाऽमुना ॥ ४५ ॥
विष्णुप्रिये! महाप्रिये! शिवयोगप्रसाधिनि!।
मायाच्छेदं ततः पश्चात् संसारं स्रावय द्वयम् ॥
अमरत्वं देहि देहि स्वाहान्तं प्रणवादिकम् ॥ ४६ ॥

विजयाशोधने विशेषः।—

शृणु श्रीविजयापत्रशोधनं हि चतुर्विधम् ॥ ४७ ॥
चतुर्वर्णेषु मन्त्रेण परिशोध्य कुलाकुलम्।
तत्क्रमं परिवक्ष्यामि सावधानावधारय ॥ ४८ ॥
प्रणवं पूर्वमुच्चार्य्य देवीबीजं ततःपरम्।
श्रीबीजं मान्मथं बीजं लज्जाबीजद्वयं क्रमात् ॥ ४९ ॥
क्रमेण च समुद्धृत्य विजये! ज्ञानसुन्दरि!।

भो(यो)गमोक्षप्रदे! पश्चात् कायशोधनि! पावनि! ॥ ५० ॥
मम पश्चात् कार्यसिद्धिं देहि देहि ततःपरम्।
स्वाहान्तं मन्त्रमुद्धृत्य संशोध्य चापि भक्षयेत् ॥ ५१ ॥
एकीकृत्य महादेव! चैतन्यान्तेन योजयेत्।
अमृतेऽमृतशब्दान्ते भवेत पदं ततःपरम् ॥ ५२ ॥
अमृतवर्षिणिशब्दान्तेऽमृतं तदनन्तरम्।
आकर्षय द्वयं पश्चात् सिद्धिं देह्यनलप्रिये! ॥ ५३ ॥
एतन्मन्त्रेण संशोध्य सावधानेन भक्षयेत्।
न्यूनाधिकं न कर्त्तव्यं शनैरभ्यासमाचरेत् ॥ ५४ ॥
यावत्प्रमाणभक्ष्यः स्यात् प्रमाणे चाधिकं न च।
एतद्भोजनमाकृत्य पयःपानं समारभेत् ॥ ५५ ॥
तत्प्रकारं शृणु प्राण-नाथ! ईश्वर! शङ्कर!।
मरीचबीजं संशोध्य दुग्धशोधनमाचरेत् ॥ ५६ ॥
एतत् प्रमाणं द्विविधं तत्प्रकारं वदाम्यहम्।
वाञ्छाकल्पतरोर्मूले गुरुं ध्यात्वा पुनः पुनः ॥ ५७ ॥
मानसोपचारद्रव्यैः पूजयित्वा विधानतः।
मरीचं तोलकार्द्धन्तु शोधयेन्मनुनाऽमुना ॥ ५८ ॥
श्रीकृष्णबीजमुद्धृत्य पृथ्वीबीजत्रयं तथा।
घोरघोरतरे पश्चान्मरीचकुलसुन्दरि! ॥ ५९ ॥
लीना त्वं भव देहे मे न वीरं शोधय-द्वयम्।
द्विठान्तोऽयं मनुः प्रोक्तस्तत्पश्चाद्दुग्धशोधनम् ॥ ६० ॥
आदौ मरीचं भुक्त्वा च दुग्धपानं महाफलम्।
चर्वयित्वा मरीचन्तु दुग्धपानं महाबलम् ॥ ६१ ॥
कृष्णबीजं समुद्धृत्य कामेश्वरीमनुं ततः।
शिवबीजत्रयं पश्चात् कृष्णगोरसवासिनी ॥ ६२ ॥
योगविग्रहमुद्धृत्य मम कामप्रसाधिनी।

तत्पश्चाद् योगसिद्धीनामीश्वरी क्षेत्रवासिनी ॥ ६३ ॥
शरीरं वशमन्ते च चालय-द्वयमेव च ।
विघ्नान् वारय युग्मन्तु स्वाहान्तोऽयं महामनुः ॥ ६४ ॥
वारद्वादशमुच्चार्य्य चाथवा पञ्चवारकम् ।
वारत्रयं सदा शोध्यं सर्वत्रायं विधिः स्मृतः ॥ ६५ ॥
यदि पिवेत् खेचरत्वं तदा दुग्धं द्विपादकम् ।
यदि चेत् केवलं दुग्धं तदा प्रस्थं चतुर्दश ॥ ६६ ॥
लघ्वाहारी महाज्ञानी पञ्चमादिविरागवित् ।
मणिपूरे मनोयोगं समाक्रम्यामरो भवेत् ॥
चतुर्वर्गः करे तस्य यो मणेः पीठमाश्रयेत् ॥ ६७ ॥

आनन्दभैरव उवाच ।—

मणिपूरभेदनार्थं मनोयोगसुसिद्धये ।
खेचरादिमहायोग-सिद्धये सर्वसिद्धये ॥ ६८ ॥
मृत्युञ्जयस्य देवस्य रुद्रशक्त्याश्च दर्शनात् ।
तथा पीठस्थिरार्थाय कालजालवशाय च ॥ ६९ ॥
सहस्रनामबीजानि पूतान्यष्टोत्तराणि च ।
मृत्युञ्जयस्य लाकिन्याः स्तोत्रं परमदुर्लभम् ॥ ७० ॥
कथयस्व वरारोहे ! यदि स्नेहोऽस्ति मां प्रति ।
ज्ञानदे ! परमेशानि ! शरीरं मम रक्षतु ॥ ७१ ॥

इति श्रीरुद्रयामले उत्तरतन्त्रे महातन्त्रोद्दीपने सिद्धमन्त्रप्रकरणे षट्चक्रप्रकाशे भैरवी-भैरवसंवादे मणिपूरभेदप्रकाशे एकपञ्चाशः पटलः ॥ ५१ ॥

द्विपञ्चाशः पटलः ।

आनन्दभैरव्युवाच ।—

अथ सम्भेदनार्थाय वक्ष्ये षट्पङ्कजस्य च ।
महारुद्रस्य च श्रीश्री-मह मृत्युञ्जयस्य च ॥ १ ॥
लाकिनीशक्तिसहितं सहस्रनाममङ्गलम् ।
अष्टोत्तरपरिव्याप्तं निगूढं तव सिद्धये ॥ २ ॥
धारयित्वा पठित्वा च श्रुत्वा वा नाममङ्गलम् ।
शृणुष्व परमानन्द ! योगीन्द्र ! चन्द्रशेखर ! ॥ ३ ॥
तवाह्लादप्रणयनात् सर्वसम्पत्क्रियाप्तये ।
मणियोगसुसिद्ध्यर्थं सावधानावधारय ॥ ४ ॥

अस्याष्टोत्तरसहस्रनाममङ्गलस्य सदाविष्णुकहोड़ऋषिर्गायत्रीच्छन्दो महारुद्रमृत्युञ्जयलाकिनीसरस्वतीदेवता सर्वाभीष्टमणिपीठयोनिसिद्ध्यर्थे विनियोगः ।

लाकिनी-महामृत्युञ्जयस्तोत्रम् ।—

श्रीं मृत्युञ्जयरुद्रादि-लाकिन्यादिसरस्वती ।
मृत्युजेता महारौद्री महारुद्रः सरस्वती ॥ ५ ॥
महारौद्री मृत्युहरी महामणिविभूषिता ।
महादेवो महावक्त्री महामाया महेश्वरी ॥ ६ ॥
महावीरो महाकाली महाचण्डेश्वरीश्वरी ।
महारात्री महाभद्री वीरभद्रा महान्तरा ॥ ७ ॥
महाचण्डेश्वरी मीनी मणिपूरप्रकाशिका ।
महामत्ती महामत्ता महावीरासनस्थिता ॥ ८ ॥
मायावी मारहन्ता च मातङ्गी मङ्गलेश्वरी ।
मृत्युहारी मुनिश्रेष्ठा मनोहारी मनोजवा ॥ ९ ॥
मण्डलस्थोऽमलानन्दी मान्या मोहनमोहिनी ।

मत्तवेशो महाबालो महाबाला महालया ॥ १० ॥
मारोहारो महामारो मदिरा मत्तगामिनी ।
महामायाश्रयो मौनी महानन्दा मरुत्प्रिया ॥ ११ ॥
मुद्रापो मदिरापी च मनोयोगा महोदया ।
मांसाशी मीनभक्षश्च मोहिनी मेघवाहना ॥ १२ ॥
मानभङ्गप्रियो मान्यो महामान्या महाबला ।
महाबाणधरो मुख्यो महाविद्या महीयसी ॥ १३ ॥
महाशूलधरो मत्तो महावाणी महाकुला ।
मलयाद्रिनिवासी च महिमाचालनप्रिया ॥ १४ ॥
मायापतिर्महारुद्रो मरणापहकामिनी ।
माली महाशङ्खमाली मञ्जरी मांसभक्षिणी ॥ १५ ॥
महालक्षणसम्पन्नो महालक्षणलक्षणा ।
महाज्ञानी महावेगी मौषली मुषलप्रिया ॥ १६ ॥
महाक्षो मालिनीनाथो मन्दराद्रिनिवासिनी ।
मुनीनामन्तरस्थश्च मानभङ्गामलम्बिनी ॥ १७ ॥
महाविद्यापतिर्मध्यो मध्यपर्वतवासिनी।
मन्दिरापो मन्दहरो मदना मदनासना ॥ १८ ॥
मदनस्थो मदक्षेत्रो महाहिमनिवासिनी ।
महान् महात्मा माङ्गल्यो महामङ्गलधारिणी ॥ १९ ॥
मायाहीनशरीरश्च मनोहरतनूद्भवा ।
मायाशक्तिपतिर्मोहो महामोहनिवासिनी ॥ २० ॥
महाचित्तो महात्मा च महतामायुर्षास्थितिः ।
मत्तकुञ्जरपृष्ठस्थो मत्तकुञ्जरगामिनी ॥ २१ ॥
मकरो मरुतानन्दो माकरी स्रुक्पूजिता ।
मुनिपूज्यो मनोरूपी मेषमांसविभोजनी ॥ २२ ॥
महाकामो महाधीरो महामहिषमर्दिनी ।

महिषासुरबुद्धिस्थो महिषासुरनाशिनी ॥ २३ ॥
महिषस्थो महिषारिर्मधुकैटभनाशिनी ।
मधुनाथश्च मधुपो मधुमांसादिसिद्धिदा ॥ २४ ॥
महाभैरवपूज्यश्च महाभैरवपूजिता ।
महाकान्तिप्रियानन्दो महाकान्तिस्थिताऽमरा ॥ २५ ॥
मालाकोटिधरो मायी मृत्युमालाविभूषिता ।
मण्डलज्ञाननिरतो मणिमण्डलवासिनी ॥ २६ ॥
महाविभूतिक्रोधस्थो मिथ्यादोषसरस्वती ।
मेरुस्थो मेरुनिलयो मैनाकालयरूपिणी ॥ २७ ॥
महाशैलासनो मेरुमर्दिनी मेघवाहना ।
मञ्जुघोषो मञ्जुनाथो मोहमुग्धधरासिनी ॥ २८ ॥
मेरुस्थो मणिपीठस्थो मूलरूपा मनोहरा ।
मङ्गलार्थी महायोगी सत्तदेहसमुद्भवा ॥ २९ ॥
मतिख्याता मनोमादी मनोमाता मनोन्मनी ।
मन्दबुद्धिहरो मृत्युर्मृत्युहन्त्री मनःप्रिया ॥ ३० ॥
महाभक्तो महाशक्तो महाशक्तिर्मदान्तरा ।
मणिपूरप्रकाशश्च मणिपूरविभेदिनी ॥ ३१ ॥
मङ्कारकूटनिलयो मणिमाला मनोहरा ।
माऽक्षरो मातृकावर्णी मातृकाबीजमालिनी ॥ ३२ ॥
महातेजो महारश्मिर्मन्दहास्या मधुप्रिया ।
मधुमांससमुत्पन्नो मधुमांसविहारिणी ॥ ३३ ॥
मैथुनानन्दनिरतो मैथुनाह्लादहारिणी ।
मुरारिप्रेमसन्तुष्टो मुरारिकरसेविता ॥ ३४ ॥
माल्यचन्दनदिग्धाङ्गो मालिनी मन्त्रजीविका ।
मन्त्रजालस्थितो मन्त्री मन्त्रिणां मन्त्रसिद्धिदा ॥ ३५ ॥
मन्त्रचैतन्यकारी च मन्त्रसिद्धिप्रिया मता ।

महातीर्थप्रियो मेधो महासिंहासनास्थिता ॥ ३६ ॥
महाक्रोधसमुत्पन्नो महाबुद्धिप्रदायिनी ।
मरणज्ञानरहितो महामरणनाशिनी ॥ ३७ ॥
मरणोद्भूतहन्ता च महामुद्रान्विता मुदा ।
महामोदकरो मारो मारस्था मारनाशिनी ॥ ३८ ॥
महाहेतुहरो मार्गो महापुरनिवासिनी ।
महाकौलिकपालश्च महादैत्यविनाशिनी ॥ ३९ ॥
मार्त्तण्डकोटिकिरणो मृतिहन्त्री मृतिस्थिता ।
महाशैलासनो मायी महाकालगुणोदया ॥ ४० ॥
महाजयो महारुद्री महारुद्रारुणाकरा ।
मनोवत्समृजोमाख्यो महातरुणरूपिणी ॥ ४१ ॥
मुण्डमालाधरो माद्या मोचपुष्पमृजाऽमला ।
मङ्गलप्रेमभावस्थो महाविद्युत्प्रभाचला ॥ ४२ ॥
मावाधारी मतिस्थैर्य्यो मतभेदप्रकारिणी ।
महापुराणवेत्ता च महापौराणिकामृता ॥ ४३ ॥
मौनविद्यो महामन्त्री महाधननिवासिनी ।
मघवा माघमासस्थो महाशैत्या महोरगा ॥ ४४ ॥
महाफणिधरो मायी मातृकायन्त्रवासिनी ।
महाविभूतिदानाढ्यो मेघवाहनवाहना ॥ ४५ ॥
महाह्लादो महामित्रो महामैत्रेयपूजिता ।
मार्कण्डेयसिद्धिदाता मार्कण्डेयायुषिस्थिता ॥ ४६ ॥
मार्कण्डेयो मृकुप्रीतो मातृकामण्डलेश्वरी ।
मानसस्थो मानदाता मनोधारणतत्परा ॥ ४७ ॥
मयदानवचित्रस्थो मयदानवचित्रिणी ।
महद्गुणधरानन्दो महानिन्दाविहारिणी ॥ ४८ ॥
महेश्वरस्थितो मूलो मूलविद्याकुलोदया ।

मायापो मोहनन्यासो महागुरुनिवासिनी ॥ ४९ ॥
महाशुक्लाम्बरधरो मलयागुरुधूपिता ।
मधुपेशो मधूल्लासो माध्वीरससमाश्रया ॥ ५० ॥
महागुरुर्महादेहो महोत्साहा महोल्वणा ।
मध्यपङ्कजसंस्थाता मध्याम्बुजविनोदिनी ॥ ५१ ॥
मारीभयहरो मल्लो मल्लग्रहविरोधिनी ।
महामण्डलयोन्यादिमदघूर्णितलोचना ॥ ५२ ॥
महासद्यो मत्तकालो महाकपिलवर्त्तिनी ।
मेषवाहो महावक्त्रो मनसा मालधारिणी ॥ ५३ ॥
मरणाश्रयहन्ता च महागुरुगणास्थिता ।
महापद्मस्थितो मन्त्री मन्त्रविद्याविधीश्वरी ॥ ५४ ॥
मकरासनसंस्थश्च महामृत्युविनाशिनी ।
मोहनो मोहिनीनाथो मर्त्यमण्डलवासिनी ॥ ५५ ॥
महाकालकुलश्रीशो महत्कामादिनाशिनी ।
मूलपद्मनिवासी च महामूलफलोदया ॥ ५६ ॥
मासाख्यो माननिलयो मङ्गलस्था महद्गुणा ।
मायाच्छन्नहरो मीनो मीमांसागुणवासिनी ॥ ५७ ॥
मीमांसाकारको मायी मार्जारसिद्धिदायिनी ।
मेदिनीवल्लभश्चेमो मेदिनीज्ञानभेदिनी ॥ ५८ ॥
मौषलीशो मुषार्थस्थो मनःकल्पितकेशरी ।
मनसः श्रीधरो जापो मन्दाट्टहासशोभिता ॥ ५९ ॥
मैनाको मेनकापुत्रो मायाच्छन्ना महत्क्रिया ।
महाक्रियो महाहंस मण्डलासनशोभिता ॥ ६० ॥
मायाधारणकर्त्ता च महद्द्वेषविनाशिनी ।
मुक्ताऽऽकाशो मुक्तदेहो मुक्तिदा मुक्तिमालिनी ॥ ६१ ॥
मुक्ताहारधरो मुक्तो मुक्तिमार्गप्रकाशिनी ।

महामुक्तिक्रमाच्छन्नो महागिरिनिवासिनी ॥ ६२ ॥
मुषलाद्यस्त्रहस्तश्च मह गौरो मन.प्रिया ।
महाधनी महामानी मनोन्मत्ता मनोलया ॥ ६३ ॥
महारणगतो मान्तो महावीणाविनोदिनी ।
महाशत्रुनिहन्ता च महास्त्रजालमालिनी ॥ ६४ ॥
महारुद्रो महाशालः महाकिन्नवमोदिनी ।
महाविद्रुमपूरस्था विद्रुमाभाऽमृतप्रभा ॥ ६५ ॥
पुष्पमालाधरो मान्य शत्रूणां कुलनाशिनी ।
बीजागारा विसर्गस्था बीजमालाविभूषिता ॥ ६६ ॥
बीजचन्द्रा बीजपूरे बीजाभा विघ्ननाशिनी ।
विशिष्टा विधिमोक्षस्था वेदाङ्गपरिपूरणी ॥ ६७ ॥
किरातिनीपतिः श्रीमान् विज्ञा विज्ञजनप्रिया ।
वर्गस्थो वर्गसम्पर्को वर्गमालाविभूषिता ॥ ६८ ॥
महाद्रुमगतः शूरो विलसत्कोटिचन्द्रभा ।
महाकुमारनिलयो महाकामकुमारिका ॥ ६९ ॥
कान्तजालक्रियानाथो विफला कमलासना ।
खण्डबुद्धिहरो भावो भवभीतिदुरापहा ॥ ७० ॥
असंख्यको रूपसंख्यो नामसंख्यादिपूरणी ।
कम्बलाद्यासनः कोषः किङ्किणीजालमालिनी ॥ ७१ ॥
चन्द्रयुक्तमुखाम्भोजो विभायुतसमानना ।
कालबुद्धिहरो कालो भगवत्यम्बिकाखण्डजा ॥ ७२ ॥
खण्डस्थकोऽखण्डवाद्यस्थो विवादरहितावृता ।
पञ्चमाचारकुशली महापञ्चमलालसा ॥ ७३ ॥
विकारशून्यो दुर्द्धर्षो द्विपदा मानुषक्रिया ।
मयदानवकर्म्मस्थो विधातृकर्म्मबोधिनी ॥ ७४ ॥
कलिकालक्रियारूढो वायवी घर्घरध्वनिः ।

सर्वसञ्चारकर्त्ता च सर्वसञ्चारकर्तृका ॥ ७५ ॥
मन्दमन्दगतिः प्रेमो मन्दमन्दगतिस्थितिः ।
साट्टहासो विधुकलशाघोरवीरवानना ॥ ७६ ॥
महानरकहर्त्ता च नरकादिविनाशिनी ।
पञ्चरश्मिसमुद्भूतो नागादिरणघातिनी ॥ ७७ ॥
गरुडासनसंयुक्ता गरुड़प्रेमवर्द्धिनी ।
अश्वत्थवृक्षनिलयो वटवृक्षतलस्थिता ॥ ७८ ॥
चित्राङ्गः प्रथमा बुद्धिः प्रपञ्चसारसङ्गतिः ।
प्रसिद्धः पावनी पुच्छा सुस्थः सर्गपराऽचरा ॥ ७९ ॥
स्थितिकर्त्ता स्थितिच्छाया विषदा छत्रधारिणी ।
दाड़िमाभासकुसुमो दाडिमीकुसुमपुष्पिका ॥ ८० ॥
दार्व्या द्राविड़देशस्था रतिकामापवर्द्धिनी ।
रत्नगर्भो रत्नमाला रत्नेश्वर इवागतिः ॥ ८१ ॥
खेचरो खेचरः सुस्थो महाखङ्गवराऽव्यया ।
किशोरभावखेलस्थो विखलादिप्रकारिका ॥ ८२ ॥
महाशब्दप्रकाशश्च महाशब्दप्रकाशिका ।
चारुहासो विपद्धन्ता शत्रुमित्रगणस्थिता ॥ ८३ ॥
वज्रदण्डधरो व्याघ्रो वियत्खेलनखञ्जना ।
गदाधरः शूलधारी शर्वो कूर्परगावला ।
वसनासनकारी च वसना वसनप्रिया ॥ ८४ ॥
महाविद्याधरो गुप्तो विशिष्टगोपनक्रिया ।
गुप्तगीतो गायनस्थो गुप्तशास्त्रफलप्रदा ॥ ८५ ॥
योगविद्यापुराणस्थ यागविद्याविभा कला ।
एककालो द्विकालश्च त्रिकालफलदाम्बुदा ॥ ८६ ॥
अष्टादशभुजो रौद्रो भुजगा विघ्ननाशिनी ।
विद्यागोपनकारी च विद्यासिद्धिप्रदायिनी ॥ ८७ ॥

विजयानन्दगो मन्दो महाकालमहेश्वरी ।
भूरिदानरतो मार्गी महागीताप्रकाशिनी ॥ ८८ ॥
वेशाढ्या वेशसन्तानो मङ्गलाभा कुलान्तरा ।
द्विभुजो वेदबाहुश्च षड्भुजा कामचारिणी ॥ ८९ ॥
चन्द्रकान्तो माल्यधरोऽलकातिलकरागिणी ।
त्रिभङ्गदेहनिकरो विभङ्गस्था विनोदिनी ॥ ९० ॥
त्रिकूटस्थस्त्रितारस्थस्त्रसरेणुस्त्रिकालजा ।
एकवक्त्रो द्विवक्त्रश्च वक्त्रशून्या शिशुप्रिया ॥ ९१ ॥
श्रीविद्यामन्त्रजालस्थो विज्ञानकुशलेश्वरी ।
घटासवगतो गौरो गौरवी गैरिकाऽचला ॥ ९२ ॥
गुरुज्ञानगतो गन्धो गन्धभोग्या गिरिध्वजा ।
हारमण्डलमध्यस्थो विकटा पुष्पकानना ॥ ९३ ॥
कामाख्या निरहङ्कारः कामाकामविकाशजा ।
सुलभो दुर्लभा क्षीणा सूक्ष्मातिसूक्ष्मरूपिणी ॥ ९४ ॥
श्रीबीजजापको क्रूरो विमोहगुणनाशिनी ।
अकुलोऽतिकुलोदासो विभुरूपा सरस्वती ॥ ९५ ॥
अनन्ताधारनिलयो विहङ्गगणगामिनी ।
अच्युतेशः प्रकाण्डस्थः प्रचण्डफलवासिनी ॥ ९६ ॥
अभ्रान्तो भ्रान्तिरहितो भ्रान्तो भ्रान्तिप्रतिष्ठिता ।
अव्यर्थो व्यर्थवाह्यस्थो विशङ्का शङ्कयान्विता ॥ ९७ ॥
यमुनापतिपः पीनो महाकालवशापहा ।
जम्बुद्वीपेश्वरः पारः पारावारहुताशिनी ॥ ९८ ॥
वज्रदण्डधरः शान्तो मिथ्यागतिरतीन्द्रिया ।
अनन्तशयनोन्मूलः परमाह्लादवर्द्धिनी ॥ ९९ ॥
सिताभ्रनिलयो ध्येयो वसन्तकालसुप्रिया ।
विरजान्दोलितोच्छिन्नो विशुद्धगुणमण्डिता ॥ १०० ॥

आच्छन्नेशः खाण्डनेशः पललाऽऽसवभक्षिणी ।
शङ्खभासा कृतस्नानः सुधारसकलान्तरा ॥ १०१ ॥
फलबीजधरो दीर्घो द्वारपालनपल्लवा ।
पिप्पलादो वारुणश्च विख्याता रतिवल्लभा ॥ १०२ ॥
संसारविग्रहो विप्रो विषस्था कामरूपिणी ।
कलिकामानलः कृत्यः कलिकामानलापहा ॥ १०३ ॥
कामानलो वियत्कायो सुकाम्या कामरूपिणी ।
अवलापो लापलपो विक्लृप्ता कंसनाशिनी ॥ १०४ ॥
हठात्कारगतो चामो वाचामो विनयप्रिया ।
सर्वकालसुखाच्छन्नो जिताजितगुणोदया ॥ १०५ ॥
भास्वत्किरीटो झङ्कारो करणेशी तलान्तरा ।
अमूल्यरत्नदानाढ्यो दिवारात्रित्रिखण्डजा ॥ १०६ ॥
मारबीजो महामानी हरबीजादिसंस्थिता ।
अनन्तवासुकीशानो लाकिनी काकिनी द्विधा ॥ १०७ ॥
कोटिध्वजो हृद्दुर्गश्चामुण्डा रणचण्डिका ।
उमेशो रत्नमालेशो विकुम्भगणपूजिता ॥ १०८ ॥
निकुम्भपूजितः कृष्णो विष्णुपत्नी सुधात्मिका ।
कम्पकालहरो कुम्भो महाकुम्भास्त्रधारिणी ॥ १०९ ॥
ब्रह्मास्त्रधारकः क्षिप्रो वनमालाविभूषिता ।
एकाक्षरो द्व्यक्षरश्च षोडशाक्षरसम्भवा ॥ ॥ ११० ॥
अतिगम्भीरवातस्थो महागम्भीरवाद्यगा ।
विदिवेशास्त्रिदशात्मा तृतीया त्राणकारिणी ॥ १११ ॥
क्रियत्कालबलानन्दो विहङ्गमागनाशना ।
गीर्वाणो बाणहस्तश्च बाणहस्ता विधुच्छला ॥ ११२ ॥
बिन्दुधर्मोज्ज्वलोदारो वियज्ज्वलनकारिणी ।
विश्रमव्याप्तपूज्यश्च नवदेशी प्रधानिका ॥ ११२ ॥

विलोलवदनो व्यामो विरामो मोदकारिणी।
हिरण्यहारभूषाङ्गः कलिन्दनन्दिनी नगा ॥ ११४ ॥
अनन्यचीणवचाश्च चितिचोभविनाशिका।
क्षणचित्तप्रसादाङ्गो विशिष्टानामधीश्वरी ॥ ११५ ॥
रेवातीरनिवासी च गङ्गातीरनिवासिनी।
गङ्गेशः पुष्करेशश्च व्यासभाषा विशोषिका ॥ ११६ ॥
आतुरानाथसंत्रश्च रामेश्वरसुपूजिता।
रमानाथः प्रभुः प्राप्तिः कीर्त्तिस्त्राभिधारिणी ॥ ११७ ॥
लम्बोदरः प्रेमकान्तो लम्बोदरकुलप्रिया।
अर्द्धदेहो ध्यानपरो लोचनायुतधारिणी ॥ ११८ ॥
अव्यर्थवचनप्राज्ञो विद्या वागीश्वरी तथा।
स्रीं स्रीं शब्दमणिः स्मृतिः कालिङ्गजीवनेश्वरी ॥ ११९ ॥
स्रीं स्रीं स्रीं वितरङ्गाढ्या गुप्तचक्रात्मिकात्मदा।
मणिनागगतो गन्ता वागीशानी बलप्रदा ॥ १२० ॥
कुलासनगतो नाशो विनाशा नाशसुप्रिया।
विनाशमूलः कूलस्थः संहारकुलकेश्वरी ॥ १२१ ॥
त्रिशाक्यगुणविप्रेन्द्रो महदाश्चर्य्यचारिणी।
आशुतोषगुणाच्छन्नो मदविह्वलसुन्दरी ॥ १२२ ॥
विरूपाक्षो लेलिहश्च महामुद्राप्रकाशिनी।
अष्टादशाक्षरो रुद्रो मकरन्दसुबिन्दुगा ॥ १२३ ॥
कवचामरधारी च कवदात्री त्रिपुण्ड्जा।
इन्द्रात्मको विधाता च धनदानादिकारिणी ॥ १२४ ॥
कुण्डली परमानन्दो मधुपुष्पसमुद्भवा।
विल्ववृक्षास्थितो रुद्रो नयनाम्बुजरागिणी ॥ १२५ ॥
हिरण्यगर्भः कौमारी विरूपाक्षः क्रतुप्रिया।
श्रीवृक्षनिलयः श्यामो महाकुलतरूद्भवा ॥ १२६ ॥

कुलवृक्षस्थितो विद्वान् हिरण्यरजतप्रिया।
कुलेशः प्राणपः प्राणः पञ्चचूड़धरो धरा ॥ १२७ ॥
पर्वतो वेदिकानाथो धर्म्माधर्म्मविवेचका।
शीतलाशः शीतहीनो मन स्थैर्य्यकरी क्षया ॥ १२८ ॥
कुक्षिस्थः क्षणभङ्गस्था गिरिपीठनिवासिनी।
स्वर्गकायः प्रसन्नात्मा प्रसन्नवनवासिनी ॥ १२९ ॥
प्रतिष्ठेशः प्राणधर्म्मो ज्योतीरूपा भृगुप्रिया।
धर्म्मध्वजपताकेशो वलाकाशतवर्द्धिनी ॥ १३० ॥
मेरुशृङ्गगतो धूर्त्तो धूर्त्तमत्ता खलस्पृहा।
सेवासिद्धप्रदोऽनन्तोऽनन्तकार्य्या विभेदिका ॥ १३१ ॥

आसवशुद्धेः परिमाणान्तरम्।—

अन्येषां तोलकञ्चैकं संशोध्य भक्षणं चरेत्।
पुनस्तेषां महाकाल-मनुं वक्ष्यामि तत्त्वतः ॥ १३२ ॥
सकलं चामरायोगं मन्त्रेणानेन भक्षयेत्।
तारद्वयं समुद्धृत्य श्रीयुग्मं तदनन्तरम् ॥ १३३ ॥
विसर्गबिन्दुसंयुक्तं तत्पश्चादमृतामुखी।
मरणं हारय द्वन्द्वं योगसिद्धिं ततःपरम् ॥ १३४ ॥
देहि देहि पदस्यान्ते स्वाहान्तं मन्त्रमुत्तमम्।
एतन्मन्त्रेण चोद्धृत्य मन्त्रयित्वा प्रभक्षयेत् ॥ १३५ ॥
एतत्काण्डस्य मन्त्रन्तु तत्रैव परियोजयेत्।
निर्गुण्डीमन्त्रवीजेन्द्रं शृणु वक्ष्यामि भैरव! ॥ १३६ ॥

आसवशुद्धेर्मन्त्रान्तरम्।—

कामवीजत्रयं पश्चात् कालीवीजत्रयं तथा।
सर्वयोगं ततः पश्चात साधय द्वयमेव च ॥ १३७ ॥
अमृतत्वं मयिशब्दं समर्प्य द्वयं तथा।
ब्रह्मवीजं ततः पश्चात् विराटपीठवासिनी ॥ १३८ ॥

आमवशुद्धे: स्तोत्रान्तरम् ।—

विच्छेद: छेदभेदश्च कुलशास्त्रप्रकाशिका ।
चारुकान्तालङ्कृतश्च महाहाटकरूपिणी ॥ १३९ ॥
परानन्दरसज्ञानी रससन्तानमन्त्रिणी ।
प्रतीक्ष: सूक्ष्मशब्दश्च प्रसन्नसङ्गतिप्रिया ॥ १४० ॥
क्षमायो सागरोद्भूता वन्ध्यादोषविवर्जिता ।
जितधर्मकुलव्रतो व्यापिका भटवाहना ॥ १४१ ॥
व्याघ्रचर्माम्बरो योगी महापीठा वलप्रदा ।
वरदाता सारदाता ज्ञानदाऽऽनन्दवाहिनी ॥ १४२ ॥
चारुकेशधरो मान्यो विशालमुण्डाऽम्बरा ।
ताडङ्कमालानिर्माल्य-धरस्ताडङ्कमोहिनी ॥ १४३ ॥
पश्चान्तदेशसम्भूतो विशुद्धेश्वरवल्लभा ।
किरातपूजितो व्याधो मनुचिन्तापरायणा ॥ १४४ ॥
शिववाक्यरतो रामो भृगुरामकुलेश्वरी ।
स्वयम्भूकुसुमाच्छन्नो विधिविद्याप्रकाशिनी ॥ १४५ ॥
प्रभाकरतनूद्भूतो विशल्यकरणीश्वरी ।
उशतीश्वरसम्पर्को योगविज्ञानवासिनी ॥ १४६ ॥
उत्तमो मध्यमो वाच्यो वाच्यावाच्यवराङ्गना ।
मां बीजवादबोधाढ्यो मन्दरोदरकारिणी ॥ १४७ ॥
कृष्णसिद्धान्तसंस्थानो युद्धसाधनचर्च्चिका ।
मथुरासुन्दरीनाथो मथुरापीठवासिनी ॥ १४८ ॥
सर्वशास्त्रविभेदश्च सत्तासिंहासनाऽऽसना ।
इतिहासप्रियो धीरो विमलामलरूपिणी ॥ १४९ ॥
मणिसिंहासनस्थश्च मणिपूरजयोदया ।
भद्रकाली जपानन्दा भद्रा भद्रप्रकाशिनी ॥
श्रीभद्रो भद्रनाथश्च भवभङ्गविहिंसिनी ॥ १५० ॥

आत्मारामो विधेयात्मा शूलपाणि: प्रियान्तरा ।
अभिविद्यादृढाभ्यासो विशेषविधिदायिनी ॥ १५१ ॥
द्वितीयानाथ ईशार्द्धो बादरायणमोहिनी ।
मृगमांसासनो भीमो भीमनेत्रा भयानका ॥ १५२ ॥
शिवज्ञानक्रमो दक्षो क्रियायोगपरायणा ।
कुलस्थो दानसम्मानो दन्तुरा पार्वती परा ॥ १५३ ॥
प्रियानन्दो दिवाकर्त्ता निशानिषादघातिनी ।
षष्टहस्तो विलोलाक्षो मन:स्थापनकारिणी ॥ १५४ ॥
मृदुपुत्रो मृदुच्छत्रो विभाण्डकुलनन्दिनी ।
अन्तरीक्षगतो मूलो मन:सूत्रप्रकाशिनी ॥ १५५ ॥
अभीतिदाननिरतो विधुमालामनोहरी ।
चतुरस्रो हृषीकेशो धनिकन्या कुतूहली ॥ १५६ ॥
शिशुपालरिपुप्राणी विद्वेषिज्वरदायिनी ।
अतिधार्मिकपुत्रश्च चारुसिंहासनास्थिता ॥ १५७ ॥
स्थापको गुणवर्गाणां सतां सिद्धिप्रकाशिनी ।
सिद्धिप्रियो विशालाक्षो ध्वंसकर्त्री निरञ्जना ॥ १५८ ॥
शक्तीशो विकलेशश्च क्रतुकर्मफलोदया ।
विफलेशो वियद्गामी ललिता बुद्धिवाहना ॥ १५९ ॥
मलयाद्रितप:क्षेम-क्षयकर्त्ता रजोगुणा ।
हिरण्डको द्वारपालो नानाविघ्नविनाशिनी ॥ १६० ॥
मायापद्मगतो मायी मारीविद्याविनाशिनी ।
हिङ्गुलादिस्थित: सिद्धो विदुषां वादसाधिनी ॥ १६१ ॥
श्रीपतीश: श्रीकरेश: श्रीविद्या भुवनेश्वरी ।
मतिप्रथमतो धन्यो मिथिलानाथपुत्रिका ॥ १६२ ॥
रामचन्द्रप्रियप्राप्तो रघुनाथकुलेश्वरी ।
कर्मकुलगतो धीरो वनदुर्गा गिरीश्वरी ॥ १६३ ॥

राजराजेश्वरो बालो रतिपीठगुणान्तरा ।
कामरूपधरोल्लासो विदग्धकामरूपिणी ॥ १६४ ॥
पतिथीशः क्षुब्धभर्त्ता नानाऽलङ्कारशोभिता ।
नानाऽलङ्कारभूषाङ्गो वनमालाविभूषणा ॥ १६५ ॥
जगन्नाथो जगद्व्यापी जगतामिष्टसिद्धिदा ।
जगत्कामो जगज्जापो जयन्ती जयदायिनी ॥ १६६ ॥
जयकारी जीवकारी जयदा जीवनी जया ।
जयो गणेशः श्रीदाता मत्तपीठनिवासिनी ॥ १६७ ॥
विषमः सामवेदस्थो यजुर्वेदाशया रमा ।
त्रिकालगुणगम्भीरो द्वाविंशतिकराम्बुजा ॥ १६८ ॥
सहस्रप्रादुर्भावस्थो भावना भवभाविनी ।
भवनादकरो मार्गी विनीता नयनाम्बुजा ॥ १६९ ॥
सर्वत्राकर्षको खण्डः सर्वज्ञानाभिकर्षिणी ।
जिताशयो जितरिपुः कलङ्कदोषवर्जिता ॥ १७० ॥
निराधारो निरालम्बो विषयाज्ञानवर्जिता ।
अतिविस्तारवदनो विवादखलनाशिनी ॥ १७१ ॥
प्रार्थ्यनाथः क्षोभनाशो रिपूणां कुलनाशिनी ।
आश्रयो भूरिवर्गाणां चारुकुन्तलमण्डिता ॥ १७२ ॥
अतिबुद्धिधरो सूक्ष्मो रजनीध्वान्तनाशिनी ।
ज्योत्स्नाजालकरो योगी वियोगगामिनीयुता ॥ १७३ ॥
युगगामी योगगामी जयदानकरी शिवा ।
संज्ञाबुद्धिकरो भावो भवभीतिविमोहिनी ॥ १७४ ॥
सुन्दरः सुन्दरानन्दो रतिकामातिसुन्दरी ।
रतिज्ञानी रतिसुखो रतिसुखप्रकाशिनी ॥ १७५ ॥
बुद्धिरूपी बोधमाता द्विबोध देवार्जिता ।
भूरिभावहरानन्दो भूरिसन्तानदायिनी ॥ १७६ ॥

यन्त्रसाधनकर्त्ता च सुयन्त्रः परमासना ।
कोटिकोटिचन्द्रतेजाः कोटिकोटिरविच्छटा ॥ १७७ ॥
कोटिकोटिचन्द्रनाभो द्विकोटियुतचञ्चला ।
कोटिसूर्य्याच्छन्नदेहः कोटिकोटिरविप्रभा ॥ १७८ ॥
कोटिचन्द्रकान्तमणिः कोटीन्दुकान्तनिर्मला ।
शतकोटिविधुमणिः शतकोटीन्दुकान्तगा ॥ १७९ ॥
विलसत्कोटिकालाग्निः कोटिकालानलोपमा ।
कोटिकोटिवह्निनिभो वह्निजायाद्विठोद्भवा ॥ १८० ॥
महातेजा वह्निराशिः कालाग्निहारधारिणी ।
कालाग्निरुद्रो भगवान् कालाग्निरुद्ररूपिणी ॥ १८१ ॥
कालात्मा कलिकालात्मा कालिका कुलनाशिनी ।
मृत्युजिन्मृत्युजेता च मृत्युञ्जयमनुप्रिया ॥ १८२ ॥
महामृत्युहरो मृत्युरपमृत्युविनाशिनी ।
जयी जयेशो जयदो जयदा जयवर्द्धिनी ॥ १८३ ॥
जयाकारो जगत्कर्मो जगज्जीवनरक्षिणी ।
सर्वजित् सर्वरूपी च सर्वदा सर्वभाविनी ॥ १८४ ॥
श्रीं श्रीं श्रीं इति कथितं महाविद्याभिधानकम् ।
शब्दब्रह्ममयं साक्षात् कल्पद्रुमफलान्वितम् ॥ १८५ ॥
अष्टोत्तरसहस्राख्यं नानामन्त्रसमाकुलम् ।
त्रैलोक्यमङ्गलं चैतं सिद्धिविद्याफलप्रदम् ॥ १८६ ॥
सकलं निष्कलं साक्षात् कल्पद्रुमफलान्वितम् ।
योगिनामात्मविज्ञानं मोक्षज्ञानकरं परम् ॥ १८७ ॥
यः पठेद् भावसम्पूर्णो मिथ्याधर्मविवर्जितः ।
रुद्रपीठे स्वयं भूयो महायोगी भवेत् ध्रुवम् ॥ १८८ ॥
अकस्मात् सिद्धिमाप्नोति चाधिकं मान्यदायिनीम् ।
राजलक्ष्मीं धनैश्वर्य्यमतिधैर्य्यं हयादिकम् ॥ १८९ ॥

कुञ्जरं सुन्दरं धीरं पुत्रं राज्यं सुखं जयम् ।
राजराजेश्वरत्वञ्च दिव्यवाहनमेव च ॥ १९० ॥
अक्लेशपञ्चमां सिद्धिं ततः प्राप्नोति मध्यमाम् ।
अत्यन्तदुःखहननं गुरुत्वं लोकमण्डले ॥ १९१ ॥
देवानां भक्तिभावञ्च दिव्यभावं सदासुखम् ।
आयुर्वृद्धिं लोकवश्यं पूर्णकोषं हि गोधनम् ॥ १९२ ॥
देवानां वाक्यश्रवणं प्रत्यक्षे स्वप्नकालके ।
दीर्घदृष्टिं भयत्यागं चाल्पकार्य्यं विवर्जितम् ॥ १९३ ॥
सदा धर्मप्रियत्वञ्च धर्मज्ञानं महागुणम् ।
विवेकाङ्कुरमानन्दं श्रावणीसुकृपान्वितम् ॥
तत उत्तमयोगस्थां प्राप्नोति साधकोत्तमः ॥ १९४ ॥
अत्यन्तगुह्यसंस्थानं मायार्थभूतिवर्जनम् ।
एकान्तस्थानवसतिं योगशास्त्रनियोजनम् ॥ १९५ ॥
सर्वाकाङ्क्षाविशून्यत्वं देवतैकान्तसेवनम् ।
खेचरत्वं सर्वगतिं भावसिद्धिं सुरप्रियाम् ॥
सदा योगक्रियायोगं विभूत्यष्टाङ्गसिद्धिदम् ॥ १९६ ॥
दृढ़ज्ञानं धर्मशास्त्रे कवित्वं रससागरम् ।
एकभावं द्वैतशून्यं महापदनियोजनम् ॥ १९७ ॥
महागुणवती विद्या-पतित्वं शान्तिमेव च ।
प्राप्नोति साधकश्रेष्ठो यः पठेद्भावनिश्चलः ॥ १९८ ॥
त्रिकालमेककालं वा द्विकालं वा पठेत् सुधीः ।
शतमष्टोत्तरञ्चास्य पुरश्चर्य्याविधिः स्मृतः ॥ १९९ ॥
पुरश्चरणमाकृत्य पठित्वा च पुनःपुनः ।
अष्टैश्वर्य्ययुतो भूत्वा विशुद्धसङ्गमो भवेत् ॥ २०० ॥
विशुद्धपद्मं भित्त्वा च शीघ्रं द्विदलगो भवेत् ।
द्विदलादि महापद्मं भित्त्वैतत्स्तोत्रपाठतः ॥

चतुर्वर्गक्रियां कृत्वा चान्ते निर्वाणमोक्षभाक् ॥ २०१ ॥
योगिनां योगसिद्ध्यर्थं सर्वभूतशुभोदयात् ।
निर्वाणमोक्षसिद्धर्थं कथितं परमेश्वर ! ॥ २०२ ॥
एतत्स्तोत्रप्रपाठेन किं न सिध्यति भूतले ? ॥ २०३ ॥
कुलाकुलक्रमेणैव साधयेत् योगसाधनम् ।
योगान्ते योगमध्ये तु योगाद्ये प्रपठेत् स्तवम् ॥ २०४ ॥
कृत्तिका-रोहिणीयोगे आर्द्रायां मिथुने तथा ।
श्रवणायां मेषलग्ने कुजे कुहुसमाकुले ॥ २०५ ॥
संक्रान्त्याञ्च शनिवारे कुजवारे पुनर्वसौ ।
सन्ध्याकाले लिखेत् स्तोत्रं ध्यानधारणयोगवित् ॥ २०६ ॥
भूर्जपत्रे लिखित्वा च कण्ठे शीर्षे प्रदापयेत् ।
अथवा रात्रियोगे च कुलचक्रे लिखेत् सुधीः ॥ २०७ ॥
सर्वत्र कुलयोगेन पठित्वा सिद्धिमाप्नुयात् ।
एतन्नाम्ना प्रजुहुयात् कालिकाहुतिदानवत् ॥ २०८ ॥
तद्दशांशक्रमेणैव हुत्वा योगीह सर्वदा ।
मणिपूरे दृढ़ो भूत्वा रुद्रशक्तिकृपां लभेत् ॥ २०९ ॥

इति श्रीरुद्रयामले उत्तरतन्त्रे महातन्त्रोद्दीपने सिद्धमन्त्रप्रकरणे षट्चक्रप्रकाशे भैरवी-भैरवसंवादे महारुद्रमृत्युञ्जयकालिकोसाष्टोत्तरशतनामविन्यासो नाम द्विपञ्चाशः पटलः ॥ ५२ ॥

त्रिपञ्चाशः पटलः ।

श्रीआनन्दभैरव उवाच ।—

कथयस्व वरारोहे ! मणिपूरमनुक्रमम् ।
यज्ज्ञात्वा मुनयः सर्वे चाष्टसिद्धिमवाप्नुयात् ॥ १ ॥
मणिपद्मं गच्छति क्षिप्रं प्राणायामैरनाहते ।
सर्वार्थमनुचैतन्यं निजविग्रहरक्षणम् ॥

तत्परापरग्रन्थिस्थं विचार्य्य वक्तुमर्हसि ॥ २ ॥

आनन्दभैरव्युवाच ।—

महाभैरव ! कालाग्ने ! मनुज्ञानं निशामय ।
कथयामि तव स्नेहादतिकोमलसाधनम् ॥ ३ ॥

मणिपूरे मन्त्रचैतन्यम् ।—

मनुना मन्त्रचैतन्यं विविधानि शृणु प्रभो ! ।
मणिपूरे तव ज्ञाने यत्प्रसादाच्छिवो भवेत् ॥ ४ ॥
एतत्करणमात्रेण योगी भवति निश्चितम् ।
कोटिकोटिमन्त्रजापात्तदर्थं कोटयः स्मृताः ॥ ५ ॥
एतन्मध्ये सारभागं कथयामि कुलार्णव ! ।
सर्वत्र समभावेन संस्मरेन्मूर्त्तिमुत्तमाम् ॥ ६ ॥
शरीरमपरिच्छिन्नं ब्रह्माण्डं सचराचरम् ।
मूलादिमणिपूरान्तं त्रिगुणं मनुरूपकम् ॥ ७ ॥
वर्णमालाऽनुसारेण मुहुर्मुहुर्जपेत् सुधीः ।
पूर्णतेजोमयीं ध्यायेत् कोटिकामाग्निरूपिणीम् ॥ ८ ॥
स्वदेवतां सदा ध्यायेत् मूलादिब्रह्मरन्ध्रके ।
तन्मूर्त्तिमपरिच्छिन्नां गेहस्थाननिवासिनीम् ॥ ९ ॥
गभीराह्लादनानन्दां सुधासागरवासिनीम् ।
मूलरन्ध्रे सदा ध्यायेत् कोटिकालानलोज्ज्वलाम् ॥ १० ॥
ज्वलन्तं ध्यानमाकुर्य्यात् ऊर्द्ध्वशिखप्रभाकरम् ।
सुधारसामोदिसुग्धं हव्याग्निसदृशोज्ज्वलम् ॥ ११ ॥
ललाटं चिन्तयेत् कान्तं पूर्णेन्दुकोटिसङ्गमम् ।
विगलद्रसपुञ्जन्तु तद्रसात् प्रोज्ज्वलानलम् ॥ १२ ॥
स्थिरवायुं स्थिराकारं मन्त्रार्थञ्चेति भावयेत् ।
अथवा शुद्धमह्नाशं पूर्णब्रह्ममयं शुभम् ॥ १३ ॥
मूलादिब्रह्मरन्ध्रान्तं मूलं ध्यात्वा पुनःपुनः ।

विचिन्तयेत् सूक्ष्मरूपं महागुर्वीं स्वदेवताम् ॥
मन्त्रार्थञ्चेति तज्ज्ञानं तज्ज्ञानान्मोक्षमाप्नुयात् ॥ १४ ॥

मणिपूरमन्त्रदेवताध्यानम् ।—

न स्थूलं नातिसूक्ष्मं गुणमयवपुषं विश्वनाथं सुशक्तिं
सानन्दानन्दवित्तं कलिफलसकलं शुक्लरक्तां विशुद्धम् ।
पीनापीनादिरूपं त्रिगुणगगमनं मूलपद्मादिरन्ध्रे
विश्वात्मानं कुलाख्यं मनुगुणजड़ितं भावयेत् सिद्धिहेतोः ॥ १५ ॥
चतुःषष्टिचेत्रे द्विगुणजननीं ध्याननिपुणां
महामन्त्राकारं भुवनकरजां वेशविषये ।
महाविद्यामाद्यां मनुमयरसाच्छन्नतनुगा-
मवाप्यानन्दाब्धौ कुलपथि भजन्तीह रसिकाः ॥ १६ ॥
समस्तं शून्यार्थं रजतघटनारायणमयं
विसर्गं बिन्दुस्थं रविशशिकला वह्निकिरणम् ।
जगद्व्यापारादिं भवविरहितं भावजड़ितं
विकाराधाराढ्यं दशदलयुतं स्थापयति धीः ॥ १७ ॥
सुरासुरभयप्रदं तरुणरूपशोभाकरं
मनोहरकलेवरं सकलदेहसंज्ञापकम् ।
भजन्ति मुनयो नृपा प्रतिदिनं तथेन्द्रादयः
दशच्छदनिकेतने प्रकृतिदेहमध्यस्थितम् ॥ १८ ॥
प्रचण्डचरणाश्रयं ध्वनिकलापसंवर्द्धनं
महोत्कटतपःप्रियं भवति चाशुतोषं शिवम् ।
निधाय हृदिपङ्कजे किमपि नाभिमूलेऽपि वा
विभावगुणभावनं परिकरोति योगी महान् ॥ १९ ॥
स्वकीयगुणसत्त्वके कठिनचित्तसंज्ञापनं
चतुर्भुजकलेवरे दशदलाध इन्दीवरे ।
मनोहरपरं हरं परमसारमाद्याक्षरं

भावेन लभ्यते पूजा, विवेकं पूजया लभेत्
विवेकात् ब्रह्मभावञ्च प्राप्नोति कोटिजन्मनि ॥

योगयोगाद्भवेन्मोक्षः इति तत्त्वस्य निगमः
संसारोत्तारणान्मुक्तिः योगशब्देन कथ्यते
लोके हि दुर्लभं योगं योगात्परतरं नहि
योगं पञ्चविधं प्रोक्तमेकं विषयसम्मतम्
द्वितीयञ्च द्विभेदञ्च पूजायोगं तृतीयकम्
भक्तियोगं परं ब्रह्म-योगसारं कलेश्वरः
सर्वभापि मनोयोगा लक्षो मुक्तो भवेत् ध्रुवम्

235A Insert

प्रकृष्टपरमेश्वरे प्रणवरूपमारोपयेत् ॥ २० ॥
विविक्तमतिनिर्मलं कमलहारमाख्याश्रयं
शिवं सकलभास्करं सकलपद्ममध्येऽपि वा ।
भुजायुतधरं धराधरधरं हि मुद्राधरं
भजन्ति कुलकामिनीपतय ईश विश्वासदाः ॥ २१ ॥
सदा चरणपङ्कजे विफलहानिमुद्राश्रये
कृपामयसुलक्षणं मतिगसत्त्वसम्भावनम् ।
सदैकगुणभावनं परमदेव देवस्य वै
त्रिलोकजननीपतेरमलमेव कुर्य्यात् वशी ॥ २२ ॥
एवं जप्त्वा सदा मन्त्रं विश्वमध्ये परः शुचिः ।
अकस्मान्मन्त्रचैतन्यं प्राप्नोत्यर्थविनिर्णयम् ॥ २३ ॥

इति श्रीरुद्रयामले उत्तरतन्त्रे महातन्त्रोद्दीपने सिद्धमन्त्रप्रकरणे षट्चक्रभेदप्रकाशे भैरवी-भैरवसंवादे मन्त्रार्थचैतन्य-विन्यासो नाम त्रिपञ्चाशः पटलः ॥ ५३ ॥

चतुःपञ्चाशः पटलः ।

आनन्दभैरव्युवाच ।—

आनन्दसागराम्भोज-मध्यस्थ ! परमप्रिय ! ।
इदानीं कालजालादि-वारणं शृणु भैरव ॥ १ ॥
सम्पूज्य सच्छयाच्छन्नं वायुं स्वाभाविकीगतिम् ।
कुम्भयित्वा स्वभावेन चिरकालं सुखी भवेत् ॥ २ ॥
शनैः शनै रेचयित्वा सर्वदा तद्गतो भवेत् ।
कालजालवशं याति तत्क्षणान्नात्र संशयः ॥ ३ ॥
विना कुम्भकयोगेन को हि सिध्यति भूतले ।
वायुचालनमात्रेण सूक्ष्ममार्गोद्गमेन च ॥ ४ ॥

सिध्यत्येव महायोगी कालजालवशी भवेत् ।
न करोति कालवशं मोहादतिसुखोदयात् ॥ ५ ॥
कालभक्ष्यो भवेत् सोऽपि म्रियते नात्र संशयः ।
मणिपूरे मनो दत्त्वा देवतां साधयेत् सदा ॥ ६ ॥
स्तोत्रं ध्यानं नामगुणं पठित्वा च पुनः पुनः ।
मनोयोगञ्च सर्वत्र वायुना कारयेत् बुधः ॥ ७ ॥
कुम्भयित्वा सदा योगी रेचयित्वा पुनः पुनः ।
सर्वकालवशं नीत्वा जितात्मा चामरो भवेत् ॥ ८ ॥
लोभमोहौ वर्जयित्वा कामक्रोधादिपातकम् ।
सर्वदा वायुपानञ्च कृत्वा रहसि सद्वशी ॥ ९ ॥
नित्यं वायुसाधनानि षट्चक्रभेदनाय च ।
शनैः शनै रेचयेद्वै चिरजीवित्वसाधनात् ॥ १० ॥
यदि न चिरजीवी स्यात् कालात्मा वायुसेवकः ।
षट्चक्रभावसिद्धान्ते ज्ञानी मृत्युवशो भवेत् ॥ ११ ॥

अमरापञ्चकसाधनम् ।—

अतः कुर्य्यात् शिवज्ञानं वायुसंसिद्धिकारणम् ।
तत्क्रियासाधनार्थाय चादौ पञ्चाऽमराविधिम् ॥ १२ ॥
कुर्य्यात् साधकमुख्यश्च निजकायप्रसाधनात् ।
नेतीयोगं तदा कुर्य्यात् यदा भवति संयमी ॥ १३ ॥
धौतीयोगं तदा कुर्य्यात् यदा भवति सुस्थिरः ।
नेउलीञ्च तदा कुर्य्यात् यत्र लोको न विद्यते ॥ १४ ॥
दन्तीयोगं तदा कुर्य्यात् यदा मुख्यक्रियारतः ।
चालनन्तु सदा कुर्य्यात् यथा तृष्णाविवर्जितः ॥ १५ ॥
तृष्णानाशे भवेन्मोक्ष इति मे योगनिर्णयः ।
विशेषेण प्रवक्ष्येऽहं शृणु कैलासपावन ! ॥ १६ ॥
कृत्वा कार्य्यमेतदादौ दिवि देवा मुनीश्वराः ।

कायसिद्धिं मुदा कृत्वा छायामायाविवर्जिताः ॥ १७ ॥
सर्वत्रगामिनः सर्वे धर्मशास्त्रार्थपण्डिताः ।
चिरजीविन एवापि कमलाश्रीसमन्विताः ॥ १८ ॥
तत्तद्भेदान् प्रवक्ष्यामि साधनान् कायलक्षणान् ।
यः करोति महादेव ! कायसाधनमुत्तमम् ॥
स आयाति ममानन्द-सदने नात्र संशयः ॥ १९ ॥
प्रभाते च समुत्थाय ब्राह्मे कलिफलोदये ॥ २० ॥
सहस्रारे गुरोः पाद-पङ्कजध्यानमाचरेत् ।
विचिन्तयेत्ततः श्रीमान् गुरुरूपां सरस्वतीम् ॥ २१ ॥
स्वदेवतां परानन्द-रसिको योगबुद्धिमान् ।
प्रणम्य शिरसा नित्यं शौचं कार्य्यं समाचरेत् ॥ २२ ॥
शौचक्रियाक्रमेणैव सिद्धः शुचिगुणान्वितः ।
प्रगच्छेत् शौचकार्य्यार्थं घटमानं जलं नयेत् ॥ २३ ॥
मृत्तिकाप्रस्थमानञ्च नीत्वा शौचं समाचरेत् ।
कुम्भनं सप्तदशकं वर्चस्त्यागं पुनः पुनः ॥ २४ ॥
ततस्तर्जन्याल्पतैलैर्वामहस्तस्य शङ्कर ! ।
गुदरन्ध्रे समायोज्य चालनं हि पुनः पुनः ॥ २५ ॥
यावत्कालं भवेद्धि तु निःशेषेण मलक्षयम् ।
तावन्मृत्पयसाऽऽचाल्य शोधयेदुदरं सुधीः ॥ २६ ॥
यावन्न जायते सौख्यं तावत्कालं समाचरेत् ।
तत उत्थाय विधिना मृत्तिकाशौचमाचरेत् ॥ २७ ॥
येन क्रमेण विष्ठाया गन्धनाशोऽपि जायते ।
पादद्वयं समाचाल्य चान्तःशौचं समाचरेत् ॥ २८ ॥

नेतीक्रिया ।—

तत्क्रियासकलं वक्ष्ये शृणु योगेश्वर ! प्रभो ! ।
सूत्रावस्त्रसमुद्भूतं डोरकं सूक्ष्मवस्त्रके ॥ २९ ॥

नासिकायां दृढतरं कोमलं चातिनिर्मलम् ।
शनैः शनैर्नियोज्याथ जिह्वामूले निवेशयेत् ॥ ३० ॥
जिह्वामूलात् समादाय वारद्वादशकं सुधीः ।
मन्दमन्दघर्षणन्तु कृत्वा भेदं समाचरेत् ॥ ३१ ॥
मायात्रयेण वीजेन देवीवीजत्रयेण च ।
रमावीजत्रयेणापि योगिन्यै नम इत्यपि ॥ ३२ ॥
एतन्मन्त्रेण योगेन्द्र ! नेतीयोगं समाचरेत् ।
शिरःशुद्धिं समाकृत्य करशोधनमाचरेत् ॥ ३३ ॥
ततो वक्षःशोधनन्तु ततो नाभेश्च शोधनम् ।
क्रमेण कुर्य्यात् कार्य्यार्थे तत्प्रकारं शृणु प्रभो ! ॥ ३४ ॥

धौतीक्रिया ।—

धौतीक्रियां समाकुर्य्यात् तप्तोदकनिषेवणम् ।
शुक्लवस्त्रं सूक्ष्मसूत्रं चाष्टाङ्गुलिप्रमाणकम् ॥ ३५ ॥
द्वात्रिंशत्तन्तुमानन्तु पूर्णसंख्या उदीरिता ।
मन्त्री प्रथमतः कुर्य्याच्चतुरङ्गुलवस्त्रकम् ॥ ३६ ॥
दीर्घे पञ्चहस्तमानं तप्तोदकसमन्वितम् ।
भक्षयेच्छेषजिह्वाग्रे संस्थाप्य वसनं सुखम् ॥ ३७ ॥
तर्जनीमध्यमाङ्गुष्ठ-मुद्राभिर्भक्षयेत् सुधीः ।
क्रमेण वर्द्धयेन्नित्यं दीर्घं च प्रसरे तथा ॥ ३८ ॥
सर्वत्र पूर्वमन्त्रेण संशोध्य वीजमुच्चरेत् ।
शक्तिवीजत्रयं पश्चात् कामवीजत्रयं तथा ॥ ३९ ॥
लक्ष्मीवीजत्रयं पश्चात् महाधौतनिवासिनि ।
मे नाडीमलमन्ते तु चालय द्वयमेव च ॥ ४० ॥
नाड्या (भाथ्यां) बन्धे ततः पश्चात् उदरे सन्निवेशयेत् ।
शनैर्निवेशमाकृत्य यावत् सर्वं प्रजायते ॥ ४१ ॥

नेउलीक्रिया।—

तत: कुर्य्यात् साधकेन्द्रो विग्रहक्षेमकारणात्।
नेउली परमं योगं गात्रस्य दृढ़बन्धनम्॥ ४२॥
घूर्णायमानमाकुर्य्यात् उदरं परमेश्वर!।
सर्वदा चालनं कुर्य्यात् प्राणवायुप्रधारणम्॥ ४३॥
वामे घूर्णितमाकृत्य दक्षिणे घूर्णितं चरेत्।
एवंक्रमेण देवेश! पुटपाकं सदाऽऽचरेत्॥ ४४॥
एतन्मन्त्रेण देवेश! शुभासनदृढ़ो भवेत्।
ब्रह्मबीजत्रयं पश्चात् कालीबीजत्रयं तत:॥ ४५॥
देवीप्रणवयुग्मन्तु गात्रस्थायै नमो द्विठ:।
तदन्ते नाड़िकादीनां चालनं परमाद्भुतम्॥ ४६॥

दन्तीक्रिया।—

वक्ष:स्थाने महाकाल! दन्तीयोगेन कारयेत्।
गजमानं दन्तकाष्ठं निर्मलं सुन्दरं मतम्॥ ४७॥
दन्तकाष्ठं कारयेद्वै मनुना साधकाग्रणी:।
श्यामाबीजत्रयं पश्चात् भैरवीबीजकं त्रयम्॥ ४८॥
मर्दिनीबीजयुगलं दन्तकाष्ठनिवासिनि!।
मे हृद्ग्रन्थिं छेदयेति युगलं वह्निसुन्दरि!॥ ४९॥
क्रमेण विधिनानेन गलरन्ध्रे निवेशयेत्।
यावन्नाभेरधो याति यावत् सुखमयो न च॥
तावद्दन्तीयोगकार्य्यं प्रभाते सर्वकार्य्यकम्॥ ५०॥
एतदन्ते तत: कुर्य्यान्नाड़ीचालनमेव च॥ ५१॥

नाड़ीचालनक्रिया।—

तन्मन्त्रं शृणु वीरेन्द्र! अमरत्वप्रदायकम्।
आदौ प्रणवमुद्धृत्य दीर्घप्रवणयुग्मकम्॥ ५२॥
भुवनेशीबीजयुग्मं चन्द्रबीजत्रयं तत:।

कृष्णबीजत्रयं पश्चात् अर्कबीजत्रयं तत:॥ ५३॥
श्रीबीजं मन्मथं लक्ष्मीं शीतले तदनन्तरम्।
शोधयन्नाड़िकामूलं मलं चालय युग्मकम्॥ ५४॥
स्वाहान्तमनुना नित्यं चालयेत् नाड़िकाधमा:।
यावत् तृष्णानाशक: स्यात्तावत्कालं समाचरेत्॥ ५५॥
यावदुद्गमशक्तिर्न त्रिदण्डावधि धारणा।
तावन्न जायते नाथ! चालनं सुखसाधनम्॥ ५६॥
यदि भाग्यवशादेव त्रिदण्डवायुकुम्भकम्।
स्वयमेव समायाति नाड़िकाच्चालनं शुभम्॥ ५७॥
यावत् सूक्ष्ममलालापं मधुपानं निरन्तरम्।
पादाम्भोजनि:सृतन्तु परमानन्दवर्द्धनम्॥ ५८॥
तत्सुखेनापरिच्छिन्नं सज्ञाननिर्मलेन च।
चिदानन्दस्वरूपेण स्वानन्दाश्रुविलोचनम्॥ ५९॥
तदा हि हृदयग्रन्थि-च्छेदनं देहवर्द्धनम्।
तदैव पुलकं स्थैर्य्यं देहावेशस्थिरं सदा॥ ६०॥
तदा षट्कुम्भसिद्धान्त-ज्ञानं चैतन्यनिर्मलम्।
चिदानन्दमयो भूत्वा कृष्णाज्ञानविवर्जित:॥ ६१॥
जीवन्मुक्त: परानन्द-रसिक: प्रणयप्रिय:।
स्थिरचेता महायोगी भवत्येव न संशय:॥ ६२॥
आस्तिको देवदत्तस्य निन्दावादविवर्ज्जित:।
स एवात्मा महाज्ञानी भवत्येव न संशय:॥ ६३॥

स्नानक्रिया।—

पञ्चयोगं समाकृत्य नेत्यादिकमनुत्तमम्।
स्नानं कुर्य्याद्विधानेन तीर्थराजनिकेतने॥ ६४॥
ईड़ा-गङ्गाजले वापि पिङ्गला-यमुनाजले।
सुषुम्नायां सरस्वत्यां द्युषु पुष्करकोटिषु॥ ६५॥

तथापि बाह्यस्नाने तु सर्वाङ्गं मस्तकं विना ।
सप्तवारं समासिञ्चेत् मस्तकं बाह्यवारिणा ॥ ६६ ॥
मार्जनेनापि मनुना मूलमन्त्रेण वा पुनः ।
ततोऽङ्गं मार्जयित्वा च सन्ध्यावन्दनमाचरेत् ॥ ६७ ॥

सन्ध्यावन्दनादिक्रिया ।—

बाह्यसन्ध्यां मन्त्रजालैरन्तरे प्रकृतीश्वरम् ।
ऊर्द्ध्वाधस्तैजसं बिन्दुं नादमण्डलसम्पुटम् ॥ ६८ ॥
सन्ध्यावन्दनमाकृत्य महौषधिं प्रभक्षयेत् ।
मूलमन्त्रेणाभिमन्त्र्य पञ्चगव्यं कुलेश्वर ! ॥ ६९ ॥
ततः कुर्य्यान्महापूजां स्वस्वमन्त्रोक्तसाधिताम् ।
षट्चक्रार्थं ततो ध्यायेद् यदुक्तं विधिना प्रभो ! ॥ ७० ॥
कुण्डल्यादिमहापूजां सहस्रनाममङ्गलम् ।
अत्यन्तगुह्यकथनं सत्त्वभक्तिप्रकारकम् ॥ ७१ ॥
भित्त्वा भेदं मुदा कुर्य्यान्मणिपीठस्थदेवयोः ।
ध्यानं ज्ञानं स्तवं नित्यं यजनं नामकीर्त्तनम् ॥ ७२ ॥
चैतन्यं रुद्रलाकिन्यास्तथा मृत्युञ्जयस्य च ।
नित्यं गुरुमयं ध्यात्वा सर्वगामिनमीश्वरम् ॥
चिरजीवी महायोगी भवत्येव न संशयः ॥ ७३ ॥

इति श्रीरुद्रयामले उत्तरतन्त्रे महातन्त्रोद्दीपने सिद्धमन्त्रप्रकरणे षट्चक्रप्रकाशे भैरवी-भैरवसंवादे मणिपूरभेदो नाम चतुःपञ्चाशः पटलः ॥ ५४ ॥

पञ्चपञ्चाशः पटलः ।

आनन्दभैरव्युवाच ।—

पञ्चासवशोधनक्रिया ।—

परापरविभेदज्ञ ! निगूढज्ञानसाधनम् ।
इदानीं शृणु सर्वज्ञ ! पञ्चद्रव्यादिसाधनम् ॥ १ ॥

षट्चक्रपद्मभेदार्थं यत्क्रमाज्जायते क्षणात् ।
अमरस्यामरस्यैव सर्वसिद्धिप्रदायकः ॥ २ ॥
ब्रह्मज्ञानसाधनी च ब्रह्मानन्दप्रकाशिनी ।
अमरता तथा ध्येया दूर्वासंज्ञा प्रतिष्ठिता ॥ ३ ॥
सिद्धामरा च निर्गुण्डी सर्वसिद्धिप्रदायिनी ।
नीलामरा ततोऽग्रात्मा नीला तुलसीसंज्ञिता ॥ ४ ॥
अमरः स जयापत्रं चामरा बिल्वपत्रिका ।
शिवप्रियाः सदा पूज्याः पूर्वोक्तां वा समाश्रयेत् ॥ ५ ॥
एतद्भक्षणमन्त्राणि शृणु कैलासभूपते ! ।
ब्राह्मणी क्षत्रिया वैश्या शूद्रा च क्रमशो जया ॥ ६ ॥
तत्तन्मन्त्रेण संशोध्य भक्षयेन्मनुनाऽमुना ।
सर्वासाममरादीनां भक्षणे समुदीरिता ॥ ७ ॥
प्रणवं दीर्घप्रणवं कपिले ज्ञानसाधनी ।
समयोगं साधयेति युगं स्मरणसम्पुटम् ॥ ८ ॥
शाखाप्रशाखासम्पूर्णे ! महौषधिनिवासिनि ! ।
मामिकममरं देव ! कुरु युग्मं ततो द्विठः ॥ ९ ॥
अमराशनमन्त्राणि शृणुष्व पार्वतीश्वर ! ।
यस्य स्मरणमात्रेण नरो नारायणो भवेत् ॥ १० ॥
शिववद्विहरेल्लोके बिल्वपत्रस्य भोजनात् ।
श्रीबीजत्रयमुद्धृत्य वाग्देवीबितयं ततः ॥ ११ ॥
लक्ष्मीकामेश्वरीबीजं रमाकामत्रयं त्रयम् ।
"सिद्धबिल्वेशि ! परमे ! निगूढतत्त्ववासिनि ! ॥ १२ ॥
मामिकज्ञानतत्त्वे तु नियोजय युगं द्विठः ।"
एतन्मन्त्रेण वीरेन्द्रो विधितत्त्वाख्यमुद्रया ॥ १३ ॥
शोधयित्वा पुनर्नाथ ! अमरास्तास्तु शोधयेत् ।

अमराशोधनम् ।—

दूर्वा देवि ! त्रिभुवने अमृतत्वप्रदायिनि ! ॥ १४ ॥
ग्रन्थिच्छेदभेदकरि ! प्रणवाद्ये पुरैव सा ।
ततो हि विष्णुबीजञ्च किङ्किणीबीजमुद्धरेत् ॥ १५ ॥
राजराजेश्वरीबीजं श्रीबीजं त्रीणि तत्परम् ।
सुधाखण्डे मामिहान्ते सिद्धामरपदं लिखेत् ॥ १६ ॥
"देहि देहि नमः स्वाहा" शब्दमुच्चार्य्य शोधयेत् ।
एतत् स्मरणमात्रेण चिरकालं सुखी भवेत् ॥ १७ ॥
सर्वसंयोगमात्रेण सिद्धो भवति साधकः ।
सिद्धामराशोधनन्तु शृणु श्रीचन्द्रशेखर ! ॥ १८ ॥
सिद्धामरा च निर्गुण्डी त्रिषु लोकेषु गोपिता ।
एतत् प्रधानमूलञ्च पत्रं वा भक्षयेत् सुधीः ॥ १९ ॥
मूलाभावे दलं भोज्यं पत्राभावे च मूलकम् ।
आनयेत् साधकश्रेष्ठः शोभनेन दिनेन तु ॥ २० ॥
तदा भवति सिद्धिश्च कौलानां नियमो न हि ।
कौलिके सर्वसिद्धिश्च कौलिके योगसाधनम् ॥
कुलाचारविहीनानां योगं योगादिकं कथम् ? ॥ २१ ॥
विना योगेन भोगादि-सञ्चयो जायते कथम् ? ।
योगसञ्चयमात्रेण भोगसाधनमालभेत् ॥ २२ ॥
तद्भोगं परमं ज्ञानं ज्ञानामृतनिषेवणम् ।
विषयाह्लादभोगादिरनायासेन वर्द्धते ॥ २३ ॥
शरीराणामादिकार्य्यं शरीरस्य प्रभोः प्रियम् ।
शीतलामृतरूपाढ्यं व्यक्ताव्यक्तप्रकारकम् ॥ २४ ॥
आदिसाधनमेवं हि कथितं स्नेहहेतुना ।
वल्लभप्राणरक्षार्थं शोकाश्रुवारणाय च ॥ २५ ॥
पुनस्तु कथये तेऽहं निर्गुण्डीशोधनं प्रभो ! ।

"ओं निर्गुण्डि महामाये ! महासत्त्वनिवासिनि ! ॥ २६ ॥
आयुरारोग्यजननि ! ब्रह्मशब्दनिवासिनि ! ।
मदीयं सकलं कायं गुह्यं कुरु युगं ततः ॥ २७ ॥
नान्तयुग्मं बिन्दुनाद-भूषितं चारुतेजसम् ।
चतुर्दशस्वरव्याप्तं धायुगं बिन्दुभूषितम् ॥ २८ ॥
लक्ष्मीबीजत्रयं पश्चात् उमाबीजत्रयं लिखेत् ।
वज्रकायं देहि देहि शब्दान्ते वह्निसुन्दरि" ॥ २९ ॥
एतन्मन्त्रेण संशोध्य भक्षयेत् साधकोत्तमः ।
ततोऽमरो भवेत् क्षिप्रं नात्र कार्य्या विचारणा ॥ ३० ॥
तुलसीशोधनं वक्ष्ये शृणुष्व परमेश्वर ! ।
यत् कृत्वा च निरोगी स्यात् बलवान् विजितेन्द्रियः ॥ ३१ ॥
"प्रणवं वैष्णवि देवि सत्त्वज्ञाननिवासिनि ।
कामबीजत्रयान्ते तु मां रक्ष युगलं द्विठः" ॥ ३२ ॥
एतत् शोधनमाकृत्य भक्षणं यः करोति हि ।
कार्यसिद्धिर्भवेत्तस्य ध्यानधारणयोगिनः ॥ ३३ ॥

इति श्रीरुद्रयामले उत्तरतन्त्रे महातन्त्रोद्दीपने सिद्धमन्त्रप्रकरणे षट्चक्रप्रकाशे भैरवी-भैरवसंवादे पञ्चद्रव्यशोधनं नाम पञ्चपञ्चाशः पटलः ॥ ५५ ॥

षट्पञ्चाशः पटलः ।

आनन्दभैरव्युवाच ।—

कथयामि तव स्नेहात् कायवश्यविशेषणात् ।
हठयोगं प्रकथितमिदानीं शृणु तत्क्रमम् ॥ १ ॥
मणिपूरस्थितं रुद्रं त्रैलोक्यपरमाक्षरम् ।
कथयामि शिवानन्द ! शिवशङ्करमङ्गलम् ॥ २ ॥
स्वाधिष्ठानोर्द्ध्वदेशे च परमानन्दसागरम् ।
नाभिमूलं मेघजाल-मध्यविद्युत्शताकुलम् ॥ ३ ॥

रहस्यातिरहस्यञ्च योगिनामतिसागरम् ।
तन्नाभिमूलदेशे च नीलपद्मं महत्प्रभम् ॥ ४ ॥
तद्दलाग्रे सदा भान्ति भादिकान्ताक्षराणि च ।
तद्दाह्ये शोभितं रूपं त्रिकोणमनलस्य च ॥ ५ ॥
प्रभातशूरसङ्काशं शिखाकारं निरञ्जनम् ।
तत्राग्निवीजरूपञ्च रूपातीतं गुणान्तरम् ॥ ६ ॥
विचिन्तयेन्मेषपृष्ठ-वाहनं चारुणाकृतिम् ।
चतुर्वाहुं त्रिनयनं चारुदेहधरं परम् ॥ ७ ॥
तत्क्रोड़े भाति रुद्रेशः सिन्दूरारुणविग्रहः ।
वृद्धरूपी त्रिनेत्रश्च सृष्टिसंहारकारकः ॥ ८ ॥
विभूतिभूषिताङ्गश्च लोकानामिष्टदो विभुः ।
तस्य वामे सदा भाति लाकिनी परदेवता ॥ ९ ॥
चतुर्भुजा महादेवी त्रिनेत्रा सौख्यदायिनी ।
श्यामाङ्गी पीतवसना विचित्रालङ्कृताम्बरा ॥ १० ॥
सर्वसिद्धिप्रदा माता सर्वत्र सर्वपालिका ।
सदा रक्षतु मां देवी विद्याभिः कुलकालिका ॥ ११ ॥
एवं ध्यात्वा पूजयित्वा जपयागस्तवादिभिः ।
ततः सिद्धो भवेन्मन्त्री मणिपूरप्रसादतः ॥ १२ ॥
मणिपूरफलं वक्ष्ये समासेन शृणु प्रभो ! ।
कोटिवर्षशतेनापि फलं वक्तुं न शक्यते ॥ १३ ॥
मणिपूरानन्तरं हि प्रवक्तव्यमनाहतः ।
स्तोत्रं ध्यानं समाधेयं सहस्रगुणशङ्करम् ॥ १४ ॥
फलमत्यन्तगुह्यञ्च सुहृत्पद्मोपलब्धिगम ।
आत्मज्ञानं मोक्षसिद्धिं प्रेमभक्त्यादिलाभकम् ॥ १५ ॥
संहर्त्ता जनसङ्घानां पालकः कमलापतिः ।
अकस्माज्ज्ञानसन्दोह-लक्ष्मीं प्राप्नोति योगिराट् ॥ १६ ॥

इति श्रीरुद्रयामले उत्तरतन्त्रे महातन्त्रोद्दीपने सिद्धमन्त्रप्रकरणे षट्चक्रप्रकाशे भैरवी-भैरवसंवादे मणिपूरभेदो नाम षट्पञ्चाशः पटलः ॥ ५६ ॥

सप्तपञ्चाशः पटलः ।

आनन्दभैरव उवाच—

हृत्पद्मादीनां प्रकारप्रश्नः ।—

वद कामिनि ! कौमारि ! सुरानन्दकुलेश्वरि ! ।
हृदयाम्भोजविन्यासमधुना वक्तुमर्हसि ॥ १ ॥
यस्य विज्ञानमात्रेण नरो योगेश्वरो भवेत् ।
सर्वसिद्धिक्रियास्थानं योगिनामतिदुर्लभम् ॥ २ ॥
सर्वतत्त्वस्वरूपञ्च सिद्धिमार्गप्रकाशकम् ।
हृदयाम्भोजविज्ञानान्मार्त्तण्डभैरवो भवेत् ॥ ३ ॥
श्रोतुमिच्छामि तत्सर्वं षट्सु चक्रेषु मङ्गलम् ।
स्नेहदृष्टिक्रमेणैव भक्तियोगोद्भवेन च ॥ ४ ॥
भेदनं भावनं ज्ञानं चित्तदर्शनमेव च ।
मन्त्रोद्धारञ्च सङ्केतं सर्वज्ञानगुणोदयम् ॥ ५ ॥
यजनं काकिनीदेव्या ईश्वरस्य गुणात्मनः ।
स्तवनं कवचं सर्वं सहस्रनाममङ्गलम् ॥ ॥ ६ ॥
वायूनां मण्डलज्ञानं समासेन वदस्व मे ।
त्वमेव शरणं देवि ! त्राहि मां दुःखसङ्कटात् ॥ ७ ॥

आनन्दभैरव्युवाच ।—

महाकाल ! महाभाग ! भक्तिभावपरायण ! ।
महानन्दभैरवेश ! शृणु वक्ष्यामि यत्नतः ॥ ८ ॥
यदुक्तं भवता चात्र अश्रुतं परमाद्भुतम् ।
नोक्तं कुत्रापि सर्वेश ! तव स्नेहात् प्रकाशितम् ॥ ९ ॥
अप्रकाश्यमिदं रत्नं दुःखजालनिवारणम् ।
सावधानेन सर्वेश ! कुरु त्वं योगसाधनम् ॥ १० ॥
मयि योगं महादेव ! कृत्वा कालवशं हर ! ।
मयि योगं न करोति सिद्धिभक्तिक्रियादिकम् ॥ ११ ॥

अकस्मान्मरणं तस्य कालभक्ष्यो न संशयः।
केवलं मां हृदम्भोजे परिपूर्णफलोदये ॥ १२ ॥
सर्वकाममनोवाञ्छं नानाकौतुकमङ्गलः।
पूजयित्वा सदा ध्यायेत् काकिनीं मां न संशयः ॥ १३ ॥
स योगी जायते नाथ ! हृदम्भोजप्रसादतः।
हृत्पङ्केरुहमध्यस्थाः सर्वे देवाः सवासवाः ॥ १४ ॥
मामर्चयन्ति ते नित्यं भक्तिभावपरायणाः।
ये ध्यायन्ति महावीरा तपस्यन्ति च वासवान् ॥ १५ ॥
क्रमेण प्राणसंयोगान्मां पश्यन्ति न संशयः।
मामेकं काकिनीध्यानं स्थिरवायुं प्रचण्डकम् ॥ १६ ॥
पश्यन्ति योगिनः काये अष्टैश्वर्यमहाप्रभम्।
केवलं भक्तियोगेन नित्ययोगेन चोत्तमम् ॥ १७ ॥
पद्मध्यानं प्रथमतः कृत्वा सिद्धो न संशयः।
तद्ध्यानं शृणु वीरेश ! योगिनामिह दुर्लभम् ॥ १८ ॥

हृत्पद्मध्यानम्।—

हृत्पद्मे कुलपालितं सुललितं हंसेन संशोभितं
वस्तु कोमलदीप्तिकोटिजडितं सम्भावितं साधकैः।
अत्युत्कृष्टमयूखपुञ्जमिलितं सिन्दूरवर्णारुणं
ध्यात्वा पश्यति यो नरः प्रतिदिनं काद्यारुणैरावृतम् ॥१९॥
स स्यात् कोटिधनेश्वरो नरवरो भूयस्तलं वक्षसि
यो नित्यं लिपिभावनं प्रकुरुते नित्येश्वरालोकनात्।
तद्ध्यानं क्रमतो वदामि सकलं येन प्रसिद्धो भवे-
दानन्दार्णवमध्यपद्मकलितं काद्यार्कवर्णोज्ज्वलम् ॥२०॥
दले पूर्वे ध्यायेदतिविमलवर्णं कमिति वा
प्रभातार्कच्छायारुणकिरणयोगं युगमयम्।

अनाहतपद्मविन्यासः।—

चतुर्बाहुं नित्यं त्रिनयनमनन्तं रविगतं
भवाद्याशक्तिस्थं स्वभवनघटाशोभिततनुम् ॥२१॥ कं।
द्वितीयं पत्रस्थं विधुयुतकपालं त्रिनयनं
ससिन्दूराकारं त्रिगुणभुजशोभाभवमहम्। खं।
सदा ध्यायेद्देवं परमपुरुषं श्रीगणपतिम्
सुरत्नाकारं वै तरुणमणिमालं जितमिदम् ॥ २२ ॥ गं।
चतुःपत्रे ध्यायेदमलमरुणं घोरनिनदं
क्रियादक्षं मूर्त्तिं त्रिनयनसरोजं युगभुजम्।
वराभीतिप्रोच्चत्स्फटिकजपमालादिसहितं
फणानङ्काराङ्गं शिवशिवम(मु)खेशोत्तममहम् ॥२३॥ घं।
ङबीजं सिन्दूरारुणमखिलनाथं त्रिनयनं
महामोक्षस्थानं शशिकनकरत्नाभरणकम्।
चतुर्बाहुं रुद्रं पतितजननाथं गुणविभुं
श्रिया नाथं देवं वरमभयकं बिभ्रतमहम् ॥ २४ ॥ ङं।
चतुर्बाहुं ध्याये कमलवरमालाविमहितं
विभुं तं ध्यायेऽहं विधुशतमुखं तत्त्रिनयनम्।
प्रभातार्कप्रायं सकलमणिरत्नाभरणकं
महज्ज्योत्स्नाजालं परमरमचिन्दूद्भवतनुम् ॥ २५ ॥ चं।
तमेकं नेत्रस्थं कुलमलकरं नूतनरविं
चतुर्बाहुं ध्याये वरतनुकपालेष्टसहितम्।
सुधाधारापानं कनकजपमालाऽऽवृततनुं
त्रिनेत्रं योगेन्द्रं वसुदलगतं चारुवदनम् ॥ २६ ॥ छं।
चतुर्वक्त्रं ध्यायेदथ च मनसा चारुणतनुं
विशालाक्षं सूक्ष्मं समयमनिशं चक्रवपुषम्।
चतुर्बाहुं देवं त्रिभुवनपदं सारघटितं
महाशङ्कं रुद्रं वरमभयकं बिभ्रतमपि ॥ २७ ॥ जं।

महाकायं तेजोमयमपि च भं बीजमखिलं
सदा ध्याये कामापहमतिसुखं चाष्टदलके।
महासिन्दूराद्रिं दिनकरकलाकोटिविमलं
त्रिनेत्रं पञ्चास्यं दशभुजयुतं सर्ववपुषम् ॥ २८ ॥ भं।
ञं बीजं सार्द्धचन्द्रोज्ज्वलशिखमखेशं त्रिनयनं
चतुर्दोर्ब्रं ध्यायेऽब्जकमलगदाचक्रनिविड़म्।
महामालाव्याप्तं कनकशुभमालाङ्कितगुरुं
प्रभातार्कं विश्वार्चितजटिलरूपं रविदले ॥ २९ ॥ ञं।
मनोरूपाच्छन्नं त्रिनयनमधीशं दशदले
टकारं बिन्द्वाढ्यं जपवटिवराभीत्यसिधरम्।
तमेकं सोमेशं कनकविलसत्कुण्डलधरं
मुदा ध्याये शम्भुं हृदि शिवदले सिद्धकमले ॥ ३० ॥ टं।
त्रिनेत्रं कामाख्यं शिशुकरुणया सिद्धिफलदं
सुरत्नालङ्कारच्छविरुचितनृणां समनघम्।
ठकारं बिन्द्वाख्यं नवरविघटाकोटिविकलं
दले चार्कं ध्याये कमलवरमालाशशधरम् ॥ ३१ ॥ ठं।
एतत् शुद्धमनोलयस्य भुवनं चैतन्यसंसिद्धये
वर्णानां जपभावनं यदि सदा चिन्तामणेर्मण्डलम्।
योगीन्द्रः कुरुते वशिष्ठसदृशो वाचांपतिर्भूतले
वाक्सिद्धिं चिरकालवासमखिले देवो हि नो मानुषः॥३२॥
वाञ्छाचिन्तामणेर्गेहं हृदयाम्भोजमण्डलम्।
तन्मध्ये पवनस्थान-मण्डलाकारसुलक्षणम् ॥ ३३ ॥
बुद्धिप्रतिभया व्याप्तं तन्मध्ये पवन[illegible]रम्।
आच्छन्नधूमसङ्काशं प्रसि[illegible]त्तमम् ॥ ३४ ॥
तन्मध्ये देवतापीठं षट्क[illegible] परम्।
तन्मध्ये भावयेदष्टं स्वरूक[illegible]धितम् ॥ ३५ ॥

वायोर्ध्यानं तत्र कुर्यादत्यन्तसूक्ष्मरूपिणम्।
निराकारं परं ब्रह्म साकारं शब्दरूपिणम् ॥ ३६ ॥
निरक्षरं स्वाक्षराढ्यं महोग्रग्रन्थिरूपिणम्।
चतुर्दोर्ब्रं जगद्व्याप्तं कृष्णसारासनं वरम् ॥ ३७ ॥
लोकत्रयाणां वरदं करुणासिन्धुरूपिणम्।
पञ्चभूतात्मकं रौद्रं प्राणसंज्ञं किरीटिनम् ॥ ३८ ॥
संबिभ्रतं वराभीति-घण्टाडामरसेवकान्।
ईशनाम्ना परिचितं परं हंसं कुलेश्वरम् ॥ ३९ ॥
सर्वालङ्कारशोभाङ्गं रवेरुदयकारणम्।
विचिन्तयेत् साधकेन्द्रः परिवारगणावृतम् ॥ ४० ॥
तत्र पङ्केरुहे ध्यायेदीश्वरं वर्णरूपिणम्।
त्रैलोक्यमङ्गलं नाथं चतुर्दोर्ब्रं किरीटिनम् ॥ ४१ ॥
रक्तमालाशोभिताङ्गं शुक्लवर्णं महाप्रभम्।
ईश्वरं योगिनामीशं ध्यायेत् हृत्पद्ममण्डले ॥ ४२ ॥
तत्पार्श्वे साधको ध्यायेत् काकिनीं परमेश्वरीम्।
त्रैलोक्यपूजितां देवीं काकचञ्चुप्रकाशिनीम् ॥ ४३ ॥
चतुर्भुजां महादेवीं पीतवस्त्रोपशोभिताम्।
नवविद्युत्कोटिरूपां विलोमनेत्रपङ्कजाम् ॥ ४४ ॥
कपालशशिशूलास्त्र-वरदानसमाकुलाम्।
विचित्ररत्ननिर्म्माणां स्वर्णालङ्कारभूषिताम् ॥ ४५ ॥
त्रैगुण्यललितां सूक्ष्मां वराभयकराम्बुजाम्।
सुधापानरतां मत्तां पूर्णरूपां कुलेश्वरीम् ॥ ४६ ॥
रत्नकङ्कणमालाढ्यां परमानन्दभैरवीम्।
हृदयाम्भोजमध्यस्थां ध्यायेऽहं हंसगामिनीम् ॥ ४७ ॥
तत्पीठध्याननिकरे त्रिकोणं परिचिन्तयेत्।
पीठशक्तिं सुवर्णाढ्यां विद्युत्कोटिसमोदयाम् ॥ ४८ ॥

काकिनीमष्टमीं मत्तां पूर्वान्तःकरणोद्यताम् ।
सर्वालङ्कारभूषाढ्यां परिवारगणावृताम् ॥ ४९ ॥
तद्दक्षिणे पार्श्वभागे चिन्तयेद्बाणलिङ्गकम् ।
सुवर्णशुद्धसङ्काशं निर्मलं चारुतेजसम् ॥ ५० ॥
महालक्ष्मीप्रियानन्दं सर्वाकारं निरञ्जनम् ।
ज्ञानयोगोदयं ब्रह्म-रूपिणं बहुरूपिणम् ॥ ५१ ॥
प्रदीपकलिकाऽऽकारं चिन्तयेदीश्वरं शिवम् ।
एतेषां ध्यानमाकृत्य वागीशो भवति क्षणात् ॥ ५२ ॥
राज्यसिद्धिं तत्र नाथं चिन्तयेत्तत्प्रसिद्धये ॥ ५३ ॥
तत्र भानोर्मण्डलञ्च चिन्तयेत् साधकाग्रणीः ॥ ५४ ॥
पद्मकिञ्जल्कमध्ये तु चिन्तयेदरुणायुतम् ।
मासैकसाधनादेव योगी स्यात् शीतलाङ्गधृक् ॥ ५५ ॥
द्विमासे ग्रन्थिभेदः स्यादत्यन्तगुणवान् भवेत् ।
साधको योगयोग्यः स्यात् सर्पादिविषनाशकृत् ॥ ५६ ॥
चतुर्मासे निर्मलात्मा भावुकः स्थिरमानसः ।
पञ्चमे मासि सम्प्राप्ते वायवीक्षपयाऽन्विता ॥ ५७ ॥
स्थिरवायुः स्थिरा दृष्टिस्त्वतीव सुखसम्पदाम् ।
ततो दिने दिने वृद्धिर्वायूनामनुकम्पया ॥ ५८ ॥
षण्मासात् पापसंत्यक्तो मुक्तवद् भ्रमते चिरम् ।
जले चाग्नौ च भूगर्त्ते कदाचिन्न म्रियेत हि ॥ ५९ ॥
ईश्वरात्मा महाज्ञानी निःशङ्को निरुपद्रवः ।
महाविवेकसिद्धिस्तु ज्ञानी भेदविवर्जितः ॥ ६० ॥
स भूत्वा चिरजीवी च भुक्तिमागी दिने दिने ।
सप्तमे कल्पसन्त्यक्तो मदनोपमविग्रहः ॥ ६१ ॥
नित्यानन्दगुणप्राप्तिर्भूमित्यागो दिने दिने ।
अष्टमे सर्वशत्रुघ्नो वाञ्छानाशविवर्जितः ॥ ६२ ॥

अणिमादिदर्शनञ्च ब्रह्मगोविन्ददर्शनम् ।
नवमे चालना सिद्धिः पञ्चभूतमयाङ्गधृक् ॥ ६३ ॥
सप्तसर्गालोकनञ्च षट्शिवप्रियदर्शनम् ।
द्वादशे देवसम्मानं देवतापाददर्शनम् ॥ ६४ ॥
अत्यन्तसुखसन्तानं मायाजालनिवारणम् ।
सर्वविद्या सर्वसिद्धिर्दिव्यभक्तिः शुभोदया ॥ ६५ ॥
ते वीरास्ते च योगेन्द्रास्ते दिव्यास्ते च भैरवाः ।
ते सर्वे मृत्युगोप्तारस्ते भक्ता मुक्तिभागिनः ॥ ६६ ॥
ये तिष्ठन्ति महारण्ये निर्जने पर्वते चिरम् ।
धारयन्ति साधयन्ति योगमेतत्कुलेश्वर ! ॥ ६७ ॥
योगयोगाङ्गविन्मोक्ष इति तत्त्वस्य निर्गमः ।
संसारोत्तारणान्मुक्तिर्योगशब्देन कथ्यते ॥ ६८ ॥
लोके हि दुर्लभं योगं योगात्परतरं न हि ।
योगं पञ्चविधं प्रोक्तमेकं विषयसम्मतम् ॥ ६९ ॥
द्वितीयञ्च द्विभेदञ्च पूजायोगं तृतीयकम् ।
भक्तियोगं परं ब्रह्म-योगसारं कुलेश्वर ! ॥
सर्वत्रापि मनोयोगाद्बद्धो मुक्तो भवेद् ध्रुवम् ॥ ७० ॥

इति श्रीरुद्रयामले उत्तरतन्त्रे महातन्त्रोद्दीपने सिद्धमन्त्रप्रकरणे षट्चक्रप्रकाशे भैरवी-भैरवसंवादे अनाहतपद्मविन्यासो नाम सप्तपञ्चाशः पटलः ॥ ५७ ॥

अष्टपञ्चाशः पटलः ।

आनन्दभैरव्युवाच ।—

अथातः संप्रवक्ष्यामि विवेकगुणलक्षणम् ।
वर्णध्यानानन्तरं हि पूजनं तन्महत्फलम् ॥ १ ॥
पूजया लभते पूजां विवेकं भावसम्भवम् ।

काकिनीश्वरसंयोगं भावं परमदुर्लभम् ॥ २ ॥
यजनं काकिनीदेव्या ईश्वरस्यापि भावनम् ।
पूजाभावे महासिद्धिर्जायते तत्क्षणात् शिव ! ॥ ३ ॥
भावेन लभ्यते पूजा विवेकं पूजया लभेत् ।
विवेकात् ब्रह्मभावन्तु प्राप्नोति कोटिजन्मनि ॥ ४ ॥
अथवा लभते शीघ्रं तवापि मदनुग्रहैः ।
तत्प्रकारं शृणु प्राण-वल्लभ ! त्रिपुरेश्वर ! ॥
यस्य विज्ञानमात्रेण भवेत् परमभावुकः ॥ ५ ॥

काकिनीपूजा ।—

विचिन्तयेद्वर्णपार्श्वे चतुर्दिक्षु क्रमेण तु ।
सिद्धेश्वरान् योगयुक्तान् महापुरुषसंज्ञितान् ॥ ६ ॥
ब्रह्माणं परमं हंसं रुद्रं विश्वेश्वरं प्रभुम् ॥ ७ ॥
मृत्युञ्जयं महाकाल-नीलकण्ठं सुरेश्वरम् ।
श्रीविष्णुं कमलानाथं पद्मचूडं कुमारकम् ॥ ८ ॥
चन्द्रं सूर्यं प्रभानाथं दक्षं मुनीन्द्रमेव च ।
प्रचेतसं मरीचिञ्च कश्यपं पुलहं तथा ॥ ९ ॥
वशिष्ठञ्च भृगुञ्चैव गौतमं कपिलं मुनिम् ।
पुलस्त्यञ्च क्रतुञ्चैव प्रह्लादं कर्दमं तथा ॥ १० ॥
अथर्वाङ्गिरसञ्चैव वा(बा)लि(ल)खिल्यान् मरीचिपान् ।
मानसांश्चान्तरीक्षांश्च विद्यांश्च परमं विभुम् ॥ ११ ॥
तेजसञ्च जलञ्चैव महीं स्पर्शञ्च शब्दकम् ।
तथा रूपं रसं गन्धं प्रकृतिञ्च विकारकम् ॥ १२ ॥
यच्चान्यत् कारणं सर्वं भवात्मयचराचरम् ।
तत्पार्श्वगामिनो देवाः सेन्द्रा भ्रमन्ति नित्यशः ॥ १३ ॥
अगस्त्यश्च महातेजा मार्कण्डेयश्च वीर्य्यवान् ।
जमदग्निर्भरद्वाजः संवर्त्तश्च्यवनस्तथा ॥ १४ ॥

दुर्वासाश्च महाभागो ऋष्यशृङ्गश्च धार्म्मिकः ।
सनत्कुमारो भगवान् योगाचार्य्यो महातपाः ॥ १५ ॥
असितो देवलश्चैव जैगीषव्यश्च तत्त्ववित् ।
ऋषभार्जितशत्रुश्च महावीर्य्यस्तथा मणिः ॥ १६ ॥
एते चान्ये च बहव ईश्वरं समुपासते ।
एताः पार्श्वे चिन्तनीया वर्णानां साधकोत्तमैः ॥ १७ ॥
तत्पार्श्वस्थप्रभाकोटि-धारकः प्रतिभाति च ।
शनैश्चरश्च राहुश्च ग्रहाः सर्वे तथैव च ॥ १८ ॥
मन्वो रथन्तरश्चैव हविष्मान् वसुमानपि ।
आदित्याः साधिराजानो नानाद्वन्द्वैरुपागताः ॥ १९ ॥
मरुतो विश्वकर्म्मा च वसवश्च कपालिनः ।
तथा पितृगणाः सर्वे सर्वाणि च हवींष्यथ ॥ २० ॥
ऋग्वेदः सामवेदश्च यजुर्वेदस्तथा विधिः ।
अथर्ववेदश्च तथा सर्वशास्त्राणि चैव हि ॥ २१ ॥
इतिहासोपदेशश्च वेदाङ्गानि च सर्वशः ।
ग्रहा यज्ञाश्च सोमाश्च दैवतानि च सर्वशः ॥ २२ ॥
सावित्री तारिणी दुर्गा वाणी सप्तविधा तथा ।
मेधा धृतिः स्मृतिश्चैव प्रज्ञा बुद्धिर्यशः क्षमा ॥ २३ ॥
सामानि स्तुतिशास्त्राणि गाथास्तु विविधास्तथा ।
भाष्याणि तर्कयुक्तानि देहवन्ति विभान्ति च ॥ २४ ॥
नाटिका विविधाः काव्याः कथाऽऽख्यायिककारिकाः ।
अत्र तिष्ठन्ति ये पुण्या ये पुण्या गुरुपूजकाः ॥ २५ ॥
क्षणा वायुर्मुहूर्त्ताश्च दिवा रात्रिश्च सर्वतः ।
अर्द्धमासास्तथा मासा ऋतवः षट् च शङ्कर ! ॥ २६ ॥
संवत्सराः पक्षयुग्मं मासा रात्रिश्चतुर्विधाः ।
कालचक्रञ्च यद्दिव्यं नित्यमक्षयमव्ययम् ॥ २७ ॥

धर्मचक्रं तथा चापि नित्यमास्ते महेश्वर ! ।
अदितिश्च दितिश्चैव कद्रुश्च विनता तथा ॥ २८ ॥
कालिका सुरभी देवी सरमा चाथ गौतमी ।
एताश्चान्याश्च वै देव्यो देवतानाञ्च मातरः ॥ २९ ॥
रुद्राणी श्रीश्च लक्ष्मीश्च भद्रा षष्ठी तथा परा ।
पृथिवीसंज्ञिता देवी ह्रीः स्वाहा कीर्त्तिरेव च ॥ ३० ॥
सुरादेवी शची चैव तथा पुष्टिररुन्धती ।
संसिद्धिः सिद्धिदा विद्या महादेवी रतिस्तथा ॥ ३१ ॥
एताश्चान्याश्च वै देव्य उपतस्थुरलङ्कृताः ।
आदित्या वसवो रुद्रा मरुतश्चाश्विनावपि ॥ ३२ ॥
विश्वेदेवाश्च साध्याश्च पितरश्च महर्षयः ।
राजर्षयस्तत्र भान्ति हरिश्चन्द्रादयः प्रभो ! ॥ ३३ ॥
सर्वे हेमकुण्डलिनः सर्वालङ्कारभूषिताः ।
भावुका गीतवाद्यादि-निःस्वनैर्मग्नदेहिनः ॥ ३४ ॥
भावयन्ति महेशानीं काकिनीं परमेश्वरीम् ।
वर्णरूपां नित्यकलां महेश्वरपतिव्रताम् ॥ ३५ ॥
ईश्वरं भावयन्त्येते पूजयन्ति निरन्तरम् ।
वेष्टिताः सुन्दराकारा अष्टसिद्धिसमृद्धिदाः ॥ ३६ ॥
एताः पूज्या महाकाल-वर्णपार्श्वचराः प्रभो ! ।
प्रसीद नाथ ! स्वामीति नाम्ना मनसि पूजयेत् ॥ ३७ ॥
"वर्णेश्वरप्रियानन्दां काकिनीं पूजयाम्यहम् ।"
इति मन्त्रेण वै पूज्या वर्णरूपा सरस्वती ॥
तदा प्रसन्नाः सिध्यन्ति श्रीकाकिन्यः कलौ युगे ॥ ३८ ॥

इति श्रीरुद्रयामले उत्तरतन्त्रे महातन्त्रोद्दीपने सिद्धमन्त्रप्रकरणे षट्चक्रप्रकाशे भैरवी-भैरवसंवादे काकिनीपार्श्वचरयजनं नाम अष्टपञ्चाशः पटलः ॥ ५८ ॥

एकोनषष्टितमः पटलः ।

आनन्दभैरव्युवाच ।—

अथाष्टसिद्धिमाहात्म्यं शृणु श्रीचन्द्रशेखर ! ।
मन्त्रोद्धारं तथा न्यासं कवचाङ्गं तव प्रियम् ॥ १ ॥
स्तोत्रं सहस्रनामाख्यं साष्टोत्तरमनुप्रियम् ।
साकारध्यानमखिलं सालोक्यादिपदप्रदम् ॥ २ ॥
यस्य स्मरणमात्रेण शिवो भवति मानुषः ।
ब्रह्मवीजाङ्गवेदृच्च: प्रज्ञायाश्च फलोदयः ॥ ३ ॥
यथा तथैव मन्त्राणामुदयो वीजयोगतः ।
वीजन्तु परमज्ञानं वीजाधीनं चराचरम् ॥ ४ ॥
वीजमाश्रित्य सर्वेन्द्राः प्रतिभान्ति महौजसः ।
कोटिसूर्य्यप्रतीकाशाः प्राणस्थाननिवासिनः ॥ ५ ॥
के चाप्ययुतसूर्य्याभाः शतसूर्य्यसमप्रभाः ।
केचिद्द्वादशसूर्य्याभाः केऽपि ज्वलत्प्रभाकराः ॥ ६ ॥
कोऽपि नानामणेर्दीप्तिः कोऽपि चन्द्रसमप्रभः ।
कोऽपि श्रीकान्तकिरणः शङ्ख-चक्र-गदाधरः ॥ ७ ॥
एते वीजसमुद्भूता निर्वीजाः पञ्च देवताः ।
ब्रह्मविष्णुशिवानन्द-भैरवप्राणदेवताः ॥ ८ ॥
ब्रह्मा ब्रह्मस्वरूपेण श्वासमार्गप्रवेशकः ।
विष्णुर्वैष्णवतन्त्रेण कुम्भकान्तर्गतः प्रभुः ॥ ९ ॥
शिवः संहाररूपेण महाप्रलयगस्ततः ।
आनन्दभैरवः श्रीमान् मूलज्ञानी परात्परः ॥ १० ॥
मूलाम्भोजात् ब्रह्मरन्ध्रं यावत्तत्र प्रवेशकः ।
प्राणविद्यास्वरूपेण वीजरूपा सनातनी ॥ ११ ॥
सा भाव्या योगिभिर्नित्यं योगाङ्गैरतिभाव्यते ।
योगशास्त्रं विना नाथ ! के जानन्ति महर्षयः ॥ १२ ॥

अनन्तसुखसाध्या सा योगिज्ञेया मनोजवा ।
नानारूपा ह्रदूपा श्वासोच्छ्वासप्रकाशिनी ॥ १३ ॥
हृदयाम्भोजमध्यस्था ईश्वरस्थानवासिनी ।
काकचञ्चुप्रकाशा च सर्वभूतहृदि स्थिता ॥ १४ ॥
सर्वेषां ज्ञानकर्त्री च सर्वानन्दकरी हृदि ।
सा देवी काकिनी विद्या ईश्वरी परमा कला ॥ १५ ॥
विभाव्या कोटिसूर्य्याभा कोटिचन्द्रसमानना ।
तस्या मन्त्रं महामन्त्रं ब्रह्ममन्त्रं हि योगिनाम् ॥ १६ ॥
शृणु नाथ ! कुलानन्द ! भैरव्यादिमनुं मुदा ।
एतन्मन्त्रप्रसादेन परात्मानं वशं नयेत् ॥ १७ ॥

काकिनीमन्त्रोद्धारः ।—

दीर्घप्रणवमुद्धृत्य वामनेत्रं समुद्धरेत् ।
मायान्ते वाग्भवं वीजं कामवीजं समुद्धरेत् ॥ १८ ॥
कामवीजं तथैश्वर्य्यै नमोऽन्तवह्निकामिनी ।
एतन्मन्त्रप्रसादेन भवेत् कालवशः क्षणात् ॥
अनन्तसुखमाप्नोति भयाज्ञानापहो भवेत् ॥ १९ ॥
कामिन पुटितं मन्त्रं वाग्भवेनापि वा प्रभो ! ।
स्वमन्त्रपुटितं कृत्वा सिद्धिः स्यादचिरादिह ॥ २० ॥
अथान्यमन्त्रं वक्ष्यामि सावधानावधारय ॥ २१ ॥
भद्रकालीं समुद्धृत्य किङ्किणीवीजमुद्धरेत् ।
कलावीजं समुद्धृत्य महैश्वर्य्यै नमो ठिठः ॥ २२ ॥
केवलं मूलमन्त्रेण पुटितं मूलमन्त्रकैः ।
पूजयेत् परया भक्त्या हृदयाम्भोजमण्डले ॥ २३ ॥
अप्रकाश्यमिमं मन्त्रं सर्वतन्त्रेषु गोपितम् ।
लक्षजपेन सिद्धिः स्यात् हृदयाब्जे शिवो भवेत् ॥ २४ ॥
अकस्माद्दीपकलिकाऽऽकारं वीजं प्रपश्यति ।

ततो भवेन्महायोगी ईश्वरोमन्त्रसाधनात् ॥ २५ ॥
ध्यानं वक्ष्यामि पूजाया गुह्याद्गुह्यतरं परम् ।
ध्यात्वा पाद्यादिभिर्नाथ ! मनःकल्पितपुष्पकैः ॥
पूजयेत् परया भक्त्या मन्त्रध्यानपरायणः ॥ २६ ॥

काकिनीध्यानम् ।—

शशधरशतकोटिश्रीमयूखप्रभा या
सुरतरुगणशोभा निर्मला वेदहस्ता ।
अरुणकिरणमाला हारमाला विलोला
हृदयकमलमध्ये श्रीश्वरीं तां भजामि ॥ २७ ॥

एवं सर्वात्मरूपां तां विभाव्य हृदयाम्बुजे ।
पुनः पुनः पूजयेद्दै त्रैलोक्योद्भवपुष्पकैः ॥ २८ ॥
अवश्यं सिद्धिमाप्नोति पूजायोगप्रभावतः ।
आयुरारोग्यजननीं सुमहत्फलसम्भवाम् ॥ २९ ॥
ततो जपेत् महामन्त्रं वर्णमालाक्रमेण तु ।
प्राणायामं ततः कृत्वा न्यसेत् सर्वाङ्गमध्यके ॥ ३० ॥
मातृकाग्रन्थिनिकरे न्यसेत् पूर्वोक्तनामभिः ।
यदुक्तं पूर्वपटले तेषां नामभिरेव च ॥ ३१ ॥
विन्यस्य मन्त्रपुटितं मन्त्रन्यासं ततश्चरेत् ।
काकिन्या अष्टशक्तीनां न्यासः कुर्य्यात्ततःपरम् ॥ ३२ ॥
काकजिह्वा हिकाकेशी काकाक्षी काकिनीध्वजा ।
काकिनी काकमाला च काकचञ्चुप्रकाशिनी ॥ ३३ ॥
कोकिला चाष्टशक्तीनां नाम्ना विन्यस्य मस्तके ।
कण्ठकूपे न्यसेत् पश्चात् षोड़शस्वरसंपुटम् ॥ ३४ ॥
हृदये विन्यसेन्नाथ ! कादिद्वादशसंपुटम् ।
मनं विन्यस्य विधिना नाभौ मन्त्रेण संपुटम् ॥ ३५ ॥
डादिफान्तं प्रविन्यस्य वादिलान्तं स्वलिङ्गके ।

मूलाधारे मूलमन्त्रपुटितं वादिमान्तकम् ॥ ३६ ॥
विन्यस्य व्यापकन्यासं कृत्वाङ्गानि च वर्द्धयेत् ।
प्राणायामत्रिकं कृत्वा प्राणायामं समाश्रयेत् ॥ ३७ ॥
ततः स्तोत्रं पठेद्धीमान् तत्सर्वं शृणु शङ्कर ! ।
हविष्याशी वशी भूत्वा साधयेदिह सिद्धये ॥ ३८ ॥

इति श्रीरुद्रयामले उत्तरतन्त्रे महातन्त्रोद्दीपने सिद्धमन्त्रप्रकरणे षट्चक्रभेद-
प्रकाशे भैरवी-भैरवसंवादे काकिनीसिद्धिसाधनं नाम
एकोनषष्टितमः पटलः ॥ ५९ ॥

षष्टितमः पटलः ।

काकिनीस्तोत्रम् ।—

ज्ञानेश्वरी शुभकरी परिभावनीया
योगेश्वरैर्हरिहरैर्गुरुभिर्महेन्द्रैः ।
तां काकिनीं प्रसविनीं परमेशपत्नीं
तां स्तौमि चारुहृदयाम्बुजराजिमध्ये ॥ १ ॥
एकाकिनीं त्रिजगतामतिनाशकाले
त्वां काकिनीं समरकालककाकपत्नीम् ।
त्वां साक्षिणीं भुवनभङ्गविधौ सकान्ते
भूषण्डकाकमहिषीं सततं भजामि ॥ २ ॥
एकाकिनीं सकलधारणकालयोगे
आधार्यदेहसमये खलु काकिनीं त्वाम् ।
वायूमने मनस आशुविकारनाशे
काकेन्द्रचञ्चुचलितामहमेवमीडे ॥ ३ ॥
भावोदये प्रणयिनी विभवे च भावा
ह्याह्लादयोगविभवे भुवनेश्वरी त्वम् ।
रक्षां कुरु प्रथमतो मतिमाश्रयामि
गोप्यागमे सुखकरी शुभदा च शुद्धा ॥ ४ ॥
सा त्वं सुखानुभवकारिणि पूजनीये
रक्षां कुरु प्रथमभास्करमाशुमीडे ।
ते पादपङ्कजमजस्रमहं भजामि
सानन्दविन्दुविमलाननहासपुञ्जे ॥ ५ ॥
गुञ्जत्कटीविमलमालसुशोभिताङ्गे
श्यामे च मे चरमभावसमूहधात्री ।
पञ्चानने दशभुजे सकलास्त्रयुक्ते
विद्येऽभये नरहरे नरहारभूषे ॥ ६ ॥
श्वेतासने त्रिनयने जननि त्वमेव
दीनोऽस्मि ते चरणपङ्कजमाश्रयामि ।
श्रीसुन्दरी प्रणतवेदविचारवक्त्री
तारेश्वरि त्वमपि रक्ष विनाशकाले ॥ ७ ॥
यद्येक एव इतिहासपुराणरूपे
नित्यं तवैव खलु पादसरोजमीडे ।
ते श्रीपदं भुवनसारमनन्तसेव्यं
योगास्पदं कृमिभिराश्रयमेकयोगम् ॥ ८ ॥
सर्वे भजन्ति निजमोक्षफलाय नित्यं
दीनोऽहमद्य भुवनेशि ! मुदाऽऽश्रयामि ।
त्रैलोक्यपूजितपदं हृदयाम्बुजस्थं
चित्तप्रकाशकमशेषसुखानुभूतम् ॥ ९ ॥
मायाश्रयं सकलसिद्धिनिदानरूपं
मञ्जीरहारविनतं वरमाश्रयामि ।
चन्द्रोदये सुखमयं द्युतिकोटिदीप्तं
शोभाकरे स्थिरतरा भव मे हृदब्जे ॥ १० ॥

भूमण्डले हि बलवान् कृतकृत्य एव
त्वामीश्वरीं हृदि मुदा सुखमाश्रयामि ।
नित्यं पुरा भवसि वै खलु योगसिद्धैर
शम्भुर्गिरिश इति चेश्वरपार्श्वगामी ॥ ११ ॥
सायुज्यं नाथपदवीं गत ईशकान्ते
एकाकिनं कुललताङ्घ्रियुग विमन्यैः ।
ध्यायन्ति योगिन इहैव तवाङ्घ्रियुग्मं
संहारहेतुकसदाऽघविनाशनाय ॥ १२ ॥
चित्तोत्सवाय विभवाय जयाय भूमिः
दीनो भजामि भुवि तच्चरणौ श्रियेऽहम् ।
कृष्णे सिते विमलपङ्कजकोषसंस्थे
वर्णाश्रये त्वसव स्वामिह दीनमेकम् ॥ १३ ॥
पुत्रं तवैव चरणाम्बुजसंश्रितं मां
नीलाम्बुजस्थिरतरं कुरु कामदात्रि ! ।
सर्वेश्वरी प्रियकरी भवभावहन्त्री
नानात्मिके सकलकामहरे विचित्रे ॥ १४ ॥
रत्नाम्बरे सुखपदं यदि देहि दास्यं
तच्चारुवर्णगणितं पदमाश्रयामि ।
रत्नाकरे सकरुणेऽरुणकोटिवर्णे
स्वार्थादिनिर्मितस्रजा परिशोभिताङ्गी ॥ १५ ॥
त्वं काकिनी यदि कटाक्षनिपातमेकं
शर्वे कुरुष्व खलु मोक्षपदानुमोदी ।
आद्ये प्रवालविमलेऽमलमाल्यशोभे
सूक्ष्मेऽतिसूक्ष्मतनु देहि पदाब्जयुग्मम् ॥ १६ ॥
आदौ भवेत् कामरूप-भूपतिः सिद्धिदर्शकः ।
कुलपूजाविधानेन निजपीठे प्रपूजयेत् ॥ १७ ॥

कामेश्वरीं कामकन्यां कामकौतूहलोज्ज्वलाम् ।
कामरूपां प्रपूज्याथ सर्वभावेन पूजयेत् ॥ १८ ॥
सुधादानं पाद्यदानमर्घ्यमाल्यादिमुद्रया ।
आचमनीयसकलं गन्धमालिङ्गनादिकम् ॥ १९ ॥
नखदंष्ट्राक्षतादीनि पुष्पाणि विविधानि च ।
समूहधूपदानन्तु कुलपीठप्रदर्शनम् ॥ २० ॥
तत्स्पर्शनं भवेद्दीपः प्रवेशो हि कुलान्तरे ।
तन्नैवेद्यं महासौख्यं सर्वतन्त्रेषु गोपितम् ॥ २१ ॥
कुलद्रव्यन्तु पानार्थं ततस्ताम्बूलभक्षणम् ।
ध्यापनं तर्पणं विद्धि मम पूजाक्रमादिकम् ॥
तन्मूलेन यथा नाथ ! पूर्वोक्तेन प्रकाशयेत् ॥ २२ ॥

कुण्डलीगमनविज्ञानम् ।

कुण्डलीगमनं वक्ष्ये संक्षेपात् शृणु वल्लभ ! ॥ २३ ॥
कायशोधनमाकृत्य आसनादिकमाचरेत् ।
प्राणायामं त्रिधा कृत्वा भूतन्यासं समाचरेत् ॥ २४ ॥
अङ्गन्यासकरन्यासौ बीजन्यासेषु षोढश ।
व्यापकं पञ्चधा कृत्वा भूतशुद्धिं समाचरेत् ॥ २५ ॥
जीवैक्यं विभाव्यैव ब्रह्मरन्ध्रे निवेशयेत् ।
ब्रह्मरन्ध्रे ततो गत्वा सुषुम्ना सुखमाश्रयेत् ॥ २६ ॥
तन्मध्ये कर्णिकास्थानं तन्मध्ये च चतुर्दलम् ।
चतुर्दलान्ते सा देवी विभाति तामुपाश्रयेत् ॥ २७ ॥
तामुपाकुञ्च्य यत्नेन सिद्धरूपी प्रबुद्धयेत् ।
देवैः सार्द्धं ततो गच्छेत् षड्दले राकिणीस्थले ॥ २८ ॥
तया सार्द्धं कुण्डलिन्या देवैर्गच्छेद्दशच्छदे ।
एवं क्रमेण हृत्पद्मं षोड़शार ततः परम् ॥ २९ ॥

कण्ठपद्मादिभेदविज्ञानम् ।—

द्विदलं भेदमाक्रम्य बोधिनीचक्रमाश्रयेत् ।
ततः कटद्दमाभेद्य पर्णशैलं समाश्रयेत् ॥ ३० ॥
ततोऽसौ द्युमणिं भित्त्वा घटाधारे मनोलयम् ।
तदूर्द्ध्वं प्रलयाकारं ब्रह्मचक्रं निराकुलम् ॥ ३१ ॥
तदूर्द्ध्वं ब्रह्मदण्डन्तु तदूर्द्ध्वं केवलं जलम् ।
सर्वं जलं समालक्ष्य सहस्रारं प्रभामयम् ॥ ३२ ॥
तदूर्द्ध्वं कर्णिकास्थानं सिद्धखड्गं तदूर्द्ध्वके ।
सर्वबीजमयं नाथ ! मातृकामण्डलं ततः ॥ ३३ ॥
मातृकामण्डलोर्द्ध्वं च प्रेतबीजं सुधामयम् ।
प्रेतासनोपरि ध्यायेन्महाकालकुलेश्वरीम् ॥ ३४ ॥
तत्रैव श्रीपदाम्भोज-तले संस्थापयेन्मनः ।
पूर्वोक्तदेवताभिस्तु लययोगेन लेपयेत् ॥ ३५ ॥
तत्रैव स्थित्वा सन्ध्यायेन्मूलेऽनलमनुं प्रभो ! ।
वायुबीजेन प्रज्वाल्य दहेद्देहं यतीश्वरः ॥ ३६ ॥
तन्नेत्रद्वयपर्य्यन्तं कर्णयुग्मावधि प्रभो ! ।
प्रदह्य भ्रूदले नेत्रे वह्नौ वह्निलयं चरेत् ॥ ३७ ॥
तच्छिखापटलेनैव क्षरन्ति ब्रह्मबिन्दवः ।
तद्बिन्दुधारया देहं वरुणैर्ग्रासयेत्ततः ॥ ३८ ॥
शुद्धदेहस्ततो ध्यायेद्बीजेन प्रथमाङ्कुरम् ।
अधोमार्गेण सन्ध्यायेत् कुण्डलिन्याः समागमम् ॥ ३९ ॥
इत्येतत् कथितं नाथ ! कुण्डलीगमनादिकम् ।
साधकालम्बनं वक्ष्ये येन सिद्धो हि साधकः ॥
प्राणविद्यासु सिद्धः स्यादायुरारोग्यवान् भवेत् ॥ ४० ॥
श्रीशङ्करे कारणगुप्तभावे विभावयामि प्रियपादपद्मम् ।
एवं महायोगमुपेत्य नित्यं श्रीसाधकालम्बनमेव सम्यक् ॥ ४१ ॥

साधकः सर्वदा भक्त्या सुन्दरीचरणाम्बुजे ।
आत्मानमर्पयेत् भावैः साधकालम्बनं हि तत् ॥ ४२ ॥

कण्ठपद्मादि-वर्णध्यानम् ।—

वर्णध्यानं शृणु प्रीतः शङ्कर ! प्राणवल्लभ ! ।
मूलादिब्रह्मरन्ध्रान्तमकारादीन् स्मरेद्बुधः ॥ ४३ ॥
स्मृत्वा ग्रथित्वा मनुना विलोमेन पुनः पुनः ।
भावयेन्मनसा योगी स्वाधिष्ठानतत्परः ॥ ४४ ॥
कोटिसूर्य्यायुताभासं प्रत्येकग्रन्थिभेदतः ।
मन्त्राक्षरं परं ब्रह्म ध्यात्वा शिवस्य भास्करम् ॥ ४५ ॥
भित्त्वा सहस्रारदलं विभाति तत्र चन्द्रगम् ।
अनुलोमविलोमेन विभाव्य ध्यानमाचरेत् ॥ ४६ ॥
अकारादिक्षकारान्तं वर्णध्यानं समीरितम् ।
दलभेदं प्रवक्ष्यामि यत्र यत्र पदस्थितिः ॥ ४७ ॥
विसर्गाद्बिन्दुपर्य्यन्तं दलभेदः प्रकीर्त्तितः ।
तथापि शृणु योगेन्द्र ! सङ्केतार्थविनाशनम् ॥ ४८ ॥
देवता दक्षिणावर्त्त-योगेन भावयेद्दलम् ॥
एवं मूलादिपद्मानां भेदः श्रीकण्ठभूषणम् ॥ ४९ ॥
एवं सहस्रारपद्म-दलभेदः प्रकीर्त्तितः ।
स्फूर्त्तिविद्यां प्रवक्ष्यामि अकस्मात् सिद्धिदायिनीम् ॥ ५० ॥
निरन्तरं जपेद्विद्यां मम भावपरायणः ।
अकस्मात् स्फूर्त्तिविद्यां तां जप्त्वा वाक्पतिरीश्वरः ॥
इष्टसिद्धिः करे तस्य कुलिकासिद्धिरेव च ॥ ५१ ॥
यदि कण्ठाम्बुजे ध्यायेत् काकचञ्चुपुटस्थितः ।
इत्येता स्फूर्त्तिविद्या हि सर्वपद्मदलस्थिता ॥ ५२ ॥
वियोगं सम्प्रवक्ष्यामि येन मन्त्री च निर्भयः ।
स्त्रीपुत्रधनमित्यादि-लोभमोहादिपातकम् ॥ ५३ ॥

वर्जायत्वा तनुक्लेशं विवेकं समुपाश्रयेत् ।
वियोगः स हि विज्ञेयो मन्त्रन्यासपरायणः ॥ ५४ ॥
अथ वक्ष्ये वियोगेन्द्र ! पूर्वज्ञानसमोदयम् ।
काले काले क्रियासिद्धिर्खण्डकापार्श्वगो भवेत् ॥ ५५ ॥
पूर्वस्यां दिशि पूर्वाह्णे वदनाम्भोजमण्डले ।
ज्ञानद्रव्यसमरसैरुदयं भावयेद्रवेः ॥ ५६ ॥
पूर्वपूर्वस्वजन्मादि ज्ञानसोमोदयं लभेत् ।
आकाशे च मनो दत्त्वा आकाशाख्यं स्मरेन्मनुम् ॥ ५७ ॥
पूर्वजन्मादिसंज्ञानां जानाति समभावकः ।
इति ते कथितो नाथ ! पूर्वज्ञानसमोदयः ॥ ५८ ॥
अथान्यं संप्रवक्ष्यामि सिद्धिशुद्धफलार्थभाक् ।
येन क्रमेण सम्भूयात् खेचरीमिलनं प्रभो ! ॥ ५९ ॥
याभिः समरसप्राप्तिस्ता एव फलसिद्धिदाः ।
शृणु सङ्क्षेपतो वक्ष्ये पश्चाद्दत्तान्यमेव तत् ॥ ६० ॥
आसनादिकमाकृत्य कायसङ्कोचमाचरन् ।
कामलताक्षुद्रतरैर्भेदिता रसनाग्रकैः ॥ ६१ ॥
तालुमूलोत्तरे मूले नियुज्य मधुपो भवेत् ।
तदैव जपमाकृत्य वायुं धृत्वा पिबेन्मधु ॥ ६२ ॥
सा स्यात् समरसप्राप्तिः कामलिङ्गे स्थिरो भवेत् ।
इत्येषा कथिता विद्या लताभेदं शृणु प्रभो ! ॥ ६३ ॥
श्वेतवाच्यालसूत्रेण लतां कुर्य्याद्विचक्षणः ।
अष्टादशाङ्गुलमितां नातिसूक्ष्मां प्रमाणवत् ॥ ६४ ॥
जिह्वाधः सन्निवेश्याथ घर्षयेत् कामसुन्दर ! ।
तदा जिह्वा स्वयं याति घर्षणेन पुनः पुनः ॥ ६५ ॥
पश्चात् जिह्वाक्रियां कुर्य्यात् तालुमूले निधाय च ।
क्रमेणामृतमाप्नोति जिह्वाधश्छेदने ध्रुवम् ॥ ६६ ॥

सा स्यात् समरसप्राप्तिर्यदि मन्त्राक्षरं भजेत् ।
जीवब्रह्मबुद्धिमन्तस्ते तिष्ठन्ति निरञ्जने ॥ ६७ ॥
कुष्माण्डाकारदेही च ब्रह्मसाधनतत्परः ।
सदा समरसप्राप्तिरनायासेन लभ्यते ॥ ६८ ॥
जले स्थले भूमिगर्त्ते शरीरं नापि पश्यति ।
अमरामरदेही च स्याद् योगी योगिदुर्लभः ॥ ६९ ॥
कायसाधनमावक्ष्ये येन सिद्धिपतिर्भवेत् ।
शृणुष्वैकमना शम्भो ! गृहस्थानान्तु दुर्लभम् ॥ ७० ॥
महारण्ये पद्मवने शीतले गन्धशोभिते ।
कायकल्पनमाकृत्य भावयेत् कण्ठपङ्कजम् ॥ ७१ ॥
उदारचित्तः सर्वत्र वैष्णवाचारतत्परः ।
पद्मे पद्मे स्वदेहस्य कल्पना च दले दले ॥ ७२ ॥
क्रमशः कण्ठपद्मे च स्वीयदेहस्य कल्पना ।
क्रियते यदि योगीन्द्रैस्तदा देहस्य रक्षणम् ॥ ७३ ॥
अन्यथा मृत्युरेव स्याद् योगभ्रष्टो भवेन्नरः ।
एवं क्रमेण सर्वत्र कुर्य्यात् कायस्य कल्पनम् ॥ ७४ ॥
जरामरणदुःखाद्यैर्मुच्यते मोहसङ्कटात् ।
अथान्यत् सम्प्रवक्ष्यामि कायकल्पनमेव तत् ॥ ७५ ॥
नानापीठत्वसाध्ये च चक्षुरिन्द्रियवर्जिते ।
मनोगम्ये स्थिरो भूत्वा स्वदेहमपि कल्पयेत् ॥ ७६ ॥
वाराणस्यादिपीठे च महाज्वालामुखीपदे ।
कुरुक्षेत्रे प्रयागे च दक्षिणे द्वारकादिषु ॥ ७७ ॥
हरिद्वारोदये तीर्थे मार्कण्डेये च कापिले ।
वृन्दावने गुह्यपीठे गङ्गायमुनयोस्तटे ॥ ७८ ॥
पुष्करे पृथिवीतीर्थे कायतीर्थे गयादिषु ।
कायकल्पनमाकृत्य महेशान् पूजयेत् परम् ॥ ७९ ॥

सदाशिवं शाकिनीशं शाकिनीयोगिनीगणैः ।
वेष्टितं परया भक्त्या ध्यात्वा देहं प्रकल्पयेत् ॥ ८० ॥
प्रकल्प्य स्वतनुं तत्र ततो देवस्य कल्पयेत् ।
तेषां मनसि यद्ध्यानं तद्ध्यानं कायकल्पनम् ॥ ८१ ॥
एतत्कायकल्पनेन मौनी वाक्सिद्धिमाप्नुयात् ।
इदानीं कामदेवस्य मथनं शृणु भैरव ! ॥ ८२ ॥
कामदेवस्य मथनं सुखदं मोक्षदं परम् ।
यावद्बिन्दुः स्थिरो देहे तावन्मृत्युभयं कुतः ? ॥ ८३ ॥
बिन्दुपाताद्भवेन्नाशस्ततो हि बिन्दुरक्षणम् ।
तत्तदौषधमावक्ष्ये येन बिन्दुः स्थिरो भवेत् ॥ ८४ ॥

बिन्दुस्थिरीकरणम् ।—

नित्यं सेवनमाकुर्य्यादेतेषां मूलमावहन् ।
श्वेतापराजितामूलं सिंहमूलं ततः परम् ॥ ८५ ॥
शतपद्मीमूलमेकं कदम्बमूलमेव च ।
श्वेतकुन्दपुष्पमूलं करवीर तथा सितम् ॥ ८६ ॥
कृष्णधुस्तूरमूलञ्च शेफालीमूलमेव च ।
चितामूलं तथा शम्भो ! निर्गुण्डीमूलमेव च ॥ ८७ ॥
एकीकृत्य विधानेन रविवारेऽर्कमूलकैः ।
समभागेन योगेन्द्र ! चूर्णीकृत्य पृथक् पृथक् ॥ ८८ ॥
शुक्रवारे च पूर्वाह्णे मिश्रं कुर्यात् दिनत्रयम् ।
षड्भिराशोधयेत् काम-मुद्राभिर्वामदेवता ॥ ८९ ॥
मध्यमाङ्गुलिमुत्तोल्य दक्षिणेनापि मुष्टिना ।
धृत्वा च शोधयेदादौ रुद्रमूलादिसाधकः ॥ ९० ॥
विजयाचूर्णयोगेन पिबेच्चूर्णद्वितोलकम् ।
अर्द्धतोलकमुख्यैकं विजया सार्द्धतोलका ॥ ९१ ॥
मिश्रीकृत्य विधानेन तत्तत् कुजदिने शुभे ।
एतत् प्रभक्षणेनैव मदनं वशमानयेत् ॥ ९२ ॥

यदा मनसि आयाति पुष्पधन्वा महाबली ।
तदा त्वां पूजयित्वा च कामदेवं निवारयेत् ॥ ९३ ॥
इति कामस्य कथनं देहे व्यवस्थितं शृणु ।
अङ्गुष्ठगुल्फजानूरु-सीवनी-लिङ्ग-नाभिषु ॥ ९४ ॥
हृद्ग्रीवाकण्ठदेशेषु लम्बिकायां तथा नसि ।
भ्रूमध्ये मस्तके मूर्ध्नि वाय्वाकाशप्रियालये ॥ ९५ ॥
वायुरूपं स्वदेहन्तु स्थापयित्वा मनुं जपेत् ।
कुम्भकप्राणयोगेन निजदेहव्यवस्थितिः ॥ ९६ ॥
कराम्भोजो स्थिरो यो हि तं जलं शृणु भैरव ! ।
योगारम्भावधिर्यो हि स्त्रीसंसर्गं विवर्जयेत् ॥ ९७ ॥
मातॄणां गमनं नास्ति यस्य स कण्ठसुस्थिरः ।
नित्यं करोति योगं यो धर्म्मात्मा स्थिरचेतनः ॥ ९८ ॥
स एव कण्ठपद्मे च स्थिरो भवति निश्चितम् ।
भावज्ञानी च यो विद्वान् तं वदामि दयार्णवम् ॥ ९९ ॥
कुण्डलीस्पर्शमात्रेण तन्मयो जायते क्षणात् ।
सर्वदेवपरं भावं कृत्वा ध्यानेन पूजयेत् ॥ १०० ॥
सर्वपीठे स्थिरो भूत्वा ज्ञानात्मा परिपूजयेत् ।
क्रमेण कण्ठभेदः स्याद् योगी भवति सत्वरम् ॥ १०१ ॥
धनं धान्यं धरां धर्मं कीर्त्तिमायुर्यशः प्रियम् ।
तुरगान् दन्तिनः पुत्रान् लोकान् सर्वसुखोदयम् ॥
एतज्ज्ञानप्रसादेन लभते परमेश्वरम् ॥ १०२ ॥

ज्ञात्वा योगीन्द्रचक्रं त्रिभुवनविविधध्वान्तजालप्रकाशं
मूलाम्भोजे रसाख्ये दशदलविमले ह्रस्व पद्मे विलापम् ।
कण्ठाम्भोजे मनोज्ञे द्विदलसुकमले भावयन्तं सुरेन्द्रैः
श्वेताम्भोजे परेशं निरवधिगगनं पूजया भावयामि ॥१०३॥

इति श्रीरुद्रयामले उत्तरतन्त्रे महातन्त्रोद्दीपने सिद्धमन्त्रप्रकरणे षट्चक्रप्रकाशे भैरवी-भैरवसंवादे कण्ठपद्मभेदविज्ञानविन्यासो नाम षष्टितमः पटलः ॥६०॥

एकषष्टितमः पटलः ।

आनन्दभैरव्युवाच ।—

अथ कान्त ! प्रवक्ष्यामि समुदायफलोदयम् ।
कण्ठाम्भोजस्य वर्णानां ध्यानं मन्त्रं शृणु प्रभो ! ॥ १ ॥
आदौ श्रीशाकिनीध्यानं पश्चात् ध्यानं सदाशिवे ।
द्वयोरभेदबुद्ध्या च कामजेता स्वयं भवेत् ॥ २ ॥

शाकिनीध्यानम् ।—

वन्दे नित्यां सुशीलां त्रिभुवनवरदां शाकिनीं पीतवस्त्रां
वेदाढ्यां वेदमातां सुखमयललितां वेदहस्तोज्ज्वलाङ्गीम् ।
ध्यायेत् पीयूषधाराऽमलघटसुधया स्निग्धदेहां हसन्तीं
मायां शम्भोर्ललाटे विधुकरणकरां श्रीसदानन्दयुक्ताम् ॥ ३ ॥
अम्भोजास्त्रादिमुद्रां शिववरदजटां धारयन्तीं करालां
श्यामां पीनस्तनाढ्यां त्रिनयनकमलां प्रेतलिङ्गासनस्थाम् ।
सर्वालङ्कारदीप्तां शशधरवदनाम्भोजशोभां वहन्तीं
शम्भोरानन्दकर्त्रीं चरमगुणपदां स्थूलसूक्ष्मस्वरूपाम् ॥ ४ ॥
एवं ध्यायेन्महायोगी स्थूलसूक्ष्मस्वरूपिणीम् ।
अभेद्यभेदकरणीं शङ्कर ! प्रेमवल्लभ ! ॥ ५ ॥
या विद्या वाग्भवाद्या हरिवधुकमला केवले निष्कलान्ते
मायालक्ष्मीस्त्रिकूटं शशिमुखि तदधः शाकिनी चैत्रपालम् ।
पञ्चोद्दन्द्वं त्रिकूटं मधुमधरामिव सिद्धिमिष्टां विधेहि
स्वाहान्तोऽयं महेश ! त्रिभुवनभवाह्लादहेतोः प्रकाशम् ॥ ६ ॥

शाकिनीमन्त्रोद्धारः ।—

प्रणवं पूर्वमुद्धृत्य वाग्भवं तदनन्तरम् ।
शाकिनि त्वं तदन्ते तु मम दोषान् विनाशय ॥ ७ ॥
युगलं वह्निकान्ता च मन्त्रार्णाः सारदाः स्मृताः ।
कामबीजं समुद्धृत्य हिरण्याक्षि सनातनि ॥ ८ ॥

शाकिन्यन्ते महामाये मायावह्निप्रियायुतम् ।
एषा मन्त्रात्मिका विद्या कण्ठाम्भोजप्रकाशिनी ॥ ९ ॥
शाकम्भरी महाविद्या तस्या वामे विभाति च ।
तस्या मन्त्रं प्रवक्ष्यामि ज्ञात्वैव योगवित् प्रभुः ॥ १० ॥
मायामन्त्रस्य माहात्म्यं कथितुं नैव शक्यते ।
भावमात्रेण सिद्धिः स्यात् किं पुनर्मोक्षसाधनम् ? ॥ ११ ॥
विद्यां कामकलां विचित्रवसनां पद्मासनस्थां शिवां
कामाख्यां सकलान् स्वरान् त्रिजगतां शाकैर्महायोगिनीम् ।
नित्यं या परिपाल्यते भगवतीं शाकम्भरीं तां भजे
सा योगाधिपरोचका निशि निशि श्रीकण्ठपद्मे प्रभा ॥ १२ ॥
यस्यापि प्रियकण्ठपद्मनिकरे संभाति शाकम्भरी
विद्यावाक्कमलायुतं स्मितमुखी शान्ते च शाकम्भरी ।
वाञ्छावारुणवायुबीजकमलद्वन्द्वं हि रक्षद्वयम्
वाञ्छाप्रेमकलान्वितो मनुवरः साक्षाज्जगत्क्षोभकृत् ॥ १३ ॥
शाकम्भरीं महामायां पूजयेद्द्वारदेवताम् ।
तदन्ते सर्वदेवांश्च शक्रादीन् परिपूजयेत् ॥ १४ ॥
ध्यात्वा च शाकिनीं देवीं शाकम्भर्याश्च दक्षिणे ।
पूजयेत् परया भक्त्या पूर्वोक्तविधिना प्रभो ! ॥ १५ ॥
शाकम्भरीं त्रिनयनां सूर्येन्दुवह्नियोजिताम् ।
रक्तपद्मस्थितां श्यामां वेदबाहुं श्रियोज्ज्वलाम् ॥ १६ ॥
वराभयकरां खड्गकपालकमलान्विताम् ।
नानालङ्कारशोभाङ्गीं मुक्तकुन्तलभूषिताम् ॥ १७ ॥
प्रसन्नवदनाम्भोज-स्मितहास्यविराजिताम् ।
साधकाभीष्टदां नित्यां महाविद्यां भजाम्यहम् ॥ १८ ॥
ततो मानसपूजाञ्च ध्यानान्तेऽपि समाचरेत् ।
पुनर्ध्यानं ततः कृत्वा चित्तावाहनमाचरेत् ॥ १९ ॥

253

पाद्यार्घैः पूजयेन्नित्यं भक्त्या योगसुसिद्धये ।
ततो जपेत् शतं वापि चाष्टोत्तरसहस्रकम् ॥ २० ॥
एवं जपसमाप्तौ तु कण्ठे देवीं प्रपश्यति ।
होमादीन् क्रमशः कुर्य्याद् ब्राह्मणानाञ्च भोजनम् ॥२१॥
तदन्ते शाकिनीपूजां प्रथमे वापि कारयेत् ।
तत्प्रकारं शोधयित्वा हस्तौ च देवविग्रहम् ॥ २२ ॥
चालयित्वा द्विराचम्य मूलमन्त्रेण साधकः ।
शिखाबन्धनमाकृत्य आसनं परिशोधयेत् ॥ २३ ॥
ततोऽर्घ्यस्थापनं कृत्वा पीठं निर्माय यत्नतः ।
पीठचक्रं शोधयित्वा पीठपूजां समाचरेत् ॥ २४ ॥
ततो ध्यानं भूतशुद्धिं न्यासजालं समाचरेत् ।
पुनः प्राणायामयुग्मं कृत्वा देहं दृढं नयेत् ॥ २५ ॥
ततो ध्यानं मानसार्चां मुद्रादर्शनमेव च ।
ततः पाद्यं तथाऽर्घ्यन्तु चारुशङ्खेन कारयेत् ॥ २६ ॥
आचम्यञ्च ततः स्नानं पुनराचमनं तथा ।
गन्धं पुष्पाणि सर्वाणि विल्वपत्राणि दापयेत् ॥ २७ ॥
निजावरणदेवांश्च पूजयित्वा क्रमेण तु ।
धूपदीपौ निवेद्याथ नैवेद्यञ्च ततःपरम् ॥ २८ ॥
पुनराचमनं दत्त्वा बलिद्रव्याणि दापयेत् ।
बलिं दत्त्वा जपेन्मन्त्रं सहस्रं वा शताष्टकम् ॥ २९ ॥
दिवसे यज्जपं कुर्य्यात् रात्रौ तज्जाप्यमाश्रयेत् ।
जपं समापयेद्विद्वान् गुह्यातिगुह्यमन्त्रकैः ॥ ३० ॥
प्राणायामत्रिषट् कृत्वा वन्दनञ्च प्रदक्षिणम् ।
स्तोत्रञ्च कवचं नित्यं सहस्रनाममङ्गलम् ॥ ३१ ॥
पठेद्भक्त्या कण्ठपद्मे कायकल्पसमाचरः ।
एवं विधिविधानेन पूजयित्वा सदाशिवम् ॥ ३२ ॥

अस्मिन् शास्त्रे क्रिया गुप्ता गुप्तनारीप्रपूजनम् ।
अथवा मनसा सर्वं पूजा-याग-जपं चरेत् ॥ ३२ ॥
यथा देव्यास्तथा शम्भोर्जपयागः समीरितः ।
एवं क्रमेण पूज्याश्च वाह्यस्था मुनयः क्रमात् ॥ ३४ ॥
पूज्या वर्णकला नाथ ! तद्बाह्यस्थानमर्च्चयेत् ।
एवं हि मासकार्य्येण वरां सिद्धिं समाप्नुयात् ॥ ३५ ॥

इति श्रीरुद्रयामले उत्तरतन्त्रे महातन्त्रोद्दीपने सिद्धमन्त्रप्रकरणे षट्चक्रप्रकाशे भैरवीभैरवसंवादे शाकिनीसदाशिवार्चनं नाम एकषष्टितमः पटलः ॥ ६१ ॥

द्विषष्टितमः पटलः ।

आनन्दभैरव्युवाच ।—

कैलासशिखरारूढ ! पञ्चवक्त्र ! त्रिलोचन !
सर्वभूतप्रपूज्याथ शाकिनीयजनं शृणु ॥ १ ॥

शाकिनीपूजा ।—

पूजनं त्रिविधं प्रोक्तं मनः साक्षाद्वचो मम ।
मानसं योगिनां प्रोक्तं तदा साक्षात् गृहे प्रभो ! ॥ २ ॥
वाचामयं तामसानां नृपाणां कामिनां प्रभो !
एका पूजा च त्रिविधा कथिता परमेश्वर ! ॥ ३ ॥
सा पूजा सिद्धिदा काले त्रिकाले सर्वकालके ।
काले सिद्धिर्गृहस्थानां त्रिकाले ब्रह्मचारिणाम् ॥ ४ ॥
योगिनां सर्वकाले तु विफला दुष्टचेतसाम् ।
भावत्रयं हि पूजानां रजःसत्त्वतमोमयम् ॥ ५ ॥
त्रिशक्तिपूजनं नाथ ! सर्वत्र परिकीर्त्तितम् ।
ब्रह्माणीं वैष्णवीं तत्र पूजयेत्तां महेश्वरीम् ॥ ६ ॥

त्रिभावेन पूजयित्वा शक्तिब्रह्मत्रयेण च ।
पशुरूप-वीररूप-दिव्यरूपेण पूजयेत् ॥ ७ ॥
बलिदानं हि सर्वत्र परं मोक्षाय केवलम् ।
क्रमेण गुणयोगेन सर्वविद्यादिपूजनम् ॥
यत्कृत्वा संभवेद् योगी परं ब्रह्ममयोऽचिरात् ॥ ८ ॥
स्थानं वीक्ष्य महेन्द्रकोटिसदृशं श्रीलक्षणैर्लक्षितं
देवानां गतिदं तथा सुरुचिरं पुण्यं पवित्रं सुखम् ।
रम्यं देवगृहान्वितं परिजनैर्व्याप्तं तरुच्छायया
सौगन्ध्यादि-सुमान्यशैत्यपवनं काले वसन्तेऽपि वा ॥ ९ ॥
शून्ये देवगृहे तले वरतरोश्चित्तार्पितात्मा यति-
स्वाम्भोजासनसंस्थितो मृदुकटे व्याघ्राजिने वारणे ।
पादौ पादयुगं भुवि स्थितमिथो विस्तार्य्य हस्तौ तथा ।
नीरं निर्मलगन्धराजमिलितैः संक्षाल्य पञ्चाननः ॥ १० ॥
जलशोधनमन्त्रस्तु श्रूयतां परमेश्वर ! ॥ ११ ॥
प्रणवस्तरणप्रान्ते वज्रोदकमतः परम् ।
शोधयामि ततः स्वाहा जलमन्त्र उदाहृतः ॥ १२ ॥
प्रक्षिपेत्तज्जलं पात्रे पवित्रे च सुरेश्वर ! ।
हस्तौ पादौ तज्जलेन क्षालयेत् काममायया ॥ १३ ॥
विग्रहं मूलमन्त्रेणाचमनं हि उदाहृते ।
शिखाबन्धनमन्त्रन्तु शृणून्मत्तकुमारक ! ॥ १४ ॥
अप्रकाश्यं महामन्त्रं शिखाबन्धनमासनम् ।
(ओं) शोधये त्रिपुरानाथ ! कालाग्निशिखयोज्ज्वल ! ॥ १५ ॥
आसनं शोधयाम्यद्य द्वारपालो भवाऽनिशम् ।
ततोऽर्घ्यं स्थापयेद्विद्वान् शङ्खाधारे मनोरमे ॥ १६ ॥
मूलमन्त्रेण संक्षाल्य ततो मूलेन पूरयेत् ।
रक्तचन्दनयुक्तेन जलेन चन्दनेन च ॥ १७ ॥

ततो दूर्वाऽर्घ्यपुष्पाणि साधारे दापयेत् सुधीः ।
दशधा मूलमन्त्रन्तु तत्र जप्त्वा सुधामयम् ॥ १८ ॥
धेनुमुद्रां मत्स्यमुद्रां योनिमुद्राञ्च दर्शयेत् ।
प्रणवञ्च महारेखा शब्दान्ते शोधयामियुक् ॥ १९ ॥
वह्निजायान्तमन्त्रेण शोधयेत् पीठचक्रकम् ।
पीठपूजां ततः कुर्य्यात् प्रणवादि-नमोऽन्तकैः ॥ २० ॥
मां पदं पूर्वमुच्चार्य्य हृदयाय नमस्ततः ।
षड्दीर्घभाजा वीजेन पूजयेद्वामतः सुधीः ॥ २१ ॥
पूर्वादीशानपर्य्यन्तं चतुर्दिक्षु च मध्यके ।
पूजयित्वा च तन्मध्ये वर्णोच्चारणपूर्वकैः ॥ २२ ॥
पीठशक्तिं पूजयित्वा पीठनायकमर्चयेत् ।
प्रणवादिनमोऽन्तेन सर्वत्र प्रतिपूजयेत् ॥ २३ ॥
पीठशक्तिं शाकिनीन्तु तथा शाकम्भरीं शिवाम् ।
लक्ष्मीं सरस्वतीं दुर्गां चण्डिकां गणनायिकाम् ॥ २४ ॥
महेश्वरीं विशालाक्षीं शुद्धां मायां दलां कलाम् ।
[illegible] मधुमतीं प्रसन्नां रत्नमालिनीम् ॥ २५ ॥
हिरण्यवर्णां कौमारीं वाग्देवीं त्रिजटां महीम् ।
त्रिशूलिनीं देवमायां सिद्धाद्यां मधुनायिकाम् ॥ २६ ॥
मधुपुरेश्वरीं कुब्जां तथा मधुमतीं यजेत् ।
शाकाख्यां शाकमच्याञ्च वेदहस्तां हसन्मुखीम् ॥ २७ ॥
कपालिनीं खड्गहस्तां वनमालाञ्च माधवीम् ।
विचित्राङ्गीं लोलजिह्वां चेतिकालां प्रभामयीम् ॥ २८ ॥
सर्वां सर्वाकर्षिणीञ्च बहुरूपां सुधांशुदाम् ।
सर्वमयीं वर्णमयीं मुण्डमालां त्रिकालिकाम् ॥ २९ ॥
विश्वेश्वरीं विश्वमातां महाविद्यां सनातनीम् ।
एता विद्याः पूजनीयाः प्रणवादिनमोऽन्तिकाः ॥ ३० ॥

ततो ध्यानं प्रवक्ष्यामि संक्षेपतः शृणु प्रिये ! ॥ ३१ ॥

शाकिनीध्यानम् ।—

शाकिनीं श्रीवेदविद्यां स्थूलसूक्ष्मस्वरूपिणीम् ।
पीतवर्णां त्रिनयनां वेदहस्तां हसन्मुखीम् ॥
सदाशिवयुतां गौरीं सर्वालङ्कारमण्डिताम् ॥ ३२ ॥
त्रिलोचनां सूर्य्यचन्द्र-वह्निमण्डलमण्डिताम् ।
कपालपद्मविमल-वराभयकराम्बुजाम् ॥ ३३ ॥
देवदानवगन्धर्व-योगसिद्धप्रपूजिताम् ।
षोड़शारमहापद्म-संस्थितां वनमालिनीम् ॥ ३४ ॥
शाकम्भरीं वेदविद्यां माधवीं शक्तिशोभिताम् ।
मुनिदेवमहेन्द्रादि-ब्रह्मविष्णुशिवाश्रयाम् ॥
ध्यायेऽहं कण्ठपद्मस्थां सर्वसिद्धिसमृद्धिदाम् ॥ ३५ ॥
एवं ध्यात्वा कण्ठपद्मे भूतशुद्धिं ततश्चरेत् ॥ ३६ ॥
भूतशुद्धिं प्रवक्ष्यामि येन कण्ठस्थिरो भवेत् ।
आकाशगामिनी सिद्धिर्लभते नात्र संशयः ॥ ३७ ॥

भूतशुद्धिः ।—

संयोज्य जीवं कुलवक्त्रमध्ये श्रीकुण्डलिन्या सह मूलपद्मम् ।
क्रमेण भित्त्वा समयोर्द्ध्वतुण्डे विशुद्धपद्मे लयमाचरेद्बुधः ॥ ३८ ॥
शाकिनीपार्श्वभागे च जीवं संस्थापयेत् सुधीः ।
कुण्डलिन्या लयं कृत्वा वह्निवीजेन भस्मसात् ॥ ३९ ॥
देहं तदा चिदधीत वायुवीजेन शोषयेत् ।
वारुणेनामृतं कृत्वा सर्वथा च स्थितो भवेत् ॥ ४० ॥
धैर्य्येण भावयेद्देवं शाकिनीशं सदाशिवम् ।
त्रैलोक्यान्वितमीशानं पञ्चवक्त्रं त्रिलोचनम् ॥ ४१ ॥
पूर्वोक्तध्यानमाकुर्य्यान्मन्त्राक्षराणि भावयेत् ।
चिच्छक्तौ परमात्मानं भावयित्वा पुनःपुनः ॥ [illegible]

आत्ममग्नं तत्र पदे कृत्वा चिन्तामणिं भजेत् ।
धूम्राकारं महाकाशं विचिन्त्य तेजसाऽऽवृतम् ॥ ४३ ॥

प्राणप्रतिष्ठा ।—

लीलामयं देवताया रूपं संपूज्य मानसैः ।
क्रमेण नासिकाद्वारात् सोऽहं वीजेन चालयेत् ॥ ४४ ॥
आनीय सम्मुखे पीठे संस्थाप्य जीवमर्पयेत् ।
तत्रैव सुस्थिरो भूत्वा तत्प्राणान् तत्र विन्यसेत् ॥ ४५ ॥
आं क्रीं क्रों(क्रौं) शब्दमुच्चार्य्य यं रं लं वं ततः परम् ।
इत्याद्यैः स्थापयेत् प्राणान् ततोऽर्चाविधिमाचरेत् ॥ ४६ ॥

पूजाप्रारम्भः ।—

न्यासजालं ततः कुर्य्यात् शृणु तत्त्वासनादिकम् ।
सदाशिवऋषिश्चास्य मस्तके संन्यसेत् सुधीः ॥ ४७ ॥
सदाशिवाय धारवे नमः प्रणवमाद्यके ।
मुखे प्रणवमुच्चार्य्य चानुष्टुप्छन्दसे नमः ॥ ४८ ॥
हृदि प्रणवमुच्चार्य्य शाकिन्यै तदनन्तरम् ।
सदाशिवप्रयुक्तायै देवतायै नमस्ततः ॥ ४९ ॥
कराङ्गन्यासौ संकुर्य्यात् षड्दीर्घस्वरसंयुतैः ।
सकारैर्देवदेवेशि मातृकां वीजसंपुटाम् ॥ ५० ॥
मातृकाध्यानमालम्व्य सांवीजैनान्तराचरेत् ।
व्यापकं षोड़शवारं प्राणायामयुगं चरेत् ॥ ५१ ॥
पुनर्ध्यानं मानसार्चां योनिमुद्रां प्रदर्शयेत् ।
धेनुमुद्रां मत्स्यमुद्रां सिंहमुद्रां प्रदर्शयेत् ॥
पद्ममुद्रां ततः कुर्य्यात् पाद्याद्यैः परिपूजयेत् ॥ ५२ ॥
आदौ मूलं समुच्चार्य्य एतत्पाद्यं ततः स्मरेत् ।
सदाशिवप्रयुक्तायै शाकिन्यै नम इत्यपि ॥ ५३ ॥
एवंक्रमेण दूर्वार्घ्यमाचामं विनिवेदयेत् ।

स्नानीयं क्रमतो दद्यात् पुनराचमनीयकम् ॥ ५४
गन्धं पुष्पाणि मूलेन दद्याद्भक्त्या सदाशिवे ।
विल्वपत्राणि मूलेन दत्त्वावरणमर्चयेत् ॥ ५५ ॥
प्रणवं सां हृदयाय नमश्चाग्नौ प्रपूजयेत् ।
प्रणवञ्च सीं शिरसे स्वाहया नैर्ऋते यजेत् ॥ ५६ ॥
प्रणवं सूं शिखायै तु वषट् वायौ यजेत् क्रमात् ।
प्रणवं सैं कवचाय कूर्चमीशे प्रपूजयेत् ॥ ५७ ॥
मध्ये सौं नेत्रत्रयाय वौषट् प्रणवमाद्यके ।
चतुर्दिक्षु ततः पश्चात् सः अस्त्राय ततो हि फट् ॥
प्रणवाद्यं पूजयित्वा मस्तके ऋषिमर्चयेत् ।
प्रणवं मूलऋषये सदाशिवाय हृत्ततः ॥ ५८ ॥
पूर्वादि वामतः पूज्याः परिवारादिदेवताः ।
आनन्दभैरवं पश्चात् महाकालं समर्चयेत् ॥ ६० ॥
ज्ञानानन्दं सदानन्दं भैरवानन्दमेव च ।
श्यामानन्दं शिवानन्दं कालानन्दमतःपरम् ॥ ६१
सुधानन्दं हरानन्दं भैरवानन्दमेव च ।
कुलानन्दं प्रियानन्दं यज्ञानन्दमतःपरम् ॥ ६२ ॥
ध्यानानन्दं परानन्दं योगानन्दं समर्चयेत् ।
क्रोधानन्दं क्रियानन्दं बोधानन्दं तथाऽर्चयेत् ॥ ६३ ॥
देवानन्दं जयानन्दं विजयानन्दमेव च ।
ब्रह्मानन्दं प्रभानन्दं पूर्णानन्दं समर्चयेत् ॥ ६४ ॥
जगदानन्दरूपन्तु ममाज्ञा गुरुचक्रगम् ।
पूजयित्वा देहशक्तिमेतेषां पार्श्वके यजेत् ॥ ६५ ॥
कात्यायनीं कालकन्यां त्रिपुरां षोडशीं तथा ।
विद्याधरीं व्याघ्रमुखीं मधुपानमदोन्मदाम् ॥ ६६ ॥
रम्यां स्नेहकलां धर्म्यां तथा मधुमतीं पराम् ।

हारमालां वनमालां राकाञ्च कुलकामिनीम् ॥ ६७ ॥
पूजितां गुरुशर्वाणीं सर्वतत्त्वस्वरूपिणीम् ।
पूजयेत पूर्वतः शक्त्या ईशानान्तं क्रमेण तु ॥ ६८ ॥
तन्मध्ये केशवं ध्यात्वा दलस्वरमुपाश्रयेत् ।
अकारादिषोड़शार्णान् प्रणवादिनमोऽन्तकान् ॥ ६९ ॥
नीलवर्णान् स्वरक्ताढ्यान् कुङ्कुमालक्तवेष्टितान् ।
विद्युत्कोटिसमाभास-पद्मरागसमोज्ज्वलान् ॥ ७० ॥
मनोरथपूर्णकरान् जगदानन्दवर्द्धकान् ।
सप्रियापरिवारादि-परमात्मप्रदर्शकान् ॥ ७१ ॥
तेषां नाम्ना पूजयित्वा यथा मार्त्तण्डमण्डले ।
तथा एते पूजिताः स्युः स्वस्वनामप्रचोदिताः ॥ ७२ ॥
शृणु नाथ ! महाकाय ! मदोन्मत्त ! दिगम्बर !
स्थिरचेताः तदा भूत्वा पूजयित्वा हि शाकिनीम् ॥ ७३ ॥
तत्र पद्मकर्णिकायां शवरूपं सदाशिवम् ।
ध्यात्वा तद्गात्रमध्ये तु पीठचक्रं प्रपूजयेत् ॥ ७४ ॥
मूलाधारे कामरूपं कामचक्रं त्रिलक्षणम् !
पीठाय नम उच्चार्य चाद्यतारकमुच्चरेत् ॥ ७५ ॥
हृदि जालन्धरं पीठं सिद्धपीठं त्रिचक्रकम् ।
ललाटे पूर्णगिर्य्याख्यं हिङ्गुनादं स्वपीठकम् ॥ ७६ ॥
उड्डीयानं तदूर्द्धे तु मेघकुञ्जं स्वपीठकम् ।
महापीठं भ्रुवोर्मध्ये वाराणसीञ्च लिङ्गकम् ॥ ७७ ॥
लोचनत्रयमध्ये तु ज्वलन्तीसिद्धपीठकम् ।
ज्वालामुखी त्रिवेणी च पीठत्रयमुदाहृतम् ॥ ७८ ॥
त्रिलोचन ! त्रिपीठं से अवश्यं परिपूजयेत् ।
हृदम्बुजे पूजयेद्दै मायावतीं सुभद्रिकाम् ॥ ७९ ॥
काम्पिल्यनगरं वंशं नगरं कामभञ्जनम् ।

257

ह्रिरण्यनगरं तत्र एकदन्तं रसायनम् ॥ ८० ॥
कपालपीठं तत्त्वाख्यं फणिपीठं मुखे यजेत् ।
कण्ठे मधुपुरीपीठं सुधापीठं तदन्तिके ॥ ८१ ॥
आज्ञापीठञ्च श्रीपीठं शून्यपीठं श्रियाञ्जनम् ।
पुरञ्जनाख्यं भद्राख्यं कण्ठे हस्ते पुरी मम ॥ ८२ ॥
नाभौ महापीठवीजमयोध्याभवपीठकम् ।
लक्ष्मीपीठञ्च सङ्केत-लाङ्गलीपीठमेव च ॥ ८३ ॥
मणिपीठं ज्ञानपीठं रुद्रपीठं तदन्तिके ।
शाकिनीकुलपापीठं वलाकीपीठमेव च ॥ ८४ ॥
रौद्रप्रभामहापीठं म्लेच्छदेशस्य पीठकम् ।
सर्वासिद्धिकरीपीठं निरञ्जनस्वपीठकम् ॥ ८५ ॥
ब्रह्मपीठं दन्तपीठमभयापीठमेव च ।
रुक्मिणीपीठमेवं हि फेत्कारीपीठमर्चयेत् ॥ ८६ ॥
गर्गरीसिद्धपीठञ्च चन्द्रशेखरशैलकम् ।
हरिद्वाराख्यपीठन्तु समुद्रपीठमर्चयेत् ॥ ८७ ॥
कश्यां समुद्रपीठञ्च काञ्चीपीठं त्रिघर्घरम् ।
शूलिनीपीठमभ्यर्च्य लङ्कापीठं समर्चयेत् ॥ ८८ ॥
वारुणीपीठमभ्यर्च्य वज्रपीठं समर्चयेत् ।
सिद्धकटाहपीठञ्च महासङ्घातपीठकम् ॥ ८९ ॥
षट्पीठं द्राविड़ीपीठं विष्णुपीठं रसान्वितम् ।
दलपीठं तथा राधा-पीठं पञ्चाननाख्यकम् ॥ ९० ॥
कुण्डलीचक्रपीठन्तु कामपीठं समर्चयेत् ।
महावायुाकाशपीठं त्रिकालचक्रपीठकम् ॥ ९१ ॥
ब्राह्मीपीठं धरापीठं शत्रुपीठं समर्चयेत् ।
कुञ्जराख्यं महापीठं कालधर्माख्यपीठकम् ॥ ९२ ॥
सदामे डाकिनीपीठं गर्भपीठं तदन्विके ।

मयूरपीठमभ्यर्च्य गारुड़ीपीठमर्चयेत् ॥ ९३ ॥
प्रणवं पूर्वमुच्चार्य चात्र पीठस्थितान् स्वरान् ।
पूजयामि महापुष्पैः प्रसन्ना प्रभवन्तु ते ॥ ९४ ॥
पूजयित्वा पीठलोकं शिवलोकं समर्चयेत् ।
क्षेत्रपाललोकमेवं धर्मलोकं त्रिलोककम् ॥ ९५ ॥
पूजयेत् सागरान् सप्त भुवनानि चतुर्दश ।
ताराग्रहगणाक्रान्त-लोकपालयुतानि च ॥ ९६ ॥
पूजयित्वा च तद्वाह्ये शक्तिविद्याः प्रपूजयेत् ।
डाकिनी राकिणी पूज्या लाकिनी काकिनी तथा ॥९७॥
शाकिनी हाकिनी पश्चात् प्रभा नीला(ली) च बोधिनी ।
उन्मनी भाविनी वित्ता प्रियाङ्गी मानसेश्वरी ॥ ९८ ॥
उल्कामुखी क्रोधमुखी विप्रचित्ता सुभद्रिका ।
नागिगी नागमाला च पृथिवी तीर्थवासिनी ॥ ९९ ॥
अकलङ्का जाह्नवी च स्वर्गगङ्गा मनोन्मनी ।
सं सत्त्वस्था रं रजःस्था तं तमःस्था प्रपूजयेत् ॥ १०० ॥
सर्वां देवीं पूजयेद्वै प्रणवादिनमोऽन्तिकाम् ।
धूपदीपौ स्वमूलेन दद्यात् साधकयोगिराट् ॥ १०१ ॥
नैवेद्यं शोधयित्वा च दद्यात् पानार्थकं प्रभो !।
पुनराचमनं दत्त्वा विशेषवलिमर्पयेत् ॥ १०२ ॥
पूर्वोक्तोत्तममन्त्रेण पञ्चतत्त्वक्रियादिभिः ।
अनेन मनुना दद्याद्वलित्रयमनुत्तमम् ॥ १०३ ॥
प्रणवं कालमायेऽन्ते सर्वपीठनिवासिनि ।
तदन्ते कालिकावीजं वह्निन्तु तदनन्तरम् ॥ १०४ ॥
परिरक्ष युगं पश्चात् शब्दवीजं ततो द्विठः ।
अनेन मनुना दद्याद्वलित्रयमनुत्तमम् ॥ १०५ ॥
सर्वत्र मानसैर्योगी दद्याच्च पूजनं वलिम् ।

प्राणायामं विधा कृत्वा जपेन्मन्त्रं यथाविधि ॥ १०६ ॥
सहस्रं वा शतं वाऽपि चाष्टोत्तरसमन्वितम् ।
दिवसे यज्जपं कुर्य्यात् रात्रौ तज्जपमाश्रयेत् ॥ १०७ ॥
जपं समापयेद्देव्या वामहस्तेन मन्त्रकैः ।
"गुह्यातिगुह्यगोप्त्रि ! त्वं गृहाणास्मत्कृतं जपम् ॥
सिद्धिर्भवतु मे देवि ! त्वत्प्रसादात् सुरेश्वरि !" ॥ १०८ ॥

प्रणाम-प्रदक्षिणे ।—

प्राणायामत्रिषट् कृत्वा वन्दनञ्च प्रदक्षिणम् ॥ १०९ ॥
"सम्बन्धे वरदे देवि ! त्रैलोक्यकुलपावनि ! ।
सर्वसिद्धिप्रदे देवि ! शाकिनि ! त्वां नमाम्यहम् ॥ ११० ॥
वेदविद्याप्रसन्ने ! त्वं नानाविद्याविनोदिनि ! ।
भवानि ! सिद्धिदे ! देवि ! वरदा भव सर्वदा ॥ १११ ॥
सर्वदानन्दवह्नित्रि ! त्वं मम शत्रून् विनाशय ।
अकालमृत्युहरणं कुरु कौमारि ! शाकिनि ! ॥ ११२ ॥
सदाशिवयुते ! नित्ये ! सदाशिवविहारिणि ! ।
अमरत्वं सदा देहि भुक्तिं मुक्तिं प्रयच्छ मे ॥ ११३ ॥
शाकिनि ! प्राणदे ! देवि ! देवानां प्राणरक्षिणि ! ।
शाकम्भरि ! नमस्तेऽस्तु मम देहं समाश्रय ॥ ११४ ॥
वाञ्छाकल्पतरोर्मूले ! स्वामिनि ! प्रेमदायिनि ! ।
सर्वलोकार्च्चिते ! सिद्धे ! कण्ठपद्मे स्थिरा भव ॥ ११५ ॥
कण्ठाम्भोरुहमण्डले सुविमले वाञ्छाफले ज्वालिनि
कामाख्ये ! प्रणमामि शाकिनीपदं माता हि शाकम्भरि ! ।
देवानां जगतां हिताय विलये सम्यग्वरस्थोपदे !
स्थित्यादिक्रमसंस्थिता भव महाकाशप्रभाचञ्चले ॥ ११६ ॥
इति प्रणम्य भावेन भुक्तिं मुक्तिं लभेद् ध्रुवम् ।
पूजाफलमवाप्नोति प्रदक्षिणरतो नरः ॥ ११७ ॥

आनन्दभैरव्युवाच ।—

कुरु नाथ ! वन्दनं भो ! पूजनं कवचं पठ ।
वर्णध्यानं कण्ठपद्मे स्थिरो भव जगत्पते ! ॥ ११८ ॥
परमा शाकिनी विद्या महामोहनिवारिणी ।
योगिनीकोटिभिः सार्द्धं राजते कोटिसूर्य्यवत् ॥ ११९ ॥
वाराणसीपुरे स्थित्वा कण्ठपद्मस्थितां भज ।
स्तोत्रेणानेन विधिना भक्तिं कुरु सदाशिवे ॥ १२० ॥
आनन्दे नीलपङ्केरुहविमलकरे स्थापितं षोडशारे
देवाभां विद्युताभां सुकनकवलयां चन्द्रकोटिप्रकाशाम् ।
रौद्रीं सर्व्वां सुकेशीं त्रिधुनयनयुतां शत्रुकालप्रकाशीं
सिन्धुस्थां भावयामि प्रमथगणवधूप्रोज्ज्वलां योगनिद्राम् ॥ १२१ ॥
योनिस्थां कन्दकालीं सकमलवलयां नीलजीमूतनेत्रां
श्रीकारां कालिकाख्यां मधुघटहनिवासामष्टगेहप्रकाशाम् ।
आनन्दामृतनित्यां दितिजदलकलां कण्ठवैकुण्ठशोभां
धन्यां श्रीनन्दकालीं त्रिभुवनभविकाऽऽह्लादहेतोः प्रकाशाम् ॥ १२२ ॥
विन्ध्यस्थां पीठकन्यां सुकमलनयनां वेदहस्तां प्रसन्नां
कैलासस्थां चन्द्रवक्त्रां हरिहरविधिभिर्ध्यानगम्यां कदाचित् ।
प्रमुखां घोररूपां भवभयहरणीं तारिणीं भावयामि
सूक्ष्मां स्थूलप्रभाख्यां चरणतलविभां कोटिबन्धूककान्तिम् ॥ १२३ ॥
कान्तानां कामकान्तां विजयभगवतीं शाकिनीं शाकहन्त्रीं
शब्दान्तःप्रान्तरस्थां स्थितिलयगगनां पद्मगासस्थलाख्याम् ।
कान्त्या विश्वं ज्वलन्तीं मदनविधुसमां बीजमालां स्मरामि
व्याघ्रस्थां व्याघ्रहस्तां हरिणनयनकैः केवलानन्दरूपाम् ॥ १२४ ॥
बालां शक्तिं प्रवालां त्रिकुलजलकलां कामराजेश्वरीं तां
आनन्दाख्यां प्रभान्तीं प्रभुगुणभयदां मातृकाबीजकोषाम् ।
धाराधारायुतां दशनहसयुतां चारुनेत्रां भजामि

बालादित्यायुताभां कमलमधुमदागन्धमाधुर्य्ययुक्ताम् ॥ १२५ ॥
क्षौणीसिंहासनस्थां मणिमयजपमालास्थिरानन्दहस्तां
मातस्त्रैलोक्यपालां तव तनुविमलां निर्मले कण्ठपद्मे ।
नित्यज्ञानप्रकाशां भजति मम मनस्तत्त्वचिन्ताप्रसन्नां
देवीं विद्योतिताङ्गीं परमसुखमयीं वेदसन्तानकर्त्रीम् ॥ १२६ ॥
योगानन्दादिकर्त्रीं तरुणघनघटाघोररूपां करालां
आकाशाम्भोजमध्येऽविकलकरणव्यापकाङ्गप्रकाशाम् ।
त्वं माता श्रीं वहन्ती कलुषकरकलौ मोक्षयुक्तां भजे त्वां
सा विद्या धर्मचिन्तामणिगुणजनिता योजिता जातभीतिः॥१२७॥
शब्दब्रह्मैकहेतुः स्थलनिलयमहाज्ञानसाध्या प्रतीता
त्वं माता वेदमाता हर हर कलुषं वालिशं तारयस्व ।
जीवात्मानं सदा वै क्षयमरणभयभ्रान्तिसङ्घात् प्रचण्ड
ज्वालामालाविलोला कलयति कलुषं शाकिनी शैवमाता ॥१२८॥
माता सन्ध्या प्रभातोदयदिवसनिशा भ्रान्तिमोहा विनाशा
धर्मज्ञानप्रकाशा चल चल दलके त्वं कलाषोडशारे ।
बीजात्मा यज्ञकुण्डे रचयति चरणच्छन्दसां गद्यपद्यैः
पाताले भूकराले कुलयुगदलके निर्गता देवशक्तिः ॥ १२९ ॥

* * * *

पश्यन्ती ब्रह्म सद्यो नयनवचनगा वैखरीवाक्स्वरूपा ।
कण्ठे हृत्पद्ममूले कथयति विमला संनतस्त्वां श्रयामि ॥१३०॥
परा सा सर्वा सा रतिरसिकहासा प्रविश मे
घनश्यामा वामा द्विकमललालाटेऽतिशिखया ।
वहन्ती सिन्दूरं निजपपरया नामपयसा ।
मुखे शोभा भव्या भवभवयुगं षोडशदले ॥ १३१ ॥
रमा लज्जा माया मधुमदनकूर्चास्त्रसहिता
हिता मातः शाकम्भरि ! धरणि बाला कमलया ।
निशार्द्धे मातस्त्वं हन हन सदा मद्रिपुचयं
षट्कूटा त्वं मातर्मदनमदहन्त्री हरवधूः ॥ १३२ ॥
ततो जपेन्महामन्त्रं वर्णमालाक्रमेण च ।
प्राणायामं ततः कृत्वा न्यसेत् सर्वाङ्गमध्यमे ॥ १३३ ॥
मातृकाग्रन्थिनिकरे न्यसेत् पूर्वोक्तनामभिः ।
यदुक्तं पूर्वपटले तेषां नामभिरेव च ॥ १३४ ॥
विन्यस्य मन्त्रपुटितं मन्त्रन्यासं ततश्चरेत् ।
काकिन्या ह्यष्टशक्तीनां न्यासं कुर्य्यात्ततः परम् ॥ १३५ ॥
काकजिह्वा द्विकाण्डेशी काकाक्षी काकिनीध्वजा ।
काकिनी काकमाला च काकचञ्चुप्रकाशिनी ॥ १३६ ॥
काकिला चाऽष्टशक्तीनां नाम्ना विन्यस्य मस्तके ।
कण्ठकूपे न्यसेत् पश्चात् षोडशस्वरसम्पुटम् ॥ १३७ ॥
हृदये विन्यसेन्नाथ ! कादिद्वादशसम्पुटम् ।
डादिफान्तं प्रविन्यस्य वादिलान्तं स्वलिङ्गके ॥ १३८ ॥
मूलाधारे मूलमन्त्र-पुटितं वादिमान्तकम् ।
विन्यस्य व्यापकन्यासं कृत्वाऽङ्गानि च वर्द्धयेत् ॥ १३९ ॥
प्राणायामत्रिकं कृत्वा प्राणायामं समाश्रयेत् ।
ततः स्तोत्रं पठेद्धोमान् तत्सर्वं शृणु शङ्कर ! ॥
हविष्याशी वशी भूत्वा साधयेदिह सिद्धये ॥ १४० ॥

इति श्रीरुद्रयामले उत्तरतन्त्रे महातन्त्रोद्दीपने सिद्धमन्त्रप्रकरणे षट्चक्र-
प्रकाशे भैरवी-भैरवसंवादे काकिनीसिद्धिसाधनं नाम
द्विषष्टितमः पटलः ॥ ६२ ॥

त्रिषष्टितमः पटलः ।

आनन्दभैरव उवाच ।—

वद कान्ते परानन्दे रहस्यं कुलसुन्दरि ! ।
यस्य विज्ञानमात्रेण भवेद्गङ्गाधरो हरिः ॥ १ ॥
ईश्वरस्य स्तवं ब्रह्म परं निर्वाणसाधनम् ।
शोभाकोटिर्योगपतेर्योगेन्द्रस्य परा गतिः ॥ २ ॥
ईश्वरं के न नमन्ति ब्रह्मविष्णुशिवादयः ।
तस्य स्मरणमात्रेण महावाग्मी च मृत्युजित् ॥ ३ ॥
सर्ववेदान्तसिद्धान्तैस्तं भजन्ति महर्षयः ।
देवा मनुष्या गन्धर्वास्तं भजन्ति महेश्वरम् ॥ ४ ॥
अकालमृत्युहरणं सर्वदा सर्वतोमुखम् ।
सदा तस्य स्तवं दिव्यं श्रोतुमिच्छामि शङ्करि ! ॥ ५ ॥

आनन्दभैरव्युवाच ।—

कौल त्वं शृणु शङ्कर ! प्रियकरं स्तोत्रं महेशस्य च
श्रीनाथाय नमः कुलेश ! सततं प्राणेश ! तुभ्यं मुदा ।
सानन्दाय नमो भवाय पतये लोकेश्वरायौ नमः
भूतेशाय गणाधिपाय सततं श्रीशूलिने ते नमः ॥ ६ ॥
कान्ताय प्रभवाय योगपतये योगीश्वरायौ नमः
ओङ्काराय कवीश्वराय महते नित्याय नित्यं नमः ।
स्वाधिष्ठानविभेदकाय हरये मूलाब्जसम्भेदिने
ओं नमोऽम्बुजभेदिने च हृत्पद्मोद्भेदकाय ओं नमः ॥ ७ ॥
स्वाधिष्ठानविभेदकाय हरये मूलाब्जसम्भेदिने
मोक्षाय प्रमथेश्वराय कवये खट्वाङ्गहस्ताय ते ।
भक्तिश्रीनिलये महेन्द्रखचरैर्मायाश्रयायौ नमो
विज्ञानाय शिवाय सूक्ष्मगतये गूढाय भूयो नमः ॥ ८ ॥
सर्वेशाय जयाय भूतपतये भूतेश्वराय प्रभो !

पञ्चास्याय हराय देवपतये गौरीश्वराय श्रिये ।
ओं भोगान्तरगामिने हरिहरायाऽऽनन्दचिद्रूपिणे
कल्याणाय भगाय शुद्धमतिभिर्नित्यं नमस्ते नमः ॥ ९ ॥
गोविन्दप्रियवल्लभाय विधये ब्रह्मादिकोत्पत्तये
उत्पत्तिस्थितिसंहृतिप्रकृतये वाह्याय विश्वात्मने ।
तुभ्यं काल ! नमो नमः प्रलययोगोल्लासिने भूभृते
विख्याताय गिरीन्द्रपूजित ! विभो ! भूताधिपायानिशम् ॥ १० ॥
गौरीशाय गणार्चिताय मनवे मान्याय भूवासिने
भूतोल्लासमहेशनाथ शशिचूडाय प्रधानाय ते ।
नित्यं नित्यकलाकुलाय फणिचूडाय प्रबुद्धाय ते
तेजःशान्तिपते ! सतां पतिपते ! निर्वाससे ते नमः ॥ ११ ॥
शोभाकोटियुताय चन्द्रकिरणाह्लादाय सूक्ष्माय ते
तुभ्यं नाथ ! नमो नमः प्रणमतामानन्दसिन्धूत्सव ! ।
हेरम्बप्रिय ! कार्त्तिकेश ! जनकानन्दप्रियाय प्रभो !
पिङ्ग सर्वसुखाय सर्वपतये श्रीनीलकण्ठेश्वर ! ॥ १२ ॥
निवृत्त्यार्पितभूतये सुरपते श्रीभास्वते योगिना-
मानन्दोदयकारिणे कुलपते ! हे नाथ ! तुभ्यं नमः ।
ब्रह्मानन्दकुलाय रौप्यगिरये सौन्दर्यसंसिद्धये
सर्वानन्दकराय संवरतरायाढ्याय तुभ्यं नमः ॥ १३ ॥
कामेशं कौशिकेशं सुरतरुकिरणं कारणाढ्यं सुधाढ्यं
गौरीशं सर्वमीशं गुरुगिरिनमितं श्रोणिलिप्ताङ्गभस्मम् ।
घोषाढ्यं मञ्जुघोषं घनगणघटितं घोरसङ्घट्टनादं
सर्वेशं [illegible] जनहृदि घटनं चेश्वरं घोटकेशम् ॥ १४ ॥
नित्यं त्वं वै विशालो वसति तव करे स्थावरो जङ्गमो वा
भूतग्रामं [illegible] स्वपरिजनकुले सर्वदा पाहि शम्भो ! ।
[illegible] चपलसितमणिश्रेणिमालाविलोलो

लोकातीत: कलङ्की विधुशतमुकुटश्रीपदाम्भोरुहस्ते ॥ १५ ॥
धूर्त्त: शौरि: प्रशान्तो विमलमधुरसामोदमान: प्रमत्तो
मायामोहप्रणाशोऽसुरमददमनो सर्वसम्मानदाता ।
ते नाथ ! श्रीपदाम्भोरुहविमलतलेऽहं कथं चाशु वन्दे
पूर्वास्यो वा परास्यो धनपतिवदन: पश्चिमास्यो मुनीन्द्र: ॥ १६ ॥
भेदे सिद्धान्तविद्याधरविधुकिरण: कारणोऽनन्तशक्ति:
य: साक्षात् कामधेनु: स च धनपतिप: सर्वभोगानुरागी ।
पादाम्भोजे हि नित्यं सकलगिरिसुतानाथ ! ते योगिपत्वं
चित्तं मे चञ्चलाख्यं शशधरकिरणो वाक्पतेर्योमसिन्धो ! ॥ १७ ॥

कापर्दी श्रीखड्गाऽसिवरगदया वेदभुजगो
धनच्छायां सङ्कोचय मम सदा कायनिचये ।
जयी जेता जातिर्जयमनुकरोतु प्रियतमो-
ज्ज्वलज्झञ्झावातेक्षणधर इह क्रोध इति मे ॥ १८ ॥
सदाज्ञाचक्रान्तर्गतविषधरभाच्छन्नजटिल:
प्रतिज्ञाभङ्गस्थ: कटकशतकोटिप्रकटित: ।
कुठारास्त्र: क्रोधी कमठतटवासी कठिनहा
ककाराद्यैर्द्वादशकिरणयुक्तोऽवतु सदा ॥ १९ ॥
सुधाखण्डं हुत्वा स्तवनपठनेन प्रियकरं
पदाम्भोजं चेति प्रचरति सुभाग्यं कुलपते: ।
प्रधाने भूखण्डे जयति यदि मृत्युञ्जयपदं
विनोदं भूयोगं पठति सहसा प्रेमतरण: ॥ २० ॥
यद्येवं प्रपठेदिदन्तु नियतं कौलावलीसम्मतं
संसारे सरहस्यकं भवभयानन्दैकचित्तस्थलम् ।
योगीन्द्रावमतित्वमुक्तिफलदं सर्वेश्वरत्वप्रदं
चन्द्रादित्यसमागतं परपदाह्लादैकमात्रं लभेत् ॥ २१ ॥
ते शम्भो यदि पादाम्भोरुहमङ्गलवांछकम् ।

स्तौति वै सर्वदा योगी निर्वाणगुणसिद्धये ॥
किं न सिध्यति भूमध्ये शिवभक्तिप्रसादत: ॥ २२ ॥

इति श्रीरुद्रयामले उत्तरतन्त्रे महातन्त्रोद्दीपने सिद्धमन्त्रप्रकरणे षट्चक्रप्रकाशे भैरवी-भैरवसंवादे काकिनीपार्श्वचरयजनं नाम त्रिषष्टितम: पटल: ॥ ६३ ॥

चतु:षष्टितम: पटल: ।

आनन्दभैरव उवाच ।—

वद कल्याणि ! कामेशि ! त्रैलोक्यपरिपूजिते ! ।
ब्रह्माण्डानन्दनिलये ! कैलासशिखरोज्ज्वले ! ॥ १ ॥
कालिके ! कालरात्रिस्थे ! महाकालनिषेविते ! ।
शब्दब्रह्मस्वरूपे ! त्वं वक्तुमर्हसि सादरात् ॥ २ ॥
अनन्तकोटिब्रह्माण्ड-सारं परममङ्गलम् ।
ज्ञानसिद्धिकरं साक्षात् अत्यन्तानन्दवर्द्धनम् ॥ ३ ॥
सङ्केतशब्दमोक्षार्थं काकिनीश्वरसंयुतम् ।
परानन्दकरं ब्रह्म निर्वाणपदलालितम् ॥ ४ ॥
स्नेहादतिसुखानन्दादादौ श्रोतुं वरानने ! ।
इच्छामि सर्वदा मातर्जगतां सुरसुन्दरि ! ॥
स्नेहानन्दरसोद्रेक-सम्बन्धात् कवचं द्रुतम् ॥ ५ ॥

आनन्दभैरव्युवाच ।—

ईश्वर ! श्रीनीलकण्ठ ! नागमाल्यविभूषित ! ।
नागेन्द्रचित्रमालीक्य ! नागाधिप ! परेश्वर ! ॥ ६ ॥
काकिनीश्वरयोगाढ्यं सहस्रनाममङ्गलम् ।
अष्टोत्तरावृताकारं कोटिसौदामनीप्रभम् ॥ ७ ॥
आयुरारोग्यजननं शृणुष्वावहितो मम ।
अनन्तकोटिब्रह्माण्ड-सारं नित्यं प्रसत्परम् ॥ ८ ॥

साधनं ब्रह्मणो ज्ञानं योगिनां योगसाधनम् ।
सर्वज्ञ-गुह्यसंस्कार-संस्कारादिफलप्रदम् ॥ ९ ॥
वाञ्छासिद्धिकरं साक्षान्महापातकनाशनम् ।
महादारिद्र्यशमनं महैश्वर्य्यप्रदायकम् ॥ १० ॥
पठेद् यः प्रातरुत्थाय मध्याह्ने वा तथाविधः ।
नमस्कृत्य जपेन्नाम ध्यानयोगपरायणः ॥ ११ ॥
काकिनीश्वरसंयोगं ध्यानात् ध्यानगुणोदयम् ।
आदौ ध्यानं समाचर्य्य निर्मलोऽमलचेतसाम ॥ १२ ॥
ध्यायेद्देवीं महाकालीं काकिनीं कामरूपिणीम् ।
परानन्दरसोन्मत्तां श्यामां कामदुघां पराम् ॥ १३ ॥
चतुर्भुजां खड्गचर्म-वरपद्मधरां पराम् ।
शत्रुक्षयकरीं रत्नालङ्कारकोटिमण्डिताम् ॥ १४ ॥
तरुणानन्दरसिकां पीतवस्त्रां मनोरमाम् ।
केयूरहारललितां ताडङ्कद्वयशोभिताम् ॥ १५ ॥
ईश्वरीं कामरत्नाख्यां काकचञ्चुपुटाननाम् ।
सुन्दरीं वनमालाढ्यां चारुसिंहासनस्थिताम् ॥
हृत्पद्मकर्णिकामध्य-कोटिसौदामिनीप्रभाम् ॥ १७ ॥
एवं ध्यात्वा पठेन्नाम मङ्गलानि पुनः पुनः ।
ईश्वरं कोटिसूर्य्याभं ध्यायेत् हृन्मण्डले परम् ॥ १८ ॥
चतुर्भुजं वीररूपं लावण्यभावसम्भवम् ।
श्यामं हिरण्यभूषाङ्गं चन्द्रकोटिसुशीतलम् ॥ १९ ॥
अभयं वरदं पद्म-महाखड्गधरं विभुम् ।
किरीटिनं महाकायं स्मितहास्यप्रकाशकम् ॥ २० ॥
हृदयाम्बुजमध्यस्थं नूपुरैरुपशोभितम् ।
कोटिकालानलोद्दीप्तं काकिनीदक्षिणे स्थितम् ॥ २१ ॥
एवं विचिन्त्य मनसा योगिनां परमेश्वरम् ।

ततः पठेत् सहस्राख्यं वदामि तत् शृणु प्रभो ! ॥ २२ ॥

काकिनीश्वरसहस्रनामानि ।—

अस्य श्रीकाकिनीश्वरसहस्रनाम्नः स्तोत्रस्य ब्रह्मऋषि-गायत्रीच्छन्दो जगदीश्वरकाकिनीदेवता निर्वाणयोगार्थसिद्ध्यर्थे विनियोगः ।

ओं ओं ईश्वरः काकिनीशा ईशानः कुलेश्वरी ।
ईशः साक्षी कामधेनुः कपर्दिन्नाकपद्मिनी ॥ २३ ॥
कौलः कुलीनान्तरगा कविकाव्यप्रकाशिनी ।
कलादेशः सुकविता कारणा करुणामयी ॥ २४ ॥
कञ्जपत्रेक्षणः काली कालः कौलावलीश्वरी ।
किरातरूपी कैवल्या केवलं कमलासना ॥ २५ ॥
किञ्जटेशः सुकेशाढ्यो कपिलः कालप्रस्फुटा ।
किशोरः कोशरसिका कौलवेशः कुलेश्वरी ॥ २६ ॥
केशकिञ्जल्की जटिलः कामबीजकुतूहला ।
करकोटिधरः कूटा क्रियाक्रूरः क्रियावती ॥ २७ ॥
कष्टहा कुष्ठहन्त्री च कटकस्थः कलावती ।
कस्त्रवक्त्रः काममुखी कोटिसूर्य्यवरानना ॥ २८ ॥
कम्पः कम्पसुबुद्धिस्थः कल्पान्तस्थः कुलाचला ।
कुलपः कौलपाकाशा सुकान्तः काञ्चिवासिनी ॥ २९ ॥
सुकृतिः शाङ्करी विद्या कामहा कुलपण्डिता ।
कङ्केशः कमनीयाङ्गी कुशलः कुशलावती ॥ ३० ॥
केतकीपुष्पमालाढ्यः केतकीकुसुमान्विता ।
कुसुमानन्तमालाढ्यः कुसुमाऽमलमालिका ॥ ३१ ॥
कवीन्द्रः काव्यसम्भूतः कालमञ्जीरझञ्जिनी ।
कुशासनस्थः कौशिन्याः कुलपः कल्पपादपा ॥ ३२ ॥
कल्पद्रुमः कल्पलता विकल्पः कल्पगामिनी ।

कठोरस्थ: कठिनभा कराल: कालवासिनी ॥ ३३ ॥
कालकूटा भयानन्द: कर्कशाऽऽकाशवाहिनी ।
कटधूमाकृतिच्छाया विकटासनसंस्थिता ॥ ३४ ॥
कालधारी कूपकरी करवीरा भग: कृशा ।
कालगम्भीरनादान्ती विकलालापमानुषा ॥ ३५ ॥
प्रकृतिस्थ: सत्प्रकृति: प्रकृष्ट: कर्षिणीश्वरी ।
भगवान् वरुणीवर्णा वर्णी वर्णस्वरूपिणी ॥ ३६ ॥
स्वर्णवर्णी हि हेमाभा महामहेन्द्रपूजिता ।
महात्मा महतीशानी महेशी मत्तगामिनी ॥ ३७ ॥
महावीरो महावेगा महालक्ष्मीश्वरी मति: ।
महादेवो महादेवी महानन्दी महाकला ॥ ३८ ॥
महाकालो महाकाली महाबलो महाबला ।
महामान्यो महामान्या महाधन्या महाधनी ॥ ३९ ॥
महामाली महामाला महाकाशो महावियत् ।
महायज्ञो महायज्ञा महाराजो महेश्वरी ॥ ४० ॥
महाविद्यो महाविद्या महामुख्यो महामुखी ।
महारात्री महारात्रिर्महाधीरो महाशया ॥ ४१ ॥
महाक्षेत्रो महाक्षेत्रा कुरुक्षेत्र: कुरुप्रिया ।
महाचण्डो महोग्रा च महामत्तो महामति: ॥ ४२ ॥
महावेदो महावेदा महोत्साहो महोत्सवा ।
महत्कल्पो महत्कल्पा महायोगी महागति: ॥ ४३ ॥
महाभद्रो महाभद्रा महासूक्ष्मो महाबला ।
महावाक्यो महावाणी महाजल्पा महाज्वरी ॥ ४४ ॥
महाभूतिर्महाकान्ती महाधर्मो महाधना ।
महामहीषी महिषी महाभाग्यो महाप्रभा ॥ ४५ ॥
महाक्षेमो महामाया महामायो महारमा ।

महेन्द्रपूजितो माता विभाण्डो मण्डलेश्वरी ॥ ४६ ॥
महाविकारी विकला प्रतलस्थ: स्थलायता ।
कैवल्यदाता कैवल्या कौतुकस्थो विकल्पिनी ॥ ४७ ॥
बालापतिर्बालपत्नी पवी बालो बलाङ्गजा ।
श्रवनीश: कालवीरा प्राणेश: प्राणार्चिणी ॥ ४८ ॥
पञ्चमाचारग: पञ्चा प्रपञ्च: पंञ्चमीश्वरी ।
प्रपञ्च: पञ्चरसना निष्प्रपञ्च: कृपामयी ॥ ४९ ॥
कामरूपो कामरूपा कामक्रोधविवर्जिता ।
कामात्मा कामनिलया कामाख्य: कामचञ्चला ॥ ५० ॥
कामपुष्पधर: कामा कटकस्थ: कलावती ।
कम्रवक्त्र: काममुखी कोटिसूर्य्यकरानना ॥ ५१ ॥
कुलप: कौलपाकाशा सुकान्त: काञ्चिवासिनी ।
सुकृति: शाङ्करी विद्या कामहा कुलपण्डिता ॥ ५२ ॥
कङ्केश: कमनीयाङ्गी कुशल: कुशलावती ।
केतकीपुष्पमालाढ्य: केतकीकुसुमान्विता ॥ ५३ ॥
महामुद्राधरो मुद्रा-समुद्र: काममुद्रिका ।
चन्द्रार्द्धकृतभालाभो विधुकोटिमुखाम्बुजा ॥ ५४ ॥
चन्द्रकोटिप्रभाधारी चन्द्रज्योति:स्वरूपिणी ।
सूर्य्याभ: सूर्य्यकिरणा सूर्य्यकोटिविभासिता ॥ ५५ ॥
महेन्द्रेशो मीनवक्त्रा अन्तर्यामी निराश्रया ।
प्रजापतीश: श्रीकन्या दक्षेश: कुलरोहिणी ॥ ५६ ॥
खचेत:स्थ: खचेत:स्था व्यासेशो व्यासपूजिता ।
काश्यपेश: कान्तपेशी भृगुपो भार्गवेश्वरी ॥ ५७ ॥
कर्दमेश: कर्दमाद्या बालको बालपूजिता ।
मनस्थसान्तवीजस्था शब्दज्ञानी सरस्वती ॥ ५८ ॥
रूपातीतो रूपशून्या विरूपो रूपमोहिनी ।

264

विद्याधरेशो विद्येशो वृषस्थो वृषवाहना ॥ ५९ ॥
रसज्ञो रसिकानन्दा विरसो रसवर्जिता ।
मौन: सनत्कुमारेशो योगाचार्य्येश्वरप्रिया ॥ ६० ॥
दुर्वासाप्राणनिलय: सांख्ययोगसमुद्भवा ।
असंख्यमांसभक्षा च सुमांसाशी मनोरमा ॥ ६१ ॥
नरमांसविभोक्ता च नरमांसविनोदिनी ।
रोहिताशी मत्स्यगन्धा मत्स्यमत्ताऽऽसवप्रिया ॥ ६२ ॥
आसवाढ्योऽमला देवी निर्मलाऽऽसवसुप्रिया ।
विमुक्तो मदिरामत्ता मत्तकुञ्जरगामिनी ॥ ६३ ॥
मणिमालाधरी माला महाकेश: प्रसन्नधी: ।
जरामृत्युहरो गौरी गायनस्थोऽजरामरा ॥ ६४ ॥
सुचञ्चलोऽतिदुर्द्धर्षा कण्ठस्थहृद्गता सती ।
अशोक: शोकरहिता मन्त्रस्थो यतिमन्त्रिणी ॥ ६५ ॥
मन्त्रमालाधरानन्दो मन्त्रयन्त्रप्रकाशिनी ।
मन्त्रार्थचैतन्यकरो मन्त्रसिद्धिप्रकाशिनी ॥ ६६ ॥
मन्त्रज्ञो मन्त्रनिलया मन्त्रार्थो मन्त्रमन्त्रिणी ।
सुमन्त्रो मन्त्रजालस्था मन्त्रमालोऽतिसिद्धिदा ॥ ६७ ॥
मन्त्रवेत्ता च मन्त्रस्थो मन्त्रिणी मन्त्रिकान्तरा ।
बीजस्वरूपो बीजेशी बीजमालाऽतिबीजिका ॥ ६८ ॥
बीजात्मा बीजनिलया बीजगो बीजमालिनी ।
बीजध्यानी बीजयज्ञा बीजाढ्यो बीजसुन्दरी ॥ ६९ ॥
बीजतातो बीजमाता बीजज्ञो बीजमालिनी ।
महाबीजधरो बीजा बीजाढ्यो बीजवल्लभा ॥ ७० ॥
मेघमाली मेघमाला वनमाली हलायुधा ।
कृष्णाजिनधरो रौद्रा रुद्रो रुद्रगणप्रिया ॥ ७१ ॥
रौद्रप्रियो रौद्रकर्त्री रुद्रलोकप्रद: प्रभु: ।

विनाशी सर्वनागानां शर्वाणी सर्वसम्पदाम् ॥ ७२ ॥
नारदेश: प्रधानेशी रावणेशो रणेश्वरी ।
कृष्णेश्वर: केशवेशी कृष्णवर्णोऽतिचञ्चल: ॥ ७३ ॥
रामेश्वरो रामवेशी बाणेशो बाणपूजिता ।
भवानीशो भवानी च भवेन्द्रो भववल्लभा ॥ ७४ ॥
भवानन्दोऽतिसूक्ष्माख्या भवमूर्त्तिर्भवेश्वरी ।
भवच्छायो भवानन्दा भवभीतिहरोऽबला ॥ ७५ ॥
भाषाज्ञानी भाषमाणा महाजिह्वोऽतिवामना ।
लोभापहो लोभकर्त्री प्रलोभा लोभवर्द्धिनी ॥ ७६ ॥
मोहकारी मोहमाता मोहजालोऽमरावती ।
मोहमुद्गरदो बीजा मोहमुद्गरधारिणी ॥ ७७ ॥
महान्वितो महामुक्ता कामेश: कामिनीश्वरी ।
कामलोपकरोऽकामा सत्कामा कामनाशिनी ॥ ७८ ॥
हृन्मुखी हृन्नेत्रा पद्माभोऽम्बुजलोचना ।
पद्ममाल: पद्ममाला श्रीदेवी देवरक्षिणी ॥ ७९ ॥
असितोऽप्यसिता चैव साह्लादी नाशमातृका ।
नगेश्वर: शैलमाता नगेन्द्रेन्द्री नगात्मजा ॥ ८० ॥
नारायणेश्वर: कीर्त्ति: सत्कीर्त्ति: कीर्त्तिवर्द्धिनी ।
कृत्तिवेश: कार्त्तिकी च कलहा कलहप्रिया ॥ ८१ ॥
प्रतिष्ठेशो विशाला च निरालोको निरिन्द्रिया ।
प्रेतबीजस्वरूपश्च प्रेतालङ्कारभूषिता ॥ ८२ ॥
प्रेमग: प्रेमहन्त्री च हरीन्द्री हरलक्षणा ।
कालेश: कालिकेशानी कौलिकेशश्च काकिनी ॥ ८३ ॥
कालमञ्जीरधारी च कलमञ्जीरमोहिनी ।
करालवदना काली कैवल्यदानद: सदा ॥ ८४ ॥
कमलापालक: कुन्ती कैकेयीशसुत: कला ।

कलाननः कुलज्ञा च कुलगामी कुलाश्रया ॥ ८५ ॥
कुलधर्म्मस्थितः कौला कुलमार्गः कुलान्तरा ।
कुलजिह्वः कुलानन्दो कृष्णः कृष्णतनूद्भवा ॥ ८६ ॥
कालाननः कृष्णकेशा काकुत्स्थः काकचञ्चुका ।
कालधर्म्मी कामरूपा कालाकालप्रकाशिनी ॥ ८७ ॥
कालज्ञः कालजन्या च कालेशः कालसुन्दरी ।
खड्गहस्ता खर्पराढ्या खरगः खरखञ्जनी ॥ ८८ ॥
खरबुद्धिहरः खेला खञ्जनेशः सुखाञ्जनी ।
गीतप्रियो गायनस्था गणाधीशो गुह्यप्रिया ॥ ८९ ॥
गर्गप्रियागमप्राप्तिर्गर्गस्थो हि गभीरिणी ।
गारुडेशो हि गन्धर्व-पतीशो गार्हवाङ्किजा ॥ ९० ॥
गणगन्धर्वगोपालो गणगन्धर्वगोगता ।
गभीरनादसम्भेदो गभीरकोटिसागरा ॥ ९१ ॥
गतिस्थो गाणपत्यस्थो गगनाद्यो गवां तनुः ।
गन्धहारो गन्धमाला गन्धाढ्या गन्धनिर्गमा ॥ ९२ ॥
गन्धमोहितसर्वाङ्गी गन्धचन्दनमोहिनी ।
गन्धपुष्पधूपदीप-नैवेद्यादिप्रपूजितः ॥ ९३ ॥
चन्दनागुरुकस्तूरी-कुङ्कुमादिसुमण्डिता ।
गोकुला मधुरानन्दा पुष्पगन्धान्तरस्थितः ॥ ९४ ॥
गन्धमादनसम्भूतः पुष्पमाल्यविभूषिता ।
रत्नाद्यशेषालङ्कार-मणिमण्डितविग्रहः ॥ ९५ ॥
स्वर्णाद्यशेषालङ्कार-हारमालाविमण्डिता ।
करवीकुसुमप्रख्या रक्तलोचनपङ्कजः ॥ ९६ ॥
जवाकोटिकोटिशत-चारुलोचनपङ्कजा ।
घनकोटिसमानास्य-पङ्कजा लोलविग्रहः ॥ ९७ ॥
घण्टाडमरुयन्त्रादि-ध्वानानन्दकराम्बुजा ।

कुमारीशः काममाता मन्दिरेशः सुमन्दिरा ॥ १२४ ॥
अकालजननीनाथो विश्वात्मा सुप्रियङ्करी ।
वेदाद्यो वेदजननी वैराग्यस्थो विरागदा ॥ १२५ ॥
स्मितहास्यास्यकमलः स्मितहास्यविमोहिनी ।
मांसप्रधानभोक्ता च प्रधानमांसभक्षिणी ॥ १२६ ॥
मद्यमांसमहामुद्रा रजोरुधिरसुप्रिया ।
सुरामांसमहामीन-मुद्रामैथुनसुप्रिया ॥ १२७ ॥
कुलद्रव्यप्रियानन्दा मद्यादिकुलसिद्धिदा ।
हृत्कण्ठभ्रूसहस्रार-भेदनी भूरिभेदिनी ॥ १२८ ॥
प्रसन्नहृदयाम्भोज-प्रसन्नहृदयाम्बुजा ।
प्रसन्नवरदानाढ्यः प्रेमानन्दप्रकाशिनी ॥ १२९ ॥
प्रभावारफलोदारः परमः सूक्ष्मपूरका ।
प्रभाकररश्मिरूपः प्रथमो भानुशोभिता ॥ १३० ॥
प्रचण्डविपुलोन्मत्तः चलितेन्दुप्रभावहः ।
प्रभापटलजटिलः प्रभूतधर्म्मपूजिता ॥ १३१ ॥
सुरेन्द्रगणपूजितः सुरवरेन्द्रसंपूजिता
नरेन्द्रकुलसेविता नरपतीन्द्रसंसेविता ।
नगेन्द्रगणनायको नगपतीन्द्रदेवात्मजा
भवार्णवगतारको जलधिकर्णधारप्रिया ॥ १३२ ॥
सुरासुरकुलोद्भवः सुररिपुप्रसिद्धिस्थिता
सुरारिगणघातकः सुरगणेन्द्रसंसिद्धिदा ।
बलिच्छलनतत्परः सुरवरादिसिद्धिप्रदा
प्रियद्विजकुलार्थदः सुतधनापवर्गप्रदा ॥ १३३ ॥
शिवश्च शिवकामिनी हरो हरा च भीमः सभा
क्षितीश इषुरक्षका मदनदर्पहन्त्रादयः ।
गुणेश्वर उमावती हृदयपद्मभेदे गतिः

चपाकरललाटधृक् विकटहासविस्फारिता ॥ १३४ ॥
श्मशानतटनिष्पट: स्मरकपाटसंछेदक:
स्मरानलविमर्दनप्रियवसन्तसहायवो ।
विराजितमुखाम्बुज: कमलपत्रासहासना
भवो भवपतिप्रभा भवकविश्व भव्याभव: ॥ १३५ ॥
क्रियेश्वर इलावती तरुणगो हि तारावती
मुनीन्द्रसुखसिद्धिद: सुरमुनीन्द्रसिद्धिप्रदा ।
मुरारिहरदेहगस्त्रिभुवनस्य नाशक्रिया
हित: कनककाकिनी कनकशुद्धिरर्थप्रदा ॥ १३६ ॥
किलालकमलाकुल: कुलकलार्कमालोऽमला
सुभक्तयतिसाधक: प्रतियोगयोग्यार्चिता ।
विवेकगतमानसो विभुवरादिहस्तार्चिता
त्वमेव कुलनायक: प्रलयकालयोगच्छवि: ॥ १३७ ॥
प्रचण्डगणगो नगा भुवनदर्पहारी तथा
चराचरसहस्रग: प्रकृतरूपशक्तिस्थिता ।
स्वनामगुणपूरक: स्वगुणनामसम्पूरणी
कृपार्द्रहृदया सदा निखिललोककल्पद्रुम: ॥ १३८ ॥
इति ते कथितं नाथ ! सहस्रनाममङ्गलम् ।
अत्यद्भुतं परानन्द-रससिद्धान्तदायकम् ॥ १३९ ॥
मातृकामन्त्रघटितं सर्वसिद्धान्तसारकम् ।
सिद्धिविद्यामहोत्साहमानन्दगुणसाधनम् ॥ १४० ॥
दुर्लभं सर्वलोकेषु यामले तत् प्रकाशितम् ।
तव स्नेहरसामोद-मोहितानन्दभैरव ! ॥ १४१ ॥
कुत्रापि नापि कथितं सिद्धिहानेस्तु शङ्कया ।
भवादियोगसिद्धान्त-सिद्धये भुक्तिमुक्तये ॥ १४२ ॥
प्रेमाह्लादरसेनैव दुर्लभं तत् प्रकाशितम् ।

येन विज्ञानमात्रेण भवेत् श्रीभैरवेश्वर: ॥ १४३ ॥
एतन्नाम्न: शुभफलं वक्तुञ्च न समर्थक: ।
कोटिवर्षशतेनापि यत् फलं लभते नर: ॥
तत् फलं योगिनामेव क्षणाल्लभ्यं भवान्तरे ॥ १४४ ॥
य: पठेत् प्रातरुत्थाय दुष्टग्रहनिवारणम् ॥ १४५ ॥
ध्यात्वाऽसुरभयेनापि महाभयनिवारणम् ।
ध्यात्वा नाम जपेन्नित्यं मध्याह्ने च विशेषत: ॥ १४६ ॥
सन्ध्यायां रात्रियोगे च साधयेन्नामसाधनम् ।
योगाभ्यासे ग्रन्थिभेदे योगज्ञाननिरूपणे ॥ १४७ ॥
पठनाद् योगसिद्धि: स्याद् ग्रन्थिभेदो दिने दिने ।
योगज्ञानप्रसिद्ध: स्याद् योगी स्यादेकचित्तत: ॥ १४८ ॥
देहस्थदेहवश्याय महामोहप्रशान्तये ।
स्तम्भनाय विशल्यानां प्रत्यहं प्रपठेत् शुचि: ॥ १४९ ॥
भक्तिभावेन पाठात्तु सर्वकर्मसु सुक्षम: ।
स्तम्भयेत् परशल्यानि वारैकमात्रपाठत: ॥ १५० ॥
वारद्वयप्रपाठेन वशयेद्भुवनत्रयम् ।
वारत्रयं पठेद् यस्तु पण्डितोऽपण्डितोऽपि वा ॥ १५१ ॥
शान्तिमाप्नोति परमां विद्यां भुवनमोहिनीम् ।
प्रतिष्ठाञ्च तत: प्राप्य मोक्षे निर्वाणमाप्नुयात् ॥ १५२ ॥
विद्वेषयेदरीन् शीघ्रं चतुर्वारप्रपाठने ।
पञ्चावृत्तिप्रपाठेन शत्रुमुच्चाटयेत् क्षणात् ॥ १५३ ॥
षडावृत्त्या साधकेन्द्र: शत्रूणां नाशको भवेत् ।
आकर्षयेत् सुरद्रव्यं सप्तवारं पठेद् यदि ॥ १५४ ॥
एवं योगमतं ध्यात्वा य: पठेदतिभक्तित: ।
स भवेद् योगिनीनाथो महाकल्पद्रुमोपम: ॥ १५५ ॥
ग्रन्थिभेदे समर्थ: स्यान्मासत्रयं पठेद् यदि ।

दूरदर्शी महावीरो बलवान् पण्डितेश्वरः ॥ १५६ ॥
महाज्ञानी लोकनाथो भवत्येव न संशयः ।
मासैकेन समर्थः स्यान्निर्वाणमोक्षसिद्धिभाक् ॥ १५७ ॥
प्रपठेद् योगसिद्ध्यर्थं भावुकः परमप्रियः ।
शून्यागारे बिल्वमूले चितायां शून्यदेशके ॥ १५८ ॥
महागर्त्ते महारण्ये चैकान्तनिर्जनेऽपि वा ।
दुर्भिक्षवर्जिते देशे सर्वोपद्रववर्जिते ॥ १५९ ॥
श्मशाने प्रान्तरेऽश्वत्थ-मूले वटतरुस्थले ।
इष्टकामयगेहे च हेमकाष्ठादिनिर्मिते ॥ १६० ॥
तत्तदानन्दरूपो च महापीठस्थलेऽपि वा ।
दृढासनस्थः प्रजपेन्नाममङ्गलमद्भुतम् ॥ १६१ ॥
ध्यानधारणशुद्धाङ्गो न्यासपूजापरायणः ।
ध्यात्वा स्तौति प्रभाते यो मृत्युजेता भवेन्नरः ॥ १६२ ॥
कालकालो भवेद् योगी चामरत्वमवाप्नुयात् ।
गुरुदेवमहामन्त्र भक्तो भवति निश्चितम् ॥ १६३ ॥
तस्य शरीरे दुःखानि न भवन्ति कदाचन ।
दुष्टा ग्रहाः पलायन्ते तं दृष्ट्वा योगिनं वरम् ॥ १६४ ॥
यः पठेत् सततं मन्त्री तस्य हस्तेऽष्टसिद्धयः ।
तस्य हृत्पद्मलिङ्गस्था देवाः सिध्यन्ति चापराः ॥ १६५ ॥
युगकोटिसहस्राणि चिरायुर्योगिराड् भवेत् ।
सुकुलीनो निराकारो ब्रह्मविष्णुशिवेषु च ॥
स नित्यः कार्यसिद्धिस्थो जीवन्मुक्तिमवाप्नुयात् ॥ १६६ ॥

इति श्रीरुद्रयामले उत्तरतन्त्रे महातन्त्रोद्दीपने सिद्धमन्त्रप्रकरणे षट्चक्रभेदप्रकाशे भैरवी-भैरवसंवादे ईश्वरशक्तिकाकिनीष्टोत्तरशतनामस्तोत्रविन्यासो नाम चतुःषष्टितमः पटलः ॥ ६४ ॥

पञ्चषष्टितमः पटलः ।

आनन्दभैरव्युवाच ।—

अथ नाथ ! प्रवक्ष्येऽहं काकिनीगुरुदेवयोः ।
मन्त्रोद्धारं स्तवज्ञानं येन सिद्धो भवेद् यतिः ॥ १ ॥
एतत् स्तवनपाठेन सहस्राख्यान्तसन्धिषु ।
राजत्वं लभते सद्योऽथवा योगी च सम्पदि ॥ २ ॥
यथा जनकराजा च विषयी गुरुभक्तिमान् ।
महासिद्धो महाज्ञानी तथा भवति साधकः ॥ ३ ॥
सुरा नागा रुद्रगणाः सर्वे विद्यार्थसेवकाः ।
योगज्ञानी तथा सिद्धाः खेचरा यक्षराक्षसाः ॥ ४ ॥
मृत्युश्च क्रोधवेतालो तथा चक्रेश्वरादयः ।
एतत् शुभस्तवेन्द्रेण स्तुत्वा सर्वसुसिद्धिगाः ॥ ५ ॥

काकिनीश्वरस्तवान्तरम् ।—

पूर्णः पूर्णेन्दुदिवाननकलनकटा स्फोत्कटाद्यापहारी
नारे धाता विधाता प्रसरति न च तान् योगयोग्यान्महेन्द्रान् ।
योगी भूयान्नरोऽसौ निरवधिवरदानन्दगोप्ता सवीरो
भक्तो मृत्युञ्जयस्य प्रभुरिति भुवने पातु मे शुभदेहः ॥ ६ ॥
कामक्रोधादिहन्ता जनयति भवतः पाति पृथ्वीत्र योगी
मालाधारी प्रपायात् मम कुलसकलं सर्वदा शङ्करो वै ।
तत्क्रोडे लोकचक्रं तिलतुलतुलनासन्निभं भाति सूक्ष्मं
तत् श्रीनाथाङ्घ्रिपद्मद्वयमघहरणं भावयेदाशु कुञ्जे ॥ ७ ॥
मायामोहे विवेकी सचकितरिपुहृत्कोषविध्वंसकारी
सर्वाधीशो महेशो निखिलसुखमयो निर्गुणो निर्विकारः ।
लोकातीतोऽहि तीव्रो जय जय करुणानाथ ! दाता तपस्वी
मन्त्रोद्धारार्थगुप्तं समवति नियतं प्राणनाथं तमीडे ॥ ८ ॥

तारान्ते याऽपि गुर्वी निजहृदि कमलेऽन्ते सरस्वत्यथो वा
तस्यै नित्यं नमो मे नम इति मनुना मोहितो वाक्पतीशः ।
मन्त्रार्थे दीपनाख्यो निजविजयसखा कोटिभिर्वेष्टितो यो
बालार्कानन्दरश्मः प्रचयशतमुखः पातु मां दुःखजालात् ॥ ९ ॥
कणाकृत्या स्वरूपो कुलविमलशिखाकोटिभिः संयुतो यो
मन्त्रश्चैतन्यकर्त्ता प्रणवमथ शिवां तत् सदान्ते शिवश्च ।
ध्यात्वा माहेश्वराय नम इति जपनात् ते महेन्द्राधिपः स्यात्
कालीपुत्रः स एव त्वमभयवरदः सेवते यः स मुक्तः ॥ १० ॥
हंसः प्राणो विहन्ता त्वमखिलवरदस्त्वं निधानप्रधानः
शान्तीशस्त्वं प्रतिष्ठः प्रणमसि च सदा भद्रमाहेश्वराय ।
अन्ते उच्चैर्नमोऽन्तं मनुमिह जपति तत्पदे देव ! भृङ्ग
आनन्दाख्यो त्वमेको गुरुरिह चपलश्चापलं माञ्च पाहि ॥ ११ ॥
सृष्टिस्थित्यन्तकारो त्वमपि च करुणासागरो मुक्तिदाता
पूज्यो विद्याधरीणां त्वमसुरविजयः पार्वतीप्राणनाथः ।
तारान्तं बिन्दुयुक्तं सकलविधुयुतं मन्त्रमेकाक्षरं ते
जप्त्वा ध्यात्वा च देवीं त्रिभुवनविजयी योगिराट् भूतले स्यात् ॥ १२
सप्ताणस्थं सुसिद्धो हरवधुमधुरं चन्द्रबिन्दुस्वरूपं
जप्त्वा नित्यं विलोमं दुरितस्मृतिहरं वह्निकान्ता तदन्ते ।
एतद्रूपं सदा यो भजति मनुवरं सर्वसिद्धीश्वरो वै
हे मातः ! सो भवेऽस्मिन् विजयवरकुलानन्दमन्त्रानयुक्तः ॥ १३ ॥
उच्चाटे मोहने वाऽप्यरिवधसमये शान्तिपुष्ट्यादिकाले
तन्मन्त्रान् योजयित्वा जपति यदि सुधीः आपदाज्ञावलम्बो ।
सिद्धो षट्कर्मसारः स भवति भुवने भूतनाथप्रपन्नः
राजेन्द्रः सर्वलोके धनपतिसदृशः शम्भुनाथप्रसादात् ॥ १४ ॥
शान्तं शक्राधिरूढं विधुनयनयुतं कामवीजं त्रिशक्तिं
तस्यान्ते ओं शिवाय नम इति मिलितं यो जपेन्नाथ ! मन्त्रम् ।

त्वन्नाम्ना योजयित्वा कुलपथनिरतः साधकः किं वरेण्यः
किं तस्यासाध्यसिद्धिः प्रजपति सुमुखो योगमार्गप्रपन्नः ॥ १५ ॥
सर्वाभीतो विहारी पदगतिरहितः सर्वगामी विवासो
हस्ताभावो विनेता निरवधिवरदः सर्वरूपी विरूपो ।
मन्त्रज्ञस्थः सुमन्त्रो सकलमनुमयः संशयेऽसारहन्ता
मन्त्रो विश्वेश्वरीणां परपशुपतयेऽन्ते नमः पातु नम्रम् ॥ १६ ॥
योगी भोगी विरागी त्वमतुलविभवः सम्भवः पञ्चचूड़ो
बाणोशेषः प्रयासः शशिशकलरुचा शोभिताङ्गो ह्यनङ्गः ।
कामो मायारमेशः प्रथमदिनकरश्रेणीशोभाविलासः
सर्वां सिद्धिं प्रपायादमलकमलगः क्रोधगेयो त्रिलोकम् ॥ १७ ॥

एतत् श्रीशङ्करस्तोत्रं यः पठेत् नियतः शुचिः ।
संवत्सराद्भवेत् सिद्धिः सर्वज्ञानप्रदायिनी ॥ १८ ॥
शुचौ वाऽशुचके स्तौति भक्त्या यः साधकोत्तमः ।
स सर्वयातनामुक्तो योगी ग्रन्थिविभेदकः ॥ १९ ॥
अकस्मात् सिद्धिमाप्नोति प्रेमानन्दसुभक्तिदाम् ।
शतमष्टोत्तरञ्चास्य पुरश्चर्याविधिः स्मृतः ॥ २० ॥
न स्नानं न जपः कार्य्यो न पूजादिविधानकम् ।
केवलं स्तवपाठेनाऽनाहते सुस्थिरो भवेत् ॥ २१ ॥
चिरजीवी वीतरोगी वीतसंसारभावनः ।
पठित्वा भावयित्वा च योगभ्रष्टो न सम्भवेत् ।
अनायासे योगसिद्धिं प्राप्नोति परमां श्रियम् ॥ २२ ॥

इति श्रीरुद्रयामले उत्तरतन्त्रे महातन्त्रोद्दीपने सिद्धमन्त्रप्रकरणे
षट्चक्रभेदप्रकाशे भैरवी-भैरवसंवादे ईश्वरस्तोत्रविन्यासो
नाम पञ्चषष्टितमः पटलः ॥ ६५ ॥

षट्षष्टितमः पटलः ।

श्रीआनन्दभैरव्युवाच ।—

काकिनीश्वरकवचान्तरम् ।—

कवचं शृणु चास्यैव लोकनाथ ! शिवापते ! ।
ईश्वरस्य परं ब्रह्म निर्वाणयोगदायकम् ॥ १ ॥
कवचं दुर्लभं लोके नाथ ! सम्मोहनं परम् ।
कवचध्यानमार्गेण निर्वाणफलभाग् भवेत् ॥ २ ॥
अतुलं फलमाहात्म्यं तथापि तद्वदाम्यहम् ।
केवलं ग्रन्थिभेदाय निजदेहानुरक्षणात् ॥ ३ ॥
सर्वेषामपि योगीन्द्रो देवानां योगिनां तथा ।
तारादिसिद्धिलाभाय कामनिर्मलसिद्धये ॥ ४ ॥
प्रकाशितं महाकाल ! तव स्नेहवशादपि ।
सर्वे मन्त्राः प्रसिध्यन्ति सम्मोहकवचाश्रयाः ॥ ५ ॥
कवचस्य ऋषिर्ब्रह्मा छन्दोऽनुष्टुबुदाहृतम् ।
ईश्वरो देवता प्रोक्ता तथा शक्तिश्च काकिनी ॥ ६ ॥
कीलकं हं तथा ज्ञेयं ध्यानसाधनसिद्धये ।
हृदब्जभेदनार्थे तु विनियोगः प्रकीर्त्तितः ॥ ७ ॥

एतत्श्रीसम्मोहनकवचस्य ब्रह्मा ऋषिरनुष्टुप्छन्द ईश्वरो देवता काकिनी शक्तिः हूं कीलकं ध्यानसाधनसिद्धये हृदब्जभेदनार्थे जपे विनियोगः ।

प्रणवो मे पातु शीर्षं ललाटञ्च सदाशिवः ।
प्रसादो हृदयं पातु बाहुयुग्मं महेश्वरः ॥ ८ ॥
पृष्ठं पातु महादेव उदरं कामनाशनः ।
पार्श्वौ प्रातु कामराजो वलिः पृष्ठतलान्तरम् ॥ ९ ॥
कुक्षितूणं महावीरो ललितापतिरीश्वरः ।
मृत्युञ्जयो नीलकण्ठो लिङ्गदेशं सदाऽवतु ॥ १० ॥

लिङ्गाधो मुद्रिकां पातु पादयुग्ममुमापतिः ।
अङ्गुष्ठं पातु सततं पार्वतीप्राणवल्लभः ॥ ११ ॥
गुल्फं पातु त्र्यम्बकश्च जानुनी युवतीपतिः ।
ऊरुमूलं सदा पातु मञ्जुघोषः सनातनः ॥ १२ ॥
सीवनीं मे सदा पातु भैरवः क्रोधभैरवः ।
लिङ्गदेशोद्गमं पातु लिङ्गरूपी जगत्पतिः ॥ १३ ॥
हृदयाग्रं सदा पातु महेशः काकिनीश्वरः ।
ग्रीवां पातु वृषस्थश्च कण्ठदेशं दिगम्बरः ॥ १४ ॥
गणेशो लम्बिकां पातु नासिकां भवनाशनः ।
भ्रूमध्यं पातु योगीन्द्रो महेशः पातु मस्तकम् ॥ १५ ॥
मूर्द्धदेशं मुनीन्द्रश्च द्वादशस्थो महेश्वरः ।
द्वादशाम्भोरुहं पातु कामिनीप्राणवल्लभः ॥ १६ ॥
नाभिमूलाम्बुजं पातु महारुद्रो जगन्मयः ।
स्वाधिष्ठानाम्बुजं पातु सदा हरिहरात्मकः ॥ १७ ॥
मूलपद्मं सदा पातु ब्रह्मेन्द्रो डाकिनीश्वरः ।
कुण्डलीं सर्वदा पातु डाकिनी-योगिनीश्वरः ॥ १८ ॥
कुण्डलीं मातृकां पातु वटुकेशः शिवो हरः ।
राकिनीविग्रहं पातु वामदेवो महेश्वरः ॥ १९ ॥
पञ्चाननः सदा पातु लाकिनीवज्रविग्रहम् ।
स्वस्थानं द्वादशारञ्च वीरः पातु स्वकाकिनीम् ॥ २० ॥
वीरेन्द्रः कर्णिकां पातु द्वादशारं वृषासनः ।
षोडशारं सदा पातु क्रोधवीरः सदाशिवः ॥ २१ ॥
मां पातु वज्रनाथेशो विभवान् क्रोधभैरवः ।
षड्वक्त्रं सर्वदा पातु लाकिनी श्रीसदाशिवः ॥ २२ ॥
षोडशाम्भोरुहान्तःस्थं प्रातु धूम्राक्षपालकः ।
दिङ्नाथेशो महाकायो मां पातु परमेश्वरः ॥ २३ ॥

आकाशगङ्गाजटिलो विदलं पातु चेश्वरः ।
गङ्गाधरः सदा पातु हाकिनीपरमेश्वरः ॥ २४ ॥
हाकिनीशः शिरः पातु भ्रूपद्मं परिरक्षतु ।
दण्डपाणीश्वरः पातु मनोरूपं हिपत्रके ॥ २५ ॥
साधकेशः सदा पातु मनोन्मन्यादिवासिनम् ।
पिङ्गलाक्षः सदा पातु भयभूमौ तनुं मम ॥ २६ ॥
उन्मनो मे स्थलं पातु बोधिनीसहितं शिवः ।
सुधाघटः सदा पातु ममानन्दाधिदेवताम् ॥ २७ ॥
आनन्दभैरवः पातु गूढदेशाधिदेवताम् ।
मायामयः सदा पातु सुषुम्नानाड़िकाकलाम् ॥ २८ ॥
ईड़ाकलाधरं पातु चन्द्रशेखर ईश्वरः ।
पिङ्गलामिहिरं पातु कोटिसूर्य्यप्रभाकरः ॥ २९ ॥
कोटिकालानलस्थानं स्वस्वन्यायं सदाऽवतु ।
सुधासमुद्रो मां पातु रत्नकोटिमुनीश्वरः ॥ ३० ॥
शिवनाथः सदा पातु कुण्डलीचक्रमेव मे ।
विष्णुचक्रं महादेवः कालरात्रः कुलान्वितम् ॥ ३१ ॥
मृत्युजिता सदा पातु सहस्रारं सदा मम ।
सहस्रदलगं शम्भुं स्वयम्भूः पातु सर्वदा ॥ ३२ ॥
सर्वाङ्गं सर्वदा पातु देवः सर्वो हि सर्वदा ।
सर्वत्र सर्वदा पातु श्रीनीलकण्ठ ईश्वरः ॥ ३३ ॥
सर्ववीजस्वरूपो मे वीजमालां सदाऽवतु ।
मातृकां सर्ववीजेशो मातृकार्णं शिवो मम ॥ ३४ ॥
अहङ्कारः सदा पातु करमालां सदा मम ।
जलेऽरण्ये महाभीतौ पर्वते शून्यमण्डपे ॥ ३५ ॥
व्याघ्रभल्लूकमहिष-प्रश्वादिभयदूषिते ।
महारण्ये घोरयुद्धे गगने भूतले तले ॥ ३६ ॥

अत्युत्कटे शस्त्रघाते शत्रुचौरादिभीतिषु ।
महासिंहभये क्रूरे मत्तहस्तिभये तथा ॥ ३७ ॥
ग्रहव्याधिमहाभीतौ सर्पभीतौ च सर्वदा ।
पिशाचभूतवेताल-ब्रह्मदैत्यभयादिषु ॥ ३८ ॥
अन्नादेरपवादेषु मिथ्यावादेषु सर्वदा ।
करालकालिकानाथः प्रचण्डः प्रखरः परः ॥ ३९ ॥
उग्रः कपर्दभीदंष्ट्री कालाच्छन्नकरः कविः ।
क्रोधाच्छन्नो मदोन्मत्तो गारुड़ीशो महास्त्रभृत् ॥ ४० ॥
पञ्चाननः पञ्चरश्मिः पावनः पावमानकः ।
शिखामात्रो महामुद्रा-धारकः क्रोधभूपतिः ॥ ४१ ॥
द्रावकः पूरकः पुष्टः पोषकः पारिभाषिकः ।
एते पान्तु महारुद्राः द्वाविंशतिमहाभये ॥ ४२ ॥
एते सर्वे शक्तियुताः मुण्डमालाविभूषिताः ।
अहङ्कारेश्वराः क्रुद्धा योगिनस्तत्त्वचिन्तकाः ॥ ४३ ॥
चतुर्भुजा महावीराः खड्गखेटकधारकाः ।
कपालशङ्खमालाढ्या नानारत्नविभूषिताः ॥ ४४ ॥
किङ्किणीजालमालाढ्याः सुनूपुरविराजिताः ।
नानालङ्कारशोभाढ्याश्चन्द्रचूड़ाविभूषिताः ॥ ४५ ॥
सदानन्दयुताः श्रीदा मोक्षदाः कर्मयोगिनाम् ।
सर्वदा भगवान् पातु ईश्वराः पान्तु नित्यशः ॥ ४६ ॥
ब्रह्मा पातु मूलपद्मं श्रीविष्णुः पातु षड्दलम् ।
रुद्रः पातु दशदलं ईश्वरः पात्वनाहतम् ॥ ४७ ॥
सदाशिवः पातु नित्यं षोड़शारं सदा मम ।
परश्च द्विदलं पातु षट्शिवाः पान्तु नित्यशः ॥ ४८ ॥
अपराः पान्तु सततं मम देहं कुलेश्वराः !
पूर्णं ब्रह्म सदा पातु सर्वाङ्गं सर्वदेवताः ॥ ४९ ॥

कालरूपी सदा पातु मनोरूपी शिवो मम ।
आत्मलीनः सदा पातु ललाटं वेदवित् प्रभुः ॥ ५० ॥
वाराणसीश्वरः पातु नीलकेशो हरेश्वरः ।
कर्णदेशं सदा पातु अमरोऽर्द्धेश्वरो मम ॥ ५१ ॥
महासेनेश्वरस्तुण्डं मम पातु निरन्तरम् ।
श्रीकण्ठादिमहारुद्राः स्वाङ्गशाम्यषु मातृकाः ॥ ५२ ।
मां पातु कालरुद्रश्च सर्वाङ्गं कालसंचयः ।
अकालतारकः पातु उदरं परिपूरकः ॥ ५३ ॥
अगस्त्यादिमुनिश्रेष्ठाः पान्तु योगिन ईश्वराः ।
श्रीनाथेश्वर ईशानः पातु मे सूक्ष्मनाड़िकाः ॥ ५४ ॥
त्रिशूली पातु पूर्वस्यां दक्षिणे मृत्युनाशनः ।
पश्चिमे वारुणीमत्तो महाकालः सदाऽवतु ॥ ५५ ॥
उत्तरे चावधूतेशो भैरवः कालभैरवः ।
ईशाने पातु सर्व्वेशो वायव्यां योगिवल्लभः ॥ ५६ ॥
मरुत्कोणे दैत्यहन्ता पातु मां सततं शिवः ।
वह्निकोणे सदा पातु कालानलमुखाम्बुजः ॥ ५७ ॥
ऊर्द्धं ब्रह्मा सदा पातु अधोऽनन्तः सदाऽवतु ।
सर्वदेवः सदा पातु रक्ताङ्गेशस्त्रिलोचनः ॥ ५८ ॥
बुधः श्यामसुन्दरेशः पातु मे हृदयस्थलम् ।
सुवर्णवर्णो गुर्वीशो मम कण्ठं सदाऽवतु ॥ ५९ ॥
सिन्दूरजलदाच्छन्नादर्कशुक्रेश्वरो गणम् ।
नाभिदेशं सदा पातु शशिश्यामेश ईश्वरः ॥ ६० ॥
बाहुं पातु महावक्त्रः केवलं मुखमण्डलम् ।
केतुः पातु महाकायः सदा मे गुह्यदेशकम् ॥ ६१ ॥
इन्द्रादिदेवताः पान्तु परिवारगुणैर्युताः ।
शिरोमण्डलादिगुरूपं पान्तु वैकुण्ठवासिनः ॥ ६२

भैरवा भैरवीयुक्ताः सर्वदेहसमुद्भवाः ।
भीमदंष्ट्रा महाकायं मम पान्तु निरन्तरम् ॥ ६३ ॥
यज्ञभुक् नीलकण्ठो मे हृदयं पातु सर्वदा ।
क्रोधभूपतयः पान्तु श्रीमायामदनान्विताः ॥ ६४ ॥
इत्येतत् कवचं तारं तारकब्रह्ममङ्गलम् ।
कथितं नाथ ! यत्नेन कुत्रापि न प्रकाशितम् ॥ ६५ ॥
तव स्नेहवशाद्देव ! प्रसन्नहृदयान्वित ! ।
कृपाङ्कुरु दयानाथ तत्त्वैव कवचाद्भुतम् ॥ ६६ ॥
हिताय जगतां मोह-विनाशायामृताय च ।
पठितव्यं साधकेन्द्रैर्योगिन्द्रैरुपवन्दितम् ॥ ६७ ॥
दुर्लभं सर्वलोकेषु सुलभं तत्त्ववेदिभिः ।
असाध्यं साधयेद्देव ! पठनात् कवचस्य च ॥ ६८ ॥
धारणात् पूजनात् साक्षात् सर्वाभीष्टफलं लभेत् ।
काकचञ्चुपुटं कृत्वा सप्तधा पञ्चधापि वा ॥ ६९ ॥
कवचं प्रपठेद्विद्वान् गूढ़सिद्धिनिबन्धनात् ।
काकिनीश्वरसंयोगं स्तोत्रञ्च कवचान्वितम् ॥ ७० ॥
ईश्वराङ्गं विभाव्यैव कल्पवृक्षसमो भवेत् ।
एतत्कवचपाठेन देवत्वं लभते ध्रुवम् ॥ ७१ ॥
आरोग्यं परमं ज्ञानं मोहनं जगतां वशम् ।
स्तम्भयेत् परसैन्यानि पठेद्वारत्रयं यदि ॥ ७२ ॥
शान्तिमाप्नोति शीघ्रं सः षट्चक्रधारणक्षमः ।
एतत्सम्मोहनाख्यस्य कवचस्य प्रपाठतः ॥ ७३ ॥
वाणी वश्या स्थिरा लक्ष्मीः सर्वैश्वर्यसमन्वितः ।
आरोग्यं लभते पश्चात् निःसङ्गो विहरेत् शिवः ॥
सदाशिवे मनो याति सिद्धमन्त्रो न संशयः ॥ ७४ ॥
चतुर्वर्गं लभेत् सद्यो ब्रह्मज्ञानी सदाशिवः ।

सर्वभूतसमः शान्तः परमानन्दचिन्मयः ॥
भवेत् लोके न सन्देहो मानवोऽस्य प्रसादतः ॥ ७५ ॥

इति श्रीरुद्रयामले उत्तरतन्त्रे महातन्त्रोद्दीपने सिद्धमन्त्रप्रकरणे
षट्चक्रभेदप्रकाशे भैरव-भैरवीसंवादे सम्मोहनकवचं नाम
षट्षष्टितमः पटलः ॥ ६६ ॥

समाप्तोऽयं ग्रन्थः ।

भूमिका

—:०:—

इस संसार चक्र में घटीयंत्र के भांति निरन्तर भ्रम
करते हुए प्राणि समुदाय अपने २ कर्म्मों के अनुसार उ
अधम योनियों में चक्र लगाते हुए कहीं भी नित्य सुख वि
आत्मज्ञान के नहीं पाते वह आत्मज्ञान अन्तःकरण शुद्धि के वि
कदापि नहीं हो सक्ता और अन्तःकरण की शुद्धि विना अ
इष्टदेव की प्रसन्नता के विना नहीं हो सक्ती और वह प्रसन्
विना कर्म्मानुष्ठान के नहीं प्राप्त हो सक्ती इससे धर्म
मुख्य ज्ञान का साधन है। यही सिद्ध हुआ वह कर्म का
मानसिक और वाचिक भेद से ३ प्रकार का है उनमें वा
ही कर्म सुगम और कलियुग में प्रत्येक प्राणियों को साध
यह विचार कर पूज्य प्रातःस्मरणीय श्री महन्त बालकपुरीज
निरन्तर इन स्तोत्रों का पाठ कर वाचिक कर्म्म द्वारा अपने
की सिद्ध किया इन्हीं सब नित्य पठित स्तोत्रों को संग्रह कर
उनके स्मरणार्थ एवं धार्मिक जनों के उपदेशार्थ यह स्तोत्र
प्रकाशित करता हूँ कि जिससे कि मेरे लक्ष्य की पूर्ति होवे।

मकर संक्रान्ति (कुम्भ)
सं० १९८६

स्वामि बलदेवपुरी,
महानिर्वाणी अखाड़ा—प्रय

श्री कपिलो विजयतेतराम्

आसोच्छ्रमिद्द यतीन्द्रः सकलजननुतो नैष्ठिक ब्रह्मचारी
निर्वाणाम्नायनेताहित जन नृहरिर्नीति निष्णात चारी।
गङ्गाम्भः क्षालितान्तः प्रतिफलित शिवानन्दभूर्ति र्मनीषी
योऽन्तद्विड्वर्ग गर्व वितथयितुमना स्तोत्र सारान पाठीत् ॥१॥

विक्रान्ता वाञ्जनेयः परदल दलने भार्गवो भीमसेन
संधायां धर्मसूनुर्मितवदन विधौ संयमे शूलपाणिः।
दाने दक्षो विवेके सुरगुरु रथ वाक् पाटवे याज्ञयवल्क्यो
गम्भीर ध्वानसिंहस्तराणिरिवपुरी वालकः साधु गोष्ठ्याम् ॥१॥

षडष्टाङ्क क्षोणी मित शरदिवै विक्रमयतेः
सितेशुक्रे राधे प्रतिपदि दिवं बालकपुरी।
सदैवादात्मीयं वपुरिद मयास्येह गतवान्
समर्प्यस्वं कर्माखिल मतिलघौ यत्र च मयि ॥३॥

बलदेवपुरी सोऽहं दासस्तस्य महात्मनः ॥
प्रकाशयामि तस्यैव मतान्स्तोत्र गणान् वहून् ॥४॥

विषय-सूची

—:o:—

विषय

विषय — पृ०

॥ श्रीगणेशायनमः ॥

श्रीसरस्वत्यैनमः

श्रीजगन्नाथो विजयते

श्रीदशनाम सन्यासी गुरु परम्परा

—:०:—

श्रीमज्जगद्गुरु आदि शङ्कराचार्य का संक्षेप जीवन वृतान्त ।

युधिष्ठिर शक २६३१ वैशाख शुक्ल ५ मी के रोज़ जगद्गु श्रीमच्छङ्कराचार्य भाष्यकार भगवान् का जन्म भया। ये युधि शक ३०५० वर्ष तक चला है। और पश्चात् विक्रमका स चलने लगा है। सो अद्यावधि चल रहा है। अभी विक्रम स १९६१ चलता है, सो ३०५० में से २६३१ बाद होते ४ रहा इनमें विक्रम संवत् १९६१ मिलाने से २३८० होता है।

युधिष्ठिर शके २६३६ चैत्र शुक्ल ९ मी के रोज़ ५ व वर्ष की वय में उपनयन संस्कार (यज्ञोपवीत धारण) भय शके २६३९ की सालपें ८ आठ वर्ष की वय में शङ्कराच महाराज ने सन्यास ग्रहण किया।

युधिष्ठिर शक २६४० फाल्गुन शुक्ल २ द्वितीया से त शक २६४६ जेष्ठ कृष्ण पक्ष ३० अमावास्या तक गुरु गोवि पादाचार्य का उपदेश, ब्रह्मसूत्र का कर्ता बादरायणाचार्य व्य जी की साथ ब्रह्मविद्या का श्री काशी जी में किया हुवा प्रच

र सनंदन जो पीछे से पद्मपादाचार्य भये इनका मिलना भया
शके २६४७ मार्गशीर्ष (अगहन) कृष्ण पक्ष ३ तृतिया के
१६ वर्ष की वय में दिग्विजय करने के वास्ते कर्म काण्ड
पक्षकार श्री मण्डनमिश्र जो ब्रह्मा का अवतार कहलाता है
के साथ का सम्वाद की शुरुआत भई तथा मण्डनमिश्र की
उभयभारती जो सरस्वती का अवतार कहेलाती है इनको
वाद में मध्यस्थ रखी गई। शके २६४८ चैत्र शुक्ल ४ थी
रोज़ मण्डनमिश्र की हार भयी और शङ्कर भगवान की जीत
ी। साडे तीन मास तक शास्त्रार्थ मण्डनमिश्र की साथ चला ;
वर मण्डनमिश्र का पराजय और शंकराचार्य भगवान् का जय
ा। शके २६४८ चैत्र शुक्ल ६ षष्ठी के रोज़ मण्डनमिश्र की
उभयभारती जो सरस्वती थी इन की साथ शास्त्रार्थ भया
र कामकला प्रसङ्ग पर शास्त्रार्थ सरस्वती ने चलाया। शके
४८ चैत्र कृष्ण पक्ष ८ अष्टमी को कामकला के निमित्त
रक राजा के शरीर में प्रवेश किया। शके २६४८ शुक्ल पक्ष
त्रयोदशी के रोज पुनः अपने आप के शरीर में प्रवेश
ा। अमरक राजा के शरीर में ६ छ मास और २० दिवस
था और सब कामकला जान लिया। शके २६४८
र्तिक कृष्ण पक्ष १ प्रतिपदा के रोज उभयभारती जो सर-
ी तीन का पराजय भया और शङ्कर भगवान का जय भया।
२६४८ कार्तिक कृष्ण पक्ष १ प्रतिपदा के रोज उभयभारती
सरस्वती सो आपको पति मण्डनमिश्र हारने से संन्यासी
था तथा आपकी हार होने से त्यहां तक सरस्वती को शाप
सें मनुष्य देह में रहने का था सो शाप मुक्त होने सें
के स्थान में जाने लगी तब श्री शङ्कराचार्य भगवान्

ने चिन्तामणि मन्त्र का बल से द्वारका में आया हुवा ब्रह्म
में देव पथ के रस्ते से सरस्वती को रोक लिया, जाने न दि
और शके २६४८ कार्तिक कृष्ण पक्ष ५ मी के रोज त्यहां द्वा
में सरस्वती का स्थापन किया। तब से ये सारदामठ कहेल
है। शके २६४८ कार्तिक कृष्ण पक्ष १३ त्रयोदशी सें
शके २६४८ माघ शुक्ल १० दशमी तक शारदामठ की रच
बौद्धौं का पराजय, रुद्रमाला के रूप में भगवदालय मन्दिर
बनाना श्री कृष्ण की प्राण प्रतिष्ठा, सिद्धेश्वर का मन्दिर
रचना और भद्रकाली यन्त्र का उद्धार किया। शके २६
फाल्गुन शुक्ल ९ नवमी के रोज वैधव्यता का डर सें सात
पैकी एक कला को मण्डन ने सन्यास लिया तिन सें पि
छोड के फिर सें (पुनः) ब्रह्मलोक में जाने के लिये सर
ने प्रयत्न किया किन्तु सरस्वती को पुनः एहि मन्त्र के बल
(चिन्तामणिमन्त्र का बल सें) म्हैसूर संस्थान में आया
भृङ्गवेर पुरी पिछा लौटा के (पिछालाय के) त्यहां भृङ्गेरी
की स्थापना कर के भृङ्गेरी मठ में सरस्वती की प्रतिष्ठा कि
शके २६४९ चैत्र शुक्ल ९ मी के रोज सन्यास ले के सुरेश्
चार्य नाम धारण कर के (योग पट्ट धारण करके) गुरु शङ्क
चार्य की पास रहा। युधिष्ठिर शकाब्द २६४९ मार्गशीर्ष
१० मी के दिवस सुधन्वा राजा को शिष्य बनाया (जगद्
शङ्कराचार्य से सुधन्वा राजा ने शिष्यत्व धारण किया
शकाब्द २६४९ माघ वदि ७ सप्तमी के रोज सुरेश्वराचार्य
शारदापीठ का अध्यक्ष बनाया।

युधिष्ठराब्द २६५० वैशाख शुदि ३ तृतीया को दिग्वि
की शुरुआत की। युधिष्ठिराब्द २६५३ श्रावण शुक्ल ७ सप

रोज तोटकाचार्य का आगमन भया। शकाब्द २६५४
ान शुदि ११ के रोज हस्तामलक का आगमन भया। युधि-
शक २६५४ पौष शुक्ल १५ पूर्णिमा के रोज हस्तामल को
ी मठ का और तोटक को ज्योतिर्मठ का अध्यक्ष बनाया।
ब्द २६५५ वैशाख शुक्ल १० दशमी को दिग्विजय करने के
ा में श्री पुरुषोतम क्षेत्र जगन्नाथपुरी में ईश्वर की काष्ठ
ा की प्रतिष्ठा किया और यह स्थल की मर्यादा करके त्यहां
ाथ पुरी गोवर्द्धन मठका अधिपति तरीके श्री पद्मपादाचार्य
नन्दनाचार्य) भगवान की योजना कीयी। (अधिपति
या)। युधिष्ठिर शक २६५५ भाद्रपद शुक्ल १५ पूर्णिमा सें
क २६६२ पौष वदि ३०) अमावस्या तक, सात वर्ष ४
१५ दिवसों पर्यंत दिग्विजय करके बौद्धों तथा कपालिकों
दि सर्व मिलके ८९ नेवाशी पृथक् पृथक् भिन्न भिन्न मत
ों का पराजय कर दिया तथा योग की महत्ता की प्रसिद्धि
ी। शके २६६३ कार्तिक शुक्ल १५ पूर्णिमा के रोज श्री
श्वर में सें कैलास प्रयाण किया; ३२ वर्ष की वय में
ा कैलास धाम में प्राप्त भया।

जगद्गुरु श्रीमच्छङ्कराचार्य भाष्यकार भगवान् ने धर्म
के लिए भारतखण्ड में चार दिशा में चार मठ स्थापन
क अपना मुख्य चार शिष्यों को चार मठ का अधिकारी
या और दशनामी संन्यासी बनाया सो इस प्रकार का है।

तीर्थाश्रम बनारण्य गिरि पर्वत सागराः।
सरस्वती भारती च पुरी नमानि वैदश॥

तीर्थ, आश्रम, वन, आरण्य, गिरि, पर्वत, सागर, सरस्वतो,
ी, और पुरी ये दशनामी सन्यासी हैं।

इस रीति से चार मठ, चार आचार्य, और दशनामी
बनवा के पश्चात् मठाम्नाय आदि बनाया है।

संकष्ट मोचन स्तोत्र।

नारदउवाच—प्रणम्म शिरसा देवं गौरी पुत्रं विनायकम्। भ
संस्मरेत्रित्य मायुष्कामार्थ सिद्धये॥१॥ प्रथमंवक्र तुण्डंचए
द्वितीयकम्। तृतीयं कृष्णपिंगाक्षं गजवक्त्रं चतुर्थकम्॥२॥ लम्
पञ्चमं च षष्ठंविकट मेव च। सप्तमं विघ्नराजं च धू
तथाष्टमम्॥३॥ नवमं भालचंद्रं च दशमं तु विनायकम्। एव
गणपतिं द्वादशंतुगजाननम्॥४॥ द्वादशैतानिनामानि त्रिसंध्
पठेन्नरः। न च विघ्नभयं तस्य सर्व सिद्धि करं परम्
विद्यार्थी लभते विद्यांधनार्थी लभतेधनम् पुत्रार्थी लभते पुत्र
क्षार्थी लभतेगतिम्॥६॥ जपेद्गणपति स्तोत्रम् षडभिर्मासै
लभेत्॥ संवत्सरेण सिद्धिं च लभतेनात्रसंशयः॥७॥ अ
ब्राह्मणानां च लिखित्वा यः समर्पयेत्। तस्य विद्या भवे
गणेशस्य प्रसादतः॥८॥ इतिश्री नारदपुराणेसंकष्ट नाशनं
गणेशस्तोत्रंसंपूर्णम्॥

अथ श्री गणपतिजी की आरती प्रारम्भः।

श्री गणेशायनमः—

जय २ श्री गणराज विद्या सुख दाता गण स
सुख दाता धन्य तुम्हारेदर्शन धन्य तुम्हारी महिमा
मन रहिता—जय २ श्री गणराज॥१॥ रिद्धि सिद्धि के

के बैरीगंण २ संकट के बैरी–विघ्न विनाशन मूर्ति २–
ा अधिकारी–जय जय श्री० ॥२॥ एके हाथन लड्डू दूजे
गा गण दूजे० २ तीजे हाथ में फरसा २ चौथे वरदाता जय
ी० ॥३॥ उत्तम दर्शन तुम्हरे गज विशाल मूर्ति गण गज०
ुम चंदन चरिचित २ पुष्पं अधिकारी–जय २ श्री० ॥४॥
 सूर्य प्रकाश करे गण ऐसी छवि तुम्हरी गण ऐसी० २
ाजत मस्तक २ भाले शुभकारी–जय २ श्री ॥५॥ हाँथ लिये
ड्डू अच्छो मुखगज को गण अच्छो०२ दंत विशाल विरा-
 सुत गौरी हर को जय २ श्री० ॥६॥ ऐसे हो महराजा
 अति भाओ गण मोको० २ गोकुल में यदुनन्दन
 दिन पढ़ गावो जय २ श्री गण० ॥७॥ जो गणपति
 आरति निसदिन पढ़ गावै गण सब युग पढ़ गावै भजत
ान्द स्वामी जपत हराहर स्वामि इच्छा फल पावै–जय २
॥८॥ इति गणपति जी की आरती सामाप्तः :–

श्री मेदिनी अष्टक ।

श्रीगणेशायनमः

मेदिनीदेविवसुंधरास्याद्वसुधादेवि वा सुखी ब्रह्मवचसः पित्रृणां॥
ा क्षुर्मनः देविहिरण्यगर्भिणी ॥ देवी प्रसोदरी सदनेसत्या-
ीदा ॥ समुद्रवतिसावित्री ॥ त्वनो देवि मत्यंगी महो
॥ महोद्यतिष्टु ॥ शृङ्गेशृङ्गे ॥ यज्ञेयज्ञे ॥ विभीषणी इंद्र
यापिनी ॥ सरसिजइहा ॥ वायुमती जलशयनी स्वयंधाराया
 परिमेदिनी ॥ सोपरिधतं गाया ॥ विष्णुपत्नीं महींदेवीं
माधवप्रियां ॥ लक्ष्मींप्रिये सखींदेवीं नमाम्यच्युतवल्लभम् ॥

ॐ धनुर्धराय विद्महे सर्व सिद्धिं च धीमहीतन्नोधरा: प्रचोदय
इक्षुशालि यवसस्य फलाढ्यै ॥ पारिजाततरु शोभित
स्वर्णरत्नमणिमंडपमध्ये ॥ चिंन्तयेत्सकल लोक धरित्रीं ॥
विचित्रांशकरत्नभूषितां चतुर्भुजां तुंङ्गपयोधरान्वितांम् ॥ इंदीवर
वशलिमजिरीं सुखंदधानां शरणं भजाम्यहं ॥ विष्णुशक्तिस
शंखवर्णस्तु मेदिनी ॥ अनेक रत्न संछन्नभूमिदेवि नमोस्तु
इति भूसुक्तः ॥ शुभं भवतु ॥

पंचदेव प्रभाती ।

—:o:—

श्री गणेशस्मरणम् ।

प्रातः स्मरामि गणनाथमनाथबन्धुं सिंदूरपूर परिशोभित
युग्मम् ॥ उद्दण्डविघ्नपरिखण्डनचण्डदण्ड माखण्डलादिसुरनायक
वन्द्यम् ॥ १ ॥ प्रातर्नमामिचतुराननवन्द्यमान मिच्छानुकूलमखि
वरंदधानम् ॥ तंतुन्दिलं द्विरसनं प्रिययज्ञसूत्रं पुत्रं विलास
शिवयो:शिवाय ॥ २ ॥ प्रातर्भजाम्यभयदं खलुभक्त शोक द
लंगणविभुंवरकुञ्जरास्यम् ॥ अज्ञानकानन विनाशनहव्यवाह मु
वर्धन महंसुतमीश्वरस्य ॥ श्लोकत्रय मिदं पुण्यं सदासा
दायकं प्रातरुन्थ य सततं यः पठेत्प्रयतः पुमान् ॥ ४ ॥

—:o:—

अथ शिवस्मरणम् ।

प्रातः स्मरामि भवभीतिहरंसुरेशं गङ्गाधरं वृषभवाहनमम्बिके
खट्वाङ्गशूलवरदाभयहस्तमीशं संसाररोगहरमौषधमद्वितीयम् ॥

मामि गिरिशं गिरिजार्धदेहं सर्गस्थितिप्रलयकारणमादिदेवम् ।
श्वरं विजितविश्वमनोभिरामं संसाररोगहरमौषधमद्विती-
॥ २ ॥ प्रातर्भजामिशिवमेक मनन्तमाद्यं वेदान्तवेद्यमनघं
महान्तम् ॥ नामादिभेदरहितं षड्भावशून्यं संसाररोगहरमौष-
द्वितीयम् ॥ ३ ॥ प्रातः समुत्थाय शिवंविचिन्त्य श्लोकत्रयंयेनु-
पठन्ति तेदुःखजालं वहुजन्मसंचितं हित्वा पदंयान्ति तदेव
: ॥ ४ ॥

—:o:—

अथ विष्णुस्मरणम् ।

प्रातः स्मरामि भवभीतिमहार्तिशान्त्यै नारायणं गरुड वाहनमब्ज
। ग्राहाभिभूतवरवारणमुक्तिहेतुं चक्रायुधं तरुणवारिजपत्र-
॥ १ ॥ प्रातर्नमामि मनसावचसाचमूर्ध्ना पादारविन्दयुगलं
प्रपंसः ॥ नारायणस्यनरकार्णवतारणस्य पारायणप्रवणविप्र-
णस्य ॥ २ ॥ प्रातर्भजामि भजतामभयंकरंतं प्राक्सर्वजन्म-
पभयापहत्यै । योग्राहवक्त्रपतितांघ्रि गजेन्द्रघोर शाकप्रनाशन-
त शङ्खचक्रः ॥ ३ ॥ श्लोकत्रयमिदंपुण्यं प्रातः काले पठेत्तुयः ॥
य गुरुस्तस्मै दद्यादात्मपदं हरिः ॥ ४ ॥

—:o:—

अथ सूर्यस्मरणम् ।

तः स्मरामिखलुतत्सवितुर्वरेण्यं रूपंहिमण्डलमृचोथ तनुर्यजूंषि ।
नियस्यकिरणाः प्रभवादिहेतुं ब्रह्माहरात्मकमलक्ष्यमचिन्त्य-
॥ १ ॥ प्रातर्नमामितरणिं तनुवाङ्मनोभिर्ब्रह्मेन्द्र पूर्वक
र्चितश्च । वृष्टिप्रमोचनविनिग्रह हेतु भूतं त्रैलोक्यपालनकरं

त्रिगुणात्मकश्च ॥ २ ॥ प्रातर्भजामिसवितारमनन्तशक्तिं पा
शत्रुभयरोग हरंपरंच । तं सर्वलोककलनात्मक कालमूर्तिं गो
बन्धनविमोचनमादिदेवम् ॥ ३ ॥ श्लोकत्रयमिदं भानोः प्रातः
पठेत्तुयः । सर्वव्याधि विनिर्मुक्तः परंसुखमवाप्नुयात् ॥ ४ ॥

—:o:—

अथ देवीस्मरणम् ।

प्रातः स्मरामि शरददिन्दु करोज्वलाभां समद्म वस्त्र कर कु
हार भूषाम् । दिव्या युधोर्जित सुनाल सहस्र हस्तांरक्तोत्प
चरणां भवतीं परेषाम् ॥ १ ॥ प्रातर्नमामि महिषासुर चण्ड
शुम्भासुर प्रमुख दैत्यविनाशदक्षाम् । ब्रह्मेन्द्ररुद्रमुनिमोहन
लीलां चण्डीं समस्त सुरमूर्तिमनेकरूपाम् ॥ २ ॥ प्रातर्भ
भजतामभिलाषदात्रीं धात्रीं समस्त जगतां दुरितापहन्त्र
संसारबन्धन विमोचन हेतु भूतां मायांपरां समधिगम्य
विष्णोः ॥ ३ ॥ श्लोकत्रयमिदं देव्याश्चण्डिकाया पठेन्नरः । सव
मानवाप्नोति विष्णुलोके महीयते ॥ ४ ॥

—:o:—

अथ देवर्षिस्मरणम् ।

ब्रह्मा मुरारिस्त्रिपुरान्तकारी भानुःशशी भूमिसुतो बुधश्च ॥
शुक्रः शनिराहुकेतवः कुर्वन्तु सर्वेमम सुप्रभातम् ॥ १ ॥ भृगुर्व
क्रतुरङ्गिराश्च मनुः पुलस्त्यः पुलहश्च गौतमः ॥ रैभ्योमरीचिश्च्य
दक्षः कुर्वन्तु स० ॥ २ ॥ सनत्कुमारः सनकः सनन्दनः सना
प्यासुरि पिङ्गलौच ॥ सप्तस्वराः सप्तरसातलानि कुर्वन्तु स० ॥
सप्तार्णवाः सप्त कुलाचलाश्च सप्तर्ष यो द्वीपवनानि सप्त ॥ भू

भुवनानिसप्त कुर्वन्तु स० ॥ ४ ॥ पृथ्वी स गन्धा सरसास्त-
स्पर्शी चवायुर्ज्वलनश्चतेजः ॥ नभः सशब्दंमहतां सहैव
तु स० ॥ ५ ॥ इत्थं प्रभातेपरमं पवित्रं पठेत्स्मरेद्वा श्रुणुयाच्च-
॥ दुःस्वप्ननाशस्त्विहसुप्रभातं भवेच्च नित्यं भगवत्प्रसादात् ॥६॥
श्लोको नलोराजा पुण्यश्लोको जनार्दनः पुण्यश्लोकाच वैदेही
श्लोको युधिष्ठिरः ॥ ७ ॥ अश्वत्थामा बलिर्व्यासो हनुमांश्च
षणः ॥ कृपः परशुरामश्च सप्तते चिरजीविनः ॥ ८ ॥ सप्तै-
स्मरेन्नित्यं मार्कण्डेयं तथाष्टमम् ॥ जीवेद्वर्षशतं सोपि सर्वव्याधि
र्जितः ॥ ९ ॥ अहल्या द्रौपदी सीता तारा मन्दोदरी तथा
न्या स्मरेन्नित्यं महापातक नाशनम् ॥ १० ॥

—:o:—

अथ शिवजी के आर्ति प्रारम्भ ।

हरी ओं जयदेव २ ॥ जय शिव ओंकारा ॥ हर भज ओंकारा ॥
विष्णु सदा शिव अर्धंगिगौरी ॥ ॐ हर हर हर
व ॥१॥ एकनन चतुरानन पंचानन राजेशिव पंचानन २ ॥
न गरुडासन ॥२॥ वृष वाहन साजे ओं हर हर हर
व ॥२॥ दो भुजचार चतुरभुज दस भुजत्वम्
शिव २ तीनो रूपनिरखता त्रिभुवन जग मोहे
र हर हर महादेव ॥३॥ अक्ष माला बन माला रुंड माला
शिव २ त्रिपुरारि हे मुरारि कर कमला धारि ॥ ॐ हर
र महादेव ॥४॥ श्वेतांबर पितांवर बाघांबर अंगे शिव २
दिक प्रभुतादिक भुतादिक संगे ॐ हर हर हर
व ॥५॥ करमध्ये मंडल चक्र त्रिशुल धारता शिव चक्र
धरता ॥ युग करता युग भरता युग पालन करता ॥
हर हर महादेव ॥६॥ लक्ष्मी और सावित्रि पारवति संगे

शिव २ ॥ अरधंगी गायत्री शिव गौरि संगे ॥ ॐ हर हर
महादेव ॥७॥ काशिमे विश्वनाथ विराजे नंदा ब्रह्मचारि
शिव २ ॥ नित उठ भोग लगावे महिमा अतिभारि ॥ ॐ हर
हर महादेव ॥ ८ त्रिगुणा नंदकी आरति निसदिन पठगा
शिव २ ॥ सब युग गावे भणत शिवनंद स्वामी इच्छा फल पा
ॐ हर हर हर महादेव ॥९॥ इति श्री ओंकार आरति समाप्तम्

अथ श्री गंगाधर की आरती ।

श्रीगणेशायनमः

हरि ॐ—जय गङ्गाधर हर शिव जय गिरजाधीश
जय गौरीनाथ । त्वं मां पालय नित्यं त्वं मां पालय श
कृपया जगदीश ॥ ॐ हर हर हर महादेव । कैलाशे गिरिशि
कल्पद्रुमविपिनेशिव कल्पद्रुमविपिने, गुञ्जति मधुकर पुञ्जे २ कुञ्ज
गहने । कोकिल गुजति खेलति हंसावलि ललिता-हर हंसा
ललिता, रचयति कलाकलापं २ नृत्यति मुद सहिता ॐ हर हर
महादेव ॥१॥ तस्मिल्लँलितसुदेशे शाला मणिरचिता शिव श
मणिरचिता, तन्मध्ये हर निकटे २ गौरी मुदसहिता । क्रीडां
यति भूषां रञ्जित निजमीशं हर रञ्जित तनिजमीशं इन्द्रादिक
सेवित ब्रह्मादिक सुरसेवित प्रणमति तेशीर्षम् ॥ ॐ हर हर
महादेव ॥२॥ विवुधनधूर्वहु नृत्यति हृदये मुद सहिता शिव
मुदसहिता, किन्नर गायन कुरते २ सप्तस्वर सहिता । धिन
थै थै धिनकत मृदङ्ग वादयते हर मृदङ्ग वादयते, कण २ ललि
वेणु २ मधुरं नादयते ॥ ॐ हर हर हर महादेव ॥३॥ रुण
चरणे रचयति नूपुरमुज्ज्वलितं शिव नूपुरमुज्ज्वलितं, चक्र

ति २ कुरूते तान्धिकताम् ॥ तां २ लुप चुप तालं नादयते हर
नादयते अंघुष्टांगुलिनादं २ लाक्षक तांगुरूते ॥ ॐ हर० ॥४॥
युति गौरं पञ्चाननसहितं शिव पञ्चाननसहितं त्रिनयनशशिधर
२ बिषधर कंठयुतं । सुन्दर जटाकलापं पावकयुत भालं हर
युत भाल, डमरू त्रिशुल पिनाकं २ कर धृत नृक पालम् ॥
र० ॥५॥ शंङ्खनिनादं कृत्वा झल्लरिनादयते शिव झल्लरिनादयते,
जयते ब्रह्मा २ वेद ऋचां पठते । इति मृदुल चरणसरोजं
कमले धृत्वा हर हृदि कमले धृत्वा, अवलोकयति महेशं-शिव
यति महेशुं ईशं अभिनत्वा ॥ ॐ हर० ॥६॥ रुण्डै रचयति
पन्नगमुपवीतं शिव पन्नगमुपवीतम् वाम विभागे गिरिजा २
अति ललितम् । सुन्दर सकल शरीरे मनसिज कृत भस्मा
म् हर भस्मा भरणम्, इति वृषभध्वजरूपं हर शिवशंकर रूपं,
य हरणम् ॥ ॐ हर० ॥७॥ ध्यानंआरति समये हृदये इति-
-शिव हृदये इतिकृत्वा, रामंत्रिजटानाथं २ ईशं अभिनत्वा ।
त मेवं प्रतिदिन पठनं यः कुरूते हर पठनं यः कुरूते, शिव
ज्यं गच्छति २ भक्त्या यः शृणुते ॥ ॐ हर हर हर महादेव ॥८॥
कर्पूर गौरं करुणावतारं संसार सारं भुजगेंद्रं हारं-सदावसंतं
रविन्दे भवं भवानी सहितं नमामी ॥१॥ नागेन्द्रहाराय त्रिलो-
य, भस्माङ्गरागाय-महेश्वराय-नित्याय शुद्धाय दिगम्बराय-
नकाराय नमः शिवाय ॥२॥ शिव हर शंकरी गौरीशं वन्दे
रमीशं । रुद्रं पशुपतिमीशानं कलये काशी पुरनाथम् ॥३॥
ॐ—यं ब्रह्मावरुणेन्द्र रुद्रमरूतः स्तुन्वन्ति दिव्यैस्तवैर्वेदैः साङ्ग-
मोपनिषदैर्गायन्तियं सामरगाः । ध्यानावस्थित तद्गतेन
पश्यन्ति यं योगिनो, यस्यान्तं न विदुः सुरासुरगणा देवाय-
नमः ॥४॥ सत्यं हेतु विवर्जितं श्रुतिगिरामाद्यं जगत्कारणं-

व्याप्तस्थावर जङ्गमं निरूपमं चैतन्य मन्तर्गतम्। आत्मानन्द वि
मानपुषं कालान्तकम् सच्चितम् नित्यंतं त्रिगुणालयं श्रुति
पश्यन्ति रुद्धेन्द्रियाः ॥५॥ योगाल्लब्धपदाम्बुजहि रुचिरं हेम
नित्यशः, कंठस्थानगकौस्तुभं मुनिवरं सौन्दर्यशोभाकरम् । अ
म्भोजविकाश-वासितजनं कालान्तकं दुःखहम्, त्वांदत्तं पर
भवगतं वन्दे परं दैवतम् ॥६॥ व्याधस्याचरणं ध्रुवस्य च
विद्यागजेन्द्रस्यका, का जातिर्विदुरस्य यादवपते रुग्रस्यकिं पौ
कुब्जायाः कमनीयरुपुमधिकं किंतत् सुदाम्नोधनम् । भक्त्या तु
केवलं नच गुणैर्भक्तिप्रियो माधवः ॥७॥ ब्रह्मानन्दं परम
केवलं ज्ञान मूर्तिम्, द्वन्द्वातीतं गगन सदृशं तत्त्व मस्यादि लक्ष
एकंनित्यं विमल मचलं सर्वधी साक्षिभूतम्, भावातीतं त्रि
रहितं सद्गुरु त्वं नमामि ॥८॥ शान्ताकारं भुजगशयनं प
सुरेशं, विश्वाधारं गगनसदृशं मेघवर्णं शुभाङ्गम् । लक्ष्मी
कमलनयनंयोगिभिर्ध्यानगम्यम्, वन्दे विष्णु भव भयहरणम्
लोकैक नाथम् ॥९॥ ॐ नमोऽस्त्वनन्ताय सहस्रमूर्तये, स
पादाक्षिशिरोरूबाहवे । सहस्रनाम्ने पुरुषाय शाश्वते, सहस्र
युगधारिणे नमः ॥१०॥ नमः कमलनाभाय, नमस्ते जल शा
नमस्ते केशवानन्त, वासुदेव नमोऽस्तुते ॥११॥ वासनाद्व वासुदे
वासितं भुवनत्रयम् । सर्व भूतनिवासोऽसि, वासुदेव नमोऽस्तुते ।
नमो ब्रह्मण्यदेवाय, गो ब्रह्मणहिताय च । जगद्धिताप कृष
गोविन्दाय नमोनमः ॥१३॥ आकाशात् पतितं तोयं, यथा ग
सागरम् । सर्वदेव नमस्कारः, केशवंप्रतिगच्छति ॥१४॥
क्लेशनाशाय, दुःखनाशाय माधवः । हरिश्चपाप नाशाय, गो
मोक्षदायकः ॥१५॥ अन्यथा शरणम् नास्ति, त्वमेव शरणं
तस्मात् कारुण्य भावेन, रक्ष २ परमेश्वर ॥१६॥ नगुरे

धिकं, २ ॥१७॥ इदमेव शिवम् २ ।, इदमेव शिवम् २ ॥१८॥ शासनतः २ । शिव शासनतः २ ॥१९॥ ममशासनतो, २ । सनतो २ ॥२०॥ नाना सुगंध पुष्पाणि, यथा कालोद्ध च । पुष्पाञ्जलिं मयादत्तं, ग्रहण परमेश्वर ॥२१॥ "पुष्पा- समाप्तः"

अथ रावण कृतं शिवतांडव स्तोत्रं प्रारम्भः

श्रीगणेशायनमः

जटा कटाहसंभ्रम भ्रमन्निलिंपनीर झरी, विलोल बीच विराज मान मूर्धनी ॥ धगद्ध गद्धगज्ज्व लल्ल-लाटपट्ट किशोर चन्द्र शेखरे रतिः प्रतिक्षणांम ॥१॥ धरा नन्दनी विलासवन्धु वंधुरस्फुर्ट्टंतं संतति प्रमोद मान ॥ कृपा कटाक्ष धोरनी निरुद्ध दुर्धरापदि, क्वचिच्चिदंबरे मनो मेतु वस्तुनी ॥२॥ जटा भुजंग पिंगलस्फुरत्फणामणिप्रभा- कुंकुमद्रव प्रलिप्तदिग्वधूमुखे ॥ मदांधसिंधुरस्फुरत्वगुतरीय मनो विनोद मद्भुतं विभर्तु भूत भर्तरि ॥३॥ सहस्र लोचन शेष लेख शेखर प्रसून धूलि धोरनी विधूसरांघ्रि पीठ भुजंग राजमालयानिवद्ध जाट जूटकः श्रियैचिराय जायतां वन्धु शेखरः ॥४॥ ललाट चत्वरज्वलद्धनं जयस्फुलिंगभानिपीत मकं । नमन्निलिंपनायकम् ॥ सुधा मयूरव लेखया विराज- खरं महाकपालि संपदे शिरो जटाल मस्तुनः ॥५॥ कराल ट्टिका धगद्धगद्धगज्ज्वलद्धनं जयाधरी कृत प्रचंड पंच साय रा धरेन्द्र नन्दनी कुचाग्र चित्र पत्रक प्रकल्प नैक शिल्पिनि ने मतिर्मम ॥६॥ नवीन मेंघ मंडलीनिरुद्ध दुर्ध रस्फुरत्कु

हू निशीथिनी तमः प्रवन्धवंधकंधरः निलिंपनिर्झरी धर तु कृतिसिंधुरः कलानिधानबन्धुरः श्रियं जगद्धुरंधरः ॥७॥ प्रफुल्ल पंकजप्रपंचकालि मच्छटा विडंवि कंठकंधरारुचि प्रवन्ध कंध स्मरच्छिदंपुरच्छिमदंभवच्छिदं मखच्छिदं गजच्छिदांधक तमंतकच्छिदं भजे ॥८॥ अगर्व सर्व मंगला कला कदंबु मंजरी प्रवाह माधुरी विजृंभणामधुव्रतम् ॥ स्मणंतकं पुरांतकं भवांतकं नकं गजांतकांधकांतकं तमंतकांतकं भजे ॥९॥ जयत्वदभ्रविभ्र मद्भुजंगमस्फुरद्धगद्धगद्ध धिनिर्गमत्कराल भाल हव्यवाट् ॥ द्धिमिद्धिमिध्वनन्मृदंग तुंग मगलध्वनि क्रमप्रवर्तित प्रचंड त शिवः ॥१०॥ दृपद्विचित्रतल्पयो भुँजंग मौक्ति कस्र जोर्गरिष्ठ लोष्टयोः सुहृद्विपक्ष पक्षयोः ॥ तृणार विन्द चक्षुषोः प्रजा महेन्द्रयोः समप्रवर्तयन्मनः कदा सदाशिवं भजे ॥११॥ क लिंपनिर्झरी निकुंज कोटरे वसन् विमुक्त दुर्गतिः-सदा शिरः जलिं वहन् ॥ विमुक्त लोल लोचनो-ललाम भाल लग्नकः मंत्र मुच्चरन्कदा सुखी भवाम्यहम् ॥१२॥ इमंहि नित्य मेव मुत्तमोत्तमं स्तवं-पठन्स्मरन्ब्रुवन्नरो विशुद्धिमेति संततम् ॥ गुरौ-सुभक्तिमाशुयाति नान्यथा गतिं विमोहनं हिदेहिनां-सुशंक चिन्तनम् ॥१३॥ पूजावसान समये दशवक्र गीतं यः शंभु मिदं पठति प्रदोषे । तस्य स्थिरां रथगजेन्द्र तुरंग युक्तां सदैवसुमुखिं प्रददाति शंभु ॥१४॥

इति श्री रावण विरचितं शिव तांडवस्तोत्रम् संपूर्णम्

श्री नीलकंठस्तोत्र प्रारंभः ॥

णेशाय नमः ॥ श्री नीलकंठाय नमः ॥ ओं अस्य श्री नील-
स्तोत्र मं त्रस्य ब्रह्मा ऋषिअनुष्टुपुच्छंदः ॥ श्री नीलकंठ सदा
देवता ॥ ब्रह्माबीजं पार्वती शक्तिः ॥ ममाभीष्ट सिद्यर्थे जपे
योगः ॥ श्री नीलकंठ स्तोत्र पाठेविनियोगः ॥ ओं नमो नील
य श्वेतशरिराय ॥ सर्वालंकार भूषिताय भुजंग परिकराय
ाग यज्ञोपवीताय ॥ अनेक मृत्यु विनाशनाय ॥ युग युगां-
॥ प्रचंडाय ॥ ज्वालामुखाय नमः ॥ दंष्ट्रा कराल घोराय हुं
फट् स्वाहा ॥ ज्वालामुख मंत्र कराय ॥ प्रचंडार्क सहस्त्राशु
ायनमः ॥ कर्पुर परमोपरि मंगलायनमः ॥ रां रां नीलकंठाय
वज्र वै लक्ष्मणि माणि क्या मुकुट भूषणाय ॥ हन हन दहन-
य ॥ श्री अघोरास्त्र मूल मंत्र ॥१॥ ॐ हां ॐ हीं ॐ हं
॥ अघोर रूपाय ॥ रथ रथ तत्र तत्र ॥ चट चट ॥ कह कह ॥
द दहन दहनाय ॥ श्री अघोरास्त्र मूलमंत्र जरामरण भयं क्षयं
कुरु हुं फट् स्वाहा ॥२॥ अनंत घोर जरा मरण भयं क्षयं
कुरु ॥ विधिविनाशनाय ॥ शाकिनि डाकिनि ब्रह्म राक्षस
दानव बंधनाय ॥ अपस्मार भूत प्रेत वैताल शाकिनि सर्वग्रह
शनाय मंत्र कोष्ट प्रकाशाय ॥ पर विद्याच्छेदनाय ॥ हुं
स्वाहा ॥३॥ आत्म मंत्र संरक्षणाय नमः ॥ ओं हाँ हीं हौं
भूत डामराय ॥ ज्वालामुख संभूतानाम् ॥ द्वादशानां ॥
दश षोडस प्रेतानां ॥ पंचदश डाकनीनाम् ॥ हन हन दह
॥ एकाहिक ॥ द्वाहिक ॥ त्र्याहिक चातुर्थिक ॥ व्यापदांत ॥
पात ॥ वातादिक ॥ वासस्वीकफः ॥ पीतक कास स्वास श्ले
ष्क॥ दह दह छिन्धि छिन्धि ॥ श्री महादेव निमित्त ॥ स्तंभन
वशीकरणौऊचाटण कील नो छेषण ॥ इति षड कर्मणि वृत्य-

हुं फट् स्वाहा ॥४॥ वात ज्वर मरण भयं छिंद्धि छिंद्धि ॥ हन
भुत ज्वर प्रेत ज्वर पिशाच ज्वर ॥ रात्रि ज्वर ॥ शीत ज
अमित ज्वर ॥ ताप ज्वर ॥ सन्निपात ज्वर ॥ वात ज्वर
गृह ज्वर ॥ कुमार ज्वर ॥ ब्रह्म ज्वर ॥ विष्णु ज्वर ॥ रुद्र ज्वर
शरीर प्रवेश ज्वर ॥ कौमारी विषम ज्वर ॥ नारी ज्वर ॥ प्र
प्रचंडाय हराय प्रथमेश्वराय शीघ्रं हुं हुं फट् स्वाहा ॥५॥ ओं न
नीलकंठाय ॥ दक्ष ध्वर ध्वंसनाय ॥ श्री नीलकंठाय नमः॥
वारं पठेत् स्तोत्रं मनसा चिंतितं भवेत् ॥ तत् सर्वं सफलं प्र
शिवलोकं स गच्छति ॥६॥ इति श्री डामरेश्वर तंत्रे श्री नील
स्तोत्रं संपूर्णम् ॥ सुभं भवतु ॥

अथ वेदशास्त्रव प्रारम्भः

पशूनां पतिं पाप नाशं परेशं गजेन्द्रस्य कृतिं बसानं वरेण्य
जटाजूट मध्ये स्फुरद्गांग वारिं महादेव मेकं स्मरामि स्मरामि ॥
महेशं सुरेशं सुराराति नाशं विभुं विश्वनाथं विभूत्यंगभूष
विरूपाक्ष मिद्वर्कवह्नित्रिनेत्रं सदानन्द मीडे प्रभुं पंचवक्रम् ॥
गिरीशं गणेशं गले नील वर्णं गवेंद्राधिरूढं गुणातीत रूप
भवं भास्करं भस्मनाभूपितांगं भवानीकलत्रं भजे पंचवक्रम ॥
शिवाकांत शम्भो शशाकार्धमौले महेशानि शूलिन् जटाजूटधारि
त्वमेको जगद्व्यापको विश्वरूप प्रसीद प्रसीद प्रभो पूर्णरूप ॥
परात्मान मेकं जगद्बीज माद्यं निरीहं निराकार मोंकार वेद्य
यतो जायते पाल्यते जेनविश्वं तमीशं भजे लीयते यत्रविश्वम् ॥
न भूमिर्नचापो नवर्ह्विनवायुर्नचाकाश मास्ते न तंद्रा न निद्रा
नग्रीष्मो नशीतं नदेशो नवेषो नयस्यास्ति मूर्तिस्त्रि मूर्तितमीडे ॥
अजं शाश्वतं कारणं कारणानां शिवं केवलं भासकं भासकानाम्

यिं तमः पारमाद्यं तहीनं प्रपद्येत् परं पावनम द्वैत हीनम ॥७॥
स्ते नमस्ते विभो विश्व मूर्ते नमस्ते नमस्ते चिदानन्द मूर्ते ।
स्ते नमस्ते तपो योगगम्य नमस्ते नमस्ते श्रुति ज्ञानगम्य ॥८॥
ो शूल पाणे विभोविश्वनाथ महादेव शंभो महेशत्रिनेत्र ।
वाकांतशांत स्मरारेपुरारे त्वदन्यो वरेण्यो न मान्योनगण्यः ॥९॥
ो महेश करुणामय शूलपाणे गौरीपते पशुपते पशुपाशनाशिन् ।
शीपते करुणया जयदेतदेकस्त्वं हंसि पासि विदधासि
श्वरोऽसि ॥१०॥ त्वत्तो जगद्भवति देवभवति देवभवस्मरारे
येव तिष्ठति-जगन्मृड विश्वनाथ । त्वय्येव गच्छतिलयं जगदेव
ालिंगात्मके हर चराचर-विश्वरूपम् ॥११॥ इति श्री
छंकराचार्य विरचितं वेदशार शिवस्तोत्रम् सम्पूर्णम् ।

अथ शिव पंचाक्षर स्तोत्रं

न्द्रहराय त्रिलोचनाय भस्मांगरागाय महेश्वराय ।
याय शुद्धाय दिगम्बराय तस्मै नकाराय नमः शिवाय ॥१॥
किनी सलिलचन्दन चर्चिताय नन्दीश्वरप्रमथनाथ महेश्वराय ।
ारपुष्प बहुपुष्प सुपूजिताय तस्मै मकाराय नमः शिवाय ॥२॥
ाय गौरी वदनान्तवृन्द सूर्याय दक्षाध्वर नाशकाय ।
नीलकंठाय वृषभध्वजाय तस्मै शिकाराय नमः शिवाय ॥३॥
ष्ठ कुंभोद्भव गौतमार्य मुनींद्र देवार्चित शेखराय ।
ार्क वैश्वानर लोचनाय तस्मै काराय नमः शिवाय ॥४॥
व रूपाय जटाधराय पिनाकरस्ताय सनातनाय ।
याय देवाय दिगम्बराय तस्मै यकाराय नमः शिवाय ॥५॥

पंचाक्षर मिदं पुण्यं यः पठेच्छिव सन्निधौ ।
शिवलोक मवाप्नोति शिवेनसह मोदते ॥६॥

अथ लिङ्गाष्टक प्रारम्भः

श्रीगणेशायनमः

ब्रह्म सुरारिसुरार्चित लिंगं निर्मल भाषित शोभित लिङ्ग
जन्मज दुःखविनाशक लिंगं तत्प्रणमामि सदाशिवलिङ्गम् ॥१॥
मुनि प्रवरार्चित लिङ्गङ कामदहं करुणा कर लिङ्गम् । रावण
विनाशन लिङ्गम् तत्प्र० ॥२॥ सर्व सुगन्धि सुलेपित लिङ्गम् बु
विवर्धन कारणलिङ्गम् । सिद्धसुरासुरवन्दितलिङ्गन् तत्प्रण० ॥
कन कमहामणि भूषित लिङ्गम् फणिपति वेष्ठित शो
लिङ्गम् । दक्ष सुयज्ञ विनाशन लिङ्गम् तत्प्र० ॥४॥ कुं
चन्दन लेपित लिङ्गम् पंकजहार सुशोभित लिङ्गम् । स
पाप विनाशन लिङ्गम् तत्प्र० ॥५॥ देवगणार्चित से
लिङ्गम भावैर्भक्ति भिरेवच लिङ्गम् । दिन कर कोटि प्र
करलिङ्गम् तत्प्र० ॥६॥ अष्टदलोपरि वेष्टित्तलिङ्गम् सर्व समु
कारण लिङ्गम् । अष्ट दरिद्र विनाशन लिङ्गम् ॥७॥ सुर गुरु
वर पूजित लिङ्गम् सुर वन पुष्प सदार्चित लिङ्गम् । परा
परमात्मक लिङ्गम् तत्प्र० ॥८॥ लिंगाष्टक मिदं प्रोक्तं यःपठे
वसंन्निधौ । शिवलोक मवाप्नोतिशिवेन सहमोदते ॥९॥ इति लि
ष्टक संम्पूर्णम् ॥

अथ गोपाल की आर्ति प्रारभः

श्रीगणेशायनमः

जयदेव जयदेव वंदेगोपालं मृगमदशोभितभालं करुणाकर
जयदेव जयदेव ॥ १ ॥ निर्गुण सगुणाकारं संभृतशु-
रं ॥ मुरहर नंदकुमारं मुनि जन सुखकारं वृन्दावन संचारं
तुभमणि हरं ॥ करुणापारावारं गोवरधनधारं ॥ जयदेव
देव ॥१॥ कुंचितकुंतलनीलं सरविंदुवदनं ॥ मणिगणमंडित
राजित श्रुतियुगलं ॥ विकसेंदिवर नयनं विलसित भुव-
ं ॥ बिंबाधरमतिसुंदर नासामणिलोलं ॥ जयदेव जयदेव ॥२॥
ग्रीवं कौस्तुभमणि कंठाभरणं २॥ श्रीवत्सांकितवक्षोलं बित
ालं भूषित बाहुयुगलं करतलधृतवेणु ॥२॥ त्रिवलिशोभित
नवजलधरनीलं ॥ जयदेव जयदेव ॥३॥ मुर्लीवाद्यंलील
स्वरगीतं ॥२॥ जलचरस्थलचरबनचर रंजितसंगीतं २॥ स्तंभित
ातोयं अगणिततत्वचरितं गोपीजनमोहनधृत कांचनशीलं ॥
देव जयदेव ॥ ४ ॥ रासा क्रीडामंडितवेष्टित बृजललनं २॥
तांडवशोभित कोमलदलनयनं ॥ कुसुमाकारित रंजितमंद
वदनं २॥ कालियफणिवरदमनं पक्षेश्वरगमनं ॥ जयदेव
देव ॥५॥ अवनवनीताहारं करतलदधिगोलं २॥ लीलानटवखेलं
कांचनसीलं ॥ निजजनरक्षतसीलं विगलितरिपुदलनं २॥
ितं परिपालं वंदेगोपालं ॥ जयदेव जयदेव ॥६॥ किंकिणिमेख-
ये पीतांवरवशनं ॥२॥ तोडरनोपुरगरजित विलसितपदयुगलं ॥
ापिपरीवेष्ठितयमुनातटसंस्थं ॥ व्यासाभयदंसुखदं भवनेत्रय-
॥ जयदेव जयदेव वंदेगोपालं वंदेगोपालं म्रगमदशोभितभालं
ाकरलोलं ॥७॥

अथ श्री विष्णुपंजरस्तोत्रप्रारंभः

श्रीगणेशायनमः

श्रीरामजयति ॥ ॐअस्य श्रीविष्णुपंजरस्तोत्रमंत्रस्य
ऋषिरनुष्टुपच्छंदः ॥ श्रीविष्णुपरमात्मादेवता ॥ अहंबीजं ॥
शक्तिः ॐह्रींकीलकंममसर्वदेहरक्षार्थे जपेविनियोगः नारद
नमः ॥ शिरसिअनुष्टुपच्छंदसेनमः ॥ मुखेश्रीविष्णुपरमात्मा
यैनमः ॥ हृदयअहंबीजायनमः गुंह्यसोहं शक्तयेनमः ॥ प
ॐह्रींकीलकायनमः ॥ सर्वांगे अथमंत्रः ॥ हां हीं हूं हैं हौं
ॐह्रां अंगुष्ठाभ्यांनमः ॐह्रीं तर्जनिभ्यांनमः ॥ ॐह्रूं मध्य
नमः ॥ ॐह्रैं अनामिकाभ्यांनमः ॥ ॐह्रौं कनिष्ठकाभ्यां
ॐह्रः करतल करपृष्ठाभ्यांनमः ॥ इति करन्यासः ॥ ॐह्रां ह
नमः ॥ ॐह्रीं शिरसेस्वाहा ॥ ॐह्रूं शिखायैवौषट् ॥ ॐह्रैं
चायहुं ॥ ॐह्रौं नेत्रत्रयायवौषट् ॥ ॐह्रः अस्त्रायफट्
न्यासः ॥ अहंबीजं प्राणायामंत्रयं कुर्यात्पूरकंकुंभकं रेचकं च
संपुटि करणं स्वासनिः स्वासता दक्षिण नाडीचसंपुटंवध्वा ॥
वामनाड्यारेचयेत् ॥ प्राणायामेतिउच्यते ॥ अथध्यानं ॥
स्यात्प्रकृतेरनादिमेकं निविष्टं बहुधागुहायां ॥ सर्वालयं
चराचरस्थं नमामिविष्णुं जगदेकनाथं ॥ १ ॥ नमामि
जगदेकमलं सर्वात्मकं कारण कारणंच नारायणख्यं भगवंत
भजामितं मुक्तिपदैकदायकं ॥२॥ इति ध्यानं ॥ विष्णु
महादिव्यं सर्वदुःखनिवारणं उग्रतेजोमहा-वीर्यं सर्वशत्रु नि
॥३॥ त्रिपुरंदह्यमानस्य हरस्यब्राह्मणोदितं ॥ तदहं संप्रव
आत्मरक्षाकरंनृणां ॥४॥ पादौरक्षतुगोविंदो जंघेचैवत्रिवि
उरुमेकेशवोरक्षेत् कटिंदामोदरस्तथा ॥५॥ नाभिचैवाच्यु

क्षतुवामनः ॥ उदरेपद्मनाभश्चहरिःपृष्टं चरक्षतु ॥ ६ ॥
र्वेस्थितो विष्णुर्दक्षिणेमधुसूदनः ॥ [बाहुभ्यां वासुदेवश्च
चजनार्दनः ॥७॥ कंठेरक्षतुवाराहः कृष्णश्चमुख मंडले ॥
कर्णमूलेतुहृषिकेशश्चनासिके। ।८॥ नेत्रेनारायणोरक्षेत्‌लला-
ध्वजः ॥ कपोलौकेशवोरक्षेत्‌चक्रपाणिःशिरस्तथा ॥ ९ ॥
श्री नृसिंहोम पृष्टतोगोपनंदनः ॥ उभयोः पार्श्वयोश्चैव
रामलक्ष्मणौ ॥१०॥ पूर्वेतुपुंडरीकाक्षः अग्नेयामग्निदेवता ॥
नारसिंहस्तुनैऋत्यांचजनार्दनः ॥११ पुरुषोत्तमः वारुणायां
ांप्रीतिवसुभृत् ॥गदाधरश्चकौवेर्य्यां शंखईशानतोदिशिः ॥
आकाशेतुगवारेक्षतुपातालेचसुदर्शनः ॥ दिवारेक्षतुमांसूर्य्यो
क्षेत्तुचंद्रमः ॥ १३ ॥ जलेरक्षेत्तुवाराहःस्थलेरक्षेत्तुवामनः ॥
नारसिंहस्तुसर्वतः पातुकेशवः ॥१४॥ सचंदःसर्वगात्रेषुप्रवि-
ुपंजरः ॥ विष्णुपंजर प्रविष्टोहंविचारामिमह्स्थिले ॥ १५ ॥
ेपथेचोरेसंग्रामेशत्रुसंकटे ॥ नदीषुतरणेचैवव्याघ्रचोरभयंन-
६॥ डाकिनी साकिनी यक्षभयं नास्तिकदाचन ॥ भूतप्रेत-
ादिकुष्मांडाभैरवादयः ॥१७॥ रक्षरक्षमहोदव नीलग्रीवोजटा-
रक्षंतुदेवतासर्वेस्मशानेचमहारणे ॥१८॥ नस्यंतिदर्शनात्तस्य
मकीर्तनात् ॥ अपुत्रोलभतेपुत्रंनिर्धनोधनमाप्नुयात् ॥१९॥
भवेत्तस्यपटनान्नात्रसंशयः ॥ विष्णुपंजरपटेद्यस्तुसर्वत्रविजयी
२०॥ पंथानांदुर्गमेरक्षेत्‌सर्वमेवजनार्दनः ॥ रोगविघ्नहृता-
महागुरुतल्पगः ॥२१॥ स्त्रीहत्या बालघाती च सुरापीष्टष-
॥ अपुत्रोलभतेपुत्रं धनार्थीलभतेधनं ॥२२॥ विद्यार्थीलभते
क्षार्थीलभतेगतिं ॥ आपदाहरतेनित्यं विष्णुस्तोत्रार्थसर्वदा
जलेविष्णुस्थलेविष्णुविष्णुपर्वतमस्तके ॥ ज्वालमालाकुले
र्वविष्णुमयंजगत् ॥२४॥ यस्त्विदंपठतेस्तोत्रं विष्णुपंजर-

मुत्तम ॥ मुच्यतेसर्वपापेभ्योविष्णुलोकसगच्छति ॥२५॥ इ
ब्रह्मांडपुराणेइंद्रनारदसंवादे विष्णुपंजरस्तोत्रसंपूर्ण ॥ शुभंभ
श्रीकृष्णर्पणमस्तुः ॥

तत्रागताशोडश वार्षिकोमुनि व्यासात्मजोज्ञानमहाब्दि
कथावसानेनिजलाभपूर्णां प्रेम्णापटं भागवतं शनैः शनैः ।

इतिश्रीश्लोक संपूर्ण ॥

विष्णु सतनामस्तोत्रम्

॥ श्रीगणेशायनमः ॥

अथ श्रीविष्णुशतनामप्रारंभः ॥ नारदोउवाच ॥ वासुंदे
केशंमाधवंमधुसूदनं ॥ पद्मनाभंत्रिलोकेशं वामनंजलशायनं
जनर्दनंहरिंकृष्ण श्रीवशंगरुडध्वजं वाराहंपुंडरीकाक्षं नृसिंहं नर
॥२॥ अव्यक्तंशाश्वतं विष्णुमनं तम जमत्ययं ॥ नारायणं
ध्यक्षं गोविंदं किर्त्तिवर्द्धनं ॥३॥ गोवर्द्धनं धरंदेवं भूधरं भुव
जेतारं यज्ञपुरुषं यज्ञेषं यज्ञवांहनं ॥४॥ चक्रपाणिंगदापाणिं
पाणिंनरोत्तमं वैकुंठदुष्टदमनं भूगर्भपीतवाससं ॥५॥ त्रिविक्रम
लज्ञं त्रिमूर्त्ति त्रिदिशेश्वरं रामरामंहयग्रीवं भीमरुद्रं भवेद्भवं
श्रीधरं श्रीपतिसूरंमंगलं मंगलालयं दामोदरं दमोपेतं केशवं
सूदनं ॥७॥ वरेण्यं बरदनं विष्णुंआनंदंमधुसूदनं भुजंग
काशंशतसूर्यसमप्रभं ॥८॥ मेघस्यमं चतुवाहुंकमलं कमलेक्षणं
रेतःसंदिपूंपुराणपुरुषोत्तमं ॥९॥ सकलंनिःकलंशुद्धं निर्गुणं
संयुतं ॥ ज्योतिरुपमरुपंचस्वरुपमुदयंयुतं ॥११॥१०॥ सर्वज्ञ
रुपस्थं सर्वेशंसर्वतोमुखं ॥ यज्ञकोटिसमुत्थंचयदिदं परमं
११॥ योगेशंयोगनिष्ठायां नायोगिनांयोगरुपिणं ॥ इश्वरंसर्वभ

भिवोद्भवं ॥१२॥ इतिनामसत्तंदिव्यवैष्णवं सर्वपापहं व्यासे-
तं पूर्वसर्वपापहरंनृणां ॥१३॥ सर्वपापविनिमुक्तोविष्णुसायु
पुम्यन् ॥ यदिदंप्रातरुथायय: पठेद्वैष्णवोनर ॥१४॥ चांद्राय-
ब्रणकंन्यादान शतानिच ॥ अश्वमेघसहस्रस्यफलं प्राप्नोतिमा-
॥१५॥ इतिश्रीविष्णुसतनामसंपूर्णम् ॥

—:o:—

अथ चर्पटपंजरीकास्तोत्रप्रारम्भः

श्रीगणेशायनमः

दिनमयिरजनीसायम्प्रातः शिशिरवसन्तौ पुनरायातः ॥
क्रीडतिगच्छत्यायुस्तदपिनमुंचत्याशावायुः ॥ भजगोविन्दं
विन्दं गोविन्दं भजमूढमते। ।१॥ प्राप्तेसन्निहितेमरणेनहि नहि-
डुकृञ् करणे ॥ भजगोवालस्तावतक्रीडा शक्तश्तरुणीस्तावत्त-
क्तः ॥ वृद्धस्तावच्चिंत्तामग्नः परेब्रह्मणिकोपिनलग्नः ॥ भज०
अंगंगलितं पलितं मुंडंदशनविहीनं जाततुंडंवृध्दोयाति गृही-
तदपिनमुंचत्त्यशापिंडं ॥ भज० ॥३॥ पुनरपिजननं पुनरपि-
पुनरपिजननीजठरेशयनम् ॥ इहसंसारेखलुदुस्तारे कृपयापारे-
रारे ॥ भज० ॥४॥ दिनमपिरजनीसायं प्रातः शिशिरवस-
रायातः ॥ कालः क्रीडतिगच्छत्यायुःस्तदपिनमुंचत्याशा-
॥ भज० ॥५॥ जटिलोमुंडीलुंचितकेशः काषायांवर वहुधृत्त-
पश्यन्नपिन च पश्यतिलोकउदरनिमितंवहुकृतवेष ॥ भज०
वयसिगतेकः कामविकारः शुष्केनीरेकः कासारः ॥ क्षीणे
: परिवारोलातेतत्वेकः संसारः ॥ भजगो० ॥ ७ ॥
न्हः पृष्टे भानू रात्रोचिवुक समर्पितजानुः ॥ करतलभिक्षातरु-
सस्तदपिनमुंचत्याशापाशः ॥ भज० ॥८॥ यावद्वित्तोपार्जन-

शक्तस्तावन्निजपरिवारोरक्तः ॥ पश्चाज्जर्जर भूतेदेहे वार्ताको
पृच्छतिगेहे ॥ भज० ॥९॥ रथ्याकर्पटविरचितकंथः पुरायापु
विवर्ज्जितपंथाः ॥ नत्वंनाहंनायंलोकस्तदपिकिमर्थं क्रियतेशो
भज० ॥१०॥ नारीस्तनभरजघननिवेशं दृष्ट्वामायामोहावेष
एतन्मासवसादिविकारं मनसिविचार यवारमवारम् ॥ भज० ॥
गेयंगीतानामसहस्त्रं ध्येयंश्रीपतिरूपमजश्रम् ॥ नेयंसज्जननिक
देयंदीनजनायचवित्तम् ॥ भज० ॥१२॥ भगवद्गगीता किंचिद्
गंगाजल लवकणिकापीता ॥ येनाकारिमुरारे र्चातस्ययमः
रुतेचर्चाम् ॥ भज० ॥१३॥ कोहंकस्त्वं कुतआयातः कामेज
कोमेतातः ॥ इतिपरिभावयसर्वमसारं सर्वंत्यक्त्वास्त्रप्नविचा
भज० ॥१४॥ कातेकांताकस्तेपुत्रः संसारोयमनीवविचित्र
कस्यत्वंकः कुतआयातस्तत्वं चिंतयमनसिभ्रान्तः ॥ भज० ॥
सुरतटनीतरुमूलनिवासः शय्याभूतलमजिनं वासः ॥ सर्वपरिग्रह
त्यागः कस्यसुखं नकरोतिविरागः ॥ भज० ॥१६॥ इतिश्री
कराचार्य विरचितं चर्पटपंजरीकास्तोत्रं समाप्तम् ॥ भाद्र शुक्ले
११ शनौ सम्वत् १९८६

—:o:—

अथ रामाष्टक प्रारम्भः

श्रीगणेशायनमः

भजेविशेषसुन्दरम् समस्तपापखंडनं ॥ स्वभक्तचित्त
सदैवराममद्वयम् ॥१॥ जटाकलापशोभितं समस्तपापनाशन
स्वभक्तभीतिभंजनं भजेहराममद्वयम् ॥२॥ निजस्वरूपवोधकं
करं भवापहम् ॥ समं शिवं निरञ्जनं भजेहराममद्वयम् ॥३॥
प्रपंचकल्पितं ह्यनामरूपवास्तवम् ॥ निराकृतं निरामयं भजे

॥४॥ निष्प्रपंचनिर्विकल्पनिर्मलं निरामयम् ॥ चिदेकरूपसं
जेहराममद्वयम् ॥५॥ भवाब्धिपोतरूपकं ह्यशेषदेहकल्पित्तम् ॥
रं कृपाकरं भजेहराममद्वयम् ॥६॥ महावाक्यवोधकैर्विराज-
क्पदैः ॥ परब्रह्मव्यापकं भजेहराममद्वयम् ॥७॥ शिवप्रदं
दं भवच्छिदं भ्रमापहम् ॥ विराजमानदैशिकं भजेहराममद्वयम्
रामाष्टकं पठतियःसुकरं सुपुण्यं व्यासेनभाषितमिदं शृणुते-
: ॥ विद्यांश्रियं विपुलसौख्यमनंत कीर्तिसंप्राप्यदेहविलये
मोक्षम् ॥९॥ इति श्रीव्यास विरचितं रामाष्टकं सम्पूर्णम् ॥

—:o:—

अथ हरिहरात्मकस्तोत्रम्

श्रीगणेशायनमः

गोविन्दमाधवमुकुन्दहरेमुरारे शंभोशिवेश शशिशेखरशूलपाणे ॥
राच्युत जनार्दनवासुदेवत्याज्या भटायइति संततमामनन्ति
गंगाधरांधकरिपो हरनीलकंठवैकुंठकैटभरिपो कमठाब्जपाणे ॥
वण्डपरसो मृडचंडिकेशत्याज्या भटायइतिसंततमामनन्ति ॥२॥
नृसिंहमधुसूदनचक्रपाणे गौरीपते गिरिशशङ्कर चंद्रचूड ॥
णासुरनिवर्हण शार्ङ्पाँणेत्याज्या भटायइतिसंततमा० ॥३॥
योग्रविषमेक्षण कामसत्रो श्रीकान्त पीतवसनाम्बुदनीलसौरे ॥
कृतिवसनत्रिदशैकनाथ त्याज्याभटाय ॥४॥ लक्ष्मीपतेमधु-
रुषोत्तमाय श्रीकण्ठदिग्वसन शान्तपिनाकपाणे ॥ आनन्द
णी धरपद्मनाभत्याज्याभटाय ॥५॥ सर्वेश्वरत्रिपुरसूदन-
ब्रह्मण्यदेवगरुडध्वजशंखपाणे ॥ त्र्यक्षोरगाभरण वालमृगां
त्याज्या भटाय ॥६॥ श्रीरामराघवरमेश्वर रावणारेभूतेश-
रिपोप्रमथाधिनाथ ॥ चाणूरमर्दन हृषीक पते मुरारेत्याज्या

भटाय ॥७॥ शूलिन्गिरीश रजनीशकलाऽवतंसकंस प्रणा शन
तनकेशिनाश ॥ भर्गत्रिनेत्रभवभूतपतेपुरारे त्याज्याभटाय
गोपीपतेयदुपते बसुदेवसूनोकर्पूर गौरवृषभध्वजभालनेत्र ॥ ग
नोद्धरणधर्मधुरीणगोपत्याज्याभटाय ॥९॥ स्थाणोत्रिलोचनपि
धरस्मरारे कृष्णनिरुद्धकमला कर कल्मषारे ॥ विश्वेश्वरगि
गार्द्र जटा कलापत्याज्याभटाय ॥१०॥ अष्टोत्तराधिकशतेनसु
नाम्नां संदर्भितांललितरत्नकदम्बकेन ॥ सन्नायकांदृढ गुणां
कण्ठगांयःकुर्यादिमांस्त्रजमहोसयमंनपश्येत ॥११॥ गणावूचतु
इत्थंद्विजेद्रनिजभृत्यगणान्सदैव संशिक्षयेदवनिगांन्सहिधर्मराज
अन्येपियेहरिहरांकधराधरायांतेदूरतः पुनरहो परिवर्जनीयाः ॥
अगस्त्योवाच ॥ योधर्मराज चरितां ललितप्रबंधांनामा वलीं
कल्मषवीजहंत्रीम् ॥ धीरोत्रकौस्तुभभृतः शशिभूषणस्यनित्यं
स्तनरसंनपिवेत्समातु ॥१३॥ इति शृरावन्कथांरम्यां शिवश
येनऽघाम् ॥ महर्षवक्तः पुरतोहदर्शाप्सरसांपुरीम् ॥१४॥
श्रीस्कंदपुराणेकाशीखण्डे धर्मराजविरचिता हरिहराष्टोत्तरशत
वलिः समाप्ता ॥१५॥

—:o:—

अथ शिवरामाष्टक प्रारम्भः

श्रीगणेशायनमः

शिवहरेशिवरामसखेप्रभो त्रिविधतापनिवारणहेविभो ॥
जनेश्वरयादवपाहिमां शिवहरे विजयं कुरुमेवरम् ॥१॥ कमलल
रामदयानिधेहरगुरोगजरक्षकगोपते ॥ शिवतनोभवरक्षक प
शिवहरे० ॥२॥ स्वजनरं जनमंगलमन्दिरं भजतितेपुरुषः
पदम् ॥ भवतितस्यसुखं परमाद्भुतं शिवहरे वि० ॥३॥ जय

288

ल्लभभूपते जयजयार्जितपुण्यपयोनिधे ॥ जयकृपामयकृष्ण तुते शिवहरे० ॥४॥ भवविमोचनमाधवमापते सुकविमा- स शिवारते ॥ जनककजारतराघवरक्षमां शिवहरे० ॥५॥ मण्डल मङ्गलमापते जलदसुन्दर रामरमापते ॥ निगमकीर्ति र्णवगोपते शिवहरे० ॥६॥ पतितपावननामम यीव्लतातवय मलं परिगीयते ॥ तदपिमाधवमां किमुपेक्षसे शिवहरे० ॥७॥ तापरदेवरमापते विजयतस्तवनामघनोपमामयिकथं करुणा- यते शिवहरे० ॥८॥ हनुमतः मियताप करप्रभो सुरसरिधृ- र हेगुरो ॥ ममविभो किमुविस्मरणं कृतं शिवहरे० ॥९॥ नर- तरञ्जन सुन्दरं पठतियः शिवरामकृतस्तवम् ॥ विशतिरामरमा बुजे शिवहरे० ॥१०॥ प्रातरुत्थाययोभक्त्यापठेदेकाग्रामा- ॥ विजयो जायते तस्यविष्णुमाराध्यमाप्नुयात् ॥११॥

सूर्याष्टक प्रारम्भः

श्रीगणेशायनमः

साम्बउवाच आदि देवनमस्तुभ्यं प्रसीदमम भास्कर ॥ कर नमस्तुभ्यं प्रभाकर नमोऽस्तुते ॥१॥ सप्ताश्वर रथमारूढं कश्य पात्मजम् ॥ श्वेतपद्मधरं देवं तं सूर्यं प्रणमाम्यहम् लोहितं रथमारूढं सर्वलोकपितामहम् ॥ महा पाप हरं देवं तं णमाम्यहम् ॥३॥ त्रैगुण्यं च महाशूरं ब्रह्मविष्णु महेश्वरम् ॥ पाप हरं० ॥४॥ वृहतं तेजपुञ्जं च वायुराकशमेव च ॥ वं सर्वलोकानां तं सूर्यं प्रणमाम्यहम् ॥५॥ बंधूकपुष्पसंकाशं डल भूपितं ॥ एक चक्र धरं देवं तं सूर्यं० ॥६॥ तं सूर्यं कर्त्तारं महातेज प्रदीपनम् ॥ महा पाप हरं देवं तं सूर्यं० ॥७॥

तं सूर्यं जगतांनाथं ज्ञान विज्ञान मोक्षदम् ॥ महा पाप हरं ॥८॥ सूर्याष्टकं पठेन्नित्यं ग्रह पीडा प्रणाशनम् ॥ अपुत्रो पुत्रं दरिद्रो धनवान् भवेत् ॥९॥ अमिषं मधुपानं च यः क खेर्दिने ॥ सप्तजन्म भवेद्रोगी जन्म २ दरिद्रता ॥१०॥ लमधुमासांनि यस्त्येत् तुखेर्दिने ॥ न व्याधिःशोक दा सूर्यलोकं सगच्छति ॥११॥

इति श्रीशिवप्रोक्तं सूर्याष्टकम् संपूर्णम् ॥

अथ देविजी के आरति प्रारम्भः

श्रीगणेशायनमः

जयदेवी जयदेवी जयअम्बे गौरीमय्या हरमङ्गलमूर्ति ॥ को निसदिन ध्यावत मय्या जिको सब युग ध्यावत ब्रह्मा सुमरि जयदेवि० ॥१॥ मांग सिंदूर बिराजत टीको मृगमद मय्या टीको मृगमद को ॥ उज्जल से दोई नयना निर्मल से नयना चंद्र वद न नीको ॥ जयदेवि जयदेवि ॥२॥ कनकस कलेवररक्तांवरराजे मय्या २॥ रक्तकुसुंम्मनिमाला कण्ठन साजे ॥ जयदेवि जयदेवि ॥३॥ देविजिके दो भुज चार चतुर अष्टभुज तुम शोभे मय्या ॥२॥ तीनो रूप निरखता त्रि जग मोहे ॥ जयदेवि जयदेवि ॥३॥ हाथनकङ्कण कानन कु नाकन पर मोति मय्या ॥२॥ कोटिक चंद्रदिवाकर जिनके जोति ॥ जयदेवि जयदेवि ॥४॥ देविजिके सिंघईवाहन खड्गख धारी २॥ सुरनर मुनिजन सेवक जिनके दुःख हरे जयदेवि देवि ॥५॥ मधुकैटभहरताकरता महिषासुर घाति मय्या । धुम्रविलोचन नाशिक निसदिन मधुमाति ॥ जयदेवि जय

दैत्यहिमारे असुर संहारे अद्भुत रूप धरे मय्या २॥ शुभ नि
विघारे निर्भयराजकरे जयदेवि ॥२॥ चंडमुंड दोउ असुरसंभ्हारे
के विजहरे मय्या ॥२॥ तुम जग जननी माता सेवक सब
जयदेवि जयदेवि ॥८ चौसट जोगिनि मंगल गावत नृत्यकरत
॥ मय्या ॥२॥ वाजत ताल मृदंगा और वजत डमरू जय-
जयदेवि ॥९॥ कञ्चन थाल विराजत अग्रकपुरवाति ॥
॥२॥ मालखेतमेराजितकोटि रतनजोति ॥ जयदेवि जय-
॥१०॥ काशिमेविश्वनाथ विराजत नन्दा ब्रह्मा चारी मय्या
ब्रह्माचारी नीत उठ भोग लगावत रूचरूच भोग लगावत
मा अधिकारि ॥ जयदेवि जयदेवि ॥११॥ देविजी के आरति
दिनपढ़गावे मय्या सब जुग पढ़गावे ॥ भणतशिवानन्दस्वामि
फल पावे ॥ जयदेवि जयदेवि ॥१२॥ जयअंबे गौरी मय्या
गल मूर्ति ॥ तुमको निसदिन ध्यावत ब्रह्माशिव सुमरी जय-
जयदेवि ॥छ॥

अथ देवीपुष्पाञ्जली

श्रीगणेशायनमः

अयगिरिनन्दिनि नन्दित मेदिनिविश्व विनोदिनि नन्दनुते ॥
वरविन्द सरोघनिवासिनि विष्णु विलासिनि जिष्णुनुते ॥
तिहेशित कण्ठकुटुंबि निभूरि कुटुम्बि निभूतकृते जयजय हे
ासुरमर्दिनि रंभकपर्दिनिशैलसुते ॥१॥ सुरवर वर्षिनि दुर्धर
नि दुर्मुखमर्षिनि हर्षरुते त्रिभुवन पोषिणिशंकर तोषिणि कल्म-
निघोषरते ॥ दनुजनिरोषनि दुर्मुखरोषनि दुर्मुखसोखिनि-
सुते जयजय हे महिषासुरमर्दिनि रम्य कपर्दिनिशैलसुते ॥२॥
जगदम्ब मदम्ब कदम्ब वनप्रिय वासिनि हासरते शिखिर

शिरोमणि तुंग हिमालय भृंग निजालय मध्यगते ॥ मधुमधुरे
कैटभ भंजनि कैटभ मंजिनि रासरते ॥ जयजय हे महिषासुर ॥
अपिशतखण्ड विखण्डित रुंडवितंडितसुंड गजाधिपते॥ रिपुगज
विदारण चंड पराक्रम शुंडमृगाधिपते ॥ निजभुज दंडनिपातित
विपातितमुंड भटाधिपते ॥ जयजय० ॥४॥ अपिरण दुर्मद श
वधोदित दुर्धरनिर्झर शक्तिभृते ॥ चतुरविचार धुरीनमहा शिव
कृतप्रथमाधिपते ॥ दुरितदुरीह दुरास्य दुमर्दितदानव दूत कृता
मते ॥ जयजय हे० ॥५॥ अपिशरणागत वैरित्रधूवर वैरिबरा
दायकरे ॥ त्रिभुवन मस्तक शूलविरोधिनि रोधिकृतामल शू
करे ॥ धुमि धुमि तामिर दुन्दुभिनाद महोमुखरी कृततिग्म करे
जयजय० ॥६॥ अपिनिजहूँ कृतिमात्र निराकृत धूम्रविलोच
धूम्ररते ॥ समरविशोषित शोसित विजयसमुद्भव शोषित वीज
शिवशिव शुंभनिशुंभमहाहवतर्पित भूतपिशाचरते जयजय हे म
षा० ॥७॥ धनुरनुसंगरनुक्षणुसंग परिस्फुर्दंगनटतकटके ॥ क
पिसंग प्रसत्कणि संगरसङ्कटशृङ्ग हतावटुकेकृत चतुरंग विलि
रंगघटतदुहु रंगरटेदुटुके ॥ जयजय हे महिषा० ॥८॥ सुरलल
ततथेई तथेई तथाभिनयोत्तर नृत्यरते ॥ कृतकुकुथः कुकुथोगड
यक ताल कुतूहल गानरते ॥ धिधिकट धिधिकट धिधिकट धि
कट धिधिमित धीर मृदंगनि नादरते ॥ जय० ॥९॥ जयजयज
जयेजयशब्द परस्तुतितत्पर विश्वनुते ॥ झंणझण झिमिझिमि झि
कृतनूपुर संजित मोहित भूतपते ॥ नटित नटार्धनटीनट नार
नाटित नाटक नाट्यरते जयजय हे० ॥१०॥ अयिसुमनःसुम
सुमनः सुमनः सुमनोहर कांतियुते ॥ श्रितरजनी रजनी रज
रजनी रजनी कर वक्र वृते ॥ सुनयनः भ्रमरः भ्रमरः भ्रमरः भ्रम
भ्रमराधिपते जयजय हे० ॥११॥ सहित महा हव मल्लिमत

ल्लि करल्लकमल्लरते ॥ विरिचित वल्लिक पल्लिक मल्लिक झिल्लिक
ल्लक वर्गवृते ॥ सितकृत फुल्लसमुल्ल सितारुण तल्ल जयल्ल वस-
ते ॥ जयजय० ॥१२॥ अविरल गंडगलन्मद मिंदुरमतमतं
राजगते त्रिभुवन भूषण भूतकलानिधि रुपपयोनिधिराजसुते ॥
सुदति जन लाल समान समोहन मन्मथराजमते ॥ जयजय
हिषा० ॥१३॥ करमुरली रववाजति कूजित लज्जित कोकिल
मते ॥ मिलित पुलिन्द मनोहर गुंजित रंजित शैलनिकुंजगते ॥
गुण भूत महाशवरीगण सङ्गण संभृत केलितले जयजय
॥१४॥ कमलदलाभल कोमल कान्ति कलाकलिमल भाल-
॥ सकल विलास कलानि लयःक्रम केलिचलत्कल हंसकुले ॥
कुल संकुल कुवलय मंडलमौलि मिलिद्धकुलालिकुले ॥
जय हे महिषा० ॥१५॥ कटितट पीत दुकूल विचित्र मयूख
स्कृति चन्द्ररुचे ॥ प्रणत सुरासुर मौलिमणिस्फुर दंसुलसन्नख
रुचे ॥ प्रणत सुरासुर मौलिमणिस्फुर दंसुलसन्नखचंद्ररुचेजित
काचल मौलिपदोझित निर्झर कुंजर कुंभकुचे ॥ जयजय हे
षा० ॥१६॥ विजित सहस्र करैक सहस्र करैक सहस्र करैक
॥ कृतसुर तारक संगर तारक संगर तारक सूनुसुते ॥ सुरथ
धि समान समाधि समान समाधि सुजातरते ॥ जयजय हे
षा० ॥१७॥ पदकमलं करुणानिलये परिवस्यति योनुदिनं
वे ॥ अयिकमले कमलानिलये कमलानिलयः सकथं नभवेत्
पदमेव परं पदमेमनुशीलयतो ममकिन्नशिवे ॥ जयजय हे महि०
८॥ कनकलसत्कल सिंधुजलैरण सिंचिनुते गुणरंगभवं ॥
ति सुकिंनसुची कुच कुंभतटीपरिरंभ सुखानुभवं ॥ तवचरणं
गं कर वाणिनतामर वाणिनिवासिशिवं ॥ जयजय हे० ॥१९॥
विमलेन्दु कुलं वदने दुमलं कलपं ननुकूलयते ॥ किमपुरुहूत

पुरीन्दु मुखीभिरसौ विमुखी सुमुखी क्रियते ॥ ममतुमतं शिव
धने भवतिःकृपया किमुतःक्रियते ॥ जयजय हे० ॥२०॥ अयि
दीनदयालु तयाकृपयैव तया हवितव्यमुमे ॥ अपिजगतो जननि
यासियथासितथानुमितासिरते ॥ यदुचितमत्र भवत्युररी कु
दुरिता पमुपाकुरुते ॥ जयजय हे महिषा० ॥२१॥ स्तुति मित
मितः सुसमाधिनानियमतोयमतोनुदिनं पठेत ॥ परमयारम या
नसेव्यते परिजनो रिजनोपिचतं भजेत् ॥२२॥ रमयतिकिल क
सुचितं नराणा मवरजवर यस्मात् रामकृष्णः कवीनाम् ॥ अ
सुकृत गम्यं इम्यय यैकरम्यं स्तवन मवन हेतुंप्रीतये विश्वम
॥२३॥ इति देवीपद्यपुष्पाञ्जलिः समाप्तः ॥

अथ महालक्ष्म्यष्टक प्रारम्भः

श्रीगणेशायनमः

इंद्र उवाच—नमस्तेऽस्तु महामाये श्रीपीठेसुर पूजिते ॥ श
चक्रगदाहस्ते महालक्ष्मि नमोऽस्तुते ॥१॥ नमस्ते गरुडारूढे को
सुर भयंकरी ॥ सर्व पापहरे देविमहालक्ष्मिनमो० ॥२॥ स
सर्ववरदे सर्वदुष्ट भयंकरि ॥ सर्वदुःखहरे देविमहाल० ॥३॥ सि
बुद्धि प्रदेदेवि भुक्तिमुक्ति प्रदायिनि ॥ मंत्रमूर्ते सदा देविमहा
॥४॥ आद्यंतरहिते देवि आद्यशक्ति महेश्वरि ॥ योगजे यो
भूते महाल० ॥५॥ स्थूलसूक्ष्म महारौद्रे महाशक्ति महोद
महापापहरे देविमहाल० ॥६॥ पद्मासनस्थितेदेवि परब्रह्म स्व
पिणि ॥ परमेशं जगन्मातर्महालक्ष्मि० ॥७॥ श्वेतांबर धरे देविना
ऽलंकार भूषिते ॥ जगत्स्थितेजगन्मातर्महा० ॥८॥ महालक्ष्म्यष्ट
स्तोत्र यः पठेद्भक्तिमान्नरः ॥ सर्वसिद्धि मवाप्नोतिराज्यं प्राप्नो
सर्वदा ॥९॥ एक कालं पठेन्नित्यं महापाप विनाशनम् द्विकालं
पठेन्नित्यं धन धान्य समन्वितः ॥१०॥ त्रिकालं यः पठेन्न

न्ि विनाशनम् ॥ महालक्ष्मीर्भवेन्नित्यं प्रसन्ना वरदा शुभा
॥ इतीन्द्रकृतः श्रीमहालक्ष्मी अष्टकस्तवः सपूर्णम्ः ।

सिद्धकपिल लहरी

श्रीगणेशायनमः

श्रीगुरुचरण कमलेभ्यो नमः ।

त्रिगुण आत्मकमुर्ति सच्चिदानन्द सगुणनिर्गुणरूप माया सर्व व्यापियों से जो गुरु महाराज के चरण कमल के प्रति वारंवार नमस्कार है ।

जनानज्ञान् योवैजडमतिमतोवीक्ष्यकृपया ।
स्वतन्त्रस्सर्वज्ञोऽवनितलगतः कर्दमसुतः ॥
दिदेशात्मज्ञानं निगममविहितं जाड्यहरणम् ।
नमामस्तं देवं मुनिगणवरं श्रीशकपिलम् ॥१॥

जो कोई मऋषि महाराज के पुत्र स्वतन्त्र और सर्वज्ञ पृथ्वी में प्राप्त कपिलमुनिजी महाराज जडमति अज्ञजनो देखि करिके करिके आत्मज्ञान को उपदेश करते भये जो आत्मज्ञान म में कहा है और जडमति को हरने वाला हैतिनमुनि गणों ष्ठ मकारारुप लक्ष्मीजी के पति श्रीकपिलमुनि को नमस्कार हैं ॥१॥

पुराणेसंगीतं पदवतरणं कष्टहरणम् ।
नतन्मिथ्याकर्तुं कथमपिभवेदष्टफलतः ॥
नराणामालापोमलिनकुलजानाखमृषा । नमा० ॥२॥

जो कपिलमुनिजी का अवतार कष्ट को हरने वाला है ण में कहा है तिस अवतार को मिथ्या करने का दष्टफल से ी तरह से नहीं हो सक्ता है और मलिन कुलज मनुष्यों का प मिथ्या है । तिन मुनिगणों में श्रेष्ठ ॥२॥

त्रिभिःशिक्षांलब्ध्वापुनरपिहरेर्योगविभवम् ।
जनन्यैसंवोधंपरमसुखदं यःपरिददौ ॥
अलंकर्तुसंज्ञांनरकभयहंतत्वविषयम् ॥ नमो० ॥

जो कपिलमुनिजी वेदत्रयी से शिक्षा लेकरके पुनः भगवान् के योग्य कवि भवरूप ज्ञान को माता देवहुती के उपदेश करते भये कैसी ज्ञान है कि परम सुख को देने वा और संज्ञा को पूर्ण करने का समर्थ है और नरक भय का वाला है और तत्व विषयक है ॥३॥

कृतंशास्त्रं यैर्वैपरमतहरं स्वेष्टमतदम् ।
षडध्यायैर्वद्धं भवतिवितते शिष्यगणकैः ॥
सदादेवैस्सेव्यंप्रकृतिपुरुषाभेदघटकम् ॥ नमो०

जिन कपिलमुनि जी करिके किया भया शांख्यशास्त्र को हरनेवाला और स्वइष्ट मति को देनेवाला और छ अ करके वद्ध और शिष्यगणों करके विस्तृत है और सदा दे करके सेवित है और प्रकृति पुरुष का अभेद घटक है । मुनिगणो श्रेष्ठ प्रका० ॥४॥

यदग्रेनृत्यंतोहरिहरमुखः किन्नरगणाः ।
हरंतः पाण्डित्यंसुरपतिगुरोस्तत्रपठनैः ॥
विमानस्थादेवाजयजयकराद्रर्शनपराः ॥ नमो०

जिन कपिलमुनि महाराज के आगे विष्णु भगवान शंकर भगवानजी से आदि लेकर देवता लोग और किन्न नृत्य करते हैं और विमान में स्थित देवता लोग दर्शन में हो कर स्तोत्र पठन करिके इन्द्र के गुरु वृहस्पतिजी के पा हरण करते भये जयजयकार शब्द करते हैं तिन मुनिग श्रेष्ठ० ॥५॥

यदंघ्रिंवैतत्वापरमगतिनिर्वाणिनिवहः ।
प्रनस्तंनाऽर्चित्वावसतिनरयानेहरिसमः ॥
पदव्हानंधृत्वापशुरपिभवेत्पूजिततमः ॥ नमो० ॥६॥

जिन कपिलमुनिजी के चरण कमल को नमस्कार करिके ति मोक्ष को प्राप्ति होनेवाले महात्मा लोग पुनः तिन मुनिजी का अतिशय सेवा पूजा करिके विष्णुभगवान् के होकर मनुष्य शरीर में वास नहिं करते हैं और जिन मुनिजी का आव्हान याने स्मरण धारण करिके पशु भी य पूजित होता है तिन मुनिगणों में श्रेष्ठ प्रकाशरूप ॥६॥

यदग्रेवाद्यानांझणझणरवामंगलकरः ।
तथासायंप्रातः कुसममिलितोदीपनियथा ॥
वेदंस्तोत्रं पठतिमतिमान्भिक्षुकगणः ॥ नमो० ॥७॥

जिन कपिलमुनि के आगे बाजाओं का झणझण मंगल करने शब्द सायं तथा प्रातःकाल में कुसुम और दीप से मिलित है और बुद्धिमान भिक्षुकगण तिन मुनिगणों में श्रेष्ठ प्रकाश क्ष्मीजी के पति श्रीकपिलमुनि जी को नमस्कार करते हैं।

पितुर ज्ञांमत्वाहततुरगलाभेसगरजाः ।
भ्रमंतोभूम्यतंकथमपिगताःकापिलपदम् ॥
मुनिंचौरंज्ञात्वायदपमलितोभस्मनिकरः ॥ नमो० ॥८॥

राजा सगर के पुत्र साठि सहस्र सब पिता की आज्ञा करके हरण किया हुवा जो तुरंग सो जानने के प्राप्ति में तलपर घूमते भये किसी तरह से कपिल भगवानजी के पर पहुँचते भये तो भ्रष्टबुद्धी से मुनि महाराज को चोर भये सो कपिल भगवान् की दृष्टिपात से साठ हज़ार मार भस्म होगये तिन मुनिगणों में श्रेष्ठ सभा में श्रेष्ठ० ॥८॥

सुरनाथकृतंशुभमंत्रमिदम् । वहुजाड्यहरंसुखपुंजमयम् ॥
पठनेश्रवणेशुभपुण्यकरम् । मनुजैः पठनीयमतः प्रयतैः ।

सुरनाथकृत यह शुभ मंत्र है और बहुत प्रकार के को हरने वाला है और सुखमय है और पठन करने में श्रवण करने में शुभ पुण्य को पढ़नेवाला है इस करिके सा चित मनुष्यों करिके पठनीय हैं ॥९॥

अथ दत्तात्रय की आरती प्रारंभः

श्रीगणेशायनमः

जयदेव जयदेव जयदत्तात्रेयं परमात्मानं वंदेशिवयोगिध्येय ॥२॥ मेघश्यामं विष्णुं पितांबरमणिघं ॥२॥ कौस्तुभशोभित कंठं जगदात्मा संगं ॥ श्रीवक्षस्थलदित्त्यंकतविद्वतसंगं ॥२॥ पुनिय कविनुतं वंदित भवचरणं॥ जय० ॥१॥ सत्यं ज्ञानानंद स्वरूपम ॥२॥ ब्रह्मानंदं सुद्धं सच्चितघनविगुणं ॥ सर्वाकारं नित्यं मुनि सरमणं॥२॥ देवदेवं शांतं वंदित भवचरणं ॥ जय० ॥२॥ कोम निजसुखदं सुदरता गुणितं ॥२॥ चैतन्नाडयं पूर्णं पारावरर अचलानंदं विमलं करुणामृतसहितं ॥२॥ दामोधर निजलाभं दिकविणुतां जय० ॥३॥ इति श्रीदत्तात्रय की आर्ति संपूर्णम्

शिवोम्

श्रीकैवल्योपनिषत्

ॐ स्वस्ति श्रीगणेशायनमः

श्रीकाशीविश्वेश्वराभ्यां नमः । श्रीगुरुभ्यो नमः । श्री जयति। ॐ सहनाववतु सह नौ भुनक्तु सह वीर्यङ्करवावहै तेज नावधीतमस्तु मा विद्विषावहै। ॐ शान्तिः॥ ॐ शान्तिः॥ ॐ शान्

प्रारम्भः

ॐ अथाश्वलायनो भगवन्तम्परमेष्ठिनमुपसमेत्योवाच ॥
हि भगवन् ब्रह्मविद्यां वरिष्ठां सदा सद्भिः सेव्यमानां निगू-
। ययाऽचिरात्सर्वपापं व्यपोह्य परात्परं पुरुषमुपैति विद्वान्
तस्मै स होवाच पितामहश्च श्रद्धाभक्तिध्यानयोगादवेहि ॥
र्मणा न प्रजया धनेन त्यागेनैके अमृतत्वमानशुः ॥२॥ परेण
न्निहितङ्गुहायां विभ्राजते यद्यतयो विशन्ति ॥ वेदान्तविज्ञान-
श्चितार्थाः संन्यासयोगाद्यतयः शुद्धसत्वाः । ते ब्रह्मलोकेषु
तकालेपरामृतात्परिमुच्यन्ति सर्वे ॥३॥ विविक्तदेशे च सुखा-
यः शुचिः समग्रीवशिरः शरीरः ॥४॥ अत्याश्रमस्थः सकले-
णिनिरुध्य भक्त्या स्वगुरुम्प्रणम्य ॥ हृत्पुण्डरीकं विरजं
द्धं विचिन्त्यमध्येविशदं विशोकम् ॥५॥ अचिन्त्यमव्यक्तमन-
शिवं प्रशान्तममृतं ब्रह्मयोनिम् ॥ तथाऽऽदिमध्यान्तविहीन-
विभुश्चिदानन्दमरूपमद्भुतम् ॥६॥ उमासहायम्परमेश्वरम्प्रभुं-
चनन्नीलकण्ठम्प्रशान्तम् ॥ ध्यात्वा मुनिर्गच्छति भूतयोनिं
तसाक्षिन्तमसः परस्तात् ॥७॥ स ब्रह्मा स शिवः सेन्द्रः सोऽ
परमः स्वराट् ॥ स एव विष्णुः स प्राणः स कालाग्निः स
माः ॥८॥ स एव सर्वं यद्भूतं यच्च भाव्यं सनातनम् ॥ ज्ञात्वा
त्युमत्येति नान्यः पन्था विमुक्तये ॥९॥ सर्वभूतस्थमात्मानं
तानिचाऽऽत्मनि ॥ सं पश्यन् ब्रह्मपरमं याति नान्येन हेतुना
॥ आत्मानमरणिङ्कृत्वा प्रणवञ्चोत्तरारणिम् ॥ ज्ञाननिर्मथ-
पा सांत्पाशन्दहति पण्डितः ॥११॥ स एव मायापरिमोहि-
शरीरमास्थाय करोति सर्वम् ॥ स्त्रियन्नपानादिविचित्र-
स एव जाग्रत्परितृप्तिमेति ॥१२॥ स्वप्ने स जीवः सुखदुःख-
स्वमायया कल्पितविश्वलोके ॥ सुषुप्तिकाले सकले विलीने

तमोभिभूतः सुखरूपमेति ॥१३॥ पुनश्चजन्मान्तरकर्मयोगात्स
जीवः स्वपिति प्रबुद्धः पुरत्रये क्रीडति यश्च जीवस्ततस्तु
सकलं विचित्रम् ॥ आधारमानन्दमखण्डबोधं यस्मिल्लँयं
पुरत्रयञ्च ॥१४॥ एतस्माज्जायते प्राणो मनः सर्वेन्द्रियाणि
खं वायुर्ज्योतिरापश्च पृथ्वी विश्वस्य धारिणी ॥१५॥ यत्परं
सर्वात्मा विश्वस्याऽऽयतनम्महत् । सूक्ष्मात् सूक्ष्मतरन्नित्यन्तत
त्वमेव तत् ॥१६॥ जाग्रत्स्वप्नसुषुप्त्यादिप्रपञ्चं यत्प्रकाशते ।
ब्रह्माहमिति ज्ञात्वा सर्वबन्धैः प्रमुच्यते ॥१७॥ त्रिषु धामसु य
भोक्ता भोगश्च यद्भवेत् । तेभ्यो विलक्षणः साक्षी चिन्मा
सदाशिवः ॥१८॥ मय्येव सकलञ्जातम्मयि सर्वं प्रतिष्ठितम् ।
सर्वं लयं याति तद्ब्रह्माद्वयमस्म्यहम् ॥१९॥ इति प्रथमः
अणोरणीयानहमेव तद्वन् महानहं विश्वमिदं विचि
पुरातनोऽहं पुरुषोहमीशोहिरण्मयोऽहं शिवरूपमस्मि ॥२०॥ "
यणोऽहं पुरुषः शिवोहम्ब्रह्माहमस्मि सकलोहमस्मि । पूर्णोह
पुरुषोहमस्मि ज्ञानोहमस्मि सत्योहमस्मि" ॥२१॥ अपाणिपादे
चिन्त्यशक्तिः पश्याम्यचक्षुः स शृणोम्यकर्णः । अहं विज
विविक्तरूपो न चास्तिवेत्ता मम चित्सदाहम् ॥२२॥ वेदैर
हमेव वेद्यो वेदान्तकृद्वेदविदेव चाहम् । न पुण्यपापे मम न
नाशो न जन्म देहेन्द्रियबुद्धिरस्ति ॥२३॥ न भूमि रापो
वह्निरस्ति न चानिलो मेऽस्ति न चाम्बरञ्च । एवं विदित्वा प
त्मरूपङ्गुहाशयंनिष्कलमद्वितीयम् ॥२४॥ समस्तसाक्षिं सदसद्वि
म्प्रयाति शुद्धम्परमात्मरूपम् ॥२५॥ यः शतरुद्रीयमधीते सोऽग्नि
भवति । वायुपूतोभवति । सुरापानात्पूतो भवति । ब्रह्मह
पूतो भवति । स्वर्णस्तेयात्पूतो भवति । कृत्याकृत्यात्पूतो भव
तस्मादविमुक्तमाश्रितो भवति । आत्याश्रमी सर्वदा सकृद्वा ज

ज्ञानमाप्नोति संसारार्णवनाशनम् । तस्मादेवं विदित्वैनं
म्फलमश्नुते कैवल्यम्फलमश्नुते इति द्वितीयः खण्डः ॥

इत्यथर्ववेदे कैवल्योपनिषत् समाप्ता ॥

ॐ भद्रं कर्णेभिः शृणुयाम देवा भद्रं पश्येमाक्षभिर्यजत्राः
ङ्गैस्तुष्टुवा ॐ शास्यनुभिर्व्यशेम देवहितं यदायुः ।
स्वस्ति न इन्द्रो वृद्धः श्रवाः स्वस्ति नः पूषा विश्ववेदाः
नस्तार्क्ष्यो अरिष्टनेमिः स्वस्तिनोबृहस्पतिर्दधातु । ॐशान्तिः
: शान्तिः ॥

श्रीरस्तु ॥

शुभम्भूयात्

श्रीकाशीविश्वनाथाऽर्पणमस्तु ॥

श्रीशङ्करः प्रसन्नोऽस्तु । श्रीशिवो जयति ॥ श्रीवामदेवाय
वाममार्गे उमा देवी विष्णुस्सोमोऽपि ते त्रयं इत्यादि श्रुत्या
देशा यस्य स तस्मै वामदेवाय नमः ॥ ईशानस्सर्व्व भूता-
नरस्सर्व्वदेवानाम्ब्रह्माधिपतिर्ब्रह्मणोऽधिपतिर्ब्रह्मा शिवो मेऽ
दाशिवोभितिश्रुतिः । हे सदाशिव सर्वभूतानामीशानो नियन्ता
ति । सर्वदेवाऽधिपतित्वान्महादेव इत्युच्यते । एवं ब्रह्मा
गर्भस्तस्याऽधिपतिः । ब्रह्मणो वेदस्याप्यधिपतिरिति ।
ऽपि त्वमेवेति । सर्वरूपत्वात्त्वत्तो ऽहमपि शिवोऽस्मी । हे
व ॐमित्येकाक्षरं ब्रह्मापि त्वमेवेति मन्त्रार्थः ॥
ॐ तत्सच्छान्तिः शान्तिः शान्तिः ॐ श्रीरस्तु

[illegible]

[illegible] पिजाकी शमा [illegible]

[illegible] शवारनी [illegible]

[illegible] शवारनी [illegible]

[illegible] गुजराात [illegible]

[illegible]

[illegible] गुजराात [illegible]

[illegible]

[illegible] कुली शमहा [illegible]

[illegible]

[illegible]

ऊबारये कलाभ्या जग-पाश्च में
ऊ सदाशिव ओ ऊशुमालनें
कलाभ्या जाह उत्तरे ओ त [illegible]
ये व देह शान्ति कलाभ्या [illegible]
[illegible] कोण ओ महादेवाय धा
[illegible] धाये कलाभ्या [illegible]
[illegible] वाणो ओ त [illegible]
[illegible] कलाभ्यानो वायलु
[illegible] आरपत ओ [illegible]
कलाभ्यानम- ईश्वर [illegible]
[illegible] आकारे [illegible] ओ [illegible] राय
कलाभ्यानम [illegible] ओ धार [illegible]
[illegible] कलाभ्यानम [illegible] ओ
[illegible] ओ [illegible] कलाभ्यानम [illegible]
[illegible] ओ धार तरे [illegible] ओ [illegible]
कलाभ्यानम वा [illegible] सव [illegible]
सर्व [illegible] कलाभ्यानम
[illegible]
[illegible] कलाभ्यानम [illegible]

रा॰ रामि हस्ताया चि नु च तजा [illegible]

[illegible] पबोल मूरा [illegible]

[illegible]

[illegible] हस्ताय [illegible]

[illegible]

[illegible] सागाय

[illegible]

[illegible] बोलि [illegible]

[illegible]

[illegible]

[illegible] हस्ताय [illegible]

[illegible] बोलि [illegible]

[illegible]

[illegible]

[illegible] हस्ताय [illegible]

[illegible] बोलि [illegible]

[illegible]

[illegible]

[illegible] हस्ताय [illegible]

[illegible]

नैऋत्ये ओं सर्वविघ्ननाशकं स्वाहा
सर्वभूतनाथः हुं फट् स्वाहा तस्मै गुरु
देश दिक्पालको दशकी [illegible] सिद्धी
पूजन काली [illegible] स्वाहा ओं
नमः ओं ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रैं ह्रौं ह्रः नमः पूर्वे ओं [illegible]
[illegible] ओं नमः [illegible] ॥ ओं [illegible]
[illegible] ओं [illegible] [illegible]
[illegible] ओं ह्रूं [illegible] सर्वमा [illegible]
[illegible] मंत्रो [illegible] नमः वायव्ये ओं
[illegible] नमः उत्तरे ओं क्रीं [illegible]
फट् [illegible] ईशान्ये ओं ह्रीं क्लीं नमः [illegible]
ओं [illegible] ह्रीं ह्रः नमः ओं [illegible] ओं लं
ह्रां ह्रीं ह्रूं [illegible] सुरनायक श्रीधराय
प्रसन्नाभव [illegible] सिद्धि [illegible]
[illegible]
[illegible] स्वाहा [illegible]
[illegible] पीतवर्ण सहस्र [illegible]
गणाधिपतये नमः हुं फट् स्वाहा
ओं [illegible] सर्व [illegible] नमः

[illegible]

प्रमाणे कल्ली

[illegible]

कोहावाद्दुह दी : लत अपयत
शत मद हैलापो श्वासं विद्युश
[illegible] धामस्वाधिष्ठानक
[illegible] पार वदा [illegible] त वादे ल
[illegible] हिरण्य [illegible] मद पाल
षिधात्री भजा मूर्ति अमृता [illegible]
[illegible] कवचा [illegible] लसति अप
यतडपुत मद श्वास [illegible]
निष्ठं [illegible] देश देल
[illegible] पात वदा
[illegible]
[illegible] सातांक दो [illegible]
[illegible] अपयत
डपुत मद श्वास [illegible] विदेह
[illegible] देल पद [illegible]
[illegible] तवो [illegible]
[illegible] पुरख दो [illegible] सिन्दूर [illegible]
ये [illegible]
[illegible] अप्र यतडपुत [illegible]

बारह शब्द स्वरूप दोहा [illegible]

[illegible] देल पद [illegible] कल

[illegible]

[illegible]

[illegible] अड सदश

[illegible]

[illegible] श्वास [illegible]

[illegible]

[illegible]

[illegible]

[illegible]

[illegible] अर्पित दश शत श्वा

[illegible] गुरु [illegible]

[illegible] स्थान [illegible] गुरु [illegible]

[illegible] दश [illegible]

[illegible]

शक्ति युक्त श्री गुरु देव सच्चिदानन्द

साक्षी अर्पित दश शत श्वास

सा पुरुष मोक्ष विदेहा ॥७॥

पादुकायै स्तनं पशुपति वामे पातु
शिखायां रुद्र सर्वेके प्राणा कामरूपा
कवचं सदा शिवानां कान विश्वरूपी
ऊर्ध्वं पातु स्थाणु प्राणनां पातु
भा ... गुल्फ गौरी पातु सदा, पाद
पृष्ठे सा ... तथा सदा गुलि हर:
पादाधो पातु सततं ... कंठ डोमल
... सुदर्शनाय अस्त्राय फट्॥
पुष्पाञ्जली दत्वा॥ ॐ रां रीं रूं रैं रौं र: सहस्राय
ज्वल ज्वल प्रज्वल प्रज्वल प्रकाश शान्ति सहित
दीपनाय हूं फट् स्वाहा॥ ॐ ह्रौं पशु ज्वल ज्वल
प्रज्वल प्रकाश शान्ति सहित दीपनाय हूं फट् स्वाहा
ॐ ... महा ... वीर
... ज्वल ज्वल ... सर्व दुष्टान
... हूं फट् स्वाहा॥ ... हूं फट् स्वाहा
ॐ ह्रीं ह्रूं स्फुर स्फुर हूं हूं प्रस्फुर प्रस्फुर
घोर घोर ... हर ...
हूं फट् स्वाहा॥ ...
... ॐ हुं ... फट् स्वाहा

अनंतर स्थात चित्त प्राणसहितं
... विन्दु
... पाप ...
... स्वरूप
...
... पुरतः ...
...
[illegible]

उत्तरे रक्षां करोतु ॐ पूर्व मां शंकरः पातु तथा
आग्नेय्यां चन्द्रचूडकः, कपाली दक्षिणे पातु
नैर्ऋत्यां नीललोहितः पश्चिमे पार्वती
नाथो वायव्यां धूमाधिपः उत्तरे पातु
मुण्डमालो ईशान्यां वृषभध्वजः
ऊर्ध्वं पातु तथा शम्भो रक्षास्त्री धूर्जटि
भूस्थः, अग्रतो गिरिशः पातु पृष्ठतो
पातु शंकरः शिखं गङ्गाधरः पातु
ललाटं त्रिपुरान्तकः केशान्पातु वि
शालाक्षो मूर्ध्नि च सततं प्रभुः मस्तके
पातु भूतेशो नेत्रे पातु महेश्वरः
कपालं पातु वीरेशो गण्डौ मे गदाधरः
उत्तरोष्ठं विरूपाक्षो अधरे पातु पिनाकी
प्रिय, तथा पातु देवः विश्वरूपी चिबुके
तु, वाचं तु धूर्जटिः रक्षेत् तु मे ग्रीवां
नीलकण्ठो जगद्गुरुः, देव स्कन्धौ गिरी
शो बाहू सदाशिवः वसुधाय, दोषो न
च भुजौ सर्वदा नाथः सदा ऽवतु
वाम भुजौ सर्वदा मो मे हृदयं पातु

जान्तिकाल औसूरपा पुत तेबसी जैत
माजाकी माता। पसीमाहिवत्यग सधा
स्थाने मुस्या सिधाते पथ पाथेका थाणे
दूद पजानी गाथा गाथा विगाथा
थापि ते थाये तथ वाहि जायास्थरा
थाल चन्द्र डेमास्वा स्थ तू रस्वाम स्वर
पदमधन मुकवला प्रासनस्था
स्था थ स्थय्पी जिसाया प्रणावजवा
चन्द्र वणाज मतदा द्वादी
दांथा दशा दसन जाय साइ हासी
कुलशी दे दे वाहि वालगा दादा लेत
करा हद दो पो रेला द्याग दा थव
जाय हेन्गी विजि दरन दरशा यायन
नवदर स्था श्री प्राह्म द प्रदी प्रा मारब
ल थल गदा दे पती जावया नामथा
वाशी भाव पा वरि द्वा धरा पोथर
धारा थाय मा वातीत धूस्त्र सबका
वस्या कुवलय धरणी पारयती
करावडोग

विधुन्नेद पाकेको टि ड वलचल धन
निधि [illegible] विद्वा भुजानि [illegible]
नि[illegible] पराणानि जयतीवान्धुक
फुल्ल [illegible] कोटर पविन पुलसीर धा
[illegible] पार्शोरखदानजना
[illegible] मलविधुश्रीकोटर
[illegible] सिध [illegible] सानन्द [illegible]
[illegible] प्रणाणवध [illegible]
[illegible] पेणधूपीपरा [illegible] प्रधुप्रणा
पुरि[illegible] पुरीपु[illegible] प्रलपना
[illegible] पन्नगी [illegible] पारपीन
पात कोपलपाना पानाप पी फुलपा
निन्त प्राप क पी त काल वसता पारा
पिकी [illegible] स्को स्को [illegible]
वाद[illegible] पाणी फुल्ला विल्यानना
पी [illegible] पार [illegible] वि कलास
[illegible] फुल्लीन नानु पा[illegible] फालि[illegible]
फाडि तिवा मन्त्र कासि [illegible] फाणा

वशीकरण नमः ॐ [illegible]
[illegible] नमः ॐ [illegible]
[illegible] स्वाहा [illegible] नमः ॐ
[illegible] स्वाहा [illegible] नमः ॐ [illegible]
ॐ [illegible] स्वाहा [illegible] नमः ॐ [illegible]
[illegible] सवा [illegible] वशी
[illegible] स्वाहा ॐ स्त्री [illegible]
[illegible] नमः ॐ ह्रीं [illegible]
[illegible] प्रह्लाद [illegible]
[illegible] नमः [illegible] नमः ॐ [illegible]
[illegible] नमः ॐ [illegible] नमः ॐ [illegible]
[illegible] नमः ॐ [illegible]
[illegible] नमः ॐ [illegible]
नमः [illegible]
[illegible] ॐ [illegible]
ॐ [illegible] नमः ॐ [illegible] नमः
[illegible] नमः ॐ [illegible] नमः ॐ [illegible]
[illegible] नमः ॐ [illegible] नमः
[illegible] नमः ॐ [illegible] नमः
श्री [illegible]

[illegible] पत परमत [illegible]
[illegible] संगोह पुष्टि [illegible] उरवा
[illegible]
[illegible] त्रिपुराय नमः॥
[illegible]
[illegible]
[illegible] नमः [illegible] नमः
[illegible] नमः [illegible]
[illegible] नमः [illegible]
[illegible]
[illegible] नमः
[illegible] नमः [illegible] नमः
[illegible]
[illegible] नमः [illegible]
[illegible] नमः [illegible]
[illegible] नमः [illegible]
[illegible] नमः [illegible]
[illegible] नमः [illegible]
[illegible] नमः [illegible] नमः [illegible]

[illegible]

कृ आत्म करून माय कर्म [illegible]
साधना [illegible] सोज्वळ [illegible] काल [illegible]
नंद तपस्यामी [illegible] सद
गुरु चक [illegible] गोद आद [illegible]
शादि आदि निज बोध [illegible]
कारण वत [illegible] तत्त्व [illegible]
[illegible] काल
नंद तप यामी अमा जी वराजी मद
राहिले [illegible] राहिला आनि [illegible]
मोह मत्सर [illegible] विहित समाप्त [illegible]
पुढे [illegible] सोहं साधन निग्रह [illegible]
यो [illegible] नाथ कर्म [illegible] भजत
[illegible] शोधन [illegible] सवत
[illegible] प्राप्ती [illegible]
[illegible] सिके असक आप [illegible]
[illegible] साधन [illegible]
परमु पद सदा पर [illegible]
[illegible] राहतन [illegible] प्रासा
[illegible] सोम [illegible]

[illegible]

[illegible]

सर्व प्रजा वशकरी शत्रु वंध निग्रहकरी ॐ [illegible] नमः स्वाहा
[illegible] ज्वालामालिनी शत्रु स्तंभनी ॐ [illegible] नमः स्वाहा ॐ श्री [illegible]
[illegible] प्रीते [illegible]
[illegible] प्रकाशिनी त्रैलोक्य [illegible] नमः स्वाहा ॐ [illegible]
ह्रीं शुद्धाय नमः स्वाहा [illegible] समाधि फलदायी ॐ
सर्व [illegible] अमृत [illegible] ॐ
[illegible] नमः स्वाहा ॐ [illegible] सिद्धि कारी देवी
[illegible] नमः स्वाहा ॐ [illegible] योगानां सिद्धि [illegible]
[illegible] भाव सिद्धि प्रद नमः ॐ [illegible] नमः स्वाहा ॐ विश्व [illegible]

महाभये कालजाल नि दारिणी तुलसतो मे सद रघु मोसे का मार कउ
ओं ह्रीं श्रीं क्लीं ... अमृते अमृता ... अमृत वाषिणी अ
मृत माकसोय आनन्द पिंडि ... देहि सर्व मे वश मानय स्वाहा
ओं ह्रीं श्रीं क्लीं ... महा ... स्थापन ... मूल ...
सोबि ... जरीयसी ... विध ... माया मोह ...
कार श्मशान ताप ज्या ... मूल ... वदना ... रामका ...
दीपि का ... ज्ञान ... सिद्ध ... विज्ञान मूर्ति ... सर्व
सवा ... सु ... दवी जरीयसी जप नाशाय ... विख्याता मोह
कारिणी ओं ह्रीं गुरु पादुका ... ब्रह्मा रुद्र ... तप याः

फट गुलो सियतो ब्राओ हाट गेदपतु ना धंवर हाट करे नी लकीमे घंघाउ
मसी देवता लक्ष्मी है वारुणी देवी महामाया वस्त्र प्रिये सर्वसिद्ध
माया देवी शुभा देवी अस्तु तथुओ सुधा देवी निद्रा इह कोनस्मरेत
श्री पदि लक्ष्मी रत्ना सी प्रचार दयालता कै सरी सिद्ध सोरि रत ...
विनाशक कारणिकाः इ फट स्वाहा ... श्री ... पालिका देवता ... है
फट स्वाहा ... रत ओं ओं स्कालिनी मा मनोचा डालनी ... है
फट स्वाहा ... है मा मा स पक्षा चाडालनी है फट स्वाहा
ओं ... श्री ... डल ... हापि चाडालिनी है फट स्वाहा ... श्री
... क्रोधा चाडालिनी है फट स्वाहा ... श्री ... चाडालि
फट स्वाहा ... श्री ... घट चोडालिनी है फट स्वाहा ...

नालकेश यत: काग फल प्रदो, त्वदूपसादा दिने यतो कतु मे हे जलादेव:
बादा लोकान मात्रणा मुक्ति मुतन पाले मदवत, सागदय कुरुज्यो
कर्णा प्रसन्ना भव सर्वदा. सदे हे मदन मातृ, श्रीरा द सागरांत
तत्र लाभ्या सुरा र प्यारो त कल्पका रत्न द्वारा [illegible]. आशा देश भुज
द्वीर स्वकाला सुत लोचनाम, आपीन वल्ली [illegible] बहु रत्न परा सु-
रान, सा सेव तु सुरा सर्वा देवीनाम् [illegible] या सुरा सार ना
ये श्री, या गंधा [illegible] या वर्णा, सुभाव [illegible] आ मद: स-
मद: [illegible] तु [illegible] सु सस्या [illegible]
[illegible] मथा देवी पाताल तु [illegible] रसा [illegible]
[illegible] सद [illegible] पातता [illegible] सद [illegible]

नायैनमः क्रौं हृदयं वा हृदयै नमः श्रौं कत्य वा हृदयै नमः ओं हुं दैं हूं हूं सहस्र मल
वरयूं हसखफ्रं मलवरयीं क्रौं श्री गुरु कौमिलानन्द नाथ श्री योगेश्वरी देवी वस्तु पद तीर्थ
नाथं द्वादश कला लन हा के मंडलाय अर्घ्याय नमः याभ्यां स्वाहा ठं ठं नमः तापिनि
नमः रवं तापिन्यै नमः गं पां धूम्राय नमः धंपं मरीच्यै नमः ङं ज्वालिन्यै नमः
वं रुच्यै नमः ङं सुषुम्णायै नमः भं भोगदायै नमः मं विश्वायै नमः
नमः बोधिन्यै नमः रं धारिण्यै ठं क्षमायै नमः श्रीं क्रौं हसौं शं बलं रं यं
पं कं खं गं घं ङं चं छं जं झं ञं टं ठं डं ढं णं तं थं दं धं नं
ॐ उं ऊं ऋं ॠं लृं ॡं एं ऐं ओं औं अं अः ओं ऐं लृं ह्रूं
श्री षोडश कलात्मने सोम मंडलाय श्री योगेश्वरी देवी श्री गुरु कौमिलानन्द नाथाय
अमृताय नमः ओं अमृताय नमः ओं मानदाय नमः इ पूषाय नमः

इन्द्रपीठी श्री कुलस्या मृताकारे शुद्ध ज्ञान करे परमानंद तत्त्व
...वस्तुनि ... संस्तुते करस्यां च कुल्वां स्येक
...मूल कुलस्मृताकार माया विस्फुरणं ... महती पात्रे
...तामिन्दो परमामृत ... तामयं वहा इमं स्वीकारं
...पाव मान परानन्द पावमान ... पावमान परमान तम
... सुधा सुतं ... तत्त्व सत्वाद ... मानामा
... महाकुंभ विष्णुना चूत ... सर्व
देवास्तु सर्वे ... त्वायि ति ... भूतानि त्वयि प्रण
... शिवस्त्वं च भवानी त्वं विष्णुस्त्वं च प्रजापतिः
... सर्वे विश्व देवा सर्वे ... त्रिशूले

अष्टादश गुंजै पूर्णा सर्वानन्द केशर हलाम, प्रहसोति विशालाक्षी देव
दूलसता सन्गुरवीत असह समल कर्णी आनन्द भैरवे कूलट ॥ शिव शक्ति मना
पंचपद्ध आदेपू अमृतत्त्व विनिन्या ॥ ॐ ऐं ह्रीं श्रीं परम स्वामिनी परमा
काशा शून्य वाहिनी चन्द्र सूर्याग्नि भक्षिणी पात्रा विश विशस्वाहा ॐ ऐं
ह्रीं श्रीं अमृते अमृता द्भव अमृत वर्षिणी मद्धत प्रकाश पूर्णामृत
आवय आवय स्वाहा ॐ गुरु श्री ब्रह्माञ्जलि [illegible] स्वरूपिणी महापातक
नाशिनी महामाया मत्त देवी ब्रह्मा विष्णु [illegible] सेवित [illegible] महादेवी
ब्रह्माञ्जलि [illegible] [illegible] रस [illegible] रस
[illegible] भावना [illegible]
[illegible] मन्त्र निधि [illegible]

ॐ ह्रीं श्रीं क्रों ह्रूं जूं सः हौं ... सुधा कृष्ण शाप मोचय मोचय अमृतं स्रावय
स्रावय स्वाहा ॥ ॐ ऐं ह्रीं श्रीं आनन्द भैरवाय विद्महे सुधा देव्यै धीमहि तन्नो
धीं तारेश्वर प्रचोदयात् ॥ ॐ सूर्य कोटि प्रतीकाशं चन्द्र कोटि युतप्रभा
अष्टादश भुजं देव पञ्च वक्त्रं त्रिलोचनाम् । अमृतार्णव मध्यस्थं ब्रह्म
पद्मोपरि स्थितम् वृषारूढं नीलकण्ठं सर्वाभरण भूषितं कपाल खट्वा-
ङ्गधारं घण्टा डमरु वादिनम् पाशांकुश धरं देवं गदा मुशल धारि-
णम् खड्ग खेट पट्टिश मुद्गर शूल दण्ड धृक् विचित्र खेटक
मुण्ड वरदाभय पाणिनम् लोहितं देव देवेशं भावयेत् साधकोत्तमः ॥
हस्तं नवरत्नं आनन्द भैरवाय ... ॐ आनन्द सुधा देवी ...
... सुशीतलम् हिमकुन्देन्दु धवलां पञ्चवक्त्रां त्रिलोचनाम्